# bdkbZ&1 lkekftd leL;kvksa dh vo/kkj.kk,¡

नोट

ikB&lajpuk

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 सामाजिक समस्या : अर्थ, व्याख्या एवं अवधारणा

1.3 सामाजिक समस्याओं के प्रकार

1.4 सामाजिक समस्याओं की प्रकृति : व्यक्तिगत एवं सामाजिक

1.5 व्यक्तिगत एवं सामाजिक समस्या में अन्तर

1.6 सामाजिक समस्याओं के कारण

1.7 सामाजिक समस्याओं के प्रमुख सिद्धान्त

1.8 सामाजिक समस्याओं का समाधान

1.9 सारांश

1.10 अभ्यास प्रश्न

## 1-0 mís';

सामाजिक समस्या के बारे में समझना, सामाजिक समस्या की अवधारणा का स्पष्टीकरण करना एवं उसका अर्थ एवं परिभाषा को समझना। सामाजिक समस्या के कारणों एवं उसके प्रमुख सिद्धान्तों के बारे में जानना। अन्त में सामाजिक समस्या के निवारण के उपायों को जानना।

## 1-1 iLrkouk

वस्तुतः एक नवीन विषय के रूप मे समाजशास्त्र के उद्‌भव, विकास एवं परिवर्तन की पृष्ठभूमि मे सामाजिक समस्या की अवधारणा ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। यहाँ पर यह लिखना उचित होगा कि समाजशास्त्र का विकास समस्यामूलक परिवेश एवं परिस्थितियों का अध्ययन करने एवं इनका निराकरण करने के प्रयासों के रूप मे हुआ है। सामाजिक समस्याओं के अध्ययन में सामाजिक विचारकों का ध्यान सहज रूप से इसलिए आकर्षित हुआ है क्योंकि ये सामाजिक जीवन का अविभाज्य अंग है। मानव समाज न तो कभी सामाजिक समस्याओं से पूर्ण मुक्त रहा है और न ही रहने की सम्भावना निकट भविष्य मे नजर आती है, परन्तु इतना तो निश्चित है कि आधुनिक समय मे विद्यमान संचार की क्रान्ति तथा शिक्षा के प्रति लोगों की जागरूकता के फलस्वरूप मनुष्य इन समस्याओं के प्रति सवेंदनशील एवं सजग हो गया है। सामाजिक समस्याओं के प्रति लोगों का ध्यान आकर्षित करने मे जन संचार के माध्यम, यथा–टेलीविजन, अखबार एवं रेडियो ने अति महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। मुख्यतः टेलीविजन पर प्रसारित विभिन्न चेनलों के कार्यक्रमों तथा स्थानीय, प्रादेशिक एवं अन्तर्राज्यीय अखबारों की भूमिका प्रशंसनीय है।

नोट

मानव समाज में संरचनात्मक एवं सांस्कृतिक भिन्नताएं पाई जाती है। परन्तु भिन्न भिन्न समाजों मे इनका स्वरूप, प्रकृति एवं गहनता अलग–अलग होती है। सामाजिक समस्याओं का सम्बन्ध समाजशास्त्र विषय के अन्तगर्त विद्यमान गत्यात्मक एवं परिवतर्न विषय से सम्बद्ध रहा है।

यहां पर यह लिखना समीचीन होगा कि जो समाज जितना अधिक गत्यात्मक एवं परिवर्तनशील होगा उसमें उतनी ही अधिक समस्याएं विद्यमान होंगी। समाज का ताना–बाना इतना जटिल है कि इसकी एक इकाई मे होने वाला परिवर्तन अन्य इकाईयों को भी प्रभावित करता है। इस परिवर्तन का स्वरूप क्या होगा? एवं इसके प्रभाव क्या होंगे?, यह समाज की प्रकति पर निर्भर करता है। विभिन्न युगों में सामाजिक परिवर्तन की गति अलग–अलग रही है। इसलिए भिन्न–भिन्न समाजों में सामाजिक समस्याओं की प्रकृति एवं स्वरूप भी अलग–अलग पाये जाते हैं। वर्तमान समय में सामाजिक परिवर्तन अति तीव्र गति से हो रहा है। इस तरह बदलते आधुनिक समाज के स्वरूप ने सामाजिक समस्याओं में बेतहाशा वृद्धि की है। मानव समाज इन सामाजिक समस्याओं का उन्मूलन करने के लिए सदैव प्रयासरत रहा है, क्योंकि सामाजिक समस्याएं सामाजिक व्यवस्था में विघटन पैदा करती हैं जिससे समाज के अस्तित्व को खतरा पैदा हो जाता है।

समाजशास्त्र मानव समाज को निर्मित करने वाली इकाईयों एवं इसे बनाए रखने वाली संरचनाओ तथा संस्थाओं का अध्ययन अनेक रूपों से करता है समाजशास्त्रीयों एवं सामाजिक विचारकों ने अपनी रूचि के अनुसार समाज के स्वरूपों, संरचनाओ, संस्थाओं, एवं प्रक्रियाओं का अध्ययन किया है। समस्या विहीन समाज की कल्पना करना असम्भव सा प्रतीत होता है।

वर्तमान समय में भारतीय समाज अनेक सामाजिक समस्याओं से पीड़ित है जिनके निराकरण के लिए राज्य एवं समाज द्वारा मिलकर प्रयास किये जा रहे हैं। भारतीय समाज की प्रमुख समस्याओं में जनसंख्या विस्फोट, निर्धनता, बेरोजगारी, असमानता, अशिक्षा, गरीबी, आतंकवाद, घुसपैठ, बाल श्रमिक, श्रमिक असंतोष, छात्र असंतोष, भ्रष्टाचार, नशाखोरी, जानलेवा बीमारियां, दहेज प्रथा, बाल विवाह, भ्रूण बालिका हत्या, विवाह विच्छेद की समस्या, बाल अपराध, मद्यपान, जातिवाद, अस्पष्यता की समस्या ये सभी समाजिक समस्याओं के अन्तर्गत आती है।

सामाजिक समस्याओं के निराकरण के लिए यह अत्यावश्यक है कि इनकी प्रकृति को समझा जाएँ एवं स्वरूपों की व्याख्या की जाए। भिन्न–भिन्न सामाजिक समस्याओं के मध्य पाए जाने वाले परस्पर सम्बन्धों का विश्लेषण एवं अनुशीलन कर हम इन समस्याओं के व्यावहारिक निराकरण के लिए एक नई सोच प्रस्तुत कर सकते हैं।

## 1-2 lkekftd leL;k % vFk] 0;k[;k ,oa vo/kkj.kk

सामाजिक समस्याओं को समाजशास्त्रियों ने भिन्न–भिन्न दृष्टिकोणों से समझाने का प्रयास किया है। इन सभी विद्वानों ने सामाजिक समस्या के विभिन्न स्वरूपों को निम्न परिभाषाओं के आधार पर समझने का प्रयास किया हैं।

1- vjukYM ,e- jkt लिखते हैं कि सामाजिक समस्या एक ऐसी अवस्था है जो किसी समूह के द्वारा स्वयं के सदस्यों के लिए असंतोष के उद्गम के रूप मे

पाई जाती है तथा इसमें उन विकल्पों को मान्यता प्रदान की जाती है जिसके द्वारा कोई समूह अथवा इसका सदस्य किसी न किसी प्रकार का परिवर्तन लाने के लिए प्रेरित होता है। इसे (सामाजिक परिस्थिति/अवस्था) सामाजिक समस्या इसलिए स्वीकार किया जाता है क्योंकि यह सामाजिक परिवेश में ही पाई जाती है और इसके उत्तरदायी कारक सामाजिक परिवेश में ही विद्यमान रहते हैं।

2- iky ,p- yfMl के अनुसार सामाजिक समस्याएं व्यक्तियों के कल्याण से सम्बन्धित अपूर्ण आकांक्षाएं होती है। सामाजिक समस्याओं के संदर्भ मे लेंडिस का अभिप्राय यह है कि जब व्यक्ति की इच्छाएं, आवश्यकताएं अथवा आकांक्षाओं की पूर्ति नहीं हो पाती तब वे सामजिक समस्याओं का स्वरूप ले लेती हैं।

3- fjpM lh- Qyj ,o fjpM e; l का कथन कि व्यवहार के जिन मानदण्डों अथवा परिस्थितियों को किसी समय विशेष में समाज के अधिकांश सदस्य अवांछनीय स्वीकार करते हैं, सामाजिक समस्याएं कहलाते हैं। इन विद्वानों की मान्यता है कि इन समस्याओं के निराकरण तथा कार्यक्षेत्र को सीमित करने के लिए सुधारात्मक नीतियों, कार्यक्रमों एवं सेवाओं की अपरिहार्यता होती है।

4- jkc vy ,o th- t- lYtfud सामाजिक समस्या के संदर्भ मे लिखते हैं कि यह (सामाजिक समस्या) मानवीय सम्बंधों को खतरनाक तरीके से प्रभावित करती है और समाज के अस्तित्व के लिए खतरा उत्पन्न कर देती है तथा अनेक लोगों की आशाओं पर तुषारापात करती है।

5- Dyjl ek'k dl लिखते हैं कि सामाजिक समस्या का अभिप्राय किसी ऐसी सामाजिक परिस्थिति से है जो किसी भी समाज में योग्य अवलोकनकर्ताओं का ध्यान आकर्षित करती है तथा सामुहिक अथवा सामाजिक क्रियाविधि के द्वारा समाधान निकालने का प्रयास करती है।

6- Ýkfll b- efjy तथा एच. डब्ल्यू एल्डरिज सामाजिक समस्याओं की उत्पत्ति के संदर्भ मे लिखते हैं कि सामाजिक समस्याएं उस अवस्था में जन्म लेती है जब गतिहीनता के कारण काफी संख्या मे लोग स्वयं की अपेक्षित भूमिकाओं के निर्वहन में असमर्थ होते हैं।

7- 'kiM rFkk okl के अनुसार सामाजिक समस्या समाज की कोई भी एक ऐसी सामाजिक दशा होती है जिसे समाज के बहुत बड़े भाग या शक्तिशाली भाग द्वारा अवांछनीय तथा ध्यान देने योग्य समझा जाता है।

8- ejh b- okY'k ,o iky ,p- QQ का मत है कि सामाजिक समस्याएं सामाजिक आदर्शों का विचलन है जिनका निराकरण सामुहिक प्रयासों से ही सम्भव हो सकता है।

9- iky ch gkVu ,o thjkYM vkj- yLyh लिखते हैं कि सामाजिक समस्या एक ऐसी स्थिति है जो अनेक व्यक्तियों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करती है तथा जिसका हल समूह द्वारा सामूहिक क्रिया द्वारा निकाला जाता है।

**नोट**

10- jkcV d- eVu ,o fuLcr का मत है कि सामाजिक समस्या व्यवहार का एक ऐसा रूप है जिसे समाज का एक बड़ा भाग व्यापक रूप से स्वीकृत तथा अनुमोदित मानदण्डो का उल्लंघन मानता है।

11- ohu cxl ने सामाजिक समस्या के निम्नलिखित घटकों का उल्लेख किया है :–

1. वे व्यवहार प्रतिमान जिन्हें समाज के अधिकांश लोग आपत्तिजनक मानते हैं, आपत्तिजनक सामाजिक समस्या कहलाती है।
2. सामाजिक समस्याएं समय, परिस्थिति, काल एवं सामाजिक दृष्टिकोण के आधार पर परिवर्तित हो जाती है।
3. जनसंचार के माध्यम–दूरदर्शन, समाचार पत्र–पत्रिकाएं, रेडियो, चलचित्र, सामाजिक समस्याओं के सम्बन्ध मे समाज में जागृति पैदा करने में अहम भूमिका का निवर्हन करते हैं।
4. सामाजिक समस्या सामाजिक प्रतिमान एवं सामाजिक मूल्य सापेक्ष होती है।
5. सामाजिक समस्याओं का विश्लेषण सामाजिक सम्बन्धों पर इसके प्रभाव को मद्देनजर रखते हुए किया जाता है।

फुल्लर सामाजिक समस्या के विश्लेषण में तीन तत्वों को प्रधानता प्रदान करते हैं–

1- pirurk% चेतनता से तात्पर्य समाज के अधिकांश लोगों की यह मान्यता एवं विश्वास है कि समाज की अमुक दशा या परिस्थिति, समाज में मान्यता प्राप्त मानदण्डों एवं संस्थागत प्रतिमानों के प्रतिकूल व्यवहार है तथा इसके निराकरण एवं उन्मूलन हेतु समुचित प्रयासों की आवश्यकता होती है, अन्यथा यह समाज का विघटन कर सकती है।

2- uhfr fu/kkj.k % समाज में सामाजिक समस्या के अस्तित्व को स्वीकार कर लेने के पश्चात इसके निराकरण एवं उन्मूलन के लिए लोगों से सुझाव मांगे जाते हैं तथा कमेटियों की स्थापना की जाती है। इनके द्वारा सुझाए गए अनेक सुझावों में से कतिपय सुझावों के व्यावहारिक पक्षों को मद्देनजर रखते हुए, वर्णित सामाजिक समस्या के समाधान, निराकरण एवं उन्मूलन के वांछित प्रयास किए जाते हैं एवं उक्त विषय में स्पष्ट नीति निर्धारित की जाती है।

3- l/kkj % सामाजिक समस्या के उपयुक्त साधन निर्धारित करने के पश्चात इन्हें व्यावहारिक रूप में प्रयुक्त किया जाता है तथा वांछित सुधार लाने के प्रयास किए जाते हैं।

सामाजिक समस्या की उपर्युक्त वर्णित परिभाषाओं के अनुशीलन से निम्नांकित निष्कर्ष स्थापित किए जा सकते हैं :–

1. सामाजिक समस्या एक ऐसी अवस्था है जो सापेक्षिक रूप से अनेक लोगों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करती है।
2. सामाजिक समस्या को समाज के अधिकांश लोगों द्वारा सामूहिक कल्याण के लिए खतरा माना जाता है।
3. सामाजिक समस्या सम्पूर्ण समाज के अस्तित्व के लिए खतरा उत्पन्न करती है।
4. यह एक ऐसी कष्टप्रद अवांछनीय दशा है जो व्यक्ति एवं समाज के विकास में बाधा उत्पन्न करती है।

नोट

5. सामाजिक समस्या के प्रति अधिकांश लोग जागरूक होते हैं तथा इसके निराकरण हेतु सजग प्रयत्नशील रहते हैं।

6. सामाजिक समस्या के निराकरण हेतु समाज द्वारा वांछित प्रयास किए जाते हैं तथा इसके नियंत्रण के लिए विशिष्टीकृत संस्थागत अभिकरण पाए जाते हैं।

7. सामाजिक समस्या के विषय में लोगों का यह दृढ़ विश्वास होता है कि समाज की यह दशा सामाजिक मूल्यों का पतन कर देती है।

8. सामाजिक समस्या के अस्तित्व में आने के पश्चात् इसका निराकरण करने के लिए अनेक सुझावों में से किसी एक को स्वीकार कर तद्नुरूप साधनों को प्रयुक्त किया जाता है जिससे कि इसको समूल रूप से नष्ट किया जा सके।

सार रूप में हम यह कह सकते हैं कि सामाजिक समस्याएँ किसी भी समाज की वे दशाएँ एवं परिस्थितियाँ हैं जो समाज के अस्तित्व, परस्पर अन्तनिर्भरता, सुदृढता तथा स्थापित मूल्यों के लिए खतरा उत्पन्न करती हो। सामाजिक समस्याएं सामूहिक कल्याण में बाधा उत्पन्न कर समाज को सचेतन एवं जागरूक बनाती हैं तथा इसके निराकरण एवं समाधान हेतु वांछित प्रयास किये जाते हैं।

## 1-3 lkekftd leL;kvksa ds izdkj

tkWu t- dSu ने सामाजिक समस्याओं को दो भागो में विभाजित किया है :–

1. प्रकट सामाजिक समस्याएं
2. प्रच्छन्न/गुप्त सामाजिक समस्याऐं

**1- izdV lkekftd leL;k %** प्रकट सामाजिक समस्या एक ऐसी अवांछित सामाजिक अवस्था है जिसके लिये राज्य अथवा निजी अभिकरणों अथवा दोनों के द्वारा उपचारात्मक प्रयास किए जाते हैं। आमजन को प्रकट सामाजिक समस्या के प्रति जागरूक एवं सजग बना दिया जाता है और लोगों को यह विश्वास हो जाता है कि अमुक दशा समाज के अस्तित्व एवं मूलभूत व्यवस्थाओं के सुचारू रूप से संचालन के लिये खतरा है। अपराध, बाल अपराध, मद्यपान, बेरोजगारी, जनसंख्या, विस्फोट, निर्धनता आदि सामाजिक समस्याओं को इस श्रेणी में समाविष्ट किया जाता है।

**2- izPNUu@xqIr lkekftd leL;k %** गुप्त सामाजिक समस्या समाज की वह अवांछित दशा होती है जिसके निराकरण के लिये किसी भी प्रकार का उपचारात्मक प्रयास नही किया गया है, तथापि वह समाज के लिये खतरा होती है। वस्तुतः प्रच्छन्न सामाजिक समस्या वास्तविक रूप में, यथार्थ के धरातल पर जो समाज को किसी भी प्रकार का खतरा तो पैदा नही करती परन्तु समाज का एक वर्ग इसे समाज के अस्तित्व के लिये भयावह अनुभूत करता है। यह तब तक सामाजिक समस्या के रूप मे प्रतीत नहीं होती जब तक इसके प्रति लोगों में जाग्रति एवं जागरूकता पैदा नही की जाती और इसके उन्मूलन के लिए सामूहिक प्रयास नही किये जाते परन्तु, जब इन समस्याओं के प्रति समाज में जागरूकता उत्पन्न हो जाती है तब ये प्रकट सामाजिक समस्याओं का रूप ले लेती हैं तथा इनके समाधान एवं निराकरण हेतु समाज द्वारा वांछित प्रयास किए जाते हैं। इस सन्दर्भ में यह उल्लिखित करना उपयुक्त होगा कि अस्पृश्यता, सतीप्रथा, बाल विवाह,

विधवा पुनर्विवाह, असमानता सदियों से अप्रकट सामाजिक समस्याएँ थीं, परन्तु धीरे–धीरे समाज में जागरूकता आने के पश्चात् निजी संगठनों एवं समाज के पुरोधाओं ने इनके समाधान एवं उन्मूलन के लिए सामूहिक प्रयास किए।

**नोट**

## 1-4 lkekftd leL;k dh izd`fr % O;fDrxr ,oa lkekftd leL;k

सामाजिक समस्या की अवधारणा को असंदिग्ध एवं स्पष्ट रूप से समझने के लिए व्यक्तिगत एवं सामाजिक समस्या के भेद को जानना अपरिहार्य है। व्यक्तिगत समस्या का तात्पर्य उस अवांछित अवस्था एवं परिस्थिति से होता है जो व्यक्ति के समग्र व्यक्तित्व के विकास एवं उन्नयन में बाधा उत्पन्न करती है जिसके परिणाम स्वरूप उसके व्यक्तित्व में विघटन होने लगता है। लेमर्ट का मत है कि व्यक्तिगत समस्या वह परिस्थिति अथवा प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत व्यक्ति अपना व्यवहार को समाज के अनुरूप स्थिर नहीं रख पाता। सामाजिक भूमिकाओं के चयन की प्रक्रिया में उसे असमंजस एवं भ्रम व्याप्त रहता है तथा उसके व्यक्तित्व में असंतुलन की स्थिति पैदा हो जाती है। वह संस्कृति द्वारा निर्धारित मानदण्डों एवं प्रतिमानों की अपेक्षाओं के अनुरूप पालना नहीं कर पाता जिससे उसके व्यवहार में विचलन तथा विघटन दृष्टिगोचर होता है। ई.आर.मॉवरर अपनी कृति Disorganization & Personal and Social में लिखते हैं कि व्यक्तिगत समस्या व्यक्ति के उन व्यवहारों का प्रतिनिधित्व करती है जो संस्कृति द्वारा मान्य मानदण्डो एवं प्रतिमानो के प्रतिकूल होते हैं तथा समाज उन्हें अस्वीकृति प्रदान करते हैं।

## 1-5 O;fDrxr ,oa lkekftd leL;k esa vUrj

1. व्यक्तिगत समस्या का प्रत्यक्ष सम्बन्ध एवं प्रभावक्षेत्र व्यक्ति विशेष तक सीमित रहता है। यह व्यक्ति की मृत्यु के साथ ही समाप्त हो जाती हैं। व्यक्तिगत समस्या के समाधान हेतु व्यक्ति को ही प्रयास करना पड़ता है। सामाजिक समस्या का सम्बन्ध एवं प्रभाव क्षेत्र सम्पूर्ण समाज अथवा उसके एक बड़े भाग से होता है तथा इसके निवारण के लिए समाज सामुहिक रूप से प्रयत्नशील रहता है। यह समाज की निरन्तरता की भांति दीर्घ अवधि तक विद्यमान रहती हैं तथा इनके निवारण के पश्चात भी, ये समाज में किसी न किसी मात्रा में पाई जाती हैं।

2. व्यक्तिगत समस्या के जन्म के लिए व्यक्ति अथवा सीमित लोग ही उत्तरदायी होते हैं तथा इसका प्रभाव एवं परिणाम व्यक्ति तक ही सीमित रहता है। दूसरी ओर सामाजिक समस्या का जन्म समाज अथवा उसकी किसी इकाई द्वारा होता है। सामाजिक समस्या के परिणाम सम्पूर्ण समाज अथवा उसकी किसी इकाई से सम्बन्धित लोगों को ही प्रभावित करते हैं।

3. व्यक्तिगत समस्या व्यक्ति के समग्र व्यक्तित्व के विकास एवं उन्नयन मे बाधा उत्पन्न करती है जिससे व्यक्ति के व्यक्तित्व में विघटन एवं असंतुलन की स्थिति पैदा हो जाती है परन्तु सामाजिक समस्या समाज की संरचना एवं संगठन को अव्यवस्थित कर देती है जिसमे समाज के विकास एवं प्रगति में बाधा उत्पन्न हो जाती है।

निम्नांकित चार्ट द्वारा व्यक्तिगत एवं सामाजिक समस्या के विभेद का तात्पर्य यह कदापि नहीं है कि ये परस्पर पृथक हैं, वरन इन दोनो के मध्य घनिष्ठ सम्बन्ध पाया जाता

है। ये एक दूसरे से प्रभावित होती हैं तथा प्रभावित करने के साथ–साथ एक दूसरे को जन्म भी देती है।

नोट

| Ø l- | vk/kkj | 0;fDrxr leL;k | lkekftd leL;k |
|---|---|---|---|
| 1 | उत्पत्ति | व्यक्तिगत समस्या के लिए व्यक्ति स्वयं अथवा कुछ व्यक्ति उत्तरदायी होते हैं। | सामाजिक समस्या के उद्भव के लिए समाज की सामाजिक इकाईयाँ यथा– समूह, समुदाय, जाति अथवा कुछ सदस्य जिम्मेदार होते हैं। |
| 2 | नुकसान | व्यक्तिगत समस्या सम्बन्धित व्यक्ति को ही नुकसान पँहुचाती है। | सामाजिक समस्या समाज की कुछ इकाईयों या सम्पूर्ण संसार को नुकसान पहुँचाती हैं। |
| 3 | प्रभाव क्षेत्र | व्यक्तिगत समस्या का सम्बन्ध एवं प्रभाव क्षेत्र व्यक्ति विशेष तक ही सीमित रहता है। | सामाजिक समस्या का सम्पूर्ण समाज अथवा इसकी इकाईयों को प्रभावित करता है। |
| 4 | प्रभाव की प्रकृति | व्यक्तिगत समस्याएँ प्रभावित व्यक्ति के व्यक्तित्व का विखण्डन कर उसके व्यवहार को समाज के मानदण्डों एवं प्रतिमानों के प्रतिकूल बनाती हैं। | सामाजिक समस्याऐं उस परिस्थिति में उत्पन्न होती हैं जब समाज के अधिकांशलोग समाज द्वारा स्वीकृत संस्थागत साधनों एवं सांस्कृतिक लक्ष्यों को अस्वीकृत कर देते हैं। |
| 5 | लक्ष्य एवं साधन | व्यक्तिगत समस्याओं में व्यक्ति संस्थागत साधनों एवं सांस्कृतिक लक्ष्यों को त्याग देता है। | सामाजिक समस्याऐं उस परिस्थिति में उत्पन्न होती हैं जब समाज के अधिकांशलोग समाज द्वारा स्वीकृत संस्थागत साधनों एवं सांस्कृतिक लक्ष्यों को अस्वीकृत कर देते हैं। |
| 6 | बाधा क्षेत्र | व्यक्तिगत समस्या व्यक्ति के व्यक्तित्व मे असंतुलन उत्पन्न कर उसकी प्रगति एवं विकास मे बाधा पैदा करती है। | सामाजिक समस्या समाज की प्रगति एवं विकास मे बाधा उत्पन्न करती है। |
| 7 | कालावधि | व्यक्तिगत समस्या का अस्तित्व व्यक्ति के जीवन काल तक ही सीमित रहता है। अतः यह सीमित अवधि तक ही विद्यमान रहती है। | सामाजिक समस्या दीर्घ अवधि तक समाज में विद्यमान रहती है। इसका अस्तित्व समाज में तब तक बना रहता है जब तक इसका निराकरण एवं उन्मूलन नहीं किया जाता । इन समस्याओं की समय अवधि, इनकी प्रकृति और निराकरण के उपायों की तीव्रता पर आधारित हाती है। |

नोट

| | | | |
|---|---|---|---|
| 8 | समाधान | व्यक्तिगत समस्या से निजात पाने के लिये व्यक्ति एवं उससे सम्बन्धित कुछ लोग ही प्रयासरत रहते हैं। | सामाजिक समस्या का सम्बन्ध सम्पूर्ण समाज के अस्तित्व से सम्बद्ध होता है। इसीलिए इसके समाधान, निराकरण एवं उन्मूलन के लिए समाज अथवा समाज द्वारा निर्धारित अभिकरण एवं संस्थायें प्रयासरत रहती हैं। |

## 1-6 lkekftd leL;kvk d dkj.k

सामाजिक समस्याओं की उत्पत्ति अनेक कारकों एवं कारणों से होती है। समस्या की प्रकृति को समझकर ही कारणों का पता लगाया जा सकता है। यहाँ पर हम प्रमुख समाज वैज्ञानिकों के विचारों को उल्लिखित करने का प्रयास करेंगे।

jkcVl ,- fuLcr ने सामाजिक समस्या के उद्‌भव के मूल में चार प्रमुख कारणों का उल्लेख किया है। ये निम्न प्रकार से हैं :–

1. संस्थाओं में संघर्ष
2. सामाजिक गतिशीलता
3. व्यक्तिवादी दृष्टिकोण
4. व्याधिकीय परिस्थिति

रॉब एवं सेल्जनिक ने सामाजिक समस्याओं के पांच प्रमुख कारणों को अपनी पुस्तक मेजर सोशियल प्रोब्लम्स में उल्लिखित किया है। ये निम्न प्रकार से हैं :–

1. संगठित समाज के लोगों की पारस्परिक सम्बन्धों को सुचारू रूप से संचालित एवं नियमित करने की क्षमताओं का ह्रास होना।
2. समाज की संस्थाओं में विचलन का पाया जाना।
3. समाज के सदस्यों द्वारा समाज के मानदण्डों एवं नियमों का उल्लंघन करना।
4. समाज के मानदण्डों एवं मूल्यों का उचित रीति से एवं सम्यक रूप से सामाजीकरण की प्रक्रिया के द्वारा एक पीढी से दूसरी पीढी को हस्तान्तरण नहीं होना।
5. समाज के अधिकांश सदस्यों की आकांक्षाओं एवं अपेक्षाओं की संरचना में तारतम्यता का अभाव होना।

iky yf.Ml ने सामाजिक समस्याओं के चार प्रमुख कारणों का उल्लेख किया है, जो निम्नांकित हैं :–

1. व्यक्तिगत समायोजन में असफलता का पाया जाना।
2. सामाजिक समस्या का त्रुटिपूर्ण होना।
3. संस्थागत समायोजन में असफलता का विद्यमान रहना।
4. सामाजिक नीतियों में संस्थागत विलम्बन का पाया जाना।

## 1-7 lkekftd leL;kvk d iie[k fl)kUr

नोट

समाज वैज्ञानिकों ने सामाजिक समस्याओं के मूल में पाए जाने वाले मूलभूत तत्वों का वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अध्ययन कर वस्तुनिष्ठ विश्लेषण एवं सार देने का प्रयास किया है। यद्यपि, भिन्न–भिन्न सामाजिक समस्याओं का अलग–अलग आधार होता, तथापि इसमें परस्पर सम्बन्ध भी पाया जाता है। सामाजिक समस्याओं के संदर्भ में निम्नलिखित सिद्धान्त प्रमुख हैं –

1. सामाजिक विघटन का सिद्धान्त (Theory of Social Disorganization)
2. सांस्कृतिक विलम्बन का सिद्धान्त (Theory of Cultural Lag)
3. मूल्य संघर्ष का सिद्धान्त (Value Conflict Theory)
4. वैयक्तिक विचलन का सिद्धान्त (Theory of Pesonal Deviation)

### 1- lkekftd fo?kVu dk fl)kUr **(Theory of Social Disorganization) :**

समाज वैज्ञानिकों का मत है कि सामाजिक विघटन सामाजिक समस्याओं का हेतु है। रोनाल्ड एल. वारेन ने इस विचारधारा को प्रस्थापित किया हैं। वारेन के अनुसार 'सामाजिक विघटन एक ऐसी स्थिति है जिसमे मतैक्य की कमी, संस्थाओं के एकीकरण का अभाव और सामाजिक नियंत्रण के साधनों मे ह्रास पाया जाता है।' समाज के अधिकांश सदस्यों में मतैक्य विद्यमान नहीं रहता तथा इसके कारण समूह के लक्ष्यों के सम्बन्ध में मतभेद एवं परस्पर विरोधी भावनात्मक विचार पाए जाते हैं। लोगों के लक्ष्य समाज सम्मत मानदण्डों के अनुरूप नहीं होते हैं। समाज में इस प्रकार की स्थिति भिन्न–भिन्न सामाजिक संस्थाओं की कार्य संचालन प्रणाली मे बाधा उत्पन्न करती है जिसके कारण इन संस्थाओं में परस्पर तनाव एवं संघर्ष पैदा हो जाता है जिससे ये संस्थाएँ तालमेल के अभाव में एक दूसरे के प्रतिकूल कार्य करने लगती हैं। इस प्रकार समाज में एक ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है जो समाज के सदस्यों को समाज के मानदण्ड एवं प्रतिमानों के अनुरूप आचरण करने से रोक देती है। जब समाज के अधिकांश सदस्य समाज के नियमों के विरूद्ध आचरण करने लगते हैं तब यह स्थिति समाज के सम्मुख सामाजिक समस्या के रूप में दृष्टिगोचर होती है। इस विचारधारा के समर्थकों की मान्यता है कि प्राचीनकाल के समाज सापेक्ष रूप से स्थिर एवं साम्यवादी थे। इन समाजों मे व्यक्ति की प्रस्थिति एवं भूमिका स्पष्ट थी तथा परम्परागत रूप से लोग समाज के मानदण्डों, प्रतिमानों, मूल्यों, परम्पराओं एवं रीति–रिवाजों की अनुपालना कर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करते थे। यह एक ऐसी स्थिति थी जिसमें व्यक्तियों के क्रिया कलाप एवं मूल्यों मे समन्वय तथा सामंजस्य था। सामाजिक संस्थाओं मे एकीकरण विद्यमान था। समाज की संस्थाएं परस्पर तालमेल के साथ संगठनात्मक रूप से लक्ष्यों की प्राप्ति करती थी। इन समाजों में सामाजिक परिवर्तन की गति अपेक्षाकृत धीमी होती है।

शनैः–शनैः समाज में परिवर्तन की गति बढ़ती गई। अंततोगत्वा एक ऐसी सामाजिक स्थिति का प्रादुर्भाव हुआ जिसमें या तो पुरानी मान्यताएं एवं क्रियाविधि समाप्त हो गई अथवा उन्हें अनुपयोगी समझकर उपेक्षित कर दिया गया। समाज के सदस्य प्रचलित साधनों के स्थान पर नवीन साधनों को प्रयुक्त कर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति में संलग्न

होने लगे। व्यवहार के परम्परागत नियमों का समाज में प्रभाव क्षीण हो गया। जिसके परिणामस्वरूप समाज के सदस्यों के व्यवहार को नियमित एवं नियंत्रित करने की शक्ति लगभग समाप्त हो गई। समाज के सदस्य समाज की परम्पराओं, प्रतिमानों एवं मूल्यों का उल्लंघन करने लगे। सामाजिक क्रियाओं और सामाजिक मूल्यों मे संघर्ष हो गया। नवीन नियमों को पूर्णरूपेण स्वीकार नहीं किया गया। समाज के सदस्यों के व्यवहार अनियंत्रित हो गए। इस प्रकार की स्थिति सामाजिक विघटन का परिचायक है, जो कि अनेक सामाजिक समस्याओं के लिए उत्तरदायी है। Fkkel ,o tukfudh का मत है कि सामाजिक विघटन के फलस्वरूप अनेक सामाजिक समस्याओं का जन्म होता है क्योंकि सामाजिक विघटन की अवस्था में समाज के सदस्य अपनी इच्छानुसार लक्ष्यों एवं साधनों को प्रयुक्त करते हैं। okju भी इस सिद्धान्त से सहमत हैं। इनका मत है कि सामाजिक विघटन समाज की ऐसी स्थिति है जिसमें अव्यवस्था, मतभेद, टकराव एवं शिथिल सामाजिक नियंत्रण पाए जाते हैं। सामाजिक संस्थाओं में तालमले का अभाव रहता है। सामाजिक विघटन की स्थिति में समाज में अनेक सामाजिक समस्याओं का जन्म होता है।

jkcVZ Qfjl] okyl QQ इत्यादि समाज वैज्ञानिकों ने इस सिद्धान्त को एकांगी माना है। jkcVZ Qfjl का मत है कि यह सिद्धान्त उस परिस्थिति की स्पष्ट व्याख्या नहीं करता जिसमें सामाजिक समस्याएं जन्म लेती हैं। कई बार ऐसा भी देखने को मिलता है कि समाज में विघटन के अभाव में भी अनेक समस्याऐं उपस्थित रहती है।

### 2- lkaLd`frd foyEcu dk fl)kUr (Theory of Cutural Lag) :

परिवर्तन संसार का अटल नियम है। संस्कृति के विभिन्न आयामों मे परिवर्तन समान गति से नही होता। संस्कृति के विभिन्न पक्षों मे परिवर्तन की असमान दर सामाजिक समस्याओं को जन्म देती है। विलियम एफ. ऑगबर्न ने संस्कृति के दो प्रकार बताये हैं।

1. भौतिक संस्कृति
2. अभौतिक संस्कृति।

ऑगबर्न का मत है कि किसी भी समाज की संस्कृति के भौतिक पक्ष में परिवर्तन तीव्र गति से होते हैं जबकि अभौतिक पक्ष संस्कृति में परिवर्तन की गति अपेक्षाकृत रूप से धीमी होती है। इस प्रकार अभौतिक सस्कृति मे परिवर्तन, भौतिक संस्कृति की तुलना में विलम्ब से होता है। इसी को ऑगबर्न ने सांस्कृतिक विलम्बन की अवधारणा द्वारा समझाने का प्रयास किया है। सांस्कृतिक विलम्बन की उपकल्पना में तीन आधारभूत तथ्य निहित हैं :–

1. संस्कृति के अनेक पक्ष अथवा आयाम भिन्न–भिन्न दरों के अनुसार परिवर्तित होते हैं।
2. संस्कृति के भौतिक पक्ष अभौतिक/अमूर्त/वैचारिक पक्षों की तुलना में अधिक तीव्र गति से परिवर्तित होते हैं।
3. भौतिक परिवर्तनों को अंगीकार करने और उनके अनुरूप सामाजिक संस्थाओं के विकसित होने के मध्य विलम्बन ही सामाजिक समस्याओं के जन्म के लिए उत्तरदायी होता है।

वर्तमान समय के आधुनिक औधोगिक समाजों में संस्कृति के भौतिक पक्षों में परिवर्तन क्रांतिकारी गति से हो रहे हैं परन्तु इन परिवर्तनों के अनुरूप संस्कृति के अमूर्त स्वरूप में परिवर्तन धीमी गति से हो रहे हैं। इस प्रकार भौतिक एवं अभौतिक पक्ष में होने वाले परिवर्तनों के मध्य सामंजस्य स्थापित नहीं हो रहा है। यह स्थिति सांस्कृतिक विलम्बन की ही है। सांस्कृतिक विलम्बन की स्थिति समाज मे संक्रमण काल का परिचायक होती है। इस कारण समाज में संघर्ष देखने को मिलता है जो कि सामाजिक समस्याओं के जन्म के लिये उत्तरदायी होता है।

सांस्कृतिक विलम्बन का सिद्धान्त समाज में विद्यमान उन सामाजिक समस्याओं की व्याख्या करने मे समर्थ है जिनका उद्भव भौतिक एवं अभौतिक संस्कृतियों के भिन्न–भिन्न परिवर्तनों के कारण होता है। अन्य कारणों से उत्पन्न सामाजिक समस्याओं की व्याख्या करने में यह सिद्धान्त विफल रहता है।

### 3- eY;k e l?k"k dk fl)kUr **(Value Conflict Theory) :**

मूल्य वे सांस्कृतिक एवं व्यक्तिगत आदर्श हैं जिनके द्वारा वस्तुओं अथवा घटनाओं की तुलना की जाती है, तथा ये वे लक्ष्य एवं उद्देश्य भी हैं जो व्यक्ति के व्यवहार को निर्देशित करते हैं। क्यूबर, हार्पर, वॉल्लर इत्यादि समाज वैज्ञानिकों का मत है कि सामाजिक समस्याएँ विभिन्न मूल्यों में टकराव, अस्वीकृति, मतभेद एवं संघर्ष के कारण जन्म लेती है। समाज मे एकरूपता, संगठन, व्यवस्था एवं संतुलन बनाए रखने के लिए मूल्य अपरिहार्य हैं। प्रत्येक समाज की एक संस्थागत मूल्य व्यवस्था होती है जो इसके सदस्यों के व्यवहारों, सामाजिक क्रियाओं एवं सामाजिक सम्बन्धों को नियमित, नियंत्रित, निर्देशित एवं संचालित करती है। समाज के लक्ष्यों की पूर्ति किन साधनों से होगी, इसका निर्धारण सामाजिक मूल्य ही करते हैं। समाज की कार्यप्रणाली, रीतियां, पारस्परिक सम्बन्ध, संगठन, स्वतंत्रता, नियंत्रण इत्यादि मूल्यों द्वारा ही निर्धारित होते हैं।

मूल्य परिवर्तनशील होते हैं। समाज में भिन्न–भिन्न समूहों, समुदायों एवं संस्थाओं के अलग–अलग मूल्य पाए जाते हैं। मूल्यों के भेद के कारण अथवा मूल्यों के सामान्य अर्थो के बदल जाने से सामाजिक समस्याओं का जन्म होता है। एक ही मूल्य के संबंध मे व्यक्तियों, समूहों, वर्गों तथा पीढियों मे जब मतभेद हो जाते हैं तब वे सामाजिक समस्याओं को जन्म देते हैं। मूल्यों के अनुरूप ही उनके भिन्न–भिन्न साधन एवं लक्ष्य होते हैं। जब इन साधनों एवं लक्ष्यों मे तनाव, टकराव एवं संघर्ष होता है तब ये सामाजिक समस्या पैदा करते हैं। उदाहरणार्थ पूंजीवादी व्यवस्था का लक्ष्य व्यक्तिगत लाभ एवं इसके लिए आवश्यक साधन जुटाना होता है, जबकि साम्यवादी व्यवस्था के मूल्य ठीक इसके विपरीत होते हैं। अतः इन दोनों व्यवस्थाओं पूंजीवादी एवं साम्यवादी, के मूल्यों में टकराव एवं संघर्ष के परिणामस्वरूप सामाजिक समस्याओं का जन्म होता है।

D;cj ,o gkilj का मत है कि सामाजिक समस्याओं का मूल कारण दो पीढ़ियों मे पाए जाने वाला मूल्यों का संघर्ष है। प्रौढ़ पीढ़ी एवं युवा पीढ़ी के मूल्यों की भिन्नता के कारण इनमें टकराव उत्पन्न होता है जो कि सामाजिक समस्याओं को जन्म देता है। फुल्लर की मान्यता है, कि जब समाज के सदस्यों में व्यक्तिवादी दृष्टिकोण बढ़ जाता है और अपने स्वार्थ के वशीभूत होकर ये लोग अपने कर्तव्यों की पालना उचित रीति से नहीं कर पाते तब सामाजिक समस्याऐं पैदा हो जाती हैं। वॉल्लर का मत है कि सामाजिक

समस्याओं की उत्पत्ति संगठन सम्बंधी (व्यक्तिवादी लोकाचार) और मानवतावादी लोकाचार (समूहवादी लोकाचार) के संघर्ष के कारण होती है।

नोट

मूल्य संघर्ष के आधार पर हम सभी प्रकार की सामाजिक समस्याओं को नहीं समझ सकते क्योंकि समाज मे अनेक ऐसी सामाजिक समस्याऐं भी होती हैं जिनका मूल्यों से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं होता।

### 4- o|;fDrd fopyu dk fl)kUr **(Theory of Personal Eviation)**

वैयक्तिक विचलन के सिद्धान्त के अन्तर्गत उन व्यक्तियों की प्रेरणाओं, व्यवहार एवं क्रिया–विधि का वैज्ञानिक एवं तथ्यपरक अध्ययन किया जाता है जिनके कारण सामाजिक समस्याओं का जन्म होता है। विपथगमन से संबंधित व्यक्ति समाज में समस्याओं को जन्म देने में महती भूमिका का निर्वहन करते हैं। ek'kZy ch- DyhukMZ foiFkxkeh व्यवहार को परिभाषित करते हुए लिखते हैं कि विपथगामी व्यवहार समूह के मानदण्डों एवं आदर्श मानकों का उल्लंघन ही है। विपथगामी व्यवहार एक ऐसा व्यवहार है जो एक विशिष्ट प्रकार से निर्धारित होता है। समाज इस व्यवहार के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करता है। यह प्रतिक्रिया जिसमें समाज के मानक एवं आदर्शों का उल्लंघन करते वालों को विशिष्ट दण्ड दिया जाता है, विपथगामी व्यवहार के अध्ययन में महत्वपूर्ण आयाम हैं। यहाँ पर यह लिखना समीचीन होगा कि विपथगमन व्यवहार के अन्तर्गत केवल उन्हीं व्यवहारों को सम्मिलित किया जाता है जो समाज द्वारा पूर्णतः अस्वीकृत तथा अमान्य हों एवं जो किसी समूह अथवा समुदाय की सहनशीलता की सीमा का उल्लंघन कर जाते हैं। इस प्रकार के व्यवहारों के अन्तर्गत वैश्यावृत्ति, अपराध, मद्यपान, मादक दवाईयों का सेवन, मानसिक विकृतियाँ, अस्पृश्यता, महिलाओं पर अत्याचार, इत्यादि को समाविष्ट किया जाता है।

okYVj ch- feyj foiFkxkeh व्यवहार को सामाजीकरण की प्रक्रिया के अन्तर्गत सीखा गया व्यवहार मानते हैं। विपथगामी व्यवहार निष्पादित करने वाला व्यक्ति समूह द्वारा मान्य एवं स्वीकृत सांस्कृतिक मानकों, आदर्शों एवं मूल्यों के प्रतिकूल/विपरीत मानकों, आदर्शों एवं मूल्यों को सामाजीकरण की प्रक्रिया के अन्तर्गत सीखता है और इसे अपने व्यक्तित्व में समाहित कर लेता है। मिलर का मत है कि निम्न श्रेणी के लोगों को समाज सम्मत आदर्शों के अनुरूप जीवनयापन के अवसर उपलब्ध नहीं हो पाते, इसीलिए ये लोग आपराधिक विकल्पों का सहारा लेते हैं। डेविड माटजा, मिलर के इस मत से पूर्णतः असहमत हैं। कोई भी व्यक्ति समाज में विपथगामी व्यवहार इसलिए करता है कि वह समाज द्वारा मान्य एवं स्वीकृत नियमों की पालना करने में असमर्थ हो जाता है तथा इन नियमों के पालन में असफल भी हो जाता है। विपथगामी व्यवहार करने वाले वे लोग होते हैं जिनका समाज के सम्मत मानदण्डों के अनुरूप सामाजीकरण नहीं होता।

सामाजिक समस्याओं से सम्बन्धित उपर्युक्त वर्णित चारों सिद्धान्त एक विशिष्ट दृष्टिकोण से तथा विशिष्ट परिप्रेक्ष्य के अन्तर्गत किसी भी सामाजिक समस्या को समझने एवं समझाने का प्रयास करते हैं क्योंकि प्रत्येक सामाजिक समस्या की उत्पत्ति के विशिष्ट कारण एवं कारक होते हैं। वस्तुतः किसी भी सामाजिक समस्या की उत्पत्ति के अनेक कारक एवं कारण होते हैं। प्रत्येक सामाजिक समस्या अन्य सामाजिक समस्याओं से अन्तर सम्बन्धित एवं एक विशिष्ट संरचनात्मक तानेबाने में गुथी हुई होती है। परन्तु इतना तो स्पष्ट है कि प्रत्येक सामाजिक समस्या की उत्पत्ति समाज से ही होती है।

## 1-8 lkekftd leL;kvk dk lek/kku

सामाजिक समस्याओं के संदर्भ मे यह प्रश्न इनके निवारण से सम्बन्धित है। इन समस्याओं का निवारण किस प्रकार किया जा सकता है? तथा क्या इन सामाजिक समस्याओं का हल सम्भव है, इस प्रश्न के प्रत्युत्तर में सकारात्मक दृष्टिकोण को अपनाया जा सकता है। सामाजिक समस्याओं के इतिहास पर विहंगम दृष्टि डालने से हमे पता चलता है कि समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति स्थायित्व एवं संतुलन बनाए रखने के लिए भिन्न–भिन्न समाजों ने अपनी–अपनी सामाजिक समस्याओं को यथा सम्भव हल करने का प्रयास किया है। किसी भी सामाजिक समस्या का हल सामाजिक समस्या की प्रकृति और तीव्रता पर निर्भर करता है। अगर कोई सामाजिक समस्या इस प्रकार की है जिसका समाधान त्वरित गति से करना अपरिहार्य है तो समाज के मूर्धन्य लोगों ने सामाजिक व्यवस्था को सुचारू रूप से संचालित करने के लिए वांछित हल प्रस्तुत किए हैं और समस्या की तीव्रता को कम करने का भरसक प्रयास भी किया है। परन्तु समाज में उन साधनों की कमी अवश्य देखी जा सकती है जो समस्या को पूर्ण रूपेण निस्तारण करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। सामाजिक समस्याओं के समाधान हेतु निम्नांकित तीन दृष्टिकोण प्रस्तुत किये जा सकते हैं –

### 1- cgqdkjdoknh nf"Vdks.k **(Multipal Factor Perspective) :**

समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल है। यह एक अमूर्त एवं जटिल व्यवस्था है। अतः किसी भी सामाजिक प्रघटना की पृष्ठभूमि में अनेक कारक निहित होते हैं। इसी तथ्य को मद्देनजर रखते हुए हम कह सकते हैं कि सामाजिक समस्याओं के मूल में अनेक कारक विद्यमान रहते हैं। बेरोजगारी, बाल विवाह, भिक्षावृत्ति, मद्यपान, छात्र–असंतोष इत्यादि सामाजिक समस्याओं के समाधान हेतु, बहुकारकवादी दृष्टिकोण को अंगीकार करना चाहिए। किसी भी सामाजिक समस्या के वैज्ञानिक एवं तथ्यपरक समाधान हेतु अनेक कारकों पर बल देने के कारण इस मत को बहुकारकवादी दृष्टिकोण के नाम से अभिहित किया जाता है।

### 2- ikjLifjd lEc)rk **(Inter-Relatedness) :**

सामाजिक समस्याऐं परस्पर घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित होती हैं तथा इनके अनेक कारण होते हैं जो एक दूसरे पर अन्योन्याश्रित होते हैं। किसी भी सामाजिक समस्या का स्वतंत्र रूप से अन्य समस्याओं से सम्बन्धित हुए बिना पृथक अस्तित्व नहीं होता। प्रत्येक सामाजिक समस्या अनेक समस्याओं का अन्तर संबंधित परिणाम होती है। इसीलिए किसी भी सामाजिक समस्या के निराकरण के लिए अनेक परस्पर कारकों तथा कारणों का वैज्ञानिक एवं वस्तुनिष्ठ उपागमों द्वारा समाधान खोजना अपरिहार्य है। उदाहरण के लिए बेरोजगारी की समस्या के मूल मे अन्य सामाजिक समस्याएं यथा जनसंख्या वृद्धि, दोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली, लघु एवं कुटीर उद्योगों का पतन इत्यादि जिम्मेदार हैं। ये परस्पर सम्बन्धित भी हैं। बेरोजगारी की समस्या के समाधान के लिए इसके मूल में विद्यमान अनेक समस्याओं का निराकरण करना अति आवश्यक है।

### 3- lkif{krk (Relativity) :

सामाजिक समस्याएं स्थान, काल, समाज एवं संस्कृति सापेक्ष होती हैं, अर्थात किसी भी समाज में किसी निश्चित समयावधि में कोई दी हुई एक क्रिया या व्यवहार सामाजिक समस्या हो सकती है। आज भारत में जिस स्थिति अथवा दशा को एक सामाजिक समस्या के रूप में स्वीकार किया जाता है वह किसी कालावधि में एक समस्या नही थी। उदाहरण के लिए भूतकाल में अस्पृश्यता एवं छुआछूत एक सामाजिक समस्या नहीं मानी जाती थी, परन्तु वर्तमान में इसे एक गम्भीर सामाजिक समस्या के रूप में स्वीकार किया जाता है। इसी प्रकार वर्तमान में जिस स्थिति को हम एक सामाजिक समस्या मानते हैं, सम्भव है वही स्थिति आने वाले भविष्य में सामान्य दशा बन जाए और समाज उसे समस्या नही माने।

उपर्युक्त वर्णित तीनों दृष्टिकोणों के द्वारा किसी भी सामाजिक समस्या से छुटकारा पाया जा सकता है, परन्तु समस्याविहीन समाज की कल्पना करना असम्भव सा प्रतीत होता है। यद्यपि दृढ़ इच्छा शक्ति के द्वारा किसी भी सामाजिक समस्या की उग्रता एवं तीव्रता पर अंकुश लगाया जा सकता है।

सामाजिक समस्याओं का समाधान ढूंढने में कठिनाईयों का सामना भी करना पड़ता है। हेरी एम. जोनसन की मान्यता है कि शक्तिशली मनोभाव तथा निहित स्वार्थो द्वारा समर्थित सामाजिक संरचना, सामाजिक समस्याओं का समाधान निकालने में बाधा उत्पन्न करते हैं। समाज मे सामाजिक समस्या की उपस्थिति से कुछ शक्तिशाली लोगों के हितों की पूर्ति होती है। सतही तौर पर ये लोग समस्या के निस्तारण में रूचि दिखलाते हैं परन्तु आन्तरिक रूप से समस्या के बने रहने की आकांक्षा भी करते हैं। अनेक लोग दीर्घ अवधि तक किसी दशा को समस्या के रूप में स्वीकार ही नही करते।

सामाजिक समस्याओं के अध्ययन की अपरिहार्यता : सामाजिक समस्याओं के अध्ययन के निम्नलिखित तीन प्रमुख कारण हो सकते हैं –

1. सामाजिक समस्याओं के अध्ययन के द्वारा समाज वैज्ञानिकों की भूमिका का पता चल जाता है।
2. सामाजिक समस्याओं के अध्ययन के द्वारा ही लोगों को बताया जा सकता है कि अमुक अवांछनीय सामाजिक स्थिति उनके दैनिक जीवन को किस प्रकार प्रभावित कर सकती है।
3. सामाजिक अध्ययन के द्वारा यह ज्ञात होता है कि सामाजिक समस्याओं की जड़ केवल सामाजिक विचलन ही नही हैं वरन् अनेक बार सामाजिक अपेक्षाओं को पूरा करने से भी सामाजिक समस्याऐं पैदा होती हैं।

## 1-9 lkjka'k

उपर्युक्त वर्णित इकाई में आप सामाजिक समस्या की अवधारणा से परिचित हुए होंगे। इस इकाई में सामाजिक समस्या की उत्पत्ति के प्रमुख कारक–कारण एवं सैद्धान्तिक दृष्टिकोणों का भी वर्णन किया गया है। उक्त अध्याय को पढ़ने के बाद आप समझ पाए

होंगे कि किस प्रकार एक सामाजिक समस्या अनेक सामाजिक समस्याओं से सम्बन्धित होती है तथा सामाजिक समस्या किस प्रकार समाज की व्यवस्था, स्थायित्व एवं संतुलन के लिए खतरा पैदा कर सकती है। जहां भी समाज है वहां पर सामाजिक समस्या तो विद्यमान रहेगी ही। समस्याविहीन समाज की कल्पना करना असम्भव सा प्रतीत होता है। भारतीय समाज मे अनगिनत सामाजिक समस्याएं है। सामाजिक समस्या की प्रकृति, मूलभूत कारक एवं कारणों को समझकर इसके समाधान के लिए प्रयास किए जा सकते है।

**नोट**

## 1-10 ck/k i'u

1. सामाजिक समस्या से आप क्या समझते हैं ?
2. सामाजिक समस्या की अवधारणा स्पष्ट कीजिए ?
3. सामाजिक समस्या से सम्बन्धित कोई दो सिद्धान्त लिखिए ?

# bdkb&2 fu/kurk

## ikB&l jpuk

नोट

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 निर्धनता : अर्थ एवं अवधारणा
2.3 निर्धनता सापेक्षिक दृष्टिकोण
2.4 निर्धनता के स्वरूप
2.5 निर्धनता के कारण
2.6 निर्धनता के माप
2.7 निर्धनता के दुष्प्रभाव
2.8 भारत में निर्धनता के उन्मूलन हेतु पंचवर्षीय योजनाओं में किये गये प्रयास
2.9 निर्धनता उन्मूलन हेतु सुझाव
2.10 सारांश
2.11 अभ्यास प्रश्न

## 2-0 mí';

इस पाठ को पढ़कर आप

- निर्धनता की अवधारणा का अर्थ एवं अवधारणा को समझ सकेंगे।
- निर्धनता के सापेक्षिक दृष्टिकोण को जान सकेंगे।
- निर्धनता के स्वरूप का जान सकेंगे।
- निर्धनता के कारणों एवं प्रभावों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।
- निर्धनता के मापन को समझ सकेंगे तथा अन्त में निर्धनता के निवारण के उपायों को जान सकेंगे।

## 2-1 iLrkouk

निर्धनता एक ऐसी सामाजिक समस्या है, जिससे विकसित, विकासाशील, अविकसित तथा साम्यवादी देश पीड़ित हैं। वर्तमान समय में जनसंख्या वृद्धि एवं अशिक्षा गरीबी को प्रश्रय दे रही है। रुपये का अवमूल्यन, वस्तुओं की आपूर्ति में कमी तथा मूल्यों में वृद्धि एवं आय का असमान वितरण निर्धनता की वृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर रहे हैं। निर्धनता के कारण लोगों को दो वक्त का पर्याप्त भोजन, तन ढ़कने के लिए कपड़ा तथा रहने के लिए मकान की समस्याओं से जूझना पड़ रहा है।

स्वतंत्रता के पाश्चात् भारत ने अनके क्षेत्रों में प्रगति की है तथा वर्तमान समय में आर्थिक विकास की गति सम्मानजनक कही जा सकती है। यद्यपि, प्राकृतिक एवं मानवीय

संसाधनों का वैज्ञानिक ढंग से दोहन नहीं हुआ है, जिसके फलस्वरूप भारत को आर्थिक दृष्टि से कम विकसित देश कहा जा सकता है। वर्तमान समय में विकास की समस्या भारत निर्धनता ही नहीं वरन् विश्व के अन्य राष्ट्रों के लिए चिन्ता एवं चिन्तन का विषय है। यह एक निर्विवाद सत्य है कि भारत एक कृषि प्रधान देश है परन्तु कृषि क्षेत्र की अवस्था भी काफी शोचनीय है। किसान इतने गरीब हैं कि कृषि क्षेत्र अनार्थिक एवं पिछड़ी अवस्था में विद्यमान है। हालांकि भारत का औद्योगिक ढाँचा विकास कर रहा है परन्तु वैश्विक दृष्टि से अभी भी हम अन्य देशों की तलुना में पिछडे हुए हैं।

नोट

भारत में बेरोजगारी, जनसंख्या वृद्धि, गाँवों से शहरों की ओर पलायन, इत्यादि निधर्नता की ओर इशारा करते हैं। भारत को सही मायने में विकसित होने के लिए निधर्नता की समस्या पर नियंत्रण स्थापित करना होगा, जिसके लिए समग्र प्रयासों की महती आवाश्यकता है। निर्धनता एक ऐसी जटिल अवधारणा हैं, जिसकी व्याख्या करना कठिन है। वस्तुतः निर्धनता एक ऐसी स्थिति है जिसमें कोई व्यक्ति जीवनयापन से सम्बन्धित मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु वांछित आय अर्जित करने में सक्षम नहीं हो पाता। निर्धनता सापेक्ष एवं तुलनात्मक अवधारणा है। यह तुलना व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामूहिक, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर की जा सकती है। प्रस्तुत इकाई में हम निर्धनता को समझने का प्रयास करेंगे। इस इकाई में निर्धनता की परिभाषा, अर्थ, मापन, निवारण इत्यादि विषयों की विवेचना भी की जायेगी।

## fu/kurk % ,frgkfld voykdu %

निर्धनता एक ऐसी आर्थिक एवं सामाजिक समस्या है जो सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त है और समृद्ध तथा विकसित देश भी इससे प्रभावित हैं। गरीबी एड्स नामक बीमारी से भी ज्यादा भयावह है। विश्व में गरीब देशों की संख्या कितनी है ? कि उन्हें 'तीसरी दुनिया' के नाम से अभिहित किया जाता है। तीसरी दुनिया के लोगों को संतुलित आहार, पहनने को पर्याप्त वस्त्र एवं रहने के लिए आवास उपलब्ध नहीं हैं। कमोबोश भारत में भी स्थिति काफी खराब है। भारत के लाखों परिवार ऐसे हैं जो गरीबी की रेखा से नीचे जीवनयापन कर रहे है जिन्हें दो वक्त की रोटी भी नसीब नहीं है, परन्तु सरकारी प्रयासों के द्वारा विशिष्ट रूप से 'रोजगार गारन्टी योजना' के माध्यम से गरीबी की भयावहता पर अंकुश लगाने का प्रयास किया गया है।

प्राचीन समय में गरीबी समाज में एक अभिशाप के रूप में विद्यमान नहीं थी, वर्तमान समय में गरीब और अमीर के बीच एक गहरी खाई दिखाई देती है। गरीब और अमीर के बीच व्याप्त असमानता को जन्म देने में औद्योगिक क्रान्ति ने महत्ती भूमिका निभाई है। औद्योगिक क्रान्ति ने समाज में तीव्रगति से आर्थिक एवं सामाजिक परिवर्तन लाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। मशीनीकरण ने जहॉ एक ओर समाज में प्रचुर मात्रा में वस्तुऐं उपलब्ध करवाई हैं एवं विकास तथा समृद्धि को बढ़ाने में सहयोग किया है, वहीं दूसरी ओर एक ऐसे विश्व को स्थापित किया है जिसे 'तीसरी दुनिया' के नाम से अभिहित किया जाता है, जो गरीबी और अभावों से जूझ रहा है। यहाँ पर यह उल्लिखित करना समीचीन होगा कि औद्योगिकीकरण और मशीनीकरण का आगाज़ पश्चिमी देशों में हुआ था। पश्चिम के देशों ने अपनी औद्योगिक माँगों की पूर्ति के लिए एशिया, अफ्रीका, दक्षिण अमेरिका आदि महाद्वीप के देशों को अपना गुलाम बनाकर औपनिवेशिक साम्राज्य की स्थापना

नोट

की और वहाँ के प्राकृतिक संसाधनों का शोषणयुक्त पद्धति से दोहन किया। जिसके परिणामस्वरूप इन देशों में गरीबी बढ़ी। इन्होंने अपने उद्योग जगत की पूर्ति हेतु औपनिवेशिक देशों की अर्थव्यवस्था को छिन्न–भिन्न कर डाला। भारत में अंग्रेजों ने अपने कुशासन के दौरान परम्परागत भारतीय अर्थव्यवस्था की विशेष कर ग्रामीण अर्थव्यवस्था को कमजोर कर दिया।

## 2-2 fu/kurk % vFk ,o vo/kkj.kk

निर्धनता समाज की आर्थिक स्थिति का द्योतक होने के साथ–साथ सामाजिक प्रस्थिति का भी परिचायक है, क्योंकि व्यक्ति की आर्थिक स्थिति का घनिष्ठ सम्बन्ध सामाजिक वर्ग से भी है। fxfyu ,o fxfyu का मत है कि गरीबी एवं अमीरी तुलनात्मक सम्बोध हैं। आमजन की भाषा में गरीबी का तात्पर्य आर्थिक असमानता, आर्थिक पराश्रितता तथा आर्थिक अकुशलता से समझा जाता है। निर्धनता को केवल आर्थिक अभाव के रूप में समझने का अर्थ होगा, इसे संकुचित अर्थ देना। प्रमुख समाज वैज्ञानिकों द्वारा प्रस्तुत निर्धनता की परिभाषाएं निम्नांकित हैं :

oh oj लिखते हैं कि गरीबी एक ऐसे जीवन स्तर के रूप में परिभाषित की जा सकती है कि जिसमें स्वास्थ्य एवं शारीरिक क्षमता बनी नहीं रहती।

xkMkM निर्धनता के इस प्रकार परिभाषित करते हैं ''निर्धनता उन वस्तुओं की अपर्याप्त पूर्ति की वह दशा है, जिनकी एक व्यक्ति को अपने तथा आश्रितों के स्वास्थ्य एवं शक्ति को बनाए रखने के लिए आवश्यकता होती है।''

fxfyu ,o fxfyu के अनुसार, ''निर्धनता वह दशा है जिसमें एक व्यक्ति या तो अपर्याप्त आय अथवा मूखर्तापूर्ण व्यय के कारण अपने जीवन स्तर को इतना ऊँचा नहीं रख पाता कि उसकी, शारीरिक एवं मानसिक क्षमता बनी रह सके और उसको तथा उसके प्राकृतिक आश्रितों को अपने समाज के स्तरों के अनुरूप उपयोगी ढंग से कार्य करने के योग्य बनाये रख सकें।'' इस प्रकार उपर्युक्त वर्णित परिभाषाओं में निर्धनता या गरीबी को इस आधार पर समझने का प्रयास किया है कि किसी व्यक्ति को जीवनयापन करने के लिए न्यूनतम कितना रुपया चाहिए तथा इस न्यूनतम सीमा से कम आय वाले व्यक्ति को निर्धन करार दिया जा सकता है।

ik- ;kxk'k vVy के अनुसार ''गरीबी की अवधारणा का सम्बन्ध सापेक्ष रूप से वंचित रहने के तथ्य से है।'' इस प्रकार योगोश अटल वे गरीबी को तुलनात्मक दृष्टि से राष्ट्रीय आय से वंचित रहने के रूप में परिभाषित करते हैं। जब हम गरीब को राष्ट्रीय आय के पैमाने के द्वारा समझने का प्रयास करते हैं तब इसका तात्पर्य यह नहीं होता कि वह आय देश के सभी लोगों में समान रूप से वितरित होती है, वरन् राष्ट्रीय आय में से जिन लोगों को कम भाग मिलता है, गरीब कहलाते हैं तथा जिन्हें अधिक हिस्सा मिलता है, धनवान वर्ग में सम्मिलित किए जाते हैं। इस दृष्टि से गरीबी एक तुलनात्मक तथ्य है।

ekbdy gfjxVu के अनुसार, ''निर्धनता भोजन, स्वास्थ्य, घर, शिक्षा तथा मनोरंजन के उन न्यूनतम स्तरों का वंचन है जो एक विशिष्ट समाज की समकालीन प्रौद्योगिकी, विश्वास तथा मूल्यों के अनुसार होता है।''

feyj rFkk jkch के अनुसार ''निर्धनता एक प्रकार की असमानता है जो निर्धनों की जीवन–दशा तथा उनके जीवित रहने की सम्भावनाओं पर आय की असमानता से पड़ने वाले प्रभावों को स्पष्ट करती है। जिनके पास जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए साधन अथवा सामर्थ्य नहीं है, वे निर्धन कहलाते हैं तथा जो लोग आयक्रम के निम्नतम तल पर होते हैं, वे निर्धनों की श्रेणी के अन्तर्गत समाविष्ट किए जाते हैं।''

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर निर्धनता के सन्दर्भ में यह निष्कर्ष निकलता है :–

- निर्धनता जीवनयापन करने के लिए न्यूनतम आय का प्रतिबिम्ब है।
- निर्धनता निम्नतम जीवन निर्वाह के स्तर का परिचायक है।
- निधर्नता जीवनयापन करने के लिए अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति को दर्शाती है।
- निर्धनता समय एवं स्थान सापेक्षिक जीवन स्तर को दर्शाती है।
- निर्धनता प्रचलित मानदण्डों के अनुसार न्यूनतम जीवन स्तर है।
- निर्धनता असमानता तथा वंचना के आधार पर समझी जा सकती है।

## 2-3 fu/kurk % lkif{kd nf"Vdk.k

निर्धनता आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टिकोण से एक सापेक्ष अवधारणा है। आय के दृष्टिकोण से निर्धन वर्ग के लोगों की आय इतनी ही होती है कि वे अधिक से अधिक अपने जीवनयापन के मूलभूत पदार्थ ही जुटा पाते हैं, न कि ऐश्वर्य के साधन। गरीबी को वस्तुओं के चयन करने एवं पसन्द करने की सीमा के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है। इसी प्रकार एक राष्ट्र जिसे हम निर्धन कहेंगें, उसे अन्य राष्ट्र धनवान भी कह सकते हैं। भारत में निर्धनता की रेखा वह नहीं है जो अमेरिका या अन्य विकसित देशों में है। प्रत्येक राष्ट्र की एक संस्कृति होती है। जिसके अनुसार वहाँ के लोग जीवन–शैली का एक आदर्श स्थापित करते हैं और उसी आदर्श के अनुसार अपना आचरण करते हैं। जीवन स्तर किसी राष्ट्र के प्रथाओं, परम्पराओं, रीति–रिवाजों, मानदण्डों एवं मूल्यों पर आधारित होता है। संरचित जीवन स्तर के आदर्श प्रारूप से नीचे जीवन व्यतीत करने वालों का सापेक्षिक रूप से निर्धन एवं ऊँचा जीवन व्यतीत करने वालों को सापेक्षिक रूप से धनवान कहा जाता है। ठीक इसी प्रकार उचित जीवन स्तर को प्राप्त करने के पर्याप्त सुविधा–साधन तो उपलब्ध होते हैं, परन्तु इनका उचित एवं वांछित तरीके से सदुपयोग न करके दुरुपयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए कोई व्यक्ति अपनी आय सट्टा लगाने, लॉटरी खेलने, शराब पीने एवं जुआ खेलने में अपव्यय कर देता है एवं अपने जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु वांछित संसाधन नहीं जुटा पाता है।

निर्धनता की सापेक्षता का सन्दर्भ केवल दो राष्ट्रों तक ही सीमित नहीं है, वरन् एक राष्ट्र में निवास करने वाले विभिन्न वर्गों, जातियों, उपजातियों, समूहों, समुदायों, व्यवसायों, प्रान्तों, क्षेत्रों, संस्कृतियों, धर्मों को मानने वाले लोगों से भी है। उदाहरण के लिए जीवन जीने का स्तर जो डूंगरपुर के ग्रामीण खेतिहर आदिवासियों का है वही स्तर पढ़े लिखे नौकरीपेशा आदिवासियों का नहीं होगा। इसी प्रकार, पंजाब के लोगों के जीवन स्तर से झारखण्ड, राजस्थान अथवा केरल में रहने वाले लोगों का जीवन स्तर भिन्न होगा। किसी

नोट

संस्कृति विशेष में निर्धनता के मापने के आधार अन्य संस्कृतियों पर प्रयुक्त नहीं किए जा सकते हैं। इस प्रकार अगर हम किसी संस्कृति में निर्धनता को मापना चाहते हैं तो इसके लिए हमें सांस्कृतिक सापेक्षवादात का दृष्टिकोण अपनाना होगा तथा स्वकेन्द्रीतवाद दृष्टिकोण को त्यागना होगा। गिलिनिन एवं गिलिन का मत है कि निर्धनता का सम्बन्ध एक ही सांस्कृतिक समूह से तुलनात्मक है और उसी आधार पर व्यक्ति की स्थिति निश्चित की जाती है कि वह निर्धन है या अमीर है।

जीवन स्तर प्रत्येक समाज, समूह, समुदाय, जाति, प्रजाति एवं धर्मों में भिन्न–भिन्न होता है। जीवन–स्तर को निर्धारित करने वाले तीन प्रमुख घटक निम्न प्रकार से हैं–

1. विवेकपूर्ण सामाजिक–सांस्कृतिक प्रथाएँ एवं परम्पराएँ।
2. निर्णय लेने की बुद्धि।
3. आय।

इन तीनों घटकों में आय सर्वोच्च एवं महत्वपूर्ण स्थान रखती है क्योंकि गरीब लोगों की आय सिर्फ इतनी होती है कि वे अपने जीवन के अस्तित्व को ही बनाए रख पाते हैं। वे बचत करने में सक्षम नहीं होते। डब्लू. डब्लू. वीवर का यह कथन इस सन्दर्भ में समीचीन है कि ''निर्धनता को ऐसी स्थिति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें वित्तीय बचत अनुपस्थित रहती है।''

सामाजिक एवं सांस्कृतिक रीति–रिवाज, प्रथाएँ, खान–पान, पहनावा, सोचने का ढंग किसी समूह एवं समुदाय तथा धर्म के लोगों के जीवन स्तर का निर्णय करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अधिकांशतः ब्राह्मण शाकाहारी भोजन करते हैं तो इसाई एवं मुसलमान माँसाहारी भोजन खाने में प्राथमिकता प्रदान करते हैं। डूँगरपुर–बाँसवाड़ा क्षेत्र के ग्रामीण आदिवासी अपरिग्रह युक्त सादा जीवन जीना पसन्द करते हैं। तीज–त्यौहारों एवं उत्सवों के सुअवसर पर खान–पान, वस्त्र–आभूषण पहनने का निणर्य सांस्कृतिक परम्पराएँ एवं प्रथाएँ करती हैं।

किसी व्यक्ति की पसन्द और नापसन्द को निर्धारित करने में उसकी बुद्धि और निर्णय लेने की क्षमता का भी महत्वपूर्ण स्थान है। वस्तुओं के क्रय सम्बन्धी निर्णयों के लिए तार्किक बुद्धि महत्वपूर्ण होती है। साधारण जीवनयापन करने वाले प्रोफेसर के लिए मारूति कार से काम चल सकता है परन्तु अगर पति–पत्नि दोनो कार्यरत हैं तो महँगी गाड़ी रखना प्रस्थिति प्रतीक बन जाता है। वर्तमान समय में ''ऋण–व्यवस्था'' इतनी आसान हो गई है कि कुछ वर्षों पूर्व जिन वस्तुओं को खरीदने के लिए लोग केवल सपने लिया करते थे। उनकी आपूर्ति के लिए आज सिर्फ एक मोबाईल करने की जरूरत है, वांछित वस्तुएँ आपके घर में उपलब्ध हो जायेंगी। परन्तु यहाँ पर ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि किसी भी वस्तु को ऋण व्यवस्था के अन्तर्गत लेना तो बहुत आसान होता है परन्तु ऋण चुकाने के लिए किश्तों की व्यवस्था करना थोड़ा कठिन हो जाता है।

आय जीवन स्तर का निर्णय करने में सर्वोच्च स्थान रखती है। कम आय होने पर केवल जीवन–निर्वहन के लिए अपरिहार्य वस्तुओं की पूर्ति करना सर्वोच्च लक्ष्य होगा, जबकि अधिक आय होने पर विलासिता की वस्तुओं पर सहज रूप से खर्च किया जा सकता है। आय का प्रत्यक्ष सम्बन्ध आय के स्रोत एवं परिवार के आय अर्जन करने वाले

सदस्यों से भी होता है। अगर, पति–पत्नि दोनो कमाते हैं और दोनों में सौहार्द्रपूर्ण सम्बन्ध हैं तो दोनों की सम्मिलित आय से उच्च जीवन स्तर जिया जा सकता है।

उपर्युक्त विवेचन से हम यह कह सकते हैं कि निर्धनता एक सापेक्ष अवधारणा है जिसका सम्बन्ध किसी राष्ट्र, समाज, संस्कृति, समुदाय, व्यवसाय एवं पारम्परिक पेशों में प्रचलित जीवन स्तर के आदर्शों से होता है। किसी भी समाज में जीवन–स्तर का आदर्श यह समकालीन सामाजिक–सांस्कृतिक मान्यताओं, परम्पराओं एवं प्रथाओं, व्यक्ति की तार्किक बुद्धिमता, निर्णय लेने का कौशल तथा आय पर निर्भर करता है। निर्धनता के निर्धारण में धन का महत्वपूर्ण स्थान है परन्तु हम दैनिक जीवन में ऐसा देखते हैं कि कई जातियाँ एवं मत–मतान्तर को मानने वाले लोग धनी तो होते हैं, परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि जितना उनके पास धन है उसी अनुपात में उनका जीवन स्तर भी होगा। इस प्रकार हम देखते हैं कि अनेक धनी लोग निम्न जीवन स्तर व्यतीत करते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि निर्धनता केवल आर्थिक तथ्य और सत्य ही नहीं है वरन् यह एक सामाजिक तथ्य भी है, जिसका समाजाशास्त्रीय पद्धति के द्वारा अध्ययन किया जा सकता है।

## 2-4 fu/kZurk ds Lo:i

समाज वैज्ञानिकों ने विभिन्न आधारों पर निर्धनता का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है :

1- ch-,l- jkm.Vh ने निर्धनता को दो भागों में विभक्त किया है :

(अ) प्राथमिक निर्धनता एवं (ब) द्वैतीयक निर्धनता।

**¼v½ izkFkfed fu/kZurk %** प्राथमिक निर्धनता का तात्पर्य लोगों की आय का इतना कम होना है कि वे जीवनयापन करने के लिए अपरिहार्य आवश्यकताओं की भी पूर्ति नहीं कर सकते। इस प्रकार की निर्धनता में जीवनयापन करने वाले लोगों को गरीबी रेखा के नीचे का जीवन व्यतीत करने वालों की श्रेणी में सम्मिलित किया जाता है। गरीबी रेखा भौतिक वस्तुओं के मूल्यों में होने वाले परिवर्तनों के साथ–साथ परिवर्तित होती है।

**¼c½ }Srh;d fu/kZurk %** द्वैतीयक निर्धनता में मानव शरीर का अस्तित्व बनाए रखने के लिए अपरिहार्य आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए उपयुक्त आय तो होती है परन्तु इस आय को अतार्किक एवं अविवेकपूर्ण तरीके से अपव्यय करने के कारण निर्धनता बनी रहती है। उदाहरण के लिए – किसी व्यक्ति का जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के स्थान पर अपनी आय को अयाशी, जुआ, मद्यपान, धूम्रपान इत्यादि में खर्च कर देना। द्वैतीयक निर्धनता के अन्तर्गत आय की सीमा निश्चित नहीं होती तथा इसलिए व्यक्ति अपनी मूलभूत आवाश्यकताओं की पूर्ति के बाद शेष आय को उपयोगी एवं अनुपयोगी, दोनों तरीकों से व्यय कर सकता है।

2- MCY;- MCY;- ohoj ने दो प्रकार की निर्धनता का उल्लेख किया है –

(अ) दीर्घकालिक निर्धनता एवं (ब) अल्पकालिक निर्धनता।

**¼v½ nh?kZdkfyd fu/kZurk %** इस श्रेणी के अन्तर्गत उस निर्धनता को सम्मिलित किया जाता है, जो कई पीढ़ियों से चली आ रही होती है। इस प्रकार की निर्धनता में जीवनयापन करने वाले लोग अपनी आवश्यकताओं और आदतों में इस प्रकार का अनुकूलन

कर लेते हैं जिससे उन्हें समाज द्वारा हेय दृष्टि से देखे जाने वाले कार्य को करने में शर्म महसूस नहीं होती। उदाहरण के लिए, भीख माँगना।

**नोट**

¼c½ vYidkfyd fu/kurk % इस प्रकार की निर्धनता का सामना उन कारणों से होता है जिस पर व्यक्ति का नियंत्रण नहीं रहता। उदाहरण के लिए बीमारी पर अत्यधिक खर्च होना, बेरोजगारी, व्यापार में मंदी, व्यवसाय में दीवाला निकल जाना, भारत विभाजन के दौरान भारतीय शरणार्थियों में व्याप्त अंशिक निर्धनता इत्यादि। इस प्रकार की निर्धनता में परिवर्तन सम्भव है। नये व्यवसाय के मिल जाने पर, राजनीतिक–आर्थिक स्थिति में सुधार होने पर अल्पकालिक निर्धनता का अंतमन हो जाता है।

3- t-,e-'kkMZ ,oa ,p-,y-okl ने निधर्नता के दो प्रकारों का उल्लेख निम्न प्रकार से किया है:–

(अ) निरपेक्ष निर्धनता एवं (ब) सापेक्ष निर्धनता।

¼v½ fujis{k fu/kurk % निरपेक्ष निर्धनता वह दशा है जिसमें किसी व्यक्ति के पास जीवनयापन करने के लिए मूलभूत आवश्यक वस्तुओं – मकान, भोजन, चिकित्सा सुविधा का पूर्ण अभाव रहता है। शेपार्ड एवं वॉस ने निरपेक्ष निर्धनता को सामान्य जीवनयापन करने के लिए अपरिहार्य आधारभूत आवश्यकताओं के रूप में परिभाषित किया है। अमेरिका में निर्धनता को पूर्णता की पद्धति के द्वारा मापा जाता है। इसके अन्तर्गत गरीबी का माप वार्षिक आय स्तर होता है। निर्धारित वार्षिक आय से जिन लोगों की आय कम होती है, उन्हें निर्धन की श्रेणी में वर्गीकृत किया जाता है।

¼c½ lkis{k fu/kurk % सापेक्ष निर्धनता की अवधारणा किन्हीं दो समयों, दो स्थानों एवं भिन्न–भिन्न व्यक्तियों की तुलनात्मक दशा का मूल्यांकन करती है। सापेक्ष निर्धनता का माप समाज के निम्नतम श्रेणी के लोगों की स्थिति के आधार पर किया जाता है। इस प्रकार नेपाल में जिस दशा को गरीबी कहा जायेगा, वही स्थिति भारत में गरीबी नहीं कहलायेगी। किसी देश के जीवन स्तर में वृद्धि के साथ–साथ निर्धनता का मानदण्ड भी परिवर्तित होता रहता है।

## 2-5 fu/kurk d dkj.k

निर्धनता अनेक कारकों की मिली जुली पारस्परिक क्रिया एवं अन्तःक्रिया का परिणाम है। निर्धनता के अनेक कारण होते हैं, जिनमें प्रमुख निम्नानुसार है :

1- Hkkfrd i;koj.k % भौतिक पर्यावरण से हमारा तात्पर्य प्रकृति द्वारा प्रदत्त जलवायु, प्राकृतिक सम्पदा, खनिज, उपजाऊ भूमि, नदियाँ, झीलें इत्यादि को सम्मिलित किया जाता हैं। यदि किसी राष्ट्र में प्राकृतिक भण्डारों व खनिज पदार्थों का अभाव है। भूमि अनुपजाऊ है, रेगिस्तान में वर्षा की कमी है। वर्ष पर्यन्त बहने वाली नदियों का अभाव है, इत्यादि, तो ऐसी स्थिति में उस भू–भाग पर निवास करने वाले लोगों को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में मुश्किलों का सामना करना पड़ेगा। अतः उक्त भू–भाग पर रहने वाले लोगों में निर्धनता देखने को मिलेगी। इसी प्रकार इसके ठीक विपरीत परिस्थितियों वाले राष्ट्र में समृद्धि देखने को मिलती है और लोग सुखी एवं धनवान होते हैं।

नोट

मौसम की अनिश्चितता के कारण अत्यधिक गर्मी, सर्दी, अल्पवृष्टि, अनावृष्टि, अतिवृष्टि के कारण फसलों का नुकसान हो जाता है तथा लोग अभाव एवं निर्धनता में जीवन जीने के लिए मजबूर हो जाते हैं। आसाम, बिहार, पश्चिम बंगाल, उत्तर–प्रदेश इत्यादि राज्यों में मौसम के कारण जान और माल की हानि होती है। इसी प्रकार, समुद्र के किनारे रहने वाले लोगों को तूफान एवं कुसमय की वर्षा का सामना करना पड़ता है, जिससे जान और माल का भारी नुकसान होता है तथा लाखों लोग बेघर हो जाते हैं। कीड़े–मकौड़े, जीव–जन्तु इत्यादि फसलों और उद्योगों को नुकसान कर देते हैं तथा फलों, कागज, कपास, लकड़ी, ऊन, रेशम इत्यादि को नष्ट कर देते हैं। इससे इन उद्योगों से सम्बन्धित लोगों को निर्धनता का सामना करना पड़ता है।

2- o;fDrd dkj.k % t-fQfxu ने अमेरिका में निर्धनता के कारणों को मालूम करने के लिए एक अध्ययन किया। जिसमें निर्धनता के लिए लोगों ने व्यक्ति को ही दोषी ठहराया। इन लोगों का मत है कि कोई भी व्यक्ति निर्धन इसीलिए है क्योंकि उसमें योग्यता, इच्छाशक्ति एवं प्रतिस्पर्धात्मक युग में जीवनयापन करने की प्रेरणा का अभाव पाया जाता है। ऐसे लोग अपनी दरिद्रता के लिए स्वयं उत्तरदायी होते हैं। व्यक्ति की अयोग्यता निर्धनता को जन्म देती है। शारीरिक निर्बलता, वंशानुगत बीमारियां, दुर्घटना, मानसिक योग्यता, नैतिक पतन, अविवेकपूर्ण खर्च इत्यादि, व्यक्ति की निर्धनता के लिए व्यक्तिगत कारण होते हैं। अल्पकालिक आरै दीर्घकालिक बीमारियां परिवार में निर्धनता उत्पन्न करती हैं। इसी प्रकार किसी व्यक्ति की दुर्घटनाग्रस्त होने पर, अंग भंग होने पर, लूला–लंगड़ा अथवा अन्य किसी शारीरिक अक्षमता होने पर आर्थिक दशा प्रभावित होती है। बीमारी, बुढ़ापा, दुर्घटना, अपंगता इत्यादि शारीरिक क्षमताओं पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है, जिसके कारण व्यक्ति अर्थोपार्जन नहीं करने के फलस्वरूप अन्य लोगों पर निर्भर रहता है।

3- lkekftd dkj.k % सामाजिक कारणों के अन्तगर्त शैक्षणिक दोष, स्वास्थ्य संबंधी सुविधाओं का अभाव, आवास की अनुपलब्धता, विवाह और पैतृक ज्ञान का अभाव इत्यादि को सम्मिलित करते हैं। दोषयुक्त शिक्षा व्यवस्था ने शिक्षित बेराजेगारी को जन्म दिया है। वर्तमान समय में विद्यमान शिक्षा–व्यवस्था रोजगारोन्मुखी न होकर डिग्री प्रदाता बन गई है, जिसके कारण बेकारी पनपी है। आधुनिक विज्ञान ने अनेक खोजों एवं अन्वेषण के द्वारा पूर्व में असाध्य बीमारियों पर नियंत्रण कर लिया है। फिर भी भारतवर्ष में लोगों के स्वास्थ्य रक्षण हेतु समुचित सुविधाओं का अभाव नजर आता है, जिसके कारण लोग अकाल मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं तथा परिवार को गरीबी का सामना करना पड़ता है। गन्दी बस्तियाँ, दवा, बिजली–पानी व प्रकाश का अभाव, भीड़–भाड़ युक्त घर व्यक्ति के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल असर डालते हैं। जो कि अन्ततोगत्वा निर्धनता को जन्म देते हैं। भारतवर्ष में बच्चों का विवाह कम उम्र में कर दिया जाता है। जिसके कारण वे पारिवारिक दायित्वों का निर्वहन करने में असमर्थ रहते हैं तथा ये पराश्रितता को जन्म देते हैं। 'औद्योगिक क्रान्ति, वैश्वीकरण, निजीकरण एवं स्वतंत्रता के विचारों ने नारी स्वातंत्रय है' पर बल दिया है, जिसके कारण आर्थिक उपार्जन के लिए घर की देहली लांघ कर बाहर काम करने के लिए तैयार हो जाती हैं। माता–पिता तथा बच्चों एवं पति–पत्नि के मध्य पारस्परिक सम्बन्धों में व्यक्ति केन्द्रित भावना के अभ्युदय के कारण सम्बन्धों में शिथिलता देखने को मिलती है। भारत में जाति व्यवस्था, संयुक्त परिवार प्रणाली तथा धार्मिक अन्ध–विश्वास भी गरीबी के उद्‌भव के लिए उत्तरदायी होते हैं। संयुक्त परिवार तथा जाति प्रथा व्यक्ति की गतिशीलता

नोट

में बाधा उत्पन्न करते हैं तथा अपने सदस्यों को घर से बाहर जाने पर अंकुश लगाते हैं। जाति व्यवस्था के अन्तर्गत लोग परम्परागत पेशों पर ही अपना जीवनयापन करना पसन्द करते हैं तथा नवीन व्यवसाय को स्वीकार करने में संकोच एवं झिझक महसूस करते हैं। धार्मिक अन्धविश्वासों, कर्मवाद के सिद्धान्त तथा पूर्वजन्म के सिद्धान्तों के गलत निर्वचन ने लोगों को भाग्यवादी दृष्टिकोण अपनाने में मदद की है, जिसके कारण उनमें उद्यमशील प्रकृति एवं जोखिम लेने की प्रवृत्ति का अभाव पाया जाता है।

4- vkfFkd dkjd % आर्थिक आयाम के अन्तर्गत निर्धनता का सम्बन्ध आय और व्यय के सन्दर्भ में किया जाता है। अपर्याप्त उत्पादन, असमान वितरण, आर्थिक उतार–चढ़ाव, गरीबी का दुष्चक्र, मन्दी, बेरोजगारी इत्यादि निर्धनता को जन्म देने के प्रमुख कारक हैं। भारत कृषि प्रधान देश है। यहाँ पर कृषि एवं कुटीर उद्योगों में उत्पादन के लिए परम्परागत साधनों को प्रयुक्त किया जाता है। इन क्षेत्रों में आय सीमित ही होती है। अनेक बार मौसम के प्रतिकूल होने की स्थिति में उत्पादन पर्याप्त नहीं हो पाता। इसके अतिरिक्त उत्पादन के साधनों पर सीमित लोगों का एकाधिकार होने के कारण निर्धन व्यक्ति की आर्थिक दशा सुधरने की सम्भावना गौण ही रहती है। इस प्रकार सम्पत्ति तथा आय का असमान वितरण, बेरोजगारी की अवस्था एवं व्यापारिक मन्दी निर्धनता को जन्म देती है।

5- lkLdfrd dkjd % सनातन संस्कृति में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रूपी पुरुषार्थों की प्राप्ति हेतु समन्वयक प्रयास करने पर बल दिया। केवल अर्थ की प्राप्ति हेतु जीवन को प्रयुक्त करना एकांगी दृष्टिकोण है, जिसे पूर्ण रूप से नकार दिया गया है। अतः भारतीय सांस्कृतिक तत्वों में 'संतोष धन' को सबसे महत्वपूर्ण माना गया है। इस सन्दर्भ में भारतीय संस्कृति में कुछ मत एवं विचारधाराएँ एवं जीवन शैली ऐसी भी है जो येन–केन–प्रकारेण धन कमाने पर ही बल देती हैं।

6- jktuhfrd dkjd % राजनैतिक उथल–पुथल एवं अस्थिरता निर्धनता को जन्म देने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करती है। इस प्रकार की स्थिति समाज में मुनाफाखोरी, जमाखोरी, कालाबाजारी एवं सूदखोरी अपनी चरम सीमा पर होती है। वर्तमान भारतीय राजनीति में केन्द्र में विद्यमान अस्थिरता केन्द्र सरकार को महँगाई नियन्त्रण करने में शिथिल कर देती है। सरकार की आर्थिक नीतियाँ एवं अन्तर्राष्ट्रीय मुद्दे सरकार को अस्थिर बनाते हैं और इससे अर्थव्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। केन्द्र में अगर गठबंधन सरकार अस्तित्व में हो तो स्थिति बद से बदतर हो जाती है।

सरकार की कर नीति, आयात–निर्यात नीति, उत्पादन एवं वितरण व्यवस्था किसी भी राष्ट्र के लोगों की आर्थिक दशा को प्रभावित करती है। ब्रिटिश साम्राज्य ने भारत का जमकर आर्थिक शोषण किया हैं। इंग्लैण्ड के कारखानों की पूर्ति हेतु कच्चा माल भारत से निर्यात होता था एवं तैयार माल बिकने के लिए भारत ही आता था। अंग्रेजों ने भारतीय वसुंधरा पर कल–कारखाने एवं उद्योगों की स्थापना को कभी महत्व प्रदान नहीं किया।

7- ;q) % युद्ध के दौरान आर्थिक अपव्यय बहुत ज्यादा होता है। किसी भी राष्ट्र को युद्ध के अवश्यम्भावी परिणाम के रूप में गरीबी रूपी बीमारी को सहन करना पड़ता है। विगत दो विश्वयुद्धों ने पश्चिमी देशों को आर्थिक पतन के कगार पर खड़ा कर दिया था। जर्मनी–जापान तो पूरी तरह नष्ट हो चुके थे। युद्ध के समय में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को गम्भीर क्षति होती है क्योंकि व्यापारिक मार्ग अवरूद्ध हो जाते हैं। व्यापारिक क्षति का दुष्परिणाम गरीबी के रूप में दृष्टिगोचर होता है।

नोट

**8- ijEijkxr d`f"k %** भारतीय कृषि व्यवस्था मानसून पर आधारित होने के कारण इसे 'मानसून का जुआ' कहा जाता है। वर्षा की पर्याप्त मात्रा से निर्धन किसानों का भरण–पोषण सुचारू रूप से होने की सम्भावना होती है, अन्यथा ग्रामीण निर्धनों को भूखमरी का सामना करना पड़ता है। भारत में पर्याप्त सिंचाई के संसाधनों का अभाव, उन्नत खाद, बीज एवं तकनीकी की जानकारी का अभाव एवं परम्परागत कृषि करने के तरीकों पर अत्यधिक बल देने के कारण कृषि की उपज कम होती है।

**9- cjktxkjh %** बेरोजगारी व्यक्ति को पराश्रित बना देती है। वांछित आय के अभाव में बेरोजगार व्यक्ति में कुंठाओं का जन्म होता है और उसे ''अलगाव'' का सामना करना पड़ता है। बेरोजगारी व्यक्ति की आवश्यकताओं को न्यून कर, निम्न जीवन स्तर जीने के लिए बाध्य कर देती है। अनेक बार बेरोजगार व्यक्ति स्वयं का और अपने परिवार का भरण–पोषण भिक्षावृत्ति के माध्यम से करने में भी संकोच नहीं करता। इस प्रकार बेरोजगारी निर्धनता को जन्म देती है।

**10- tul[;k e foLQkVd of) %** भारत की जनसंख्या प्रतिवर्ष ऑस्ट्रेलिया की जनसंख्या के बराबर बढ़ जाती है। जनाधिक्य निर्धनता को जन्म देता है। जिस तीव्र गति से भारत में जनसंख्या की वृद्धि हो रही है, उसी अनुपात में जीवनयापन के लिए वांछित एवं उपयुक्त संसाधनों एवं सुविधाओं में वृद्धि नहीं होती, जिसके परिणामस्वरूप लोगों को बेरोजगारी, बेकारी एवं भूखमरी का सामना करना पड़ता है। माल्थस ने अत्यधिक जनसंख्या वृद्धि को निर्धनता के लिये उत्तरदायी माना है। जब जनसंख्या वृद्धि के अनुपात में उत्पादन की मात्रा में वृद्धि नहीं हो जाती, तब तक राष्ट्र का आर्थिक सन्तुलन चरमरा जाता है। माँग और पूर्ति के असन्तुलन के फलस्वरूप मूल्यों में वृद्धि होने के साथ–साथ महँगाई भी बढ़ जाती है, जिससे लोगों की क्रय शक्ति घट जाती है। अतः लोग अपनी आवश्यकताओं की समुचित पूर्ति नहीं कर पाते और उन्हें निर्धनता की स्थिति में जीवनयापन करना पड़ता है।

**11- ln[kkjh iFkk %** भारतीय ग्रामीण क्षेत्र में सहकारी समितियाँ पूर्ण रूप से विकसित नहीं हो पाई हैं। किसानों को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सूदखोरों के पास जाना पड़ता है। सूदखोर ग्रामीण किसानों की मजबूरी एवं अज्ञानता का फायदा उठाकर उनका आर्थिक, शारीरिक एवं मानसिक शोषण करते हैं। ऋण के दुष्चक्र से गरीब किसान एवं आदिवासी लोग मुक्त नहीं हो पाते। उनकी पीढ़ियाँ सूदखोर के ऋण चुकाने में अपना जीवन खपा देती हैं। डूँगरपुर–बाँसवाड़ा के ग्रामीण आँचल में 'सूदखोरों' का ''खतरनाक'' जाल है। एक बार इन सूदखोरों के चुंगल में कोई आदिवासी परिवार फंस जाता है तो ये सूदखोर उसका आर्थिक एवं मानसिक शोषण कर उसे निर्धनता की पराकाष्ठा पर खड़ा कर देते हैं। भारत को आजाद हुए छः दशक बीत चुके हैं परन्तु वर्तमान समय तक इन सूदखोरों पर अंकुश लगाने का प्रभावशाली काननू नहीं बना है।

राजस्थान में कुछ समय पूर्व तक ''सागड़ी प्रथा'' प्रचलन में थी। इस प्रथा के अनुसार उधार लेने वाले व्यक्ति अथवा परिवार को सूदखोर/साहूकार के घर तब तक मुफ्त सेवाओं के रूप में कार्य करना पड़ता था, जब तक वह उस साहूकार के ऋण से उत्रऋण न हो जाए। एक बार साहूकार के चुंगल में फँसने पर उससे मुक्ति असंभव थी और निर्धन व्यक्ति एवं उसका परिवार निर्धन एवं पराश्रित ही बना रहता था।

12- vf'k{kk vkj vKku % भारत में शिक्षा का प्रतिशत काफी कम है। गाँवों में तो स्थिति भयावह है। शिक्षा की कमी के कारण लोग साहूकारों एवं सूदखोरों के चुगल में फँस जाते हैं तथा अशिक्षा इन्हें अन्ध विश्वास एवं अवांछित परम्पराओं की पालना करने और करवाने में सहायक सिद्ध होती है। अशिक्षा के कारण इनमें वैज्ञानिक, तार्किक एवं बोधपरक बुद्धि का विकास नहीं हो पाता जिसके कारण निर्धन लोग उन सामाजिक एवं सांस्कृतिक परम्पराओं का निर्बाध गति से पालन करते रहते हैं, जिनका वर्तमान युग में किसी भी प्रकार का महत्व नहीं रह गया है। ग्रामीण परिवेश में अशिक्षा का लाभ उठाकर सूदखोर और आधुनिक जमींदार निर्धन लोगों का आर्थिक एवं शारीरिक शोषण करते हैं।

13- lkekftd dqjhfr;k¡ % वर्तमान हिन्दू सामाजिक एवं सांस्कृतिक संरचना में अनेक कुरीतियों का समावेश है जैसे मृत्युभोज, दहेज प्रथा, खर्चीला विवाह एवं जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त तक अनेक संस्कार। इन रीति–रिवाजों को पूरा करने के लिए व्यक्ति अपनी आर्थिक क्षमता से अधिक खर्चा ऋण लेकर इसलिए करता है। जिससे कि समाज में उसकी प्रतिष्ठा बनी रहे। इसके लिए वह ऋण लेता है तथा अपनी भूमि, भवन, अन्य सम्पत्ति तथा आभूषण गिरवी रखने के कारण मजदूरी के द्वारा जीवनयापन करना पड़ता है। सूदखोरों एवं साहूकारों की ब्याज दरें इतनी अधिक होती हैं कि एक बार ऋण के दुष्चक्र में फँसने के बाद कई पीढ़ियों को उऋण होने के लि, सागडी प्रथा के अन्तर्गत मजदूरी करनी पड़ती है अथवा कम दर पर सूदखोर के यहाँ काम करना पड़ता है। महज इतना ही नहीं निर्धन लोग गरीबी को ईश्वर की देन भी मानते हैं। ये लोग सामाजिक सांस्कृतिक एवं धार्मिक कुरीतियों को अन्धविश्वास, अज्ञान एवं रूढ़िवादिता के कारण त्यागते नहीं हैं एवं निर्धनता की चादर को अनवरत अपने ऊपर ओढ़े रहते हैं।

14- uje jkT; % xqUukj feMZy समस्त अविकसित राष्ट्रों में व्याप्त निर्धनता का एक कारण 'नरम राज्य' को मानते हैं। मिर्डल का नरम राज्य से अभिप्राय उस सामाजिक अनुशासनहीनता से है जो विभिन्न स्वरूपों में दृष्टिगोचर होती है, यथा कानून की कमियाँ एवं सीमाएँ तथा कानून का क्रियान्वयन करने में व्यापक खामियाँ, भिन्न–भिन्न स्तरों पर प्रशासकीय अधिकारियों द्वारा इन नियमों एवं निर्देशों की वृहत् स्तर पर अवहेलना, जिनके क्रियान्वयन का उन पर उत्तरदायित्व होता है। वस्ततुः इन अधिकारियों के सम्बन्ध (अनैतिक) एवं सांठ–गांठ उन संभ्रांत एवं सत्ताधीश वर्ग एवं जाति के लोगों से होते हैं, जिनके विपथगामी व्यवहार एवं आपराधिक आचरण को नियमित एवं रोकने की जिम्मेदारी इन्हीं अधिकारियों पर होती है, जो कि असंभव है। नरम राज्य की संकल्पना में भ्रष्टाचार भी समाहित है। नरम राज्य में सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक संभ्रान्त निर्धन लोगों का शोषण करते हैं और समाज तथा राज्य के नियमों एवं मानदण्डों के विरूद्ध आचरण करते हैं। भ्रष्टाचार के कारण उच्च वर्ग निम्न वर्ग का शोषण करता है और निम्न वर्ग इनके खिलाफ वांछित कार्यवाही करने में संकोच करता है। वह यथास्थिति की पालना करते हुए निर्धनता में जीवनयापन करता है।

15- vk|kfxdhdj.k ,o a iw¡thokn % औद्योगिकीकरण एवं पूँजीवाद ने एक ऐसी नई सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था को जन्म दिया है। जिनके मूल में व्यक्तिगत मुनाफा एवं शोषण की मानसिकता निहित है। आधुनिक कल–कारखाना लगाने वाले पूँजीपतियों ने अपनी आर्थिक सत्ता के बल पर बड़े–बड़े कल–कारखाने स्थापित किए, परिणामस्वरूप ग्रामीण कुटीर उद्योग नष्टप्रायः हो गए और कुटीर व्यवसाय को संचालित करने वाला वर्ग

मजदूर हो गया। नई व्यवस्था ने परम्परागत व्यवसायों को समाप्त कर बेरोजगारों की फौज खड़ी कर दी और इस नई व्यवस्था ने गरीबी के एक नए स्वरूप को जन्म दिया। नवीन उद्योग व्यवस्था ने समाज में मजदरू एवं मालिक, दो ऐसे वर्ग खड़े कर दिए जो परस्पर विचारधारा में विरोधी थे। उत्पादन के साधनों पर नियन्त्रण करने वाले उद्योगपतियों ने श्रमिकों का शोषण किया। इन्होंने गरीबों को और अधिक गरीब बना दिया।

नोट

## 2-6 fu/kZurk dh eki

1. किसी भी राष्ट्र में गरीबी को मापने के राष्ट्रीय आय प्रति व्यक्ति आय एवं प्रति व्यक्ति उपभोग खर्च के तथ्य संकलित किए जाते हैं। राष्ट्रीय आय मालूम करने के लिए किसी वर्ष विशेष में उपभोग के लिए उपलब्ध वस्तुओं एवं सेवाओं की वांछित सूचनाएं संग्रह की जाती हैं। राष्ट्रीय आय मालूम करके हम देश की आर्थिक प्रगति और आर्थिक कल्याण का निर्धारण कर सकते हैं।
2. आय की भॉति ही किसी देश के लोगों द्वारा उपभोग पर किए जाने वाले खर्च के आधार पर गरीबी को मापा जा सकता है। इस दृष्टिकोण से यह जानकारी ली जाती है कि कुल राष्ट्रीय उपभोग का कितना प्रतिशत भाग उच्च वर्ग के लोगों द्वारा प्रयुक्त किया जाता है और कितना प्रतिशत निम्न वर्ग के लोगों द्वारा। इसके साथ–साथ नगरों एवं ग्रामीण क्षेत्र में प्रति व्यक्ति उपभोग खर्च की वांछित सूचना लेकर नगरीय एवं ग्रामीण क्षेत्रों में व्याप्त आर्थिक विषमता को भी मालूम किया जाता है। भारत में निर्धनता से सम्बन्धित समस्त तथ्य भोजन पर होने वाले खर्च पर आधारित हैं। पी.डी. ओझा का मत है कि भारत में ग्रामीण आंचल में प्रत्येक व्यक्ति को प्रतिदिन 518 ग्राम और शहरी क्षेत्र में 432 ग्राम भोजन चाहिए। वी. एम. डाण्डेकर, नीलकान्त रॉय, बी.एस.मिन्हास इत्यादि अर्थशास्त्रियों ने गरीबी को मापने के लिए 'पोषण के आदर्श' का आधार के रूप में स्वीकार किया है। इन अर्थशास्त्रियों का मत है कि भारत में प्रत्येक व्यक्ति को प्रतिदिन 2250 कैलोरी शक्ति प्रदान करने वाला भोजन जीवित रहने के लिए आवश्यक है। इससे कम ऊर्जा प्रदान करने वाले भोजन को ग्रहण करने वाले लोग गरीबी की श्रेणी में सम्मिलित किए जाते हैं। मुद्रा के सन्दर्भ में गरीब लोग वे हैं, जिनके पास इतनी क्रय शक्ति (रूपए,) नहीं होती कि वे इतनी भोजन सामग्री जुटा सकें, जिससे प्रतिदिन प्रति व्यक्ति 2250 कैलोरी ऊर्जा पैदा हो सके। ऐसे लोग गरीबी रेखा से नीचे का जीवन व्यतीत कर रहे हैं। प्राथमिक निर्धनता के अन्तर्गत भौतिक क्षमताओं को बनाए रखने के लिए न्यूनतम आय का निर्धारण किया जाता है।
3. समाज में गरीबी निर्धारण का एक आधार 'प्रति व्यक्ति व्यक्तिगत आय' भी है। इससे तुलनात्मक गरीबी को मापा जा सकता है।

इस प्रकार हम किसी राष्ट्र में गरीबी का निर्धारण राष्ट्रीय आय, प्रति व्यक्ति उपभोग खर्च और पोषण का आदर्श तथा प्रति व्यक्ति आय के आधार पर माप सकते हैं।

## 2-7 fu/kZurk ds n"iHkko

निर्धनता दुनिया में सबसे बड़ा अभिशाप है। निर्धनता किसी देश के लोगों के निम्न जीवन स्तर के लिए महत्वपूर्ण उत्तरदायी कारक है। निर्धनता के कारण लोगों में किसी

नोट

कार्य के प्रति समर्पण, साहस एवं जोश की भावना का लोप हो जाता है। वैश्वीकरण के वर्तमान दौर में चहुँ ओर निजीकरण एवं खुलेपन की विचारधारा का प्रबल स्वरूप देखने को मिल रहा है। प्रत्येक व्यक्ति अपना जीवन स्तर उठाने के लिए अधिक से अधिक धन अर्जन के लिये प्रयासरत है। धन सब कुछ नहीं है, परन्तु बहुत कुछ धन ही है। निर्धनता की स्थिति में व्यक्ति को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इसके कारण व्यक्ति के व्यक्तित्व के समस्त आयामों पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि निर्धनता समस्त बुराईयों की अमर बेल है। निम्नलिखित आधारों पर निर्धनता के दुष्प्रभावों को बिन्दुवार समझने का प्रयास किया गया है –

1- 'kkjhfjd n"iHkko % निर्धनता की अवस्था में व्यक्ति वांछित पोषक तत्वों एवं सन्तुलित आहार को अपने भोजन में सम्मिलित नहीं कर पाता। इसीलिए अनेक बीमारियों का जन्म निर्धनता से ग्रस्त सामाजिक परिवेश में देखने को मिलता है। मूलतः क्षय रोग (टीबी) को गरीबों की बीमारी की मान्यता मिली हुई है। दीर्घावधि तक रोगग्रस्त रहने के कारण व्यक्ति की कार्य करने की क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। धन के अभाव में निर्धन लोग उचित चिकित्सा सुविधा नहीं ले पाते तथा मृत्यु का अनचाहे वरण करते हैं। इसलिए निर्धनता का सम्बन्ध मृत्यु दर की वृद्धि से भी है। धनवान लोगों की अपेक्षा निर्धन लोगों के बच्चों की मृत्यु दर, गर्भपात दर तथा मृत बच्चे जन्म लेने की संख्या अधिक होती है। निर्धन देशों में माताएँ एवं गर्भस्थ महिलाएँ कुपोषण का शिकार होती हैं। अतः कुपोषण से शिकार महिलाओं के बच्चे भी निश्चित रूप से कुपोषित ही होते हैं। निर्धनता व्यक्ति की कार्य क्षमता को प्रभावित कर व्यावसायिक थकान पैदा करती है। निर्धन लोगों को वांछित धनाभाव के कारण चिकित्सा के प्रति उपेक्षा, दुर्गन्ध एवं गन्दगी युक्त आवासों में निवास, मनोरंजन का अभाव, अस्वस्थता, छूत एवं कुपोषण पर आधारित बीमारियों का सामना करना पड़ता है। निर्धनता के कारण जलवायु परिवर्तन के अनुरूप अपने एवं अपने बच्चों के बचाव के लिए निर्धन लोग उचित वस्त्रों की व्यवस्था भी नहीं करवा पाते।

2- ekufld n"iHkko % निर्धनता अनेक बीमारियों को जन्म देकर व्यक्ति के मानसिक असन्तुलन का कारण बनती है। निर्धनता कुपोषण का कारण बनती है तथा कुपोषण मानसिक व्याधियों को जन्म देता है। इसी प्रकार निर्धन बच्चों का कुपोषण एवं वांछित शारीरिक पुष्टि कारक तत्वों के अभाव में बौद्धिक स्तर निम्न रहने की प्रबल सम्भावना रहती है। ठीक इसी प्रकार निर्धनता के कारण गरीब लोग अपने बच्चों को उचित शिक्षा की व्यवस्था नहीं करवा पाते जिसके कारण उनके समुचित बौद्धिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। सरकार के द्वारा पिछड़े वर्गों के लोगों के उन्नयन एवं विकास के लिए अनेक प्रकार की योजनाओं का क्रियान्वयन कर उनके समुचित विकास के लिए प्रयास किये जा रहे हैं।

3- lkekftd n"iHkko % निर्धनता प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से सामाजिक पद, प्रतिष्ठा एवं मान–सम्मान को प्रभावित करती है। निर्धनता का सामान्य आशय निम्न सामाजिक प्रस्थिति से निम्न सामाजिक परिस्थति व्यक्ति के व्यक्तित्व पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। निर्धनता बाल अपराध, अपराध, भगोड़ेपन, आवारागर्दी एवं मानसिक असन्तुलन को जन्म देती हैं। निर्धनता निर्धन लोगों की समस्त समस्याओं की जड़ है। गरीबी लोगों में मानसिक हीनता को जन्म देती है और इस प्रकार के व्यक्तित्व समाज में स्वस्थ प्रतिस्पर्द्धा करने में स्वयं को असमर्थ पाते हैं।

**नोट**

4- vijk/kxLrrk % निर्धनता किसी व्यक्ति से समाज एवं कानून विरोधी कार्य करवाने में सक्रिय भूमिका का निर्वहन करती है। अपराध एवं बाल अपराध करने वाले अधिकांश अपराधी समाज के निर्धन वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। इन लोगों के पास सामान्य जीवनयापन करने की मूलभूत सुविधाओं का अभाव रहता है। निर्धन लोगों के पास पोषण, स्वास्थ्य एवं आवास की पर्याप्त सुविधाऐ विद्यमान नहीं रहती। ये लोग अपनी तथा अपने परिवार की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए चोरी, डकैती, जेब–तराशी, सेंधमारी इत्यादि कानून विरूद्ध कृत्य करते हैं।

5- ikfjokfjd fo?kVu % निर्धनता समाज में पारिवारिक विघटन को जन्म देने में प्रमुख भूमिका का निर्वहन करती है। निर्धनता के कारण माता–पिता को धन अर्जन के लिए घर से बाहर जाना पड़ता है तथा बच्चे भी पारिवारिक आय में मदद करने के लिए कुछ न कुछ कार्य करते हैं। यहाँ तक कि निर्धनता से निवृत्ति पाने के लिए घर की लड़कियाँ तथा स्त्रियाँ वेश्यावृत्ति तथा कालॅ गर्ल की भूमिका अनचाहे वरण करती हैं। आर्थिक अभाव परिवार के सदस्यों के मध्य तनाव, मनमुटाव, संघर्ष एवं झगड़ों की स्थिति पैदा करता है। गरीब परिवारों के बच्चे आवारा, भगोड़े बाल–अपराधी हो जाते हैं। इन परिवारों की समाज में निम्न स्थिति होती है। निर्धनता गरीबों में व्यवस्था के प्रति रोष एवं असंतोष पैदा करती है तथा सुदृढ़ पारिवारिक संगठन एवं सामाजिक व्यवस्था के लिए खतरा उत्पन्न करती है। इस प्रकार गरीबी पारिवारिक विघटन करने के साथ–साथ गरीबों में निराशा, कुण्ठा, हीनता एवं निराशा के नकारात्मक भावों को जन्म देती है।

6- fHk{kkof`Ùk % निर्धनता भिक्षावृत्ति को जन्म देने के लिए उत्तरदायी कारण है। निर्धन लोगों के पास आय के पर्याप्त साधन नहीं होने के कारण उनके लिए भीख माँगना ही आय अर्जन का एक सरलतम जरिया होता है। इन लोगों का व्यावसायिक प्रशिक्षण एवं शिक्षा के अभाव में रोजगार प्राप्त करना मुश्किल होता है। अतः परिवार के भरण–पोषण के लिए भिक्षा को आय का जरिया बनाते हैं।

7- n`O;lukas eas of) % निर्धनता के कारण लोग मानसिक अवसाद, चिन्ता एवं निराशा के शिकार हो जाते हैं। इनसे मुक्ति पाने के लिए अनेक दुर्व्यसनों को अपने व्यक्तित्व का अभिन्न अंग बना लेते हैं। ये लोग अपने तनावों, कुण्ठाओं एवं निराशाओं का शमन करने के लिए, मद्यपान, जुआ एवं वैश्यावृत्ति का सहारा लेते हैं।

8- pkfjf=d àkl % निर्धनता की अवस्था में उच्च चरित्र बनाये रखना सम्भव नहीं हो पाता, क्योंकि हम भूखे व्यक्ति से ईमानदार एवं नैतिक बने रहने की अपेक्षा नहीं कर सकते, क्योंकि 'बुभुक्षं किं न करोती पापं' (भूखा व्यक्ति कौन–सा पाप नहीं करता।) आर्थिक अभाव के कारण परिवार के भरण–पोषण के लिए घर की लड़कियाँ एवं महिलाएँ तक वैश्यावृत्ति को आय का साधन बना कर पैसा कमाती हैं।

यहाँ पर यह लिखना उपयुक्त होगा कि निर्धनता एक ऐसा चक्रव्यूह है जो अनेक व्याधियों एवं सामाजिक बुराईयों को अपने अन्दर समाहित कर लेता है। निर्धनता एक कुचक्र है। अधिकांश लोग निर्धन हैं क्योंकि वे बेरोजगार हैं और अधिकांश लोग बेरोजगार हैं, क्योंकि वे निर्धन हैं। सामान्यतः निर्धन व्यक्ति शारीरिक, मानसिक, चारित्रिक एवं आध्यात्मिक रूप से सम्पन्न एवं सशक्त नहीं होते। निर्धनता एक ऐसी सामाजिक आर्थिक समस्या है जो अनेक समस्याओं की जननी है। यह भुखमरी, बेरोजगारी, बाल–अपराध, अपराध, पारिवारिक विघटन एवं सामाजिक अव्यवस्था तथा क्रान्ति के लिए उत्तरदायी सिद्ध

होती है। निर्धनता के कारण समाज में अपराधों की दर बढ़ जाती है एवं लोग कुपोषण का शिकार हो जाते है, जिससे उनकी कार्य क्षमता घट जाती है तथा जीवन स्तर गिर जाता है।

**नोट**

## 2-8 Hkkjr e fu/kurk d mUeyu gr ipo"kh; ;kstukvk e fd;s x;s iz;kl

भारत सरकार ने निर्धनता को समाप्त करने के लिए विशेष प्रयत्न किये हैं तथा गाँवों की दशा सुधारने के लिए सामुदायिक विकास योजनाएँ प्रारम्भ की गई हैं। जिनमें कृषि, पशु–पालन, कुटीर उद्योग, लघु उद्योग, सहकारी समितियाँ, शिक्षा, यातायात आदि अनेक विषयों के विकास पर जोर दिया गया है। बेकारी को दूर करने के लिए रोजगार के नये अवसर प्रदान किये गये हैं तथा विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में निर्धनता व बेकारी को दूर करने, लोगों के जीवन–स्तर को उन्नत करने, उत्पादन और राष्ट्रीय आय में वृद्धि करने आदि के लिए योजनाबद्ध प्रयत्न किये गए हैं। आवास, बिजली, पानी, स्वास्थ्य, शिक्षा आदि की सुविधाएँ उपलब्ध कराने तथा अनुसूचित जातियों, जनजातियों एवं अन्य पिछड़ा वर्ग के लोगों के कल्याण कार्यक्रमों पर जोर दिया गया है।

iFke ipo"kh; ;kstuk e fd;s x;s iz;kl % प्रथम पंचवर्षीय योजना में 2378 करोड़ रुपये विभिन्न कार्यक्रमों पर खर्च करने के लिए रखे गये। प्रथम पंचवर्षीय योजना में मुद्रा–स्फीति को रोकने एवं खाद्य सामग्री के अभाव को दूर करने, लोगों का जीवन–स्तर ऊँचा करने और उन्हें अच्छा जीवन व्यतीत करने की सुविधाएँ देने आदि के लक्ष्य तय किये गये। कृषि श्रमिकों की स्थिति में सुधार के लिए कई कार्य किये गये, जैसे कम मजदूरी वाले क्षेत्र में न्यूनतम मजदूरी तय करना, भूमिहीन श्रमिकों के लिए पुनर्वास योजना बनाना, श्रमिक सहकारिताओं का संगठन, निवास स्थान के सम्बन्ध में श्रमिकों को दखली अधिकार देना आदि। बढती हुई बेरोजगारी को दूर करने के लिए 309 करोड़ रुपयों की अतिरिक्त व्यवस्था करके रोजगार देने का प्रावधान किया गया। इस योजना काल में 45 लाख लोगों को प्रत्यक्ष रूप से रोजगार दिया गया।

f}rh; ipo"kh; ;kstuk e fd;s x;s iz;kl % इस योजना काल में उद्योगों के विकास पर जोर दिया गया और योजना की 20 प्रतिशत रकम उद्योगों पर खर्च करने का प्रावधान किया गया। देश का औद्योगीकरण करने के लिए 690 करोड़ रुपये खर्च करने का प्रावधान रख कर तीव्र औद्योगिक विकास का कार्यक्रम तैयार किया गया तथा एक करोड़ लोगों को रोजगार देने का प्रावधान था जिसमें से 65 लाख लोगों को गैर–कृषि क्षेत्र में लाभान्वित किया गया।

r`rh; ipo"kh; ;kstuk e fd;s x;s iz;kl % तृतीय पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य राष्ट्रीय आय में 5 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से वृद्धि करना तथा प्रति वर्ष उपभोग को 4 प्रतिशत से अधिक बढ़ाना था। खाद्य–सामग्री के क्षेत्र में आत्म–निर्भर होने तथा औद्योगिक माँगों के लिए कृषि की उपज बढ़ाने तथा आय व सम्पत्ति की असमानता को समाप्त करने आदि का लक्ष्य रखा गया। इस योजनाकाल में कृषि–श्रमिकों की स्थिति सुधारने पर पर्याप्त जोर दिया गया। इसके लिए विभिन्न विकास कार्यक्रमों जैसे कुटीर एवं लघु उद्योगों का विकास, ग्रामीण विद्युतीकरण, ग्रामीण आवास, जल सिंचाई, कृषि उत्पादन में वृद्धि तथा शिक्षा आदि पर जोर दिया गया।

**prFk ipo"kh; ;ktuk e fd; x; i;kl %** चौथी योजना में कुल 24,882 करोड़ रुपये खर्च करने का प्रावधान था। इस योजना के तीन प्रमुख उद्देश्य थे, 1. आत्म–निर्भरता प्राप्त करना, 2. विकास के लाभों का समान रूप से वितरण 3. विकास के लाभों में समान रूप से वृद्धि करना। इस योजना काल में भूमिहीन कृषि मजदूरों को भूमि वितरण तथा उन्हें पशुपालन उद्योग में लगाने का कार्यक्रम भी रखा गया।

**ikpoh ipo"kh; ;ktuk %** इस योजना में गरीबी दूर करने के लिए प्रति व्यक्ति उपभोग बढ़ाने एवं कीमतों को स्थिर रखने के प्रयासों पर जोर दिया गया। इस योजना में 69,000 करोड़ रुपये खर्च करने का प्रावधान रखा गया। कृषि एवं उससे सम्बन्धित कार्यों पर 4,643 करोड़, उद्योग एवं खनिजों पर 10,200 करोड़, सामाजिक एवं सामुदायिक सेवाओं पर 4,760 करोड़ तथा पर्वतीय एवं जनजातीय क्षेत्रों के विकास के लिए 450 करोड़ रुपये खर्च करने का प्रावधान रखा गया। तत्कालीन प्रधानमंत्री ने केवल राष्ट्रीय आय की वृद्धि करने के स्थान पर गरीबी का अन्त करने के लिए उचित वितरण नीति पर जोर दिया। उन्होंने अपना नया नारा दिया 'गरीबी हटाओ।' इस नयी नीति में कई बातें तय की गयी, जैसे – (1) यदि हम निर्धनता हटाने का प्रयास करेंगे, तो राष्ट्रीय आय में स्वतः वृद्धि होगी। (2) उत्पादन के आयोजन के स्थान पर उपभोग के आयोजन पर अधिक जोर दिया गया। (3) उत्पादन बढ़ाने के साथ–साथ उसका उचित वितरण किया जाये। (4) रोजगार के अवसर को प्राथमिकता दी जाये। (5) प्रत्येक व्यक्ति को जिसकी आय एक निश्चित सीमा से कम है, सरकार प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में सहायता देकर उसे निर्धारित सीमा तक लाने का प्रयास करे। (6) देश के पिछड़े क्षेत्रों का विकास किया जाय ताकि उन्हें कम से कम उपभोग स्तर तक पहुँचाया जा सके। इसके लिए शिक्षा, स्वास्थ्य, पानी आदि की पिछड़े क्षेत्रों में सुविधाएँ प्रदान की गई तथा समाज कल्याण सेवाओं पर जोर दिया गया।

**NBh ipo"kh; ;ktuk e fd; x; i;kl %** इस योजना में गरीबी को समाप्त करने के लिए विशेष प्रावधान किये गये। 'न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम' बनाया गया। इस योजना में पीने के पानी की सुविधा, गृह–विहीन लोगों के लिए मकान बनाने के लिए भूमि देने, गाँवों को मुख्य सड़कों से जोड़ने, ग्रामीण गरीबों को प्राथमिक शिक्षा देने, ग्रामीण स्वास्थ्य सेवा में विस्तार करने, गाँवों में बिजली उपलब्ध कराने, गन्दी बस्तियों का पर्यावरण सुधारने, पोषण की सुविधाएँ जुटाने एवं प्रौढ़ शिक्षा आदि के कार्यक्रमों को सम्मिलित किया गया। निर्धनता को दूर करने के लिए कृषि में सुधार एवं उन्नति करने, बेरोजगारी को समाप्त करने, कुटीर व्यवसायों को प्रोत्साहन देने एवं भूमि–सुधार आदि के कार्यक्रम अपनाये गये। भारत में निर्धनता का केन्द्रीयकरण अनुसूचित जातियों, जनजातियों एवं पिछड़े वर्गों में पाया जाता है। अतः न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम में पिछड़े वर्गों एवं अन्य लोगों के बीच जो दूरी विद्यमान है उसे कम करने का प्रयास किया गया।

**u;h NBh ipo"kh; ;ktuk e fd; x; i;kl %** नयी छठी पंचवर्षीय योजना में निर्धनता उन्मूलन के लिए अनेक कार्यक्रमों की व्यवस्था की गयी। खाली समय में रोजगार देने, एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम तथा अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के कल्याण कार्यक्रमों के लिए पर्याप्त धनराशि की व्यवस्था की गयी थी।

नोट

lkroh ipo"kh; ;kstuk e fd;s x;s i;kl % सातवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत सरकार का लक्ष्य गरीबी–रेखा से नीचे जीवन व्यतीत कर रहे लोगों का प्रतिशत 23 तक लाना था। इस योजना में गरीबी समाप्त करने के लिए सरकार ने काम के बदले अनाज योजना शुरू की थी। 1981 में इस योजना का नाम बदल कर राष्ट्रीय ग्रामीण नियोजन कार्यक्रम कर दिया गया और इसे सातवीं योजना का आवश्यक कार्यक्रम बना दिया गया। इसका प्रमुख उद्‌देश्य ग्रामीण श्रमिकों को खाली समय में रोजगार प्रदान करना है।

vUR;kn; ;kstuk & इस योजना के तहत प्रत्येक गाँव से पाँच निर्धनतम परिवारों का चयन किया जाता है और उन्हें आत्मनिर्भर बनने एवं व्यवसाय करने आदि के लिए सरकार द्वारा आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है। इस योजना का शुभारम्भ सर्वप्रथम राजस्थान सरकार ने 2 अक्टूबर, 1978 में किया।

पंचवर्षीय योजनाओं में देश में निर्धनता को समाप्त करने के लिए अनेक योजनाबद्ध कार्य किये गये हैं। इसके अतिरिक्त भी कुछ इस प्रकार के प्रयास किये गये हैं।

¼v½ d`f"k dk fodkl & निर्धनता दूर करने के लिए कृषि उत्पादन बढ़ाने, पड़त भूमि को जोतने एवं बंजर भूमि को उपजाऊ बनाने के प्रयास किये गये हैं। इसके लिए उन्नत बीज, उर्वरक, वैज्ञानिक यन्त्र एवं नवीन सिंचाई के साधनों का प्रयोग किया जा रहा है। (ब) प्रत्येक पंचवषीर्य योजना में रोजगार के अधिकाधिक अवसर उपलब्ध कराये गये हैं। (स) परिवार नियोजन के विभिन्न कार्यक्रमों द्वारा बढ़ती जनसंख्या पर रोक लगायी गयी है। (द) ग्रामीण विकास के लिए सरकार ने सामुदायिक विकास योजनाएँ प्रारम्भ की, जिनका उद्‌देश्य ग्रामीण निर्धनता को समाप्त करने के लिए पशु–पालन, कृषि का विस्तार, सिंचाई, भूमि–सुधार आदि कार्यों में वृद्धि लाना है। (य) सरकार ने देश के विभिन्न भागों में बड़े–बड़े उद्योगों की स्थापना की, जिससे कई लोगों को रोज़गार प्राप्त हुआ।

xjhch nj dju dh uhfr vk;kx dh j.kuhfr %

- 2017 में नीति आयोग ने गरीबी दूर करने हेतु एक विजन डॉक्यूमेंट प्रस्तावित किया था। इसमें 2032 तक गरीबी दूर करने की योजना तय की गई थी।
- इस डॉक्यूमेंट में कहा गया था कि गरीबी दूर करने हेतु तीन चरणों में काम करना होगा–

1. गरीबों की गणना – देश में गरीबों की सही संख्या का पता लगाया जाए।
2. गरीबी उन्मूलन संबंधी योजनाएँ लाई जाएँ।
3. लागू की जाने वाली योजनाओं की मॉनीटरिंग या निरीक्षण किया जाए।

- आशादी के 70 साल बाद भी गरीबों की वास्तविक संख्या का पता नहीं चल पाया है।
- देश में गरीबों की गणना के लिये नीति आयोग ने अरविंद पनगढ़िया के नेतृत्व में एक टास्क पफोर्स का गठन किया था। 2016 में इस टास्क पफोर्स की रिपोर्ट आई जिसमें गरीबों की वास्तविक संख्या नहीं बताई गई।

नोट

- टास्क फोर्स ने इसके लिये एक नया पैनल बनाने की सिफारिश की और सरकार ने सुमित्रा बोस के नेतृत्व में एक समिति गठित की जिसकी रिपोर्ट मार्च 2018 में प्रस्तुत की गई।
- समिति ने अपनी रिपोर्ट में कहा कि सामाजिक–आर्थिक जातिगत जनगणना को आधार बनाकर देश में गरीबों की गणना की जानी चाहिये। इसमें संसाधनहीन लोगों को शामिल किया जाए तथा जो संसाधन युक्त हैं, उन्हें इसमें शामिल न किया जाए।
- नीति आयोग ने गरीबी दूर करने के लिये दो क्षेत्रों पर ध्यान देने का सुझाव दिया–पहला योजनाएँ तथा दूसरा MSME। देश में वर्क फोर्स के लगभग 8 करोड़ लोग MSME क्षेत्र में काम करते हैं तथा कुल वर्कफोर्स के 25 करोड़ लोग कृषि क्षेत्र में काम करते हैं। अर्थात् कुल वर्कफोर्स का 65 प्रतिशत इन दो क्षेत्रों में काम करता है।
- वर्कफोर्स का यह हिस्सा काफी गरीब है और गरीबी में जीवन यापन कर रहा है। यदि इन्हें संसाधन मुहैया कराए जाएँ, इनकी आय दोगुनी हो जाए तथा मांग आधारित विकास पर ध्यान दिया जाए तो शायद देश से गरीबी खत्म हो सकती है।

xjhch mUeyu dh fn'kk e ge dgk [kM g\

- संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP) द्वारा जारी वैश्विक बहुआयामी गरीबी सूचकांक 2018 (Multidimentional Poverty Index-MPI) के मुताबिक, 2005–06 तथा 2015–16 के बीच भारत में 270 मिलियन से अधिक लोग गरीबी से बाहर निकले और देश में गरीबी की दर लगभग 10 वर्ष की अवधि में आधी हो गई है। भारत बहुआयामी गरीबी को कम करने में महत्वपूर्ण प्रगति की है।
- इस प्रकार दस वर्षों के भीतर, भारत में गरीब लोगों की संख्या 271 मिलियन से कम हो गई जो कि वास्तव में बहुत बड़ी उपलब्धि है।
- पिछले कुछ सालों में भारत में गरीबी दूर करने की दिशा में अच्छा प्रयास किया गया है। पिछले आधिकारिक आँकड़ों के अनुसार, 22 प्रतिशत भारतीय गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहे हैं।
- भारत की अधिकांश आबादी अभी गाँवों में रहती है। हालाँकि भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी क्षेत्रों में पर्याप्त प्रवासन हुआ है लेकिन भारत की लगभग 68% आबादी अभी भी ग्रामीण क्षेत्रों में रहती हैं।
- हालाँकि गरीबी समय के साथ कम होती रही हैं, शहरी क्षेत्रों में गरीबी की कमी की दर ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में अधिक रही है। शहरी क्षेत्रों की 13.7% की तुलना में आज भी ग्रामीण भारत की लगभग 26% आबादी गरीब है।
- रंगराजन समिति के अनुमान भी इस बात के संकेत देते हैं कि 2011–12 में ग्रामीण गरीबी का प्रतिशत शहरी गरीबी से अधिक था और यह लगभग 31% थी।
- आजादी के 70 साल बाद भी गाँव सामाजिक–आर्थिक विश्लेषण के लगभग पर पहलू पर पीछे दिखाई दे रहे हैं।

नोट

- भारत ने समृद्ध शहरों और गरीब गाँवों की अर्थव्यवस्था बनाई है जिससे शहरी क्षेत्रों में वृद्धि और ग्रामीण क्षेत्रों में गिरावट आ रही है।
- केंद्र में मौजूदा सरकार प्रचंड बहुमत के साथ सत्ता में आई जिसका प्राथमिक उद्देश्य "सब का साथ सबका विकास" था। शहरों की तुलना में ग्रामीण क्षेत्राों में गरीबी की बढ़ती खाई को पाटने के लिये अभी बहुत कुछ किया जाना बाकी है।

xkeh.k {k=kk e vHkh Hkh xjhch %

- ग्रामीण गरीबी काफी हद तक कम उत्पादकता और बेरोजगारी का परिणाम है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था व्यापक रूप से कृषि पर निर्भर करती है। लेकिन भारत में खेती अप्रत्याशित मानसून पर निर्भर करती है जिससे उपज में अनिश्चितता की स्थिति बनी रहती है।
- पानी की कमी, खराब मौसम तथा सूखा भी ग्रामीण इलाकों में गरीबी का प्रमुख कारण है। चरम गरीबी कई किसानों को आत्महत्या करने के लिये मजबूर करती है।
- कई ग्रामीण क्षेत्रों की स्थिति इतनी दयनीय है कि इनमें स्वच्छता, बुनियादी ढाँचा, संचार और शिक्षा जैसी सुविधाओं का भी अभाव है।
- भारत में अमीरों और गरीबों के बीच व्यापक अंतर भी गरीबी का मुख्य कारण है। इससे अमीर और अमीर तथा गरीब और गरीब होते जा रहे हैं। अतः दोनों के बीच बढ़ते इस आर्थिक अंतर को कम करना होगा।
- देश की सामाजिक व्यवस्था को बदलना होगा। साथ ही कृषि समस्याओं को हल करने के लिये किसानों को सिंचाई की सभी सुविधाएँ दी जानी चाहिये।

xjhch mUeyu dh fn'kk e ljdkjk }kjk fd;s x, i;kl %

- विशेषज्ञों का मानना है कि सरकार का लक्ष्य गरीबी दूर करना नहीं बल्कि समृद्धि लाना होना चाहिये क्योंकि समृद्धि से ही गरीबी उन्मूलन संभव है।
- आर्थिक सुधारों के बाद भारत की अर्थव्यवस्था तेज गति से वृद्धि कर रही है। लेकिन उच्च आर्थिक वृद्धि दर के बिना गरीबी कम नहीं हो सकती।
- आर्थिक वृद्धि को ध्यान में रख कर सरकार द्वारा अनेक योजनाओं एवं कार्यक्रमों की शुरूआत की गई है, जैसे रोजगार सृजन कार्यक्रम, आय समर्थन कार्यक्रम, रोजगार गारंटी तथा आवास योजना आदि।
- प्रधानमंत्री जन धन योजना (PMJDY) ऐसा ही एक कार्यक्रम है। यह योजना आर्थिक रूप से वंचित लोगों को विभिन्न वित्तीय सेवाओं जैसे– बचत खाता, बीमा, आवश्यकतानुसार ऋण, पेंशन आदि तक पहुँच प्रदान करती है।
- किसान विकास पत्र के माध्यम से किसान 1,000,5000 तथा 10,000 रुपये मूल्यवर्ग में निवेश कर सकते हैं। इससे जमाकर्त्ताओं का धन 100 महीनों में दोगुना हो सकता है।

नोट

- दीन दयाल उपाध्याय ग्राम ज्योति योजना (DDUGJY) को ग्रामीण क्षेत्रों को बिजली की निरंतर आपूर्ति प्रदान करने हेतु शुरू किया गया है।
- महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (MGNREGA) के तहत देश भर के गाँवों में लोगों को 100 दिनों के काम की गारंटी दी गई है।
- जहाँ तक ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबों के आय स्तर में वृद्धि का संबंध है, यह एक सफल कार्यक्रम साबित हुआ है।
- इंदिरा आवास योजना ग्रामीण क्षेत्र में आवास सुविधा प्रदान करती है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य देश भर में 20 लाख घर बनाना है जिसमें 65% ग्रामीण क्षेत्रों में हैं।
- योजना के अनुसार, जो लोग अपना घर बनाने में सक्षम नहीं हैं, उनको रियायती दर पर ऋण प्रदान किया जाता है।
- एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम दुनिया में अपनी तरह की सबसे महत्वकांक्षी योजना है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य गरीबों को रोजगार प्रदान कर उनके कौशल को विकसित करने के अवसर प्रदान करना है ताकि उनके जीवन स्तर में सुधार हो सके।
- भारत में गरीबी उन्मूलन के लिये सरकार द्वारा शुरू की गई कुछ अन्य योजनाओं में शामिल हैंः राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (NREP), राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना (NMBS) , ग्रामीण श्रम रोजगार गारंटी कार्यक्रम (RLEGP), राष्ट्रीय पारिवारिक लाभ योजना (NFBS), शहरी गरीबों के लिये स्वरोजगार कार्यक्रम (SEPUP) आदि।
- उपरोक्त सभी योजनाओं एवं कार्यक्रमों ने गरीबी कम करने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

D;k fd;s tkus dh t:jr g\

- किसी भी गरीबी उन्मूलन रणनीति का एक आवश्यक तत्व घरेलू आय में बड़ी गिरावट को रोकना है।
- राज्य प्रायोजित गरीबी और सामाजिक सुरक्षा योजनाओं को सही सोच के साथ लागू किया जाना चाहिये।
- कई देशों में गरीबी को कम करने के लिये सशर्त नकद हस्तांतरण (CCT) को एक प्रभावी साधन के रूप में प्रस्तावित किया गया है।
- हालाँकि, पूर्ण लाभ पाने के लिये गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, स्वास्थ्य और पोषण प्रदान करने में सक्षम सामाजिक बुनियादी ढाँचे के निर्माण की आवश्यकता है।
- यूटिलिटी, विद्युतीकरण, आवास, ट्रांसपोर्टेशन सुविधाओं के विकास पर ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है।
- भारत में केवल 1,500 किलोमीटर एक्सप्रेस वे है, जबकि चीन और अमेरिका में यह 100 हजार किलोमीटर से भी अधिक है। अतः इसे बढ़ाए जाने की जरूरत है।

नोट

- कृषि उत्पादन पर्याप्त नहीं है। गाँवों में आर्थिक गतिविधियों का अभाव है। इन क्षेत्रों की ओर ध्यान देने की जरूरत है। कृषि क्षेत्र में सुधार की जरूरत है ताकि मानसून पर निर्भरता कम हो।
- बैंकिंग, क्रेडिट क्षेत्र, सामाजिक सुरक्षा नेटवर्क, उत्पादन और विनिर्माण क्षेत्र को बढ़ावा तथा ग्रामीण विकास के क्षेत्र में सुधार की जरूरत।
- सार्वजनिक स्वास्थ्य, शिक्षा पर अधिक निवेश किये जाने की जरूरत है ताकि मानव उत्पादकता में वृद्धि हो सके। गुणात्मक शिक्षा, कौशल विकास पर ध्यान केंद्रित करने के साथ ही रोजगार के अवसर, महिलाओं की भागीदारी , बुनियादी ढाँचा तथा सार्वजनिक निवेश पर ध्यान दिये जाने की जरूरत है।
- हमें आर्थिक वृद्धि दर को बढ़ाने की आवश्यकता है। आर्थिक वृद्धि दर जितनी अधिक होगी गरीबी का स्तर उतना ही नीचे चला जाएगा।

गरीबी देश के लिये बहुत बड़ी समस्या है। इसे खत्म करने के लिये युद्ध स्तर पर प्रयास किया जाना चाहिये। हमारी सरकार देश के विकास के लिये कदम उठा रही है। गरीबी उन्मूलन अर्थव्यवस्था और समाज की एक सतत् और समावेशी वृद्धि सुनिश्चित करेगा। हम सभी को देश से गरीबी दूर करने हेतु किये जा रहे प्रयासों में हर संभव मदद के लिये तैयार रहना चाहिये।

## 2-9 fu/kurk mUeyu gr| l|>ko

यद्यपि निर्धनता का उन्मूलन करना असम्भव सा कार्य प्रतीत होता है तथापि इस सामाजिक–आर्थिक समस्या के समाधान हेतु निम्नलिखित सुझावों को मस्तिष्क पटल पर रख कर ईमानदारी से प्रयास किये जा सकते हैं :

1. जनसंख्या विस्फोट पर प्रभावी नियन्त्रण स्थापित करना।
2. कृषि व्यवस्था में वैज्ञानिक एवं तकनीकी सुधार करने के लिए असक्षम किसानों की मदद करना।
3. बेरोजगारी का उन्मूलन करने के लिए उत्पादकता से सम्बद्ध श्रम जुटाने की व्यवस्था करना।
4. संसाधनों का उचित वितरण करने के लिए प्रभावाशाली तंत्र की स्थापना करना।
5. कुटीर एवं लघु उद्योगों का समुचित विकास करना।
6. रोजगारोन्मुखी शिक्षा–प्रणाली का वैज्ञानिक तरीके से विकास करना।
7. सामाजिक कुप्रथाओं को प्रभावशाली कानून के द्वारा नियंत्रित करना।
8. भ्रष्टाचार का उन्मूलन करना।
9. सामाजिक बीमा योजना को भारत के गरीब लोगों तक पहुँचाना।
10. प्राकृतिक विपदाओं से सुरक्षा के पुख्ता प्रबन्ध करना।
11. मद्यपान को पूर्णतः समाप्त करना।
12. गन्दी बस्तियों के स्थान पर साफ–सुथरे आवास की व्यवस्था करना।

13. मुफ्त चिकित्सा सुविधा उपलब्ध करवाना।
14. ग्रामीण क्षेत्रों में यातायात एवं सड़क सम्पर्क स्थापित करना।
15. बचत की आदत को प्रोत्साहन देना।

नोट

## 2-10 lkjk'k

निर्धनता एक ऐसी सामाजिक–आर्थिक चुनौती है, जिसके निराकरण के लिए समन्वित प्रयासों की जरूरत है क्योंकि इसकी उत्पत्ति के लिए अनेक शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं प्राकृतिक कारक उत्तरदायी होते हैं। इस समस्या के निराकरण हेतु राजकीय एवं गैर सरकारी संगठनों द्वारा विभिन्न योजनाओं का क्रियान्वयन करने के प्रयास किये जा रहे हैं। भारत में निर्धनता की समस्या बड़ी विकट है। इसका समाधान करने के लिए रोजगारोन्मुखी शिक्षा–प्रणाली को विकसित करने के साथ–साथ इसका औद्योगगिक तंत्र के साथ समन्वय एवं तालमेल होना अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त जनसंख्या को कारगर तरीके से नियन्त्रण करना, कृषि एवं भूमि सुधार करना, सामाजिक बीमा योजना लागू करना, सामाजिक चेतना विकसित करना, भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाना इत्यादि प्रयास आन्तरिक प्रबल इच्छा शक्ति से सकारात्मक सोच के साथ किए जाने की महत्ती आवश्यकता है। निर्धनता को दूर करने के लिए विकास का लाभ समाज के निर्धनतम लोगों तक उचित वितरण प्रणाली के माध्यम से पहुँचना भी चाहिए।

## 2-11 vH;kl i'u

1. निर्धनता से आप क्या समझते हैं ?
2. निर्धनता के प्रमुख स्वरूपों की व्याख्या कीजिये ?
3. निर्धनता के कौन–कौन से कारण है ?
4. निर्धनता के दुष्प्रभावों को लिखिये ?
5. भारत में निर्धनता के उन्मूलन हेतु किये गये प्रयासों पर प्रकाश डालिये ?
6. भारत में ग्रामीण एवं नगरीय निर्धनता के बारे में प्रकाश डालिये ?

## bdkb&3 e|iku

### ikB&l|jpuk

नोट

3.0 प्रस्तावना
3.1 मद्यपान का अर्थ
3.2 भारत में मद्यपान से समस्यायें
3.3 मद्यपान के उत्तरदायी कारक
3.4 युवा वर्ग में मद्यपान के कारण
3.5 अन्य वर्गों में मद्यपान के कारण
3.6 मद्यपान से निदान
3.7 सारांश
3.8 अभ्यास प्रश्न

### 3-0 iLrkouk

जिस प्रकार तलाक, परित्याग, वेश्यावृति, आत्महत्या इत्यादि सामाजिक विघटन के प्रतिमान हैं, उसी प्रकार मद्यपान भी एक प्रमिमान है जो व्यक्ति विशेष के लिए वैयक्तिक विघटन, परिवार के लिए पारिवारिक विघटन और समाज के लिए सामाजिक विघटन का द्योतक है।

मद्यपान तथा मादक द्रव्य व्यसन एक विश्व व्यापी समस्या है। इसके Pathological aspect कुछ आंकड़े निम्नवत हैं :

केवल संयुक्त राज्य अमेरिका में 8 करोड़ व्यक्ति मद्यसेवी हैं। यहाँ मद्यपान के कारण प्रतिवर्ष 25,000 व्यक्तियों को अपने जीवन से हाथ धोना पड़ता है तथा 50,000 दुर्घटनाएं होती है। स्विट्जरलैंड जैसे छोटे से देश में शराब पर प्रतिवर्ष 11.5 करोड़ डॉलर समाप्त हो जाते हैं। आज मद्यपान से अनेक प्रकार की मानसिक विमारियों, दुर्घटनाओं, अकाल मृत्यु तथा अपराधों में वृद्धि होने के कारण हर समाज के लिए जीवन तथा उससे जुड़ी नीतियों का पुनर्मूल्यांकन करने की एक बड़ी समस्या उत्पन्न कर दी है।

महाभारत, शान्ति पर्व अध्याय 79 के आधार पर वेदों के अतिरिक्त उपनिषदों, स्मृतियों, वराह तथा गरुड़ पुराणों तथा अन्य धर्मग्रन्थों में भी मादक द्रव्यों के उपयोग की कड़ी निन्दा की गई है। बौद्ध काल के जातक ग्रन्थों में भी मद्यपान को व्यक्ति का नाश करने वाला बताया गया है। कौटिल्य के अर्थशास्त्रा में सैनिकों के लिए भी मद्यपान पर प्रतिबंध लगाने की व्याख्या की गई है। गुप्त शासन काल में चीनी यात्री फाहियान ने लिखा है कि भारत में मद्यपान का प्रचलन नहीं है। इसके पश्चात् भी वह सत्य है कि इन सभी युगों में किसी न किसी रूप में मद्यपान का प्रचलन रहा, एक स्वीवृफत व्यवहार के रूप में नहीं, बल्कि संभ्रान्त वर्ग के एक अस्वीकृत और आलोचित व्यवहार के रूप में।

भारत में मुस्लिम काल से मद्यपान में धीरे–धीरे वृद्धि होना आरम्भ हो गई, यद्यपि इस्लाम धर्म में मद्यपान को शैतान का एक गन्दा काल कहा गया है। इस काल में भी

शासन की ओर से मद्यपान वर्जित था लेकिन मुस्लिम शासकों, तत्कालीन राजपूत राजाओं, सामन्तों, जागीरदारों तथा अमीरों ने इस बुराई को खुलकर प्रोत्साहन किया। इस समय मद्यपान को विलास और वैभव का प्रतीक समझा जाने लगा। इस्ट इंडिया कम्पनी ने 1870 में शराब के उत्पादन पर आबकारी कर लगाकर इसे आर्थिक लाभ का माध्यम बनाने का कार्य किया।

**नोट**

## 3-1 e|iku dk vFkZ

इलिएट और मैरिल ने लिखा है कि कभी–कभी अथवा थोड़ी मात्रा में शराब पीना मद्यपान की श्रेणी में नहीं आता है। एक समस्या के रूप में मद्यपान का तात्पर्य अत्यधिक मात्रा में शराब पीना है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, मद्यसेवी का तात्पर्य अत्यधिक नशा करने वाले उस व्यक्ति से है जो शराब पर इतना निर्भर हो जाता है कि इसके कारण उस व्यक्ति का मानसिक तथा शराब पर इतना निर्भर हो जाता है कि इसके कारण उस व्यक्ति का मानसिक तथा शारीरिक स्वास्थ्य अन्तवैंयक्तिक सम्बन्ध तथा सामाजिक और आर्थिक जीवन अस्त–व्यस्त हो जाता है।

Dictionary of Sociology P, 8 के शब्दों में शराब की असामान्य और बुरी आदत ही मद्यपान है। टेकचन्द के अध्ययन दल के अनुसार, शराब पीने अथवा किसी भी मादक पदार्थ का सेवन करने से उत्पन्न बुरी आदत अथवा बीमारी ही मद्यपान है। यह वह स्थिति है जो मनुष्य की आत्मा, मन और शरीर को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करके उसे पतन की ओर ले जाती है।

मादक द्रव्य व्यसन एक विश्व व्यापी समस्या के रूप में उभर कर सामने आया है। गांजा, चरस, अफीम, कोकीन, माजूम अनेक प्रकार के दूसरे देशों वाले मादक पौधे के पत्ते तथा औषधि का प्रयोग भी दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। एल.एस.डी. तथा एस.टी.पी. की अत्यधिक मादक गोलियों तथा हिरोइन, ब्राउन सुगर स्मैक आदि का स्मोकिंग तथा Puffing लेने की प्रवृति वर्तमान नई पीढ़ी में तेजी से बढ़ रहा है।

## 3-2 Hkkjr esa e|iku ls leL;k;sa

कुछ समय पूर्व तक मद्यपान की बुराई जहाँ केवल अत्यधिक संभ्रान्त वर्ग, उच्चाधिकारियों तथा आपराधिक वर्ग तक ही सीमित थी, वहीं अब इसका उपयोग नगरों के मध्यम वर्ग, ग्रामीण किसानों, मेहनतकश मजदूरों तथा युवा वर्ग में बहुत तेजी से बढ़ता जा रहा है। सन् 1980 में भारत के महानगरों से सम्बद्ध विश्वविद्यालय छात्रों के एक सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ था कि वहाँ के लगभग आधे छात्र किसी न किसी प्रकार के मादक द्रव्यों का सेवन करने के अभ्यस्त थे। इनमें लड़कों के साथ लड़कियों की संख्या भी काफी अधिक थी। सबसे बड़ी समस्या तो यह है कि आज मद्यपान का प्रयोग किसी मानसिक अथवा शारीरिक आवश्यकता के कारण नहीं, बल्कि एक फैशन और सनक के रूप से अधिक बढ़ा है। हम्पी संस्कृति तथा आधुनिक प्रतीत होने की सनक ने युवा वर्ग के एक बड़े भाग को पतन के इस चौराहे पर लाकर खड़ा कर दिया है।

नोट

लीण्ड स्मिथ का यह कथन भारतीय परिस्थितियों में बहुत उपयुक्त प्रतीत होता है। स्वयं को असमान्य समझने वाले व्यक्ति सामान्य बनने की लालसा में मादक द्रव्यों के व्यसन की ओर बढ़ते जा रहे हैं।

## 3-3 e|iku d mÙkjnk;h dkjd

जीवशास्त्रियों, मनोवैज्ञानिकों, समाजशास्त्रियों तथा अर्थशास्त्रियों ने मद्यपान के कारण का विश्लेषण भिन्न–भिन्न रूप से किया है। जीवशास्त्री यह मानते हैं कि कुछ व्यक्तियों की जीव–रचना व्यक्ति से मद्यपान की माँग करती है। एक बार इसकी पूर्ति हो जाने पर व्यक्ति धीरे–धीरे इसका आदी हो जाता है। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार, मद्यसेवी व्यक्ति मानसिक रूप से एक दुर्बल तथा अस्वस्थ व्यक्ति हो जाता है। व्यक्ति में आत्मसंयम स्थिरता तथा मानसिक संतुलन की कमी के कारण वह स्वयं को असुरक्षित अनुभव करता है। यही मनोभाव उसे मादक द्रव्यों का प्रयोग करने का प्रोत्साहन देते हैं। समाजशास्त्रियों का विचार है कि मद्यपान तथा मादक द्रव्यों का प्रयोग का कारण एक दूषित सामाजिक–सांस्कृतिक पर्यावरण है जो व्यक्ति में लालसा मद्यपान की ओर प्रवृत करता है।

इस दृष्टिकोण से मद्यपान की समस्या को अनेक कारकों की पृष्ठभूमि में ही समुचित रूप से समझा जा सकता है। बेनेजर स्टार्लिंग तथा काल्टिन ने अनेक कारकों को मद्यपान के लिए उत्तरदायी माना है।

## 3-4 ;qok oxZ esa e|iku d dkj.k

युवा वर्ग आज नये परिवेश ग्रहण कर रहा है। सामाजिक मूल्यों तथा पर्यावरण सम्बन्धी कारकों में होने वाला तीव्र परिवर्तन उसकी विचारधाराओं एवं जीवन की मान्यताओं में परिवर्तन उत्पन्न कर रहा है। इन दशाओं में निम्नांकित कारण युवा वर्ग में मद्यपान तथा मादक द्रव्यों के प्रति बढ़ते हुए व्यसन के लिए अधिक उत्तरदायी है।

1. lxfr dk iHkko % जीवन के अनुभवों के अभाव तथा स्वास्थ्य के प्रति उदासीनता की प्रवृति में युवकों के लिए अपने साथी की सबसे बड़ा आदर्श होता है। एक व्यक्ति जब अपने युवा साथी को शराब पीते हुए देखता है तो उसे अपनी अनुरूपता सिद्ध करने के लिए वह भी मद्यपान को एक रोचक कार्य, नये अनुभव तथा मिलनसारिता से साधन के रूप में ग्रहण कर लेता है।
2. fujk'kkiw.kZ thou % वर्तमान युवा पीढ़ी तरह–तरह की निराशाओं और कुण्ठाओं से ग्रस्त है। शिक्षा की उद्देश्यहीनता, सांस्कृतिक मूल्यों तथा भौतिकता की चकाचौंध के बीच की खाई, अभावमय लेकिन आडम्बरपूर्ण जीवन उसकी निराशाओं के प्रमुख कारण हैं। इन परिस्थितियों से उत्पन्न निराशाओं को दूर करने के लिए बहुत से युवा मद्यपान को एक सहारा के रूप में ग्रहण कर लेते हैं।
3. fuokl dh nk"kiw.kZ n'kk,¡ % बहुत से युवक इसलिए मद्यपान करना आरम्भ कर देते हैं कि मकान बहुत गन्दा, अंधकारयुक्त और सीलन से भरा होने के कारण वे उसमें अधिक समय तक नहीं रह सकते।

## 3-5 vU; oxk e e|iku d dkj.k

नोट

1. mPp thou Lrj dk irhd % पश्चिमी सभ्यता के रंग में रंगे हुए धनी वर्ग तथा उच्च मध्यम वर्ग में यह भावना तेजी से बढ़ती जा रही है कि मद्यपान करना उच्च जीवन स्तर का प्रती है। आज क्लबों, पार्टियो और सामाजिक–सांस्कृतिक उत्सवों के अवसर पर मद्यपान का खुला प्रचलन इसी प्रवृति का संकेत है।
2. 0;kolkf;d LokFk % भारत में एक बहुत बड़ा वर्ग अब व्यावसायिक स्वार्थों को पूरा करने के लिए शराब पीता और पिलाता है।
3. ifrdy ifjfLFkfr;k % कभी–कभी व्यक्ति के सामने ऐसी प्रतिकूल परिस्थितियाँ आ जाती हैं जिनमें उसका मानसिक संततुलन बिगड़ जाता है। उदाहरण के लिए बेकारी, परिवार में किसी प्रियजन की लम्बी बीमारी, व्यापार में बड़ा बट्टा, निरंतर असफलता, प्रेम में निराशा, पारिवारिक कलह, किसी प्रियजन से गहरी उपेक्षा या तिरस्कार। Elliot and Merrill, Social disoraganization, P, 198 का कथन है वे लोग जो बहुत संकोची, भावुक, सामाजिक दृष्टि से असुरक्षित तथा कठिनाइयों का सामना करने में असमर्थ होते हैं, मद्यपान को एक विकल्प के रूप में स्वीकार कर लेते हैं।
4. ufrd eY;k e iru % प्रत्येक व्यक्ति जो देखता और सुनता है, उसका उसके आचरणों पर अनिवार्य रूप से प्रभाव पड़ता है। वर्तमान युग में वे नैतिक मूल्य बहुत तेजी से कमजोर पड़ते जा रहे हैं जो मद्यपान तथा इसी प्रकार की दूसरी बुराइयों पर पहले नियंत्रण लगाये हुये थे। आज समाज में संयम और सदाचार को रूढ़िवादिता समझा जाता है।
5. puko dh jktuhfr % चुनाव भ्रष्टाचार को प्रोत्साहन देने का प्रमुख साधन बने हुये हैं। भारत में चुनावों के समय मद्यपान को जिस प्रकार खुलकर प्रोत्साहन दिया जाता है, वह स्वयं में अत्यधिक दुखद घटना है। प्रत्याशियों तथा उनके समर्थकों द्वारा अपने क्षेत्रों में शराब बाँटी जाती है और नशे की हालत में उनसे अपनी स्वार्थ सिद्धि करवाई जाती है।
6. vlkekU; 0;fDrRo % कुछ व्यक्तियों के मनोवैज्ञानिक रूप से ऐसे विकार या दोष होते हैं जो उन्हें सरलता से मद्यपान की ओर ले जाते हैं।

## bfrgkl

अभिलिखित पूरे मानव इतिहास में शराब के उपयोग और दुरुपयोग का एक लंबा इतिहास है। बाइबिल, मिस्त्र और बेबीलोन के स्त्रोतों में शराब के अप्रयोग और इस पर निर्भरता का इतिहास दर्ज हैं। कुछ प्राचीन संस्कृतियों में शराब की पूजा की जाती थी और अन्य इसके अपप्रयोग की निंदा किया करते थे। हजारों साल पहले भी अत्यधिक मात्रा में शराब दुरुपयोग और मद्यपतता को समस्याओं का कारण माना जाता रहा हैं। बहरहाल, उस समय इसे आभ्यासिक मद्यव्यसनिता के रूप में परिभाषित किया गया और 1700 के दशक तक इसके प्रतिकूल परिणामों को चिकित्सकीय तौर पर अच्छी तरह से स्थापित

नहीं किया गया। 1647 में एक ग्रीक भिक्षुखूिव, ने पहली बार प्रमाणित किया कि शराब का क्रोनिक दुरुपयोग तंत्रिका तंत्र और शरीर में विषाक्तता से जुड़ा हुआ है, जो कारण कई तरह के चिकित्कीय विकार जैसे कि दौरा पड़ना, पक्षाघात और अंदरुनी तौर पर रक्त क्षरण होता है। 1920 में शराब के अपप्रयोग और पुरानी मद्यव्यसनिता के प्रभावों को देखते हुए शराब की विफल रही निषेधाज्ञा को सुविचारित रूप से अंततः अमेरिका में कुछ समय के लिए लागू किया गया। 2005 में यूएसए (USA) की अर्थव्यवस्था में शराब पर निर्भरता और इसके अपप्रयोग की अनुमानित लागत प्रतिवर्ष लगभग 220 बिलियन डॉलर है जो कि कैंसर और मोटापे से कहीं अधिक है।

## lekt vkj lL—fr

### fofy;e gkxkFk ftu yu] 1751

लंबे समय तक शराब के सेवन से होनेवाली स्वास्थ्य समस्याएं आमतौर पर समाज के लिए हानिकारक मानी जाती हैं, उदाहरण के लिए, काम का समय बर्बाद होने से पैसों का नुकसान, दवाओं की लागत और इसके दूसरे क्रम से इलाज का खर्च. शराब का सेवन सिर पर आघात, वाहन दुर्घटना, हिंसा और मारपीट का प्रमुख कारक होता है। पैसों के अलावा, शराबी और उसके परिवार तथा दोस्तों को खास तरह से सामाजिक मूल्य चुकाना पड़ता है। उदाहरण के लिए, गर्भवती महिला द्वारा शराब के सेवन से भ्रूण शराब सिंड्रोम का शिकार हो सकता है, जो एक लाइलाज और हानिकारक स्थिति है।

शराब के अपप्रयोग से आर्थिक नुकसान का आंकड़ा विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा एकत्र किया गया है, जो किसी देश के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी (GDP) का एक से लेकर छह प्रतिशत तक होता है। ऑस्ट्रेलिया में सभी प्रकार के नशीले पदार्थों के अपप्रयोग में शराब की अनुमानित अधिकीलित सामाजिक लागत 24 प्रतिशत है इसी तरह कनाडा में हुए अध्ययन के अनुसार शराब के हिस्से में 41 प्रतिशत जाता है। 2001 में किए गए एक अध्ययन में यूके (UK) के सभी प्रकार के अलकोहल के दुरुपयोग की निर्धारित लागत 18.5–20 बिलियन तक पायी गयी।

रूढ़िवादी शराबी अक्सर लोकप्रिय संस्कृति और काल्पनिक कहानी–उपन्यास में मिल जाते हैं। पश्चिम की लोकप्रिय संस्कृति में 'शहर का पियक्कड़' एक खास चरित्र होता है। रूढ़िवादी पियक्कड़पन हो सकता है नस्लवाद या अज्ञातजन भीति पर आधारित हो सकता है, जैसा कि आयरिश के चित्रण में बड़े पियक्कड़ के रूप में होता है। स्टिवर्स और ग्रेले जैसे समाजिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा किए गए अध्ययन में अमेरिका में रहनेवाले आयरिश में व्यापक स्तर पर बड़ी मात्रा में शराब के सेवन को प्रमाणित करने की कोशिश की गयी है।

## 3-6 e|iku l funku

**lkekftd ck/kk,¡ %** शराब दुरुपयोग के उपचार और जांच में प्रवृत्ति और सामाजिक छवि अड़चन बन सकते हैं। यह पुरुषों की तुलना में महिलाओं के लिए कहीं अधिक बाधक है। बदनाम हो जाने के डर से महिलाएं अपने पीने की बात को छिपाने

नोट

के लिए इस बात से इंकार करती है कि वे किसी चिकित्सीय स्थिति से पीड़ित हैं। परिणामस्वरूप यह रवैया परिवार, चिकित्सकों और अन्य के लिए शक करने की गुंजाइश को कम कर देता है कि जिस महिला को वे जानते हैं वह एक मद्यप है। इसके विपरीत, किसी चिकत्सिकीय स्थिति से पीड़ित हैं यह स्वीकार करने में पुरुषों को बदनामी का डर कम होता है, इसीलिए वे खुलेआम सार्वजनिक तौर पर पीने का प्रदर्शन करते हैं और समूह में पीते हैं। परिणामस्वरूप उनके इस रवैये से परिवार, चिकित्सक और अन्य अच्छी तरह जानते हैं कि जिस आदमी को वे जानते हैं वह एक शराबी है।

tkp % शराब के सेवन के नियंत्रण की हानि का पता लगाने के लिए कई उपकरणों का इस्तेमाल किया जा सकता है। ये उपकरण ज्यादातर प्रश्नावली के रूप में आत्म–प्रतिवेदन होते हैं। एक अन्य आम विषय एक स्कोर या टैली है जो शराब के सेवन की सामान्य गंभीरता का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करता है।

जिसे CAGE (सीएजीई) प्रश्नावली नाम दिया गया है उसमें चार प्रश्न होते हैं, इनमें से हरेक ऐसा उदाहरण होता है जो चिकित्सक के कार्यालय में मरीज की तुरंत जांच कर लेता है। शराब से संबंधित समस्याओं का पता लगाने में CAGE (सीएजीई) प्रश्नावली बहुत अधिक प्रभावकारी होता है। हालांकि जिन लोगों में शराब से संबंधित समस्याएं अपेक्षाकृत कम गंभीर हैं, जैसे गोरी महिलाओं और कॉलेज के छात्रों में, यह सीमित रूप से काम करता है।

शराब निर्भरता का पता लगाने के लिए अन्य किस्म के जांच का भी इस्तेमाल किया जाता है, मसलन शराब डेटा निर्भर प्रश्नावली (अलकोहल डिपेंडेंस डाटा क्वेस्चनेर), जो कि CAGE (सीएजीई) प्रश्नावली की तुलना में बहुत ही अधिक संवेदनशील नैदानिक जांच है। अत्यधिक मात्रा में शराब के सेवन और शराब निर्भरता के बीच के अंतर को स्पष्ट करने में यह मदद करता है। मिशिगन अलकोहल स्क्रीनिंग टेस्ट (MAST (एमएएसटी)), एक जांच उपकरण है मद्यव्यसनिता के लिए व्यापक रूप से अदालत द्वारा शराब से संबंधित अपराध के लिए उचित सजा देने के लिए इसका इस्तेमाल किया जाता है, ऐसे अपराध में शराब के नशे में गाड़ी चलाना सबसे आम है। शराब के प्रयोग से होनेवाले विकार की पहचान जांच (अलकोहल यूज डिऑर्डर्स आईडेंटिफिकेशन टेस्ट) (AUDIT एयूडीआईटी)) विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा विकसित की गयी प्रश्नावली है, इस अनोखे जांच को छह देशों में वैधतता प्राप्त है और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इसका प्रयोग किया जाता है। CAGE (सीएजीई) प्रश्नावली की तरह, गंभीर जांच के मामले में अच्छे नतीजे प्राप्त करने लिए इस प्रश्नावली का उपयोग किया जाता है। जो दुर्घटना को अंजाम देते हैं या आपातकालीन विभाग में जाते हैं, उनके साथ शराब संबंधित समस्याओं की जांच के लिए पैडिंगटोन अल्कोहल टेस्ट (PAT पीएटी) को डिजाइन किया गया है। यह AUDIT प्रश्नावली के साथ अच्छी तरह से मेल खाते है, लेकिन पांच बार इसकी मदद ली जाती है।

## vkuqof'kd çofÙk dk ijh{k.k

मनोचिकित्सक अनुवांशिकविद जॉन आई. नंबर्गर और लॉरा जीन बिरूट का कहना है कि मद्यपान का कोई एक कारण नहीं होता, बल्कि 'अनुवांशिक समेत' ''जो शरीर और

नोट

दिमाग की प्रक्रियाओं को प्रभावित करते हुए सुरक्षा या अतिसंवेदनशीलता की भावना के निर्माण के लिए परस्पर एक–दूसरे के साथ और जीवन के व्यक्तिगत अनुभवों को प्रभावित करने में जीन एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है''। वे यह भी कहते है कि कुछ लोगों की तुलना में मद्यव्यसनिता से संबंधित एक दर्जन जीन की पहचान हो चुकी है, लेकिन और भी कुछ की खोज किया जाना अभी बाकी है।

युग्मविकल्पी (अलील) के लिए कम से कम एक आनुवंशिक परीक्षण है जो मद्यपतता और अफीमयुक्त मादक द्रव्य से संबंधित है। मानव डोपामीन अभिग्राहक जीनो का पता लगाने योग्य भिन्नता होती है जिसे डीआरडी टैक–आई (DRD2 TaqI) बहुरूपता कहा जाता है। उन लोगों में जिनमें यह बहुरूपता वाला। अलील (भेद) तो कम होता हैं, लेकिन उनमें एंडोर्फिन निष्कासित करने वाला अफीमयुक्त मादक पदार्थ और शराब की लत की प्रवृत्ति बहुत अधिक है। हालांकि शराबियों और अफीमयुक्त मादक पदार्थों का सेवन करनेवालों में यह अलील थोड़ा अधिक आम है ये अपने आप में मद्यव्यसनिता का समुचित अंदाज लगानेवाले नहीं होते और कुछ शोधकर्ताओं का मानना है कि DRD2 का प्रमाण विरोधाभासी है।

### Mh, l , e ¼**DSM**½ }kjk chekjh dh igpku

शराब पर निर्भरता का डीएसएम–IV (क्वैड–IV) निदान पद्धति मद्यपान की परिभाषा का प्रतिनिधित्व करता है। एक तरह से यह अनुसंधान प्रोटोकॉल के विकास में मदद करने के लिए है, जिसके नतीजों की तुलना अन्य से की जा सकती है। डीएसएम–IV (क्वैड–IV) के अनुसार, शराब पर निर्भरता की एक पहचान निम्न हैः

### e= vkj jä ijh{k.k

शराब के वास्तविक उपयोग के लिए विश्वसनीय परीक्षण है, जिसमें एक सामान्य परीक्षण रक्त में शराब अवयव का परीक्षण (बीएसी (BAC)) है। ये परीक्षण मद्यव्यसनी से गैर मद्यव्यसनी के अंतर को स्पष्ट नहीं करता है हालांकि लंबे समय तक अति मात्रा में मद्यपान का शरीर पर पहचानने योग्य प्रभाव होता है। इसमें निम्न शामिल है :

मैक्रोसिटोसिस (बढ़ा हुआ (एमसीवी (MCV))

### mUur ¼ththeVh ¼**GGT**½½

एएसटी (AST) और एएलटी (ALT) और एएसटी (AST) की संयत उन्नतिः एएलटी (ALT) का अनुपात 2:1 है। उच्च कार्बोहाइड्रेट की कमी (सीडीटी (CDT)) ट्रांसफेरिन

हालांकि, जैविक चिह्नकों इनमें से कोई भी रक्त परीक्षण उतना ही संवादनशील नहीं होता जितना कि जांच प्रश्नावली।

### mipkj

उपचार विभिन्न तरह के हैं, क्योंकि शराब को लेकर अलग–अलग कई दृष्टिकोण हैं। जो मद्यव्यसनिता को किसी की सामाजिक विकल्प के रूप में देखते हैं उनकी तुलना

में जो इसे चिकित्सकीय स्थिति या बीमारी के रूप में देखते हैं वे उपचार का सुझाव देते हैं। अधिकांश इलाज लोगों को अपने शराब के सेवन को बंद करने में मदद करने पर केन्द्रित हैं, जिसके बाद उन्हें शराब के प्रयोग पर पुनः लौटने से रोकने में उनकी मदद करने के लिए जीवन प्रशिक्षण औरध्या सामाजिक समर्थन प्रदान की जाती है। चूंकि मद्यव्यसनिता के साथ बहुत सारे कारक होते हैं, जो किसी शख्स को पीना जारी रखने के लिए प्रोत्साहित करता हैं, उन सबको सफलतापूर्वक पूर्वावस्था में प्राप्त होने के रूप में देखा जाना चाहिए। विषहरण के बाद आत्म–सहायता समूह में सहायक उपचार के संयोजन में उपस्थित होना और तंत्र का मुकाबला के लिए लगातार होनेवाला विकास इस तरह उपचार की एक मिसाल है। मद्यव्यसनिता का उपचार करनेवाले समुदाय आमतौर पर शून्य सहिष्णुता आधारित पद्धति का समर्थन करते हैं, हालांकि इसीके साथ कुछ ऐसे भी हैं जो नुकसान को कम करनेवाले पद्धति को प्रोत्साहित करते हैं।

## vYdkgy fo"kgj.k

शराबियों के लिए किसी परिपूरक मादक पदार्थ, जैसे बेंजोडायजेपाइन, जिसका कि शराब की तल छुड़ाने में एक सामन प्रभाव है, का संयोजन कर शराब विषहरण (detockification) या संक्षेप में 'डिटॉक्स' (detocks) करने से अप्रत्याशित रूप से शराब पीना बंद हो जाता है। जिन व्यक्तियों में केवल बहुत ही मामूली प्रत्याहार लक्षणों का हल्का सा खतरा है, उनका विषहरण बाहरी–मरीजों के रूप में किया जा सकता है। जो व्यक्तियों को गंभीर प्रत्याहार संलक्षण (सिंड्रोम) का खतरा होने के साथ–साथ जो महत्वपूर्ण या तीव्र अति–अस्वस्थ स्थिति के शिकार होते हैं, उनका इलाज आम तौर पर अस्पताल में रहकर इलाज कराने वाले मरीजों के रूप में किया जाता है। विषहरण मद्यव्यसनिता का वास्तविक इलाज नहीं करता है और शराब पर निर्भरता या अपप्रयोग में पूर्वावस्था की प्राप्ति के खतरे को कम करने के लिए विषहरण के बाद उपयुक्त उपचार कार्यक्रम जरूरी है।

## leg Fkjih vkj eukfpfdRlk

cukeh 'kjkch dk ,d {k=h; lok dæ % अन्तर्निहित मनोवैज्ञानिक मुद्दों, जिनसे शराब की लत संबंधित है के साथ विभिन्न तरह के समूह उपचार और मनोचिकित्सा का इस्तेमाल किया जा सकता है, इसीके साथ ही साथ पूर्वावस्था प्राप्ति की रोकथाम का कौशल भी प्रदान किया जा सकता है। शराबियों को परहेज बनाये रखने में मदद के लिए परस्पर–सहायता वाले समूह–परामर्श का पद्धति सबसे ज्यादा आम है। परस्पर, गैर पेशेवर परामर्श प्रदान करने के लिए अन्य संगठनों में से अल्कोहलिक एनोनिमस नाम का एक पहला संगठन है और अब भी यह सबसे बड़ा संगठन है। अन्य में लाइफरिंग सेकुलर रिकवरी (Life Ring Secular Recovery) SMART रिकवरी (स्मार्ट रिकवरी) और वुमेन फॉर सब्राइइटी (Women For Sobriety) शामिल हैं।

## [kjkd vkj l;e

खुराक और संयम कार्यक्रम जैसे कि मॉडरेशन मैनेजमेंट (Moderation Management) और ड्रिंकवाइज (Drink Wise) पूरी तरह से परहेज का समर्थन नहीं करता है। जबकि अधिकांश शराबी इस तरह से अपने पीने की सीमा तय करने में असमर्थ होते हैं, कुछ संयम के साथ पीना फिर से शुरू कर देते हैं। 2002 में नेशनल इंस्टीट्यूट ऑन अलकोहल

एब्यूज एंड अल्कोहलिज्म (एनआईएएए) द्वारा किया गया अमेरिकी अध्ययन बताता है कि एक साल से अधिक पहले कम–जोखिम शराब सेवन की श्रेणी में पहुँचाने वालों के 17.7 प्रतिशत व्यक्तियों का निदान शराब निर्भर के रूप किया गया। हालांकि, इस समूह में निर्भरता के बस कुछ ही प्रारंभिक लक्षण देखे गए।ख्98, एक ही विषय का उपयोग करते हुए एक अनुवर्ती अध्ययन में वर्ष 2001–2002 में पीने में हुए सुधार के मामले को 2004–2005 में समस्याजनित पीने की ओर फिर से लौट जाने की दर से जांचा गया। अध्ययन में पाया गया कि शराब से परहेज शराब से काबू पाने का सबसे सबसे अधिक दृढ़ तरीका हैं। दीर्घकालिक (60 साल) तक शराबी पुरुषों के दो समूहों का अनुवर्तन किए जाने पर पाया गया कि ''दशकों तक फिर से पीना शुरू किए बगैर या परहेज को बरकरार करने की अपेक्षा नियंत्रित होकर फिर से पीना शुरू करने में दृढ़ता बमुश्किल से बनी रहती है।''

vk"kf/k;k

मद्यव्यसनिता के इलाज के अंश के रूप में विभिन्न तरह की औषधियां दी जा सकती है।

**orZeku le; esa fpfdRlk esa mi;ksxh %** एंटाब्यूज (Antabuse) (डिसुलफिरम) एसीटैल्डिहाइड, जो इथेनॉल के रासायनिक परिवर्तन के दौरान शरीर द्वारा उत्पन्न होने वाला एक रसायन है, के निष्कासन को रोकता है। एसीटैल्डिहाइड अपने आपमें ही शराब के सेवन होनेवाले बहुत तरह की खुमारी के लक्षणों का कारण है। अत्यधिक तीव्र गति से क्रिया करने वाला और लंबे समय तक बने रहने वाला तकलीफदेय खुमारी प्रदान करनेवाला शराब जब पिया जाता है तो कुल मिलाकर इसका प्रभाव अत्यंत कष्टदायक होता है। जब वे यह दवा ले रहे होते हैं तो यही बात शराबी को अत्यधिक मात्रा में पीने से हतोत्साहित करती है। 9 साल से किए जा रहे अध्ययन से हाल ही में पता चला कि व्यापक उपचार कार्यक्रम में पर्यवेक्षित डिसुलफिरम और संबंधित यौगिक कार्बामाइड के संयोजन का नतीजे में परहेज करने की दर 50 प्रतिशत से अधिक थी।

जिस तरह से एंटाब्यूज काम करता है, उसी तरह टेमपोसिल (Temposil) (कैल्शियम कार्बीमाइड) (calcium carbimide) भी काम करता हैय इसमें लाभ यह होता है कि कभी कभी डिसुलफिरम (disulfiram), हेपटोटॉक्सिटी (hepatotovicity) और उनींदेपन का एक प्रतिकूल प्रभाव कैल्सियम कार्बीमाइड के साथ नहीं होता है।

नेलट्रेक्सॉन (Naltreccone) ऑपिओइड (opioid) अभिग्राहक के लिए प्रतिस्पर्धात्मक प्रतिपक्षी होता है, यह एंडोर्फिन (endorphins) और अफीस के प्रभाव को प्रभावी रूप से रोक देता है।

नेलट्रेक्सॉन का उपयोग शराब के लिए तलब को कम करने और इससे परहेज के लिए प्रोत्साहित करने के लिए किया जाता है। शराब के कारण शरीर से एंडोर्फिन का निष्कासन होता है, इसके बदले डोपामाइन (dopamine) का निष्कासन होता है और इसके प्रतिफल सक्रिय हो जाता हैय इसलिए जब नेलट्रेक्सॉन शरीर में होता है तो शराब के सेवन से होनेवाला आनंददायक प्रभाव काफी कम हो जाता है। मद्यव्यसनिता के एक और उपचार विधि में नेलट्रेक्सॉन का उपयोग होता है, जो सिनक्लेयर पद्धति कहलाता है, यह मरीज

का उपचार नेलट्रेक्सॉन और लगातार सेवन के संयोजन के माध्यम से किया जाता है।

कैंपरल (Campral) एकैंप्रोसैट (acamprosate), यह शराब की निर्भरता को न्यूरोट्रांसमीटर ग्लुटामेट, उत्तर–निर्लिप्तता के चरण में अत्यधिक सक्रिय होती है, की प्रतिक्रियाशीलता के जरिए मस्तिष्क रसायन को स्थिर कर देता है।

नोट

## ç;kxkRed vk"kf/k;k

टॉपामैक्स (Topamacs) टॉपिरामेट (topiramate) प्राकृतिक तौर पर पाये जानेवाले शर्कर मोनोसेच्चराइड का यौगिक डी–फ्रुटोस, शराबियों को शराब छुड़ाने में या जितनी मात्रा में वे पीते हैं उसमें कमी करने में यह प्रभावी पाया गया है।

प्रमाण बताते हैं कि टॉपिरामेट उत्तेजक ग्लूटामेट अभिग्राहकों को विरोधी बना देता है, डोपामीन को मुक्त होने से रोकता है और निरोधात्कम गामा–अमीनोब्यूटायरिक एसिड की क्रियाशीलता को बढ़ाता है। 2008 में टॉपिरामेट की प्रभावशीलता की समीक्षा का निष्कर्ष निकाला कि प्रकाशित परीक्षण के परिणाम आशाजनक हैं, लेकिन 2008 में जो भी था, वह पहली पंक्ति के शराब निर्भर एजेंट के लिए टॉपिरामेट के उपयोग के समर्थन में महज एक सप्ताह के अनुपालन के परामर्श से जोड़ कर देखा जाए तो वह डाटा अपर्याप्त था। 2010 की एक समीक्षा से पता चला कि मौजूदा शराब फामाकोथेरप्यूटिक विकल्प के लिए टॉपिरामेट बेहतर हो सकता है। टॉपिरामेट प्रभावी रूप से तलब और शराब निर्लिप्तता की गंभीरता को कम कर देने के साथ ही साथ जीवन की गुणवत्ता के मूल्यांकन में भी सुधार लाता है।

## vk"kf/k;k ftudk ifj.kke cjk gk ldrk g

बेंजोडायजेपाइन्स, तीव्र शराब निर्लिप्तता में हालांकि यह बहुत ही उपयोगी दवा है, लेकिन अगर लंबे समय तक इसका इस्तेमाल किया जाता है तो मद्यव्यसनिता में इसका परिणाम बुरा हो सकता है। क्रोनिक मद्यव्यसनिता में के मामले में बेंजोडायजेपाइन्स में शराब से परहेज की दर, उनके बनिस्पत जो बेंजोडायजेपाइन्स नहीं ले रहे हैं, से कम है। इस वर्ग की दवाएं आमतौर पर शराबियों को अनिद्रा या चिंता के समन के लिए दी जाती है। स्वास्थ्य लाभ के सिलसिले में व्यक्तियों को बेंजोडायजेपाइन्स या शामक–निद्राजनित दवा दिए जाने से बीमारी के पुनरावर्तन की उच्च दर पाई गयी, एक लेखक की रिपोर्ट है कि शामक–निद्राजनित दवा के नुस्खे से एक चौथाई से अधिक लोग फिर से पूर्वावस्था में जा पहुंचे। मरीज अक्सर गलती से सोच लेते हैं कि बेंजोडायजेपाइन्स लेना जारी रखने के बावजूद वे संयमी हैं। जो बेंजोडायजेपाइन्स का सेवन लंबे समय से कर रहे हैं उन्हें अचानक लेना बंद नहीं कर देना चाहिए, इससे हो सकता है गंभीर चिंता और आतंक विकसित हो जाए, जो कि प्रत्यावववर्तित होकर शराब के अपप्रयोग का जानामाना जोखिम कारकों बन जाता है। निर्लिप्तता में कम तीव्रता के साथ 6–12 महीने के टेपर पद्धति को बहुत ही सफल पाया गया है।

## nkgjh yr

शराबियों को अन्य साइकोट्रॉपिक मादक पदार्थों के लत से उपचार की भी आवश्यकता होती है। मद्यता के मामले में शराब निर्भरता की सबसे आम दोहरी लत है

नोट

बेंजोडायजेपाइन पर निर्भरता है, अध्ययन बताता है कि 10–20 प्रतिशत शराब निर्भर व्यक्ति में निर्भरता और दुरुप्रयोग की समस्या बेंजोडायजेपाइन के ही कारण हैं। समस्याग्रस्त शराबी द्वारा जितनी मात्रा में शराब का सेवन करते हैं, बेंजोडायजेपाइन शराब के लिए लालसा में वृद्धि करती है। बेंजोडायजेपाइन्स निर्भरता को कम करने के लिए परिणामों से बचने के बेंजोडायजेपाइन निर्लिप्तता सिंड्रोम और अन्य स्वास्थ्य संबंधी खतरों से बचने के लिए सावधानी से खुराक देने की आवश्यकता होती है।

अन्य शामक निद्राजनक दवाएं जैसे कि जोलपिडेम और जोपिक्लोन के साथ ही साथ अफीमयुक्त और अवैध मादक द्रव्यों पर निर्भरता शराबियों में आम है। शराब अपने आपमें एक शामक–निद्राजनक द्रव्य है और यह अन्य शामक–निद्राजनक पदार्थों जैसे कि बार्बिटुरेट्स, बेंजोडायजेपाइन्स और नॉन–बेंजोडायजेपाइन्स के साथ सहनशील–विरोधी होता है। शामक–निद्राजनक से निर्भरता और निर्लिप्तता चिकित्सा की दृष्टि से गंभीर हो सकता है और अगर संभाल कर इसका उपाय नहीं किया गया तो शराब की निर्लिप्तता से मनोविकृति और दौरा पड़ने का खतरा होता है।

## çfr okf"kd 'kjkc fjd,M ¼15½ çfr yhVj 0;fä dk miHkksx

इस चीज के सेवन से पैदा होनेवाले विकार से बहुत सारे देशों को एक प्रमुख सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या का सामना करना पड़ता है। ''शराब के इलाज के लिए आए मरीजों में सबसे आम तत्व इसका अपप्रयोग निर्भरता है।'' 2001 में यूनाइटेड किंगडम में, 'निर्भरशील मद्यपों' की संख्या 2.8 लाख से अधिक बतायी गयी थी। अमेरिका के वयस्कों में लगभग 12: के जीवन में कभी न कभी शराब निर्भरता से समस्या रही है। विश्व स्वास्थ्य संगठन का अनुमान है कि दुनिया भर में लगभग 140 मिलियन लोग शराब निर्भरता से ग्रस्त हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका और पश्चिमी यूरोप के 10 से 20 प्रतिशत पुरुष तथा 5 से 10 प्रतिशत महिलाएं अपने जीवन में किसी मोड़ पर मद्यव्यसनिता के मानदंडों को पूरा करेंगे ही।

चिकित्सा और वैज्ञानिक समुदायों में मद्यव्यसनिता के बारे में एक आम सहमति है कि यह एक बीमारी की स्थिति है। उदाहरण के लिए, अमेरिकन मेडिकल एसोसिएशन अलकोहल को एक ड्रग मानता है और कहता है कि ''मादक पदार्थों की लत एक क्रोनिक, प्रत्यावर्ती दिमागी बीमारी है, जिसमें बाध्यकारी रूप से मादक पदार्थों की तलब होती है और इसके विनाशकारी परिणाम के बावजूद बारबार इसका प्रयोग किया जाता है। यह जैविक अतिसंवेदनशीलता और पर्यावरण जोखिम के परस्पर जटिल प्रभाव और विकास कारकों (जैसे कि मस्तिष्कीय परिपक्वता का स्तर) का परिणाम है।''

पुरुषों में मद्यव्यसनिता का प्रचलन कहीं अधिक है, हालांकि हाल के दशकों में महिला मद्यपों के अनुपात में वृद्धि हुई है। वर्तमान साक्ष्य संकेत देते है कि 40–50 प्रतिशत पर्यावरणीय प्रभाव को छोड़ दिया जाए तो पुरुषों और महिलाओं दोनों में, मद्यव्यसनिता का 50–60 प्रतिशत आनुवंशिक तौर पर निर्धारित होता है। मद्यव्यसनिता का विकास ज्यादातर शराबियों में किशोरावस्था या युवा वयस्कता की अवस्था के दौरान होता है।

## iokuqeku

2002 में नेशनल इंस्टीट्युट ऑन अलकोहल एब्यूज एंड अल्कोहलिज्म ने शराब

निर्भरता की कसौटी के लिए 4,422 के एक समूह का सर्वेक्षण किया और पाया कि एक साल के बाद, कुछ लोग शराब सेवन के कम जोखिम की लेखक की कसौटी में खरे उतरे, जबकि समूह के सिर्फ 25.5 फीसदी का ही कोई इलाज किया गया। इसका ब्यौरा नीचे पेश किया जा रहा है: 25 फीसदी को अभी भी शराब निर्भर पाया गया, 27.3 फीसदी आंशिक रूप से दुरुस्त हुए (कुछ लक्षण जारी रहे), 11.8 फीसदी स्पर्शोन्मुख (asymptomatic) पियक्कड़ रहे (उपभोग बढ़ने से पूर्वावस्था की वापसी का खतरा) और 35.9 फीसदी पूरी तरह से दुरुस्त हुए – इनमें 17.7 फीसदी कम–जोखिम पीने वाले और 18.2 फीसदी मद्य–त्यागी शामिल हैं।

नोट

तथापि, इसके विपरीत, हार्वर्ड मेडिकल स्कूल के जॉर्ज वैल्लांट द्वारा दो समूहों पर लंबे समय तक किये गये अध्ययन से जाहिर हुआ कि ''पूर्वावस्था की वापसी या संयम के विकास के बिना नियंत्रित शराब सेवन मुश्किल से एक दशक से अधिक तक टिक पाता है।'' वैल्लांट ने यह भी नोट किया कि ''जैसा कि अल्पकालिक अध्ययनों से पता चलता है कि नियंत्रित शराब सेवन में वापसी अक्सर एक मरीचिका होती है।''

मद्यपों में मृत्यु का सबसे आम कारण है ह्रदयवाहिनी समस्या. पुराने शराबियों में आत्महत्या की उच्च दर है, यह प्रवृत्ति उन व्यक्तियों में बढ़ती जाती है जिनका पीना अधिक दिनों तक चलता जाता है। माना जाता है कि शराब के कारण मस्तिष्कीय रसायन की दैहिक क्षति से ऐसा होता है, साथ ही सामजिक अलगाव के कारण भी. किशोर शराबियों में भी आत्महत्या बहुत ही आम है, किशोरों में आत्महत्या का 25 फीसदी शराब के अपप्रयोग से जुड़ा हुआ है। लगभग 18 प्रतिशत शराबी आत्महत्या किया करते हैं, और शोध में पाया गया है कि 50 प्रतिशत से अधिक आत्महत्याएं शराब या ड्रग निर्भरता से जुड़ी हुई हैं। किशोरों में यह आंकड़ा कहीं अधिक ऊपर है, 70 प्रतिशत आत्महत्याओं में शराब या नशीली दवाओं की भूमिका हुआ करती है।

## 3-7 lkjk'k

विश्व स्वास्थ्य संगठन यूरोपीय संघ और अन्य क्षेत्रीय निकायों, राष्ट्रीय सरकारों और संसदों ने शराब नीतियों का गठन किया है ताकि शराब के नुकसान को कम किया जा सके। किशोरों और युवा वयस्कों को लक्ष्य बनाकर शराब दुरुपयोग के नुकसान को कम करने के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाया गया है। शराब पर निर्भरता और इसके दुरुपयोग से होनेवाले नुकसान को कम करने के लिए बढ़ती उम्र में जब दुरुपयोग की जानेवाले जायज औषधियां जैसे कि शराब खरीदी जा सकती है, को प्रतिबंधित करने या शराब के विज्ञापन पर प्रतिबंध लगाने का सुझाव अतिरिक्त तरीके के रूप में दिया गया है। जन माध्यम में शराब दुरुपयोग के परिणामों के बारे में विश्वसनीय, प्रमाणिकता पर आधारित शिक्षण अभियान की सिफारिश की गई है। शराब के दुरुपयोग की रोकथाम के लिए और युवाओं में मानसिक सेहत संबंधी समस्याओं में मदद के लिए माता पिता के लिए दिशानिर्देश दिए जाने की भी सिफारिश की गयी है।

इस प्रकार शराब दुरुपयोग के उपचार और जांच में प्रवृत्ति और सामाजिक छवि अड़चन बन सकते हैं। यह पुरुषों की तुलना में महिलाओं के लिए कहीं अधिक बाधक है। बदनाम हो जाने के डर से महिलाएं अपने पीने की बात को छिपाने के लिए इस बात से

नोट

इंकार करती है कि वे किसी चिकित्सीय स्थिति से पीड़ित हैं। परिणामस्वरूप यह रवैया परिवार, चिकित्सकों और अन्य के लिए शक करने की गुंजाइश को कम कर देता है कि जिस महिला को वे जानते हैं वह एक मद्यप है। इसके विपरीत, किसी चिकत्सिकीय स्थिति से पीडिघ्त हैं यह स्वीकार करने में पुरुषों को बदनामी का डर कम होता है, इसीलिए वे खुलेआम सार्वजनिक तौर पर पीने का प्रदर्शन करते हैं और समूह में पीते हैं। परिणामस्वरूप उनके इस रवैये से परिवार, चिकित्सक और अन्य अच्छी तरह जानते हैं कि जिस आदमी को वे जानते हैं वह एक शराबी है।

## 3-8 vH;kl i'u

1. मद्यपान को परिभाषित कीजिए।
2. मद्यपान का समाज पर पड़ रहे प्रभावों का विश्लेषण कीजिए।
3. मद्यपान से छुटकारे हेतु आप क्या सुझाव देंगे?
4. मद्यपान से मुक्ति हेतु कौन सी औषधियाँ कारगर हैं? व्याख्या करें।

# bdkb&4 eknd inkFkk dk 0;lu



## ikB&l jpuk


4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 व्यसन के प्रकार एवं प्रभाव

4.3 व्यसन का प्रसार

4.4 व्यसन की रोकथाम के उपाय

4.5 सारांश

4.6 अभ्यास प्रश्न


## 4-0 mís';

इस इकाई को पढ़कर आप :

- व्यसन के अर्थ और प्रकार को समझ सकेंगे।
- मादक पदार्थों के सेवन के प्रभाव को जान सकेंगे।
- मादक पदार्थों/व्यसन के प्रसार के कारणों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- व्यसन की रोकथाम के उपायों को जान पायेंगे।

## 4-1 iLrkouk

मादक पदार्थो का सेवन मानव शरीर के स्नायु तंत्र को प्रभावित करता है। इसके सेवन से शारीरिक कष्ट या मनोव्यथा से मुक्ति मिलती है लेकिन मौज मस्ती अथवा असीमित एवं निरन्तर प्रयोग से यह हानिकारक प्रभाव डालने लगता है।

औद्योगीकरण की प्रक्रिया, आधुनिक जीवन शैली, तनाव आदि ने मनुष्य के कदम नशीले पदार्थों की और बढ़ा दिये हैं। व्यसन के कारण व्यक्ति का पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन दुष्कर होता रहा है धीरे–धीरे ऐसे व्यक्तियों का एक समूह बन जाता है जिनमें कामुकता अपराधवृत्ति एवं चरित्रहीनता की संस्कृति बनने लगती है। इस दल–दल में फंसे गुमराह युवक तस्करी, आतंकवादी एवम् राष्ट्र विरोधी गतिविधियों में लिप्त हो जाते है। मादक पदार्थों का व्यसन एक गम्भीर समस्या है। इसमें अल्पकालिक सुखद मनोदशाा उत्पन्न करने के लिए मूलतः रासायनिक वस्तुओं का आदतन उपयोग किया जाता है।

### vFk ,o vo/kkj.kk

**0;lu %** यद्यपि समाज में मादक पदार्थों का सेवन अनेक वर्षो से किया जा रहा हैं जिसमें मुख्य रूप से परम्परागत नशीले पदार्थो अफीम, चरस गांजा आदि प्रमुख थे लेकिन अब वर्तमान समय में हैरोइन, ब्राउन शुगर, स्मैक आदि का प्रचलन बढ़ने लगा है जिससे इन पदार्थो का अवैध रूप से क्रय–विक्रय और बिकरी को बढ़ावा मिला हैं। यदि नशा करने हेतु व्यक्ति को स्वतन्त्र छोड़ दिया जाए तो एक और तो वैयक्तिक विघटन होगा

**नोट**

वहीं दूसरी और सामाजिक जीवन में भी अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो जाएगी।

विश्व स्वास्थ्य संगठन विशेषज्ञ समिति (1950)–''मादक व्यसन नित्यकालिक अथवा दीर्घ स्थायी नशों की वह दशा है जो किसी द्रव्य (प्राकृतिक या कृत्रिम) के बारम्बार सेवन से उत्पन्न होती है।''

नशीले पदार्थो में एक ऐसा रासायनिक तत्व होता हैं जो व्यक्ति की प्रक्रियाओं को इस प्रकार प्रभावित करता है कि उससे उसका मस्तिष्क और स्नायुमण्डल प्रभावित होते हैं तथा व्यक्ति उन पदार्थो का व्यसनी/आदी बन जाता है। व्यसन का शाब्दिक अर्थ मादक पदार्थो पर शारीरिक निर्भरता की और इंगित करता है। व्यसनी व्यक्ति शरीर संचालन के लिए इन पदार्थो का सेवन करता है अन्यथा उसका शरीर संचालन बाधित होने लगता है। व्यसन के मुख्य रूप से तीन लक्षणों का भी उल्लेख किया जा सकता है।

1. मादक पदार्थों के सेवन की उत्कृष्ठ इच्छा और उन्हें किसी भी प्रकार से प्राप्त करने का प्रयास।
2. नशीले पदार्थों के सेवन की मात्रा को निरन्तर बढ़ाने की प्रवृति।
3. इन पदार्थो के प्रभाव के परिणामस्वरूप शारीरिक और मानसिक निर्भरता।

अतः स्पष्ट है कि व्यसन शब्द मुख्य रूप से नशीले पदार्थों पर शारीरिक निर्भरता की और इंगित करता है अपने दुष्परिणामों के कारण यह शारीरिक और मानसिक दृष्टि से अहितकारी है। इसे न केवल एक विपथगामी व्यवहार के रूप में देखा जा सकता है अपितु यह एक गम्भीर सामाजिक समस्या भी है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाए तो मादक पदार्थ या 'ड्रग्स' एक ऐसा रासायनिक पदार्थ है जिससे व्यक्ति का मस्तिष्क एवं स्नायुमण्डल प्रभावित होता है जबकि सामाजशास्त्रीय दृष्टि से यह पदार्थ आदत निर्माण में सहायक माना जाता है जिससे उस पदार्थ पर शारीरिक निर्भरता बढ़ती है। इस आधार पर कहा जा सकता है कि 'व्यसन' व शारीरिक निर्भरता वह स्थिति है जिसमें शरीर को अपने कार्य संचालन के लिए द्रव्य का निरन्तर सेवन चाहिये तथा द्रव्य पर मनोवैज्ञानिक निर्भरता का तात्पर्य उसके सेवन के आदी होने या सुख से है इस रूप में नशीले पदार्थ के आदी होने या व्यसन में सबसे बड़ा अन्तर यह है कि व्यसन में व्यक्ति उस पदार्थ के बिना रह ही नहीं सकता और उस पदार्थ के लिए विव शरहता है यानि किसी भी द्रव्य का व्यसनी होना उसके आदी होने से अधिक खतरनाक है।

## 4-2 0;lu d idkj ,o iHkko

विशव भर में नशीले पदार्थों के सेवन की बढ़ती हुई प्रवृत्ति को रोकने के प्रयासों को जानने से पूर्व नशो या व्यसन के प्रकारों को जानना भी अनिवार्य है। इन मुख्य रूप से छः प्रकार के आधार पर समझा जा सकता हैं।

ये प्रकार निम्न रूप से है :

1. शराब
2. अवसादक/शाान्तिकर पदार्थ

3. उत्तेजक पदार्थ
4. नार्कोटिक / स्वापक
5. भ्रामोत्पादक
6. निकोटीन

नोट

'kjkc

शराब का सेवन यदि कम या सीमित मात्रा में किया जाए तो इसे कई देशों में सामाजिक रूप से ठीक माना जाता है सामान्यतया इसका सेवन सुख, एक समाजिक क्रिया, प्रेरणा या उत्तेजना के रूप में किया जाता है। शराब के सेवन के पीछे कई सामाजिक, सांस्कृतिक कारक भी उत्तरदायी होते हैं जैसे उच्च वर्गों में सामाजिक रूप से इसके सेवन को मान्यता दी जाती है। बेरोजगारी, बचपन में माता पिता की मृत्यु, पति–पत्नी का कामकाजी होना, मित्रों का दबाव, फैशन, विज्ञापन आदि ऐसे कारक हैं जिससे व्यक्ति में शराब या मदिरापान की आदत विकसित होती है। व्यसन वर्तमान समाज की एक गंभीर समस्या है इसकी गम्भीरता को दो आधारों पर देखा जा सकता है : (1) केवल भारत में ही नहीं विश्व स्तर पर इसके निवारण हेतु कार्यक्रम बनाने के प्रयास किए जा रहे है, (2) वर्तमान समय में कम आयु युवा पीढ़ी तथा विद्यालय और महाविद्यालय में भी इसके सेवन का प्रचलन निरन्तर बढ़ता जा रहा है। इसके सेवन का एक बड़ा कारण चिन्ताओं और तनावों से क्षणिक मुक्ति प्राप्त करना है। धीरे–धीरे यह उसे व्यसनी बना देती है। यह एक शान्तिकर पदार्थ है यद्यपि यह नसों को शान्त करते हुए तनाव को कम करती है। परन्तु साथ ही इसके अधिक सेवन से निर्णय क्षमता मन्द होने लगती है।

'kked@volkn@'kkfUrdj inkFk

व्यसन के इस प्रकार में शान्तिदायक या पीड़ाशामक मादक पदार्थ आते हैं। शामक या अवसादक पदार्थ केन्द्रीय नाड़ीमण्डल को अशाक्त करते हुए नींद उत्पन्न करते हैं। अतः इसका प्रभाव शान्तिकारक होता है। इस श्रेणी में ट्रैंक्विलाइजर (शांति प्रदान करने वाले द्रव्य) और बार्बिट्युरेट आते हैं। सामान्यतया इन द्रव्यों का प्रयोग शल्य चिकित्सा के पूर्व और बाद में रोगियों के आराम और शिथिलीकरण के लिए किया जाता है। इसी प्रकार से चिकित्सीय दृष्टि से उच्चरक्त चाप, अनिद्रा और मिरगी के रोगी को उपचार देने के लिए भी शमक द्रव्यों का उपयोग किया जाता है। कम मात्रा में लेने पर व्यक्ति को शिथिलता का अनुभव कराते हुए ये द्रव्य सांस की गति व दिल की धड़कन को धीमा कर व्यक्ति को आराम पहुँचाते हैं। लेकिन अधिक मात्रा में इन पदार्थों का प्रयोग व्यक्ति को चिड़चिड़ा, आलसी और निष्क्रीय बना देता है। शामक द्रव्यों का निर्धारित मात्रा से अधिक खुराक के रूप में प्रयोग व्यसनी के सोचने, काम करने, ध्यान देने की शक्ति को कम करते हुए, भयावह स्थिति को उत्पन्न करता है।

mÙkstd inkFk

उत्तेजक द्रव्य अधिकांशतः मुख से लिए जाते हैं लेकिन कुछ पदार्थ जैसे मेथेड्रीन इंजेक्शन द्वारा भी लिए जाते हैं। इन पदार्थो का व्यसन करने वाले व्यक्तियों में शारीरिक निर्भरता की तुलना में मानसिक निर्भरता अधिक होती है अतः अचानक बन्द कर दिए

नोट

जाने पर यहॉ मानसिक अवसाद उत्पन्न करते है और व्यक्ति की स्थिति भयावह हो जाती है। उत्तेजक मादक पदार्थों का सेवन निद्रा और उदासी को दूर करते हुए व्यक्ति को चुस्त, सक्रिय और फुर्तीला बनाता है। डॉक्टर द्वारा ऐम्फेटामाइन की मध्यम डोज थकान को नियंत्रित करती है इनमें कैफीन और कोकीन भी सम्मिलित है परन्तु ऐम्फेटामाइन का दीर्घकालिक भारी उपयोग बौद्धिक, भावनात्मक, सामाजिक और आर्थिक विकारों को उत्पन्न करता है। अपराध जगत में ऐम्फेटाइन 'अपर्स या पेपपिल्स ड्रग के नाम से मशहूर है। इन उत्तेजक पदार्थों को अचानक बन्द कर देने से मानसिक बिमारियॉ व आत्महत्या जन्य अवसाद उत्पन्न होते हैं।

### ukdkfVd@Lokid@rUnkdj inkFk

अफीम के विभिन्न रूप में उपलब्ध चरस, गांजा, भांग, हैरोइन (स्मैक, ब्राउन शुगर मारफीन, पैथेडीन) आदि व्यसन की नार्कोटिक श्रेणी में सम्मिलित हैं और प्रायः पौधों से प्राप्त होते हैं। व्यक्ति इन पदार्थों का व्यसनी चिन्ता, उदासी, और विवाद को दरू करने के प्रयास के कारण हो जाता हैं। तन्द्राकर पदार्थ शामक पदार्थों के समान ही नाड़ीमण्डल पर अवसादक प्रभाव उत्पन्न कर व्यसनी व्यक्ति में आनन्द, सामर्थ्य, हिम्मत, जैसी भावनाओं को उत्पन्न करते हैं। हैरोइन मार्फीन, पेथेडीन और कोकीन या तो क शके रूप में लिए जाते है या फिर तरल पदार्थ के रूप में इंजेक्शन द्वारा अफीम, गांजा, चरस आदि को व्यक्ति या तो नाक से खींचता है या चिलम का सहारा लेता है लेकिन इन सभी पदार्थों का अत्यधिक प्रयोग व्यक्ति की भूख कम करता है। नार्कोटिक पदार्थों का सेवन बन्द कर देने से अन्तिम डोज लेने के 8 से 12 घण्टे बाद कम्पन्न, पसीना आना, दस्त मिचलाहट पेट व टांगों में ऐंठन, मानसिक वेदना जैसे लक्षण प्रकट होने लगते हैं। इन सब अवस्थाओं से गुजरने पर व्यक्ति महसूस करता है कि जैसे वह जीते जी नरक भोगकर आया है।

गांजे की अधिक मात्रा लती व्यक्ति को आनन्द की अपेक्षा आतंक महसूस कराता है तथा इसका सेवन बन्द कर देने पर व्यक्ति अचानक हिंसक हो उठता है या पागलों के समान सड़को पर दौड़ने लगता है। इस श्रेणी के सभी उत्पाद कोशिका की सारी कार्यवाही को अस्त–व्यस्त कर देते हैं। मस्तिष्क की कोशिकाओं के साथ ऐसा होने पर असाधारण संवेदनायें उभरने लगती हैं।

### foHkkekRed inkFk ¼HkkekRikn½ HkkfUrtud inkFk

इन पदार्थों में सर्वाधिक व्यसन एस.एस.डी. का किया जाता है। यह व्यक्ति द्वारा निर्मित एक रासायनिक पदार्थ है। यह नशीला पदार्थ इतना शक्तिशाली है कि इसकी एक तोले से ही तीन लाख डोज बनाये जाते हैं। नमक के दाने से भी कम इसकी मात्रा मनुष्य में कई मनोरोगमय प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न करता है। इस पदार्थ के सेवन के 8–10 घण्टे तक नींद आना लगभग असम्भव है। एल.एस.डी. लेने के पश्चात गांजे के समान ही फ्ले शबेक की घटना प्रारम्भ हो जाती है, व्यक्ति हिंसक होकर अपराध भी कर बैठता है तथा यह पूर्ण भ्रम की स्थिति उत्पन्न करते हैं। चिकित्सकों के द्वारा इन पदार्थों के सेवन की सलाह कभी नहीं दी जाती, ऐसे पदार्थों का सेवन बन्द कर देने पर अतिभय, अवसाद, स्थायी मानसिक असंयम पैदा हो जाता है।

## rkezdwVh@fudksVhu inkFkZ

नोट

ताम्रकूटी पदार्थों में सिगरेट, बीड़ी, सिगार, चुरूट, नास (Snuff) व तम्बाकू सम्मिलित हैं। तम्बाकू की खेती की जाती है। जिसके पत्ते चौड़े और कड़वे होते हैं। ताम्रकूटी पदार्थों का कोई चिकित्कीय उपयोग नहीं होता परन्तु शारीरिक निर्भरता का जोखिम रहता हैं। यह व्यसनी में शिथिलन पैदा कर केन्द्रीय नाड़ीमण्डल को उत्तेजित करती है तथा उबाऊपन को दूर करती है। तम्बाकू का अधिक सेवन दिल की बीमारी, फैंफड़े के कैंसर, श्वास नली जैसे रोग उत्पन्न करता है। का सेवन तीन प्रकार से किया जाता है :

1. धूम्रपान द्वारा
2. नस्य या सूंघने से
3. पान में रखकर या चूने के साथ मलकर।

परन्तु लोग इसे नशा नहीं मानते क्योंकि इस पदार्थ को छोड़ने के कोई अपनयन लक्षण नहीं होने व अपराध का कारण नहीं बनने के कारण कानून भी इसे नशो की श्रेणी में नहीं रखता। विभिन्न शहरों में द्रव्य व्यसन की दर 17 से 25 प्रतिशत के बीच मिलती है। जिनमें तम्बाकू एवं शराब के लगभग 65 प्रतिशत से अधिक व्यसनी मिल जाते हैं।

## 4-3 O;lu dk izlkj

प्राचीन काल से ही विश्व भर के अनेक देशों में, अफीम, गांजा, चरस, भांग और शराब आदि का सेवन आनन्द, उन्माद, उल्लास, मानसिक और शारीरिक सुख के लिए किया जाता रहा है। व्यसन की समस्या एक वैश्विक समस्या है। अतः प्रसार में सर्वप्रथम विभिन्न देशों में मादक द्रव्य सेवन की स्थिति को जानना होगा। अन्तर्राष्ट्रीय नारकोटिक्स द्वारा प्रकाशित संयुक्त सर्वेक्षण रिपोर्ट, 1991 में मादक द्रव्यों का सेवन कुछ विकसित देशों में कम है तो कुछ विकासशील देशों में बढ़ा।

अन्तर्राष्ट्रीय नारकोटिक्स द्वारा प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार, मादक द्रव्यों का सेवन विकासशील देशों में बढ़ रहा है। सर्वेक्षण की रिपोर्ट को निम्न तालिका में देखा जा सकता है।

| Ø- l- | ns'k | eknd inkFkZ |
|---|---|---|
| 1. | रूस | गांजा व चरस का सेवन करने वालों की संख्या 1985–90 के बीच दुगुनी होकर 1 लाख 40 हजार हो गई। |
| 2. | युरोप | हेरोईन का उपयोग लगभग नगण्य रहा है। कोकीन का सेवन बढ़ गया है। |
| 3. | उत्तरी | गांजा, चरस एवं कोकीन की मांग काफी बढ़ी है। 1990 में अमेरीका अमेरिका कनाडा में मादक द्रव्य दुरूपयोग का सामाजिक–आर्थिक व्यय प्रतिवर्ष 60 बिलियन डॉलर आंका गया है। लेकिन हेरोइन व कोकीन का उपयोग अब निरन्तर कम होता जा रहा है। |
| 4. | अफ्रीका | मादक द्रव्यों का सेवन पूरे महाद्वीप में फैल चुका है। |

नोट

| | | |
|---|---|---|
| 5. | दक्षिण अफ्रीका | हेरोइन की आसान उपलब्धि के कारण इसका दुरूपयोग पर्याप्त है। |
| 6. | आस्ट्रेलिया | हेरोइन व्यसनियों की संख्या में तीव्र वृद्धि। |
| 7. | दक्षिण एशिया | बांग्लादेश में मादक द्रव्यों का सेवन अत्यधिक बढ़ रहा है। |
| 8. | भारत | प्रमुख शहरों में मादक पदार्थो के सेवन कर्ताओं की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। |
| 9. | चीन | दक्षिण सीमावर्ती क्षेत्रों में पाये जाने वाला हेरोइन का उपयोग अन्य भागों में भी फैल रहा है। |
| 10. | जापान | कोकीन का प्रयोग सर्वाधिक बढ़ा है। |
| 11. | मलेशिया | हेरोइन का उपयोग अधिक है। |
| 12. | बैंकाक | हेरोइन के प्रयोग के साथ एड्स भी फैल रहा है। लेकिन नये, दुरूपयोगियों की संख्या में कमी आई है। |

भारतीय संस्कृति में भी सामाजिक एवं धार्मिक उत्सव, त्यौहारों अतिथि सत्कार जन्म, विवाह और मृत्यु आदि अवसर पर अफीम और भोंग जैसे कुछ पदार्थों का सेवन परम्परागत रूप से देखा जा सकता है।

अब तक के इस इकाई में आप व्यसन के अर्थ, प्रकार और प्रभाव को समझ चुके होंगे लेकिन वर्तमान में नशा गांव–नगर विद्यालय, स्कूल, कॉलेज तथा महिलाओं और युवाओ में अत्यधिक गम्भीर रूप से फैलने लगा है अतः इस इकाई में अब आप नशो के प्रसार की विस्तार से जानकारी पा सकेंगे जिसमें मादक पदार्थो के प्रसार को, प्रसार के कारण एवं मात्रा की दृष्टि से समझाने का प्रयास किया गया है। नशो के प्रसार का विस्तृत विवेचन निम्न तीन बातों को ध्यान में रखकर किया गया है।

1. मादक पदार्थों का प्रसार : कारण सम्बन्धी व्याख्या
2. गाँव, नगर, विद्यार्थियों एवं श्रमिकों में मादक पदार्थों का प्रसार : विविध अनुभाविक अध्ययनों के आधार पर
3. नशे की प्रेरणा : परिवार व मित्र समूह की भूमिका।

## eknd inkFkksa dk izlkj % dkj.k lEcU/kh O;k[;k

मादक पदार्थों के प्रसार की व्याख्या यदि व्यसन करने वाले की परिस्थितियों की दृष्टि से की जाए तो यह कहा जा सकता है कि इन पदार्थों के सेवन की पूर्व प्रवृति चार प्रकार के लोगों में मुख्य रूप से पाई जाती है।

1. जिन्हे मर्दानी भूमिका निभाने में कठिनाई हो।
2. जिनमें असफलता की आशंका व सामान्य अवसाद अधिक मिलता हो।
3. जो आसानी से हताश व कुण्ठित हो जाते है।
4. जो निराशा और चिन्ताओं को असहनीय पाते है।

व्यक्ति के द्वारा नशीले पदार्थो का सेवन शारीरिक, सामाजिक, धार्मिक या मनोवैज्ञानिक कारकों के परिणाम स्वरूप किया जाता है। धीरे–धीरे वह इनका आदी हो जाता है अतः

नशीले पदार्थो के प्रसार में इन कारकों का विशेष योगदान है। जिन्हें मोटे तौर पर चार श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है।

नोट

1- euksoKkfud dkj.k % अर्थात व्यक्ति नशे का आदि तनाव को कम करने, अवसाद को शान्त करने, कौतुहल को पूरा करने, खिन्नता अथवा उबाउपन को दूर करने के लिए करता है।

2- lkekftd dkj.k % दूसरा कारण सामाजिक अनुभवों को सुसाध्य करने, मित्रों द्वारा स्वीकार किए जाने या सामाजिक मूल्यों को चुनौती देने के रूप में देखा जा सकता है।

3- 'kkjhfjd dkj.k % अधिक देर तक जगते रहने, कामुक, अनुभवों को उभारने, पीड़ा निवारण तथा नींद पा लेने जैसे शारीरिक कारण नशे के प्रसार का महत्वपूर्ण कारण है।

4- vU; dkj.k % अथार्त धार्मिक अन्तः दृष्टि तेज करने, आत्म ज्ञान बढाने या व्यक्तिगत समस्याओं को हल करने के लिए भी व्यक्ति नशे की और अग्रसर होने लगता हैं।

## xk|o] uxj] fo|kfFk;k ,o Jfedk e ekn d inkFkk dk i|lkj % fofo/k vuHkkfod v/;;uk d vk/kkj ij

वर्तमान में किशोर एवं युवा वर्ग में नशे के बढ़ते प्रकोप ने विद्वानों को अध्ययन की और आकर्षित किया जिसमें कॉलेज और विश्व विद्यालय के विद्यार्थियों पर किए गए अध्ययनों को मोटे तौर पर तीन श्रेणियों में बाटा जा सकता है।

¼v½ ,dy v/;;u % बनर्जी (कलकत्ता 1963) दयाल (दिल्ली 1972), चिटनिस (मुम्बई 1974) और वर्मा पंजाब (1977)

¼c½ l;Dr v/;;u % सेठी और मनचन्दा (उ.प्र. 1987) दुबे, कुमार और गुप्ता (कलकत्ता विश्वविद्यालय 1969 व 1977 में)

¼l½ cg dUnh; v/;;u % 1976 में सात शहरों में 1986 में नौ शहरों में केन्द्रीय सरकार के कल्याण मन्त्रालय द्वारा डा. मोहन (अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्था, दिल्ली) के समन्वय में)

यदि कॉलेज के विद्यार्थियों पर किए गए सभी अध्ययनों को एकत्रित कर देखा जाए तो निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि (1) विद्यार्थियों द्वारा सर्वाधिक नशा शराब और निकोटीन का किया जाता हैं अथार्त यदि शराब, सिगरेट व पीड़ा शामक द्रव्यों को निकाल दिया जाए तो अन्य पदार्थों का अधिक प्रसार नहीं दिखाई देता। (2) पेशेवर और गैर पैशेवर विषयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों में मादक पदार्थों के सेवन की मात्रा भिन्न पाई जाती है। (3) अधिकांश विद्यार्थी आनन्द प्रद द्रव्यों का सेवन करते हैं अथवा आराम या कौतुक के लिए नशा करते है। (4) विद्यार्थी जागने की अपेक्षा सोना अधिक पसन्द करने हेतु अर्थात ऊर्ध्वगाम द्रव्यों की तुना में निम्नगामी द्रव्यों का सेवन अधिक किया जाता है। (5) स्नातक और स्नातकोत्तर कक्षा में पढ़ने वाले विद्यार्थियों में नशे की आदत को लेकर बहुत अन्तर नहीं है। (6) सरकारी स्कूलों की अपेक्षा सार्वजनिक स्कलू के विद्यार्थियों में नशे का प्रचलन अधिक होता है। (7) छात्रावासों के साथ संलग्न शिक्षण संस्थाऍ बिना

नोट

छात्रावास वाली शिक्षण संस्थाओं से अधिक मादक पदार्थो का सेवन करने वाले विद्यार्थी उत्पन्न करती है। (8) धनी युवकों की तुलना में निम्न आय वर्ग के युवकों में मादक पदार्थो का सेवन कम पाया जात है। (9) ग्रामीण परिवेश के विद्यार्थियों की तुलना में नगरों के विद्यार्थी अधिक नशीले पदार्थो का सेवन करते हैं। (10) नशीले पदार्थ बिना किसी भेदभाव के सभी जाति, धर्म या भाषा के विद्यार्थियों को समान रूप से आकर्षित करते हैं।

उपरोक्त अध्ययनों के आधार पर स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि 16–21 वर्ष तक की आयु के अधिक आय वर्ग वाले सार्वजनिक स्कूल एवं छात्रावास में निवास करने वाले विद्यार्थी अन्य विधार्थियों की तुलना में अधिक मादक पदार्थो के आदी होते है। नशे की आदत का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारण आमोद–प्रमोद, एवं सनसनीखेज अनुभव की खोज पाया जाता हैं। जबकि व्यथा कम करने एवं पीड़ा से छुटकारा अथवा उपचार के रूप में मादक द्रव्य का आदी बन जाना तुलनात्मक रूप से कम दिखाई देता है।

औद्योगिक श्रमिकों पर किए गए गन्ग्राडे और गुप्ता (दिल्ली 1970) अध्ययन के अनुसार (1) नशा करने वाले अधिकांश श्रमिक युवा थे जिनकी आयु 20 से 30 आयु वर्ग की थी। (2) अधिकांश श्रमिकों के द्वारा श्रमिक बनने के उपरान्त ही मादक पदार्थों के सेवन की आदत बनी। (3) नशे की आदत को विकसित करने में मित्रों एवं सह श्रमिकों का सुझाव महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता हैं (4) उप सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, आय, शिक्षा का निम्न स्तर व मित्र समूहों का दबाव औद्योगिक श्रमिकों को व्यसनी बनाने वाले महत्वपूर्ण कारक हैं जिनमें मुख्य रूप से शराब का सेवन किया जाता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में मादक पदार्थों के प्रसार को भी अनुभाविक अध्ययनों के आधार पर समझा जा सकता है। सर्वप्रथम ऐसा अध्ययन पश्चिमी बंगाल के एक गॉव में एलनागर, मैत्रा और राव द्वारा किया गया, तत्पश्चात दुबे, वर्घीज एवं बेग, पंजाब में जिन्दल, देब, गुरमीत सिंह तथा सेठी एवं त्रिवेदी ने भी ग्रामीण क्षेत्रों में नशे के प्रसार एवं मुख्य रूप से सेवन किए जाने वाले नशीले पदार्थ को भी जानने का प्रयास किया गया।

सभी अध्ययनों के आधार पर निम्न प्रकार से निष्कर्ष निकाला जा सकता है : कि (1) ग्रामवासियों में सबसे अधिक नशीले पदार्थ के रूप में शराब का सेवन किया जाता है। उसके पश्चात तम्बाकू और अफीम का। (2) लिंग भेद के आधार पर पुरुषों में महिलाओं की तुलना में व्यसन की प्रवृत्ति अधिक देखने को मिलती है। (3) गॉवों में मादक पदार्थो के सेवन का एक बड़ा कारण मर्दानी क्रिया है। (4) अफीम के सेवन की परम्परागत रूप से स्वीकृति होने के कारण सामाजिक इसमें अस्वीकृति या बुराई जैसी कोई बात नहीं थी। (5) खेतों में कार्य करने वाले ग्रामीण कृषक अपनी कार्य क्षमता को बढ़ाने एवं थकान का एहसास कम करने के उद्देश्य से भी अफीम का सेवन करते हैं।

o"k 1997&98 e Hkkjr e n0; lou dju okyk dk ifr'kr

rkfydk 1

| Ø-l- | n0; 0; lu@u'khyh nok, | ifr'kr |
|---|---|---|
| 1. | एल्कोहल | 42.32 |
| 2. | अफीम | 23.13 |
| 3. | ब्राउन शुगर | 8.00 |

नोट

| | | |
|---|---|---|
| 4. | हेरोइन | 4.74 |
| 5. | गांजा | 3.46 |
| 6. | चरस | 1.61 |
| 7. | मार्फीन | 0.83 |
| 8. | भांग | 0.60 |
| 9. | अन्य | 15.31 |
| | ;kx | 100-00 |

उपरोक्त तालिका नं. 1 से यह स्पष्ट होता है कि भारत में मादक द्रव्यों का उपयोग करने वालों में सबसे अधिक लगभग 42 प्रतिशत एल्कोहल के व्यसनी हैं और सबसे कम व्यसनी (0.6 प्रतिशत) ऐसे है जो भांग का प्रयोग करते हैं। कई व्यसनी दो या दो से अधिक मादक द्रव्यों को प्रयोग भी करते हैं। हिन्दुस्तान टाइम्स के 26 जून 1998 के संस्करण में प्रकाशित किया गया था कि दिल्ली में कच्ची हेरोइन अथवा ब्राउन शुगर की संगत में कैन्नाबिस सिंथेटिक अफीमी उत्पादों (जैसेः टिडिजेस्टिक, प्रॉक्सीवॉन, मार्फिन, निक्ट्रावाइट, बैक्कु लाइजन जैसे कम्पोज, फेनार्गन, आदि) के साथ अन्य मादक द्रव्यों का सेवन भी किया जाता है। यह दर बम्बई और हैदराबाद में और भी अधिक है। अफीम का प्रयोग दिल्ली में सर्वाधिक पाया गया है।

rkfydk 2

n'k d i e[k uxjk e ekn d n0; 0;lu ¼ifr'kr e½ i e[k uxj

| eknd n0; | cEcb | enkl | fnYyh | t;ij | gnjkckn | lkxj |
|---|---|---|---|---|---|---|
| एल्कोहल | 15.1 | 9.5 | 12.2 | 9.8 | 11.8 | 9.3 |
| दर्द निवारक औषधियाँ | 12.1 | 1.2 | 20.9 | 2.3 | 5.2 | 15.2 |
| तम्बाकू | 8.1 | 15.2 | 10.0 | 9.2 | 8.1 | 10.9 |
| बारबी चुरेटस | 0.6 | 1.4 | 0.4 | 0.4 | 0.5 | 0.5 |
| गांजा/भांग | 0.4 | 1.03 | 1.5 | 0.9 | 1.0 | 0.4 |
| अफीम | 0.4 | 0.3 | 0.5 | 0.2 | 0.1 | 0.3 |
| एल.एस.डी | 0.07 | 0.04 | 0.2 | 0.2 | 0.1 | 0.2 |

तम्बाकू सेवन से विश्व में लगभग पचास लाख लोगों की सलाना मष्त्यु हो जाती है। सन् 2020 तक तम्बाकू से होने वाली ऐसी मौतों की संख्या बढकर एक करोड़ वार्षिक होने की सम्भावना है। अकेले भारत में धूम्रपान से 9 लाख से अधिक लोग प्रतिवर्ष मरते है। इनमें से 90 प्रतिशत लोग कैंसर से मरते है। इसी प्रकार से भारत में तम्बाकू का प्रयोग करने वाले लोगों की संख्या 24 करोड़ के लगभग है जो विकासशील देशों में तम्बाकू का प्रयोग करने वालों का एक तिहाई है और विश्व के कुल तम्बाकू सेवन करने वालों का 20 प्रतिशत है।

लेकिन यदि बड़े नगरों में व्यसनियों की संख्या देखी जाए तो कहा जा सकता है कि सर्वाधिक व्यसनी कलकत्ता शहर में पाए जाते हैं। तत्पश्चात क्रमशः मुम्बई, अमृतसर

और दिल्ली है। उड़ीसा के पुरी में अफीम, गांजा, भांग आदि का प्रयोग परम्परागत रूप से किया जा रहा है अतः आरम्भ से ही इस शहर में नशे का प्रचलन रहा है। लेकिन वर्तमान में सभी स्थानों पर हेरोइन, चरस, मार्फीन आदि के सेवन की संख्या बढ़ने लगी है।

नोट

गोवा एक ऐसा स्थान है जहाँ 11 में से 3 ताल्लुकाओं में गांजा व चरस का सेवन दिखाई देता है।

## u'k dh i[j.kk % ifjokj o fEk= leg dh Hkfedk

मादक पदार्थो का सेवन एक सीखा हुआ व्यवहार है। जिसे व्यक्ति द्वारा अपने मित्रों, परिचितों, परिवार के सदस्यों या व्यक्तियों से अन्तःक्रिया द्वारा सीखा जाता है। सीखने का यह कार्य दबाव तथा अचेतन अनुकरण से होता है। परिवार और मित्र समूह व्यक्ति के जीवन को प्रभावित करने वाले ऐसे प्राथमिक तत्व है जिन्हें वह जीवन भर बनाए रखता है। अतः मादक पदार्थों का प्रसार करने में विभिन्न समूहों के योगदान की व्याख्या भी अपेक्षित है।

जिन परिवारों में स्नेहपूर्ण व्यवहार नहीं होता अथवा जो परिवार सामान्य नहीं होते ऐसे परिवारों के सदस्यों में मादक पदार्थो का व्यसन अधिक पाया जाता है।

अधिकांश द्रव्य सेवन कर्त्ताओं के परिवार सामान्य नहीं होते तथा उनके पारिवारिक सम्बन्धों में भी घनिष्ठता या स्नेहपूर्ण सम्बन्धों का अभाव होता है। परिवार को शिथिल या अत्यधिक उग्र नियंत्रण माता–पिता में बच्चों के प्रति उतरदायित्वों की चेतना का अभाव, परिवार के सदस्यों के शराब पीने, धूम्रपान करने या मादक पदार्थो का सेवन करने सम्बन्धी व्यवहार बच्चों में नशे की आदत का प्रसार करते हैं।

परिवार के सामान ही मित्र समूह भी व्यक्ति में नशीले पदार्थो के सेवन की आदत को विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। अधिकांश लोग मित्रों द्वारा ही द्रव्य सेवन के दीक्षित होते हैं। कई व्यक्ति मित्रों के साथ ही मादक पदार्थ लेते हैं, और कई बार नशे का पहला ज्ञान भी मित्रों से ही प्राप्त होता है। अतः नशे का प्रसार करने में दोषपूर्ण पारिवारिक पर्यावरण, दमनात्मक सामाजिक व्यवस्था, छात्रावास उप संस्कृति, गन्दी बस्तियाँ, मित्र समूह का दबाव, आमोद–प्रमोद व परिहास का विशेष योगदान है।

मादक पदार्थों के प्रसार की व्याख्या उसके सेवन की प्रेरणा के स्त्रोत के अभाव में अधूरी है। अर्थात कुछ ऐसे समूह है जो नशे के प्रसार में अहम् भूमिका निभाते है। इस दृष्टि से व्यसन के प्रसार के निम्न तीन तरीके है :

(1) समझाने बुझाने

(2) अचेतन अनुकरण

(3) ध्यान प्रवण चिन्तन

राम आहूजा ने कॉलेज/विश्व विद्यालय के विद्यार्थियों के अध्ययन में व्यसन में परिवार और मित्र समूह की भूमिका को स्पष्ट किया। ये वे प्राथमिक समूह हैं जिनका प्रभाव व्यक्ति पर सर्वाधिक होता है। स्नेहपूर्ण पारिवारिक सम्बन्धों वाले परिवारों जिनमें माता–पिता और बच्चों के बीच उचित तालमेल, समन्वय और घनिष्ठता हो तथा बच्चों को

अपनी आवश्यकता पूर्ती के लिए पीड़ित न होना पड़े, माता पिता बच्चों के समक्ष नैतिक व सामाजिक प्रतिमानों का पालन करें।

नोट

मादक पदार्थो का प्रसार 1980 के दशक तक बहुत अधिक नहीं था, परन्तु 1980 के उपरान्त देश में हेरोइन, स्मैक और अन्य नशीले पदार्थों का सेवन इतना अधिक बढ़ गया है कि विद्यार्थियों, कच्ची बस्तियों, ट्रक चालकों, रिक्शा चालको व श्रमिकों में इसका प्रचलन स्पष्ट दिखाई देने लगा है। जिन्हें यदि नशा मुक्त करने का प्रयास किया भी जाए तो वे अपनी आदत को छोड़ने में अधिक सफल नहीं हो पाते तथा नशे के लिए छोटे–मोटे अपराध करने से भी नहीं चूकते। अन्तराष्ट्रीय नरकोटिक्स कंट्रोल बोर्ड की जनवरी 1991 की एक रिपोर्ट के अनुसार 1990 में मादक द्रव्यों का सेवन विकसित की अपेक्षा विकासशील देशों में अधिक हुआ है। 18–29 वर्ष की आयु समूह की महिलाओं के कदम अब इस ओर बढ़ने लगे है। वहीं कल्याण मन्त्रालय दिल्ली के एक अध्ययन के अनुसार 24–30 व 31–45 वर्ष की आयु के युवाओं में नशों की प्रवृति अन्य आयु समूहों की अपेक्षा अधिक पाई जाती है।

व्यसन के उपरोक्त कारणों को निम्नांकित सिद्धान्तों द्वारा समझा जा सकता है।

'kkjhfjd fl)kUr % इस सिद्धान्त के अनुसार शारीरिक दोष व रोगों के कारण अर्थात द्रव्य को रासायनिक लक्षणों पर शारीरिक अनुकूलन के कारण व्यक्ति नशे की और अग्रसर होते है। मोरडोन्स, रैन्डाल्फ और निमविच जैसे विद्वानों ने शारीरिक सिद्धान्त के आधार पर मादक पदार्थो के व्यसन को स्पष्ट किया है। इस सिद्धान्त के अनुसार व्यक्ति शारीरिक दोषों व रोगों के कारण कुछ द्रव्यों के रासायनिक प्रभाव से शारीरिक अनुकूलन की वजह से मादक पदार्थ के सेवन का आदी हो जाता है।

euksoKkfud fl)kUr % यह सिद्धान्त मादक पदार्थो पर निर्भरता की व्याख्या कुछ विशिष्ट व्यक्तित्व सम्बन्धी लक्षणों के आधार पर करता है इस सिद्धान्त के अनुसार कुछ व्यक्तियों को दूसरों से भावनात्मक समर्थन व ध्यान चाहिये और इसके अभाव में वे लोग मादक पदार्थो के आदी होने लगते है। इन लोगों में निम्न आत्मविश्वास, आत्मनिदेशान की सीमित क्षमता, कुण्ठा व तनाव का सामना करने वाले लोग पौरूषी पहचान की अपर्याप्तता वाले लोग सम्मिलित है। अतः आधुनिक जीवन की परिस्थितियों के प्रति मय और असुरक्षा की अनुभूति भी व्यसन का कारण है।

समाजशास्त्रीय सिद्धान्त इस सिद्धान्त के अनुसार परिस्थितियों अथवा सामाजिक पर्यावरण व्यक्ति को व्यसनी बनाते है। मादक द्रव्यों का लेना अन्य व्यक्तियों विशेष रूप से घनिष्ठ समूहों से सीखा जाता है। जो व्यक्ति अपने लक्ष्यों की वैध साधनों द्वारा प्राप्त नहीं कर पाते वे इतने हताश हो जाते है कि शराब की और अन्य मादक पदार्थो का सेवन आरम्भ कर देते है।

## 4-4 0;lu dh jkdFkke dh mik;

नशा विश्वभर की एक गम्भीर समस्या है अतः इस समस्या के लिए संयुक्त आक्रमण की आवश्यकता है जिसमें व्यसनियों का उपचार, सामाजिक उपाय, शिक्षा आदि सम्मिलित

नोट

है। आधुनिक समाज में जनसंख्या की संरचना में होने वाले परिवर्तन एवं सामाजिक विकास से समाज के विभिन्न क्षेत्रों में प्रतियोगी प्रक्रियाऐं काफी तीव्र हो गई हैं जिसका स्पष्ट प्रभाव विभिन्न सामाजिक संस्थाओं पर दिखाई देता है। लोगों का अलगाव, तनाव और अवसाद से मानसिक संतुलन गड़बड़ाने लगा है, यही कारण है कि मादक पदार्थो के सेवन का प्रतिशत गांव, नगर, विद्यालय एवं महाविद्यालय और महिलाओं में बढ़ता जा रहा है। अतः सामाजिक विघटन को रोकने के लिए व्यसन की इस अनियंत्रित स्थिति पर नियंत्रण आवश्यक है।

नशे की और बढ़ते हुए कदमों की रोकथाम के लिए शिक्षा, चिकित्सा, स्वैच्छिक संगठन, सामाजिक कार्यकर्ता, सरकार एवं वैधानिक माध्यमों का प्रयोग आवश्यक है।

समाजशास्त्रीय दृष्टि से व्यसन की रोकथाम के लिए किये जाने वाले उपायों को मोटे तौर पर चार श्रेणियों में विभाजन किया जा सकता है (1) शैक्षणिक उपाय, (2) प्रवर्तक उपाय, (मनाने वाले) (3) सुविधाजनक उपाय और (4) दण्डात्मक उपाय।

इन उपायों में से अधिकांशतः शौक्षणिक उपायों में नशे के शरीर और मन पर पड़ने वाले प्रभाव के सम्बन्ध में ज्ञान प्रदान कर जागरूकता लाने का प्रयास किया जाता है ताकि नशीले पदार्थ के सेवन के प्रति भय उत्पन्न हो जाए। जबकि दण्डात्मक उपाय में नशा करने वालों का अलगाव या विसंबंधन किया जाता है। व्यसन की रोकथाम के लिए किए जाने वाले प्रमुख उपायों में निम्न बातों का ध्यान रखा जाना चाहिये।

¼1½ 'kk{kf.kd mik; % शौक्षणिक उपायों को अपनाते समय यह व्यक्ति को जो तथ्य, संकेत या निशान दिये जाते है वे भारतीय संस्कृति के सन्दर्भ में होने चाहिए। भारत में साक्षरता की दर कम होने के कारण लिखित जानकारी की अपेक्षा नुक्कड़ नाटक, पोस्टर, चलचित्रों एवं टीवी आदि के माध्यम से इससे होने वाले बुरे प्रभाव को प्रदर्शित किया जाना चाहिए, साथ ही नशा करने वाले व्यक्तियों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति, लिंग, धार्मिक विश्वास, उपसंस्कृति एवं पारिवारिक समस्याओं को ध्यान में रखते हुए इन उपायों को अपनाया जाना चाहिये।

शिक्षा देने के लक्षित समूहों में कॉलेज, विश्वविद्यालयों के युवा छात्रों, छात्रावासों में रहने वाले छात्रों कच्ची बस्तियों में रहने वाले लोगों, औद्यौगिक श्रमिकों, ट्रक चालकों एवं रिक्शा चालकों को अधिक सम्मिलित किया जाना चाहिए।

¼2½ o|kfud mik; % मादक पदार्थों के सेवन की रोकथाम का एक महत्वपूर्ण उपाय वैधानिक प्रयास है। ब्रिटिशकाल में 1893 सर्वप्रथम रायल आयोग का गठन कर मादक पदार्थो के सेवन की समस्या की रोकथाम का कदम उठाया गया। सरकार द्वारा 1985 में मादक पदार्थो की तस्करी की रोकथम के लिए 'द' नारकोटिक, ड्रग्स व साइकोट्रापिक सब्सटसिज एक्ट' बनाकर 14 नवम्बर 1985 से लागू किया गया। जिसके उलंघन पर कठोर कारावास एवं जुर्माना दोनों को निर्धारित किया गया है इस कानून की सफलता के लिए नियमों का कठोरता से पालन करने के साथ मादक पदार्थों का व्यापार करने वाले व्यक्तियों तस्करों एवं षड़यंत्रकारियों को पकड़ने में जनता का सहयोग भी लिया जा सकता है। इस अंतर्राष्ट्रीय समस्या को बढ़ने से रोकने के लिए स्थानीय निकायों को मजबूत बनाना होगा एवं इसके क्रय विक्रय को पूर्ण रूप से रोकना अनिवार्य करना होगा।

¼3½ fpfdRldh; mik; % व्यसन को रोकने में चिकित्सकों की अहम् भूमिका होती है। बाजार में मिलने वाली नींद की दवाइयों, अवसाद विरोधी दवाइयों, दर्दनाक दवाइयों और खांसी की दवाइयों में पाये जाने वाले पदार्थ कुछ समय तक नियमित सेवन से व्यक्ति को लती बना देते है, अतः द्रव्यों के औषध निर्देश देने सम्बन्धी अभिवृतियॉ सकारात्मक होनी चाहिये। अर्थात् चिकित्सक को यह स्पष्ट रूप बताना चाहिये कि रोगी द्रव्यों के अतिरिक्त प्रभावों की अवहेलना नहीं करे एवं बिना चिकित्सकीय परामर्श के दवा लेने में सतर्कता बरते।

नोट

¼4½ lkekftd mik; % शिक्षा और चिकित्सा के समान व्यसन की रोकथाम में विभिन्न सामाजिक समूहों के सहयोग की अवहेलना नहीं की जा सकती। सामाजिक उपायों में परिवार नातेदार, मित्र और स्वैच्छिक संगठन सम्मिलित हैं। इस अध्याय में आपने जाना कि परिवार और मित्र समूह व्यक्ति के जीवन को इस दिशा में प्रभावित करने वाले प्राथमिक तत्व हैं। माता–पिता की उपेक्षा, अधिक विरोध व वैवाहिक असामंजस्य व्यक्ति को व्यसन की ओर ले जाने वाले प्रमुख कारण हैं। अतः माता–पिता को चाहिये कि वे पारिवारिक पर्यावरण को अधिक सामंजस्यपूर्ण बनाए रखने का प्रयास करें जिससे कम से कम बच्चे घर के बाहर रहकर मादक पदार्थों के सेवन के लिए प्रेरित नहीं होंगे। माता–पिता को बच्चे के असामाजिक व्यवहार तथा विपथगामी व्यवहार जैसे अध्ययन व अभिरूचियों आदि क्रियाओं में कम रूचि, गैर जिम्मेदार व्यवहार, चिड़चिड़ापन, आवेगी व्यवहार, व्यग्रता घबराहट की मुखाकृति आदि को देखकर कारणों का पता लगाना चाहिये। यदि माता–पिता सामाजिक और नैतिक प्रतिमानों की पालना करें तो बच्चा भी अवश्य करेगा। अतः सामाजिक सुरक्षा, परिवार के निर्णयों में शामिल कर सामाजिक पर्यावरण को स्नेहपूर्ण बनाकर भी व्यसन की स्थिति को रोका जा सकता है।

## mipkj

नारकोटिक्स मादक व्यसनी का पता लगाना ही अपने आप में एक कठिन कार्य नहीं है अपितु, व्यसनीयों का उपचार करना भी अत्यधिक कठिन है। व्यक्तिगत रूप से यह कार्य और भी ज्यादा मुश्किल है अर्थात ऐसे लोगों के उपचार में मादक द्रव्यों के सेवन पर पूर्ण नियंत्रण की आवश्यकता होती है, जो घर की अपेक्षा चिकित्सालय में अधिक सम्भव है।

व्यसन एक मानसिक रोग है जिसका उपचार मनोचिकित्सकों एवं औषधियों से संभव है। इन व्यक्तियों का उपचार विभिन्न चिकित्सा केन्द्रों, मेडिकल कॉलेजों एवं नशा मुक्ति केन्द्रों पर निःशुल्क भी किया जाता है। व्यसन के उपचार के दौरान इन्हें लम्बे समय तक परामर्श की आवश्यकता होती है।

## ljdkjh iz;kl

नशीले पदार्थ के सेवन जैसे गम्भीर विषय पर एक महत्वपूर्ण कार्य, सरकार द्वारा केन्द्रीय मन्त्रालय, भारत सरकार के तत्वावधान में 33 शहरों के एक सामान्य अनुसंधानीय प्ररचना और उद्देश्यों को दृष्टिगत रखते हुए किया गया। इन अध्ययनों का मूल उद्देश्य यह पता लगाना था कि–

(1) नशीले पदार्थ एवं उनकी प्रवृत्ति व सीमा।

(2) नशीले पदार्थ के सेवन में योगदान देने वाले प्रमुख कारकों का पता लगाना।

(3) नशीले पदार्थ से आसानी से प्रभावित होने वाले क्षेत्रों एवं जनसंख्यात्मक समूहों की जानकारी प्राप्त करना।

(4) व्यसन की रोकथाम की व्यवस्था एवं सुविधाएँ देना।

**नोट**

सरकार द्वारा नशा मुक्त करने हेतु प्रयासों में औपचारिक साधनों में सामाजिक अधिनियमों की मदद ली जा रही है वहीं दूसरी ओर स्वयंसेवी संगठनों एवं सरकारी अनुदान प्राप्त संगठनों के माध्यम से नशे के विरूद्ध प्रचार–प्रसार एवं जागरूकता लाने के साथ–साथ व्यसनियों का उपचार किया जाता है।

व्यसनियों के उपचार हेतु भारत सरकार के कल्याण मन्त्रालय द्वारा तीन प्रकार के केन्द्र स्थापित किए गए हैं :

(i) परामर्श (counselling) केन्द्र।

(ii) विव्यसन (de-addiction) केन्द्र।

(iii) उत्तर सेवा (after-care) केन्द्र।

कल्याण मन्त्रालय द्वारा स्थापित यह केन्द्र मार्च, 1998 में 172 परामर्श केन्द्र 111 विव्यसन तथा 33 अनभिज्ञा (awarne) केन्द्र के रूप में स्थापित थे। जिन्हें 1986 में कल्याण मंत्रालय ने और सरकारी संस्थाओं (NGOs) को सौंप दिया। परन्तु गैर सरकारी संगठनों द्वारा चलाये जा रहे केन्द्रों में केवल उन्हीं व्यसनियों का उपचार किया जाता है जो कि किसी अन्य बीमारी जैसे टी.बी., अस्थमा, एच.आई.वी, जिगर आदि से पीड़ित नहीं होते। वस्ततु : अधिकांश व्यसनी किसी न किसी रोग से ग्रसित होते हैं अतः इन केन्द्रों पर उनके उपचार की सही व्यवस्था भी नहीं होती इसी कारण इनकी आलोचना भी की जाती है। अतः अब इस बात पर बल दिया जाने लगा है कि इन केन्द्रों की उपचार व्यवस्था में परिवर्तन करना अनिवार्य है। परन्तु अक्टूबर 1995 से सरकार की उत्तर सेवा केन्द्रों की योजना को समाप्त कर दिया गया।

## 4-5 lkjk'k

व्यसन शब्द अंग्रेजी के 'एडिक्ट' शब्द का रूपान्तरण है जिससे शारीरिक निर्भरता की स्थिति प्रकट होती है। व्यसन का अभिप्राय शरीर संचालन के लिए मादक पदार्थ का नियमित प्रयोग करना है अन्यथा शरीर के संचालन में बाधा उत्पन्न होती है।

व्यसन न केवल एक विचलित व्यवहार है अपितु एक गम्भीर सामाजिक समस्या भी है। तनावों, विषदों, चिन्ताओं एवं कुण्ठाओं से छुटकारा पाने के लिए व्यक्ति कई बार असामाजिक मार्ग अपनाकर नशों की और बढ़ने लगता है। जो कि उसे मात्र कुछ समय के लिए उसे आराम देते हैं।

किसी प्रकार का व्यसन (नशा) न केवल व्यक्ति की कार्यक्षमता को कम करता है अपितु यह समाज और राष्ट्र दोनों के लिए हानिकारक है। नशीले पदार्थो की प्राप्ति हेतु व्यक्ति, घर, मित्र और पड़ोस तक में चोरी एवं अपराधी क्रियाओं को अंजाम देने लगता है। स्वास्थ्य की दृष्टि से देखा जाए तो व्यसन विभिन्न बिमारियों को आमंत्रण देता है। राष्ट्रीय

एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर यह तस्करी, आतंकवाद एवं देशद्रोही गतिविधियों को बढ़ावा देता है। सामाजिक दृष्टि से जुआ, वेश्यावृति, आतंकवाद, डकैती, मारपीट, दंगे अनुशासनहीनता जैसी सामाजिक समस्याएँ व्यसन से ही संबंधित हैं।

नोट

व्यसनी व्यक्ति दीर्घकालीन नशों की स्थिति में उन्मत्त रहता है तथा नशीले पदार्थ पर व्यक्ति मानसिक एवं शारीरिक तौर पर पूर्णतया आश्रित हो जाता है। जिसके हानिकारक प्रभाव केवल व्यक्ति ही नहीं अपितु उसके परिवार और समाज पर भी पड़ते हैं।

## 4-6 vH;kl iz'u

1. व्यसन को स्पष्ट करते हुए इसके प्रकार एवं प्रभाव बताइये।
2. व्यसन के प्रसार को स्पष्ट कीजिये।
3. व्यसन की रोकथाम के उपाय बताइये।

## bdkbl&5 dkyk /ku

### ikB& l jpuk

नोट

5.0 प्रस्तावना

5.1 काले धन की अवधारणा

5.2 काले धन की उत्पत्ति

5.3 चुनाव और काला धन

5.4 काले धन का प्रभाव

5.5 काले धन की मात्रा

5.6 काला धन निकालने के उपाय

5.7 सारांश

5.8 अभ्यास प्रश्न

### 5-0 iLrkouk

भारत एक लोकतांत्रिक देश है। अपने कल्याणकारी उद्देश्यों की पूर्ति अर्थात् औद्योगिक व्यापारिक तथा आर्थिक विकास, राष्ट्रीय आय में वृद्धि, व्यय तथा समानता पर आधारित वितरण तथा आय की असमानता की समाप्ति के लिए यह आवश्यक है कि सरकार की आय तथा वित्तीय साधनों में कभी किसी प्रकार की रुकावट नहीं आनी चाहिए।

इसके लिए यह आवश्यक है कि हमारी अर्थव्यवस्था ऐसी हो, जिससे देश के वित्तीय साधनों का विनियोजन आर्थिक विकास में सहायक क्षेत्रों में हो। विगत कुछ वर्षों से हमारा देश अनेक आर्थिक और सामाजिक समस्याओं से गुजर रहा है, क्योंकि हमारी अर्थव्यवस्था के समानांतर एक और अर्थव्यवस्था है, जो देश की वास्तविक अर्थों में अर्थव्यवस्था बन गई है। यह व्यवस्था काले धन की है, जो हमारी राजनीति का प्राण तथा हमारी नई पश्चिमी पंचतारा, संस्कृति, सप्ततारा होटलों की वैभव वाली संस्कृति का उन्नायक है।

काला धन सरकार की आय में रुकावट पैदा करता है तथा देश के सीमित वित्तीय साधनों को अवांछित दिशाओं में मोड़ देता है। इसके अतिरिक्त काले धन या समानांतर अर्थव्यवस्था की समस्या सामान्य समस्याओं से अलग प्रकार की समस्या है क्योंकि जब हम सामान्य आर्थिक समस्याओं, यथा गरीबी, मुद्रा स्फीति या बेरोजगारी के संबंध में विचार करते हैं तब हमारा ध्यान निर्धन तथा बेरोजगार आदि के समूह पर केंद्रित हो जाता है।

परंतु जब हम काले धन या समानांतर अर्थव्यवस्था पर दृष्टिपात करते हैं तब एक विषेशता दृष्टिगत होती है, कि इसमें वह व्यक्ति या व्यक्ति समूह बिल्कूल ही प्रभावित नहीं होता, जो इस काले धन को रखता है बल्कि इससे वे व्यक्ति प्रभावित होते हैं, जो इससे वंचित रह गए हैं और साथ–ही–साथ इस देश की सरकार भी।

नोट

## 5-1 dky /ku dh vo/kkj.kk

आजकल 'काले धन' का प्रयोग सामान्यतः बिना हिसाब–किताब वाले या छुपाई हुई आय अथवा अप्रकट धन या उस धन के लिए किया जाता है, जो पूर्णतया अथवा अंशतया प्रतिबंधित सौदों में लगा हुआ है। काला धन काली आय अथवा काली संपदा के रूप में भी हो सकता है। काली आय से तात्पर्य उन समस्त अवैध प्राप्तियों और लाभों से है जो करों की चोरी, गुप्त कोशों तथा अवैध कार्यो के करने से एक वर्ष में प्राप्त हुए हों।

इसी प्रकार काली संपदा से तात्पर्य वह काली आय, जो वर्तमान में खर्च की जाती है और बचा ली जाती है या विनियोजित कर दी जाती है अर्थात् अपनी काली आय को व्यक्ति सोना–चाँदी, हीरे–जवाहरातों, बहुमूल्य पत्थरों, भूमि, मकान, व्यापारिक परिसंपत्तियों आदि के रूप में रखता है। इस काले धन को आयकर–अधिकारियों या सरकार की करारोपण दृष्टि से बचाकर रखने में उपर्युक्त प्रक्रिया प्रयोग में लाई जाती है।

इस प्रकार, हम देखते हैं कि 'काले धन' शब्द से आशय केवल उस धन से नहीं होता, जो कानूनी धाराओं, यहाँ तक कि सामाजिक ईमानदारी का उल्लंघन करके कमाया गया हो अपितु काले धन में वह धन भी सम्मिलित किया जाता है, जो छुपाकर रखा गया हो और जिसका कोई हिसाब–किताब न हो।

## 5-2 dky /ku dh mRifÙk

काला धन मुख्यतः दो प्रकार की शक्तियाँ उत्पन्न करता है। प्रथमतः अवैध साधनों को प्रयोग करके काले धन की प्राप्ति, यथा–तस्करी, फ्लैटों और दुकानों के आवंटन में ली जानेवाली पगड़ी की राशि, माल के कोटों तथा लाइसेंसों को गैर–कानूनी रूप में बेचना, गुप्त कमीशन या घूसखोरी, विदेशी विनिमय की चोरी से प्राप्त धन तथा सरकारी नियंत्रण में बिक्री की कुछ वस्तुओं को काले बाजार में बेचने से अर्जित धन, आदि।

इसी प्रकार दूसरे, प्रकार का काला धन वह होता है, जिसके अर्जन का स्रोत उपर्युक्त के विपरीत अर्थात् न्यायपूर्ण तथा वैध साधन होते हैं, परंतु अर्जन करनेवालों के व्यक्तिगताव्यवहारों के कारण यह काले धन का रूप ले लेता है या अपनी आय को कर–अधिकारी से छुपाकर तथा उसपर कर अदा न करके अर्थात् 'कर–वंचन' के फलस्वरूप भी काले धन की उत्पत्ति होती है।

जैसे–यदि किसी व्यक्ति की वार्शिक आय आयकर के अंतर्गत है तो वह आयकर की राशि को बचाने के लिए अपनी वास्तविक आय से कर आय को दर्शाता है। इस प्रकार वह अंतर (वास्तविक आय घोषित आय) 'काला धन' कहलाएगा। वास्तव में कर–वंचन तथा काला धन, दोनों परस्पर अत्यंत घनिष्ठ रूप में संबंधित हैं।

कर–वंचन, जहाँ काले धन को जन्म देता है, वहाँ काले धन को जब अधिक आय कमाने के लिए गुप्त रूप से व्यवसाय में लगाया जाता है, तो उससे पुनः कर–वंचन को प्रोत्साहन मिलता है। हम कह सकते हैं कि वर्तमान कर–प्रणाली ही काले धन की उत्पत्ति का प्रमुख कारण है। कर–प्रणाली के जटिल होने के साथ–साथ करों की ऊँची दरों से भी कर–वंचन को बढ़ावा मिलता है।

नोट

विगत कुछ वर्शो तक भारत में आयकर की सीमांत दर ६७.७५ प्रतिशत तक थी। वर्तमान में उसकी सीमांत दर ५० प्रतिशत है। प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष, दोनों प्रकार के करों के संबंध में चोरी की प्रवृत्ति बढ़ रही है जिससे काला धन बढ़ता ही जा रहा है। इसी प्रकार नियंत्रण (राशनिंग) व्यवस्था भी पर्याप्त मात्रा में काले धन की जननी है। अपने देश में बहुत से उपभोक्ता और औद्योगिक पदार्थों के उत्पादन मूल्य, तथा वितरण सरकार के नियंत्रण में है।

आयात, निर्यात तथा विदेशी विनिमय पर भी बहुत से प्रतिबंध लगाए गए हैं। कई वस्तुओं के लिए लाइसेंस तथा कोटा–प्रणाली प्रचलित है। सरकार द्वारा निर्धारित मूल्य तथा बाजार मूल्य में अंतर के कारण अधिक लाभ प्राप्ति के लिए इन नियंत्रणों को भंग किया जाता है तथा नियंत्रित मूल्य की वस्तुएँ अधिक मूल्य पर काले बाजार में बेच दी जाती हैं।

व्यापारी तथा साधारण जन भी लाइसेंस, कोटा–परमिट प्राप्त करने के लिए तथा अवैधपूर्ण रीति से कोई कार्य करवाने के लिए कर्मचारियों तथा अधिकारियों को रिश्वत देते हैं। इस प्रकार से नियंत्रण तथा निर्णयों में देर करने की प्रवृत्ति काले धन का प्रचुर मात्रा में उत्पादन करती है।

अर्थव्यवस्था में मुद्रा–स्फीति तथा वस्तुओं की कमी भी काले धन को जन्म देती है। मूल्यों के बढ़ने से व्यापारी माल को छुपाते या संचित करते हैं तथा इस माल को बाद में अधिक मुनाफे पर काले बाजार में बेच देते हैं। फलस्वरूप काले धन में अभिवृद्धि होती है।

इसी प्रकार भ्रष्ट व्यावसायिक कासवाइयाँ व्यावसायिक खर्चों की सीमाबंदी तथा उनकी अनुमति न मिलना, बिक्रीकर तथा अन्य करों की ऊँची दरें, कर–कानूनों को अप्रभावी ढंग से कार्यान्वित करना आदि भी ऐसे महत्त्वपूर्ण कारण हैं, जो प्रचुर मात्रा में काला धन उत्पादित करते हैं।

सरकारी कर्मचारी भी मूल्यों में वृद्धि के अनुक्रम में वेतन–वृद्धि नहीं पाते, जिसके फलस्वरूप वे अपने अधिकारियों का दुरुपयोग करके भ्रष्ट तरीकों से आय प्राप्त करते हैं, जो काले धन का रूप ग्रहण कर लेती है। उधर ठेकेदारों, माल की आपूर्ति करनेवाले, एजेंटों तथा दलालों की संख्या में हुई वृद्धि भी काले धन की वृद्धि का एक महत्त्वपूर्ण कारण है।

अचल संपत्तियों यथा– भूमि, भवन आदि का हस्तांतरण भी काले धन का एक बड़ा स्रोत है। के.एन. वांचू समिति की जाँच से यह स्पष्ट हो गया है कि महानगरों में अचल संपत्ति के मूल्य ६०:४० के अनुपात में अदा किए जाते हैं, जिसमें ४० का अनुपात काले धन के रूप में होता है।

कभी–कभी तो यह अनुपात ५०:५० या ४०:६० के अनुपात में भी देखने में आता है। तस्करी देश के उत्पादन तथा व्यापार को तो प्रभावित करती ही है, साथ–ही–साथ काले धन का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत बन जाती है। तस्करी काले धन के सृजन में वृद्धि करने के साथ व्यापार–संतुलन को भी देश के हितों के विरुद्ध ले जाती है।

विदेशी माल तथा भारतीय माल के मूल्यों में बड़ा अंतर है। उदाहरणार्थ, अनेक मूल्यवान् धातुओं के भारतीय तथा अंतरराष्ट्रीय मूल्यों में 'एक निश्चित इकाई' का मूल्यों में

अंतर काफी ज्यादा है। इसी प्रकार जाली नोटों के प्रचलन तथा यातायात के साधन भी काली आय का एक महत्त्वपूर्ण और बहुत बड़ा साधन बन रहे हैं।

## 5-3 puko vkj dkyk /ku

नोट

चुनाव में धन के बढ़ते प्रभाव और चुनाव के खर्च में होनेवाली भारी वृद्धि भी काले धन की उत्पत्ति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। चुनाव में पैसे का प्रभाव किसी से छुपा नहीं है। चुनाव में उम्मीदवार सारा खर्च स्वयं तो वहन नहीं कर पाता, अतः वह कई दिशाओं–बड़े ठेकेदारों अथवा पूँजीपतियों–से सोंठ–गाँठ कर आर्थिक साधन 'चंदे' के रूप में जुटाता है।

सरकार ने बड़ी कंपनियों पर चुनाव में राजनीतिक दलों को चंदा देने पर रोक लगा दी है। अतः वह चंदा राजनीतिक दल को व्यक्तिगत रूप में प्राप्त होता है, जो काला धन ही होता है। चुनावों में खर्च होनेवाला काला धन पूँजीपति कर लगवाकर तथा वस्तुओं के मूल्य बढ़ाकर जनता की जेब से ही निकलवाते हैं, जिससे महँगाई बढ़ती है।

भारत सरकार द्वारा सन् 1971 में नियुक्त 'वांचू समिति' ने प्रत्यक्ष कर के ढाँचे में सुधार हेतु कहा था कि राजनीतिक दलों की अपने खर्च के लिए पूँजीपतियों और व्यवसायियों पर निर्भरता ही काले धन का प्रमुख कारण है। अतः चुनाव में बेहिसाब खर्च की प्रवृत्ति पर रोक लगाना अत्यंत आवश्यक है।

## 5-4 dkyk /ku dk çHkko

'के.एन. वांचू समिति' ने अर्थव्यवस्था पर काले धन के प्रभाव का उल्लेख करते हुए कहा था कि देश की अर्थव्यवस्था पर काले धन के बड़े खतरनाक और विनाशकारी प्रभाव पड़ते हैं। आज काला धन देश की प्रगति को गंभीर रूप से अवरुद्ध कर रहा है, क्योंकि काले धन के कारण सरकार को राजस्व–प्राप्ति की सीधे–सीधे हानि होती है।

ऐसी आय वर्तमान में खर्च कर दी जाती है, जिससे बचत कम हो जाती है। करों की चोरी से प्राप्त आय से धन की असमानता को बढ़ावा मिलता है। चूंकि काले धन को न तो बैंकों में जमा किया जा सकता है और न ही प्रतिभूतियों में लगाया जा सकता है।

इस धन का उपयोग मुख्यतः विलासिता तथा फिजूलखर्ची में किया जाता है। इस व्यय का देश के उत्पादन पर बुरा प्रभाव पड़ता है, क्योंकि सीमित साधनों को उत्पादन की बजाय उपभोग में लगा दिया जाता है, जिससे आर्थिक विकास में बाधा उत्पन्न होती है।

यही कारण है कि वर्तमान में देश को विकास के लिए जितने साधनों की आवश्यकता है, यथेष्ट रूप में इसीलिए सामने नहीं आ पा रहे हैं, क्योंकि वे संसाधन काले धन के रूप में गुप्त रूप से चलनेवाले व्यवसायों में लगे हैं।

वास्तव में, काले धन की अपनी अलग अर्थव्यवस्था होती है, जो अदृश्य रूप में सफेद धन की अर्थव्यवस्था के समानांतर कार्य करती है। ये दोनों अर्थव्यवस्थाएँ ठीक उसी प्रकार एक–दूसरे के संपर्क में नहीं आती हैं जिस प्रकार दो समानांतर रेखाएँ एक–दूसरे को नहीं काटती हैं।

नोट

अतः काले धन को 'समानांतर अर्थव्यवस्था' से भी संबोधित किया जा सकता है। यहाँ यह द्रष्टव्य है कि दोनों अर्थव्यवस्था के स्रोत (काला और सफेद धन) दोनों एक–दूसरे में परिवर्तित हो सकते हैं क्योंकि काले धन की अर्थव्यवस्था इतनी सुदृढ़ और शक्तिशाली होती है कि वह निरंतर सफेद धन को अपनी ओर आकृष्ट करती रहती है और चक्रवृद्धि ब्याज की भांति निरंतर अपनी गति से बढ़ती जाती है।

जब तस्करी की वस्तुएँ खरीदी जाती हैं या दुर्लभ वस्तु के लिए निर्धारित राशि से अधिक मात्रा में भुगतान किया जाता है, तब कहा जाता है कि सफेद धन काले धन में परिवर्तित हो गया, परंतु इसी प्रकार कोई धनी तस्कर या उद्योगपति विलासिता की वस्तुओं के उपभोग पर काले धन को व्यय करे और इसके बदले निर्धारित रसीद प्राप्त करे या सरकार काले धन को स्वतः आकर्षित करने के लिए कोई विशेष योजना लागू कर दे तो काला धन सफेद धन में बदल जाता है।

अतः हम देखते हैं कि काला धन किसी देश की अर्थव्यवस्था पर निम्नलिखित रूपों में घातक प्रभाव डालता है :

1. इससे कालाबाजारी, सट्घ्टेबाजी, मिलावट तथा तस्करी–जैसे गैर–कानूनी अपराधों को बल मिलता है।
2. दुर्लभ संसाधनों को अनावश्यक और अनुत्पादक कार्यों की ओर मोड़ देता है।
3. कर–वंचन से सरकार की सकल आय में कमी आती है और समाज में– संपत्ति और आय का वितरण धनी वर्ग के पक्ष में हो जाता है, जिससे धनी और अधिक धनी तथा निर्धन और भी निर्धन हो जाते हैं।
4. विलासिता, विदेशी साज–सच्चा तथा उपभोग की वस्तुओं की माँग ज्यादा होती है। यह माँग तस्करी को प्रोत्साहित करती है।
5. काले धन को सामान्यतः नकद, सोने तथा अन्य मूल्यवान् धातुओं, विदेशी बैंकों, इन्वेंटरी में विनियोजन, निवासीय तथा व्यापारिक भवनों के क्रय, व्यापारिक तथा औद्योगिक पूँजी के रूप में किया जाता है। इस आय को सोने तथा मूल्यवान् धातुओं में लगाना स्फीतिकारक होता है। उन वस्तुओं की माँग बढ़ने से इनका मूल्य बढ़ जाता है।
6. काले धन को विदेशी बैंकों में जमा करने में घरेलू वित्तीय स्रोत विदेशों को पलायन करने लगते हैं, जिसके फलस्वरूप देश का भुगतान–संतुलन बिगड़ने लगता है।
7. काली कमाई से भूमि तथा भवन आदि अचल संपत्ति क्रय करने पर रजिस्ट्रेशन शुल्क की चोरी के साथ ही इनके मूल्य में वृद्धि होती है।
8. काली आय से हुई बचत को अवैध कार्यों के लिए वित्त के रूप में प्रयोग किया जाता है तथा यह वित्त का वैकल्पिक स्रोत बन जाती है, जिससे सरकार की मुद्रा संबंधी नीतियाँ असफल हो जाती हैं।

## 5-5 dky /ku dh ek=k

नोट

भारत में वर्तमान समय में कितना काला धन है, यह निश्चित रूप से बता पाना संभव नहीं है, परंतु अनुमानों के अनुसार, भारत में प्रतिवर्ष लगभग 1500 से 2,000 करोड़ रुपया काले धन का रूप ले लेता है। 'राष्ट्रीय लोक वित्त और नीति संस्थान' ने अपने रिपोर्ट में कहा है कि भारत में अरबों रुपए का काला धन है। अंर्तराष्ट्रीय मुद्राकोष के एक सर्वेक्षण के अनुसार भारत में कुल राष्ट्रीय उत्पादन का 50 प्रतिशत काला धन है।

## 5-6 dyk /ku fudkyu d mik;

काले धन को बाहर निकालने के लिए सरकार द्वारा निम्नलिखित उपाय अभी तक प्रयोग में लाए गए हैं या लाए जा रहे हैं अथवा शीघ्र ही प्रवर्तित किए जाएँगे :

1. काले धनधारियों से यह अपेक्षा करना कि वे स्वतः तथा स्वेच्छापूर्वक अपने काले धन को प्रकट कर दें, वास्तव में, सिद्धांततः यह बड़ी उचित तथा श्रेष्ठ व्यवस्था हो सकती है, परंतु व्यावहारिक दृष्टि से यह समर्थन–योग्य नहीं है, क्योंकि यह उपाय केवल युद्ध अथवा राष्ट्रीय संकट के समय ही कारगर हो सकता है।

   वांचू समिति ने भी इसका जोरदार विरोध किया है। इसके अनुसार, यदि इस उपाय का सामान्य परिस्थितियों में और वह भी बार–बार प्रयोग किया जाता है तो ईमानदार करदाता तो कर जमा कर देंगे, परंतु बेईमान करदाता इस विषय में तनिक भी नहीं सोचेंगे।

   ऐसी परिस्थितियों में ईमानदार करदाताओं का सरकार पर से विश्वास उठ जाएगा और वे समझेंगे कि कानून तोड़नेवालों से निबटने में सरकार अक्षम है साथ–ही–साथ सरकार का कर विभाग भी अपमान का पात्र होगा।

2. दूसरा उपाय यह है कि सरकार करदाताओं के साथ समझौता कर ले, परंतु करदाताओं को इस विषय में आश्वस्त करने के लिए ये समझौते न्यायपूर्ण, शीघ्र तथा स्वतंत्र रूप में होने चाहिए।

   इन्हें कर विभाग के अंतर्गत ही किसी पृथक् निकाय को सौंपना चाहिए क्योंकि यदि राजकोषीय कानूनों के प्रशासन में अत्यंत कठोर रुख अपनाया जाता है तो उससे किसी समय के कर–वंचक अथवा अनिच्छा से कभी कर–वंचन करनेवाले व्यक्ति को ईमानदार बनने का अवसर नहीं मिलेगा तथा व्यर्थ के मतभेद बढ़ेंगे।

   अतः कर–कानून में ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए ताकि कार्यवाई के किसी भी स्तर पर करदाता के साथ समझौता हो सके।

3. तृतीय उपाय के अंतर्गत सरकार ऐसे दीर्घकालीन धारक बॉण्ड जारी करे, जिन पर निम्न दर से ब्याज दिया जाए तथा धन विशेष निवेश करनेवालों को भी यह आश्वस्त करे कि निवेश किए गए धन के स्रोत के बारे में बॉण्डधारियों से कुछ नहीं पूछा जाएगा। इस उपाय से दबा हुआ काला धन प्रचलन में आकर सरकार के योजना–कार्यो में व्यय होगा तथा उत्पादन–वृद्धि हो सकेगी।

नोट

इस योजना के कई लाभ भी सरकार ने बताए परंतु व्यवहार में यह योजना असफल ही रही, क्योंकि लगभग पिछले कई वर्षों से इस योजना का कोई विशेष लाभ सरकार को नहीं मिल सका है। वास्तव में, सरकार करवंचकों तथा काली आय प्राप्त करनेवालों को इस योजना के प्रति पूर्ण आश्वस्त नहीं कर पाई है, इसलिए इन धारकबौंण्डों के प्रति काले धनधारकों ने विशेष रुचि नहीं दिखाई है।

4. विमुद्रीकरण भी एक कारगर उपाय हो सकता है। इसका अर्थ होता है, अर्थव्यवस्था में अधिक मूल्य के करेंसी नोटों को रद्द कर देना, क्योंकि काला धन आमतौर पर इन्हीं नोटों के माध्यम से संचालित होता है। यद्यपि यह एक आसान और अच्छा उपाय है, तथापि भारत में यह सफल नहीं रहा है।

5. कर की अधिकतम सीमांत दर में कमी करने पर काला धन निकालने में सहायता मिल सकती है। करों की ऊँची दरें अनेक कठिनाइयों तथा जोखिमों के बावजूद कर–वंचन को लाभप्रद तथा आकर्षक बनाती हैं। करों की ऊँची दरें उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं तथा अधिक प्रयत्न करने के मार्ग में मनोवैज्ञानिक बाधा उत्पन्न करती हैं, साथ ही लोगों की बचत और निवेश की इच्छा और क्षमता को भी कम करती हैं।

6. यदि सरकार तस्करी की रोकथाम में सफल हो जाए तो काले धन का एक बहुत बड़ा भाग समाप्त किया जा सकता है। वास्तव में, तस्करी के प्रति सरकार पूरी तरह से जागरूक है तथा इसमें कमी लाने के पूरे प्रयत्न भी किए जा रहे हैं। तस्करी का मुकाबला करने के लिए एक चौमुखी नीति अपनाई गई थी।

   इसके अंतर्गत रोकथाम और गुप्तचर शाखा को सुदृढ़ बनाना, विदेशी विनिमय अधिनियम के प्रविधानों को कड़ाई से लागू करना, आर्थिक और कानूनी उपाय तथा पड़ोसी राष्ट्रों से द्विपक्षीय समझौते इस राजनीति के मुख्य उद्देश्य हैं। यह उपाय यदि सतर्कता, ईमानदारी तथा वैज्ञानिक ढंग से प्रयोग में लाया जाए तो परिणाम उत्साहवर्धक होंगे।

7. कर–विभाग द्वारा डाले गए छापों से भी काले धन का परदाफाश होता है। काले धन को निकालने के लिए ऐसे व्यक्तियों, जिन पर संदेह होता है, के घरों तथा व्यावसायिक प्रतिष्ठानों पर समय–समय पर छापे डाले जाते हैं। यदि छापों की संख्या बढ़ा दी जाए तथा कर–विभाग इन छापों का क्रियान्वयन अधिक ईमानदारी और सतर्कतापूर्वक बड़े–बड़े तस्करों, सट्टेबाजों तथा जमाखोरों पर केंद्रित करे तो परिणाम उत्साहवर्धक रहेंगे।

8. सरकारी नियंत्रण तथा लाइसेंसों की न्यूनतम संख्या रखने पर भी काला धन अंशतः सामने आ सकता है। ये बातें काले धन तथा कर–वंचन को पैदा करती हैं।

9. देश में काले धन के निर्माण तथा संग्रह के लिए राजनेता काफी हद तक उत्त. रदायी रहे हैं। अतः वांचू समिति के अनुसार रुजनीतिक दलों को चंदा देने के कारण जो राशि कुल आय में से घटाई जाए वह सकल आय की १० प्रतिषत से अधिक नहीं होनी चाहिए।

नोट

10. व्यय–कर को पुनः लागू किए जाने से भी काले धन पर नियंत्रण किया जा सकता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि आज भारत की अर्थव्यवस्था में काला धन इस प्रकार शामिल हो गया है कि वास्तविक प्रचलित धन के समानांतर काले धन की अर्थव्यवस्था चल रही है, जो कि हमारी अर्थव्यवस्था को घुन की तरह खोखला करती जा रही है।
11. सभी आयकर–अधिकारियों के तबादले साल भर के अंदर एक स्थान से दूसरे स्थान पर कर दिए जाएँ तथा जिन स्थानों पर उनकी नियुक्ति की जाए वे उनके स्थायी निवास–स्थान से दूर हों। जो नए अधिकारी हैं उनके संबंध में यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि जहाँ उन्होंने अंतिम शिक्षा प्राप्त की है, वहाँ भी उनकी नियुक्ति न की जाए।
12. चुनाव में धन के बढ़ते प्रभाव और चुनाव खर्च में हुई भारी वृद्धि को देखते हुए एक महत्त्वपूर्ण सुझाव यह दिया जा सकता है कि सरकार की ओर से उम्मीदवारों को आर्थिक सहायता दी जानी चाहिए। जैसे–जर्मनी और अमेरिका में राष्ट्रपति के चुनावों में काले धन के प्रयोग पर रोक लगाने के लिए कुछ अन्य सुझाव भी दिए जा सकते हैं। जैसे–कंपनियों से धन लेने पर लगाई गई रोक हटा दी जाए किंतु इसके साथ यह शर्त रखी जाए कि राजनीतिक दलों का पंजीकरण हो, वे पूरा हिसाब रखें, हिसाब की जाँच हो और वह साफ–साफ बताए कि वह पूरा धन उन्हें कहाँ से मिला और वे अपने चुनाव–प्रचार में उसका उपयोग किस प्रकार करेंगे।

राजनीतिक दल जो रकम अपने उम्मीदवारों को दे, उसकी सीमा भी निश्चित हो। यह भी सुझाव दिया गया है कि सार्वजनिक क्षेत्र के प्रतिष्ठान किसी को चंदा नहीं दे सकते और निजी क्षेत्र की वही इकाइयाँ चंदा दे सकती हैं जो लाभ कमा रही हों।

काला धन मुख्यतः विलासिता तथा फिजूलखर्ची में व्यय होता है, जो कि अनुत्पादक कार्य है। यह व्यय प्रथम तो देश की बचत को कम करता है। दूसरे, देश के उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है, क्योंकि सीमित साधनों (आर्थिक) को उत्पादन के आधार पर उपभोग में लगाने पर स्वाभाविक है कि देश का आर्थिक विकास अवरुद्ध हो जाएगा।

अतः भारत सरकार इस विकट समस्या से भली–भांति परिचित है तथा उसके निवारणार्थ प्रयासों में लगी हुई है। आयकर उपबंधों के अंतर्गत केंद्रीय सरकार को ऐसी अचल संपत्ति को अधिग्रहण करने का अधिकार है, जिसका उचित बाजार मूल्य एक लाख रुपए से अधिक हो।

संपत्ति के बेनामी धारण की पद्धति पर अंकुश लगाने के उद्देश्य से यह आवश्यक कर दिया गया है कि संपत्ति के वास्तविक स्वामी को संपत्ति के अर्जन के एक वर्ष के अंदर आयकर आयुक्त को सूचित करना अनिवार्य होगा। किसी भी मामले में, जहाँ एक वर्ष में कुल कारोबार ४० लाख रुपए से अधिक का होगा, लेखा पुस्तकों का लेखा परीक्षक द्वारा परीक्षण भी अनिवार्य कर दिया गया है।

अतः सरकार यदि कर–चोरी को घटाना चाहती है तो आयकर, प्रत्यक्ष–करों आदि की सीमांत दर, जोकि देश की तीव्र मुद्रा–स्फीति संदर्भ में काफी ऊँचे हैं, को कम कर, दे, कर–चोरों के लिए कठोर दंड की व्यवस्था की जाए कर–प्रशासन को अधिक चुस्त तथा

नोट

निपुण बनाकर आर्थिक नियंत्रण, परमिट, कोटा, लाइसेंस आदि को सीमित तथा जरूरी होने पर ही लागू किया जाए अधिक संख्या में तथा सार्थकतापूर्वक छापे मारकर, उपभोक्ता पदार्थो का उत्पादन बढ़ाकर, चुनाव–काल में राजनीतिक दलों द्वारा प्राप्त किए जानेवाले चंदे पर रोक लगाकर ही काले धन की समस्या से उचित तथा प्रभावशाली ढंग से निबटा जा सकता है।

इसके अतिरिक्त प्रशासनिक कार्यक्षमता में वृद्धि करके देरी की प्रवृत्ति से मुक्ति पाना भी जरूरी होगा। विदेशी विनिमय की चोरी तथा तस्करी रोकने के लिए कोफेपोसा आसल्ख की व्यवस्थाओं को सख्ती से लागू किया जाना चाहिए।

संदिग्धों की जाँच तथा सभी कर–विभागों में उचित समन्वय होना अत्यावश्यक है। इस प्रकार उन समस्त स्रोतों को समाप्त करने में सफलता मिलेगी, जो काले धन को उत्पन्न करने में सहायता प्रदान करते हैं। इसके फलस्वरूप 'काला धन' हमारी अर्थव्यवस्था के लिए एक नगण्य समस्या होगी और फिर आसानी से कुचली जा सकेगी।

## 5-7 lkjka'k

वास्तव में, भारत में काला धन खूब फल–फूल रहा है। बड़े लोगों के विरुद्ध जैसी कार्यवाई होनी चाहिए नहीं हो पाती। इसका मूल कारण हमारे नैतिक स्तर और सामाजिक मूल्यों में आई गिरावट है। अतः नैतिकता का प्रशिक्षण और व्यवहार प्रत्येक स्तर पर अपेक्षित है।

## 5-8 vH;kl i'u

1. काले धन को परिभाषित कीजिए।
2. भारत में काले धन से मुक्ति के उपाए सुझाइए।
3. भारत में काले धन की मात्रा पर प्रकाश डालें।
4. काला धन और चुनाव प्रक्रिया में क्या संबंध है? स्पष्ट करें।

# bdkbZ&6 Hkz"Vkpkj

नोट

## ikB&l;jpuk


6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 भ्रष्टाचार का अर्थ एवं परिभाषा

6.3 भ्रष्टाचार के स्वरूप

6.4 भ्रष्टाचार के कारण

6.5 भ्रष्टाचार की रोकथाम के उपाय

6.6 सारांश

6.7 अभ्यास प्रश्न


## 6-0 mís';

इस इकाई के अध्ययन से भ्रष्टाचार का अर्थ व उसके विस्तार को समझना तथा भारत में उसके कारणों के बारे में भी आप समझ सकतें है।

इस इकाई को पढ़ने के बाद भ्रष्टाचार की जड़ें हमारे समाज में कितनी गहरी हैं तथा भ्रष्टाचार के स्वरूपों के माध्यम से हम इस अवधारणा को अधिक गहराई से समझ पायेगा। लेकिन निराश होने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि विभिन्न प्रयासों द्वारा भ्रष्टाचार जैसी विकराल समस्या का उन्मूलन कैसे किया जा सकता है, इस इकाई में इसका विश्लेषण भी किया गया है।

अतः भ्रष्टाचार के कारणों व स्वरूपों के बारे में जानकर आप स्वयं को इसके चुंगल में फँसने से कैसे रोक सकते हैं? यह इकाई इससे सम्बन्धित जागरूकता लाने में कुछ हद तक सफल प्रयास होगा।

## 6-1 iLrkouk

औद्योगिक क्रान्ति ने भारतीय समाज के सम्पूर्ण आर्थिक–सामाजिक ढाँचे को परिवर्तित कर दिया है। आज का समाज पूँजीवादी व्यवस्था पर आधारित है और पूँजीवादी व्यवस्था ने मनुष्य को इस सीमा तक भौतिकवादी बना दिया है कि वह व्यक्ति की सफलता का मूल्यांकन उसकी आर्थिक सम्पन्नता से करने लगा है। यही कारण है कि उसकी आर्थिक आवश्यकताएँ एवं महत्वाकांक्षाएँ इस कदर बढ़ गई हैं कि वह जितना मिल गया या मिल रहा है उससे सन्तुष्ट नहीं है और इसलिए वह येन केन प्रकारेण ज्यादा से ज्यादा पाने की लालसा में दिनों–दिन भ्रष्टाचार में लिप्त होता जा रहा है। वह हर गलत साधनों से जल्दी–से–जल्दी अकूत सम्पत्ति का मालिक बनना चाहता है। इस प्रयास में वह अपने नैतिक, मानवीय मूल्यों को भी भूल जाता है।

वर्तमान समय में भ्रष्टाचार एक विश्वव्यापी समस्या बन चुका है। आज प्रत्येक क्षेत्र तथा विभाग में भ्रष्टाचार ही भ्रष्टाचार दिखाई देता है। इससे समाज का कोई भी अंग

**नोट**

अछूता नहीं बचा है। आज सत्ता के शीर्ष से लेकर सबसे निचली पायदान तक भ्रष्टाचार का बोलबाला है। चाहे वह सामाजिक क्षेत्र हो, राजनीतिक क्षेत्र हो, आर्थिक क्षेत्र हो या कोई अन्य, भ्रष्टाचार से कोई अछूता नहीं है। भ्रष्टाचार की यह समस्या दिनों दिन इतनी जटिल होती जा रही है कि इस पर नियंत्रण रखना काफी कठिन है। देश के अधिकांश सत्ताधारी व्यक्तियों एवं प्रशासनिक अधिकारियों के जीवन, व्यवहार, कार्यक्रम एवं विचार भ्रष्टाचार का एक अभिन्न अंग बन गया है। प्रजातंत्र, समाजवाद, स्वच्छ प्रशासन, सामाजिक न्याय एवं राष्ट्रीय चरित्र आदि आज आडम्बर मात्र बन कर रह गए हैं। यहाँ के प्रबुद्ध जन, राजनीतिज्ञ, प्रशासक व अन्य व्यक्ति भ्रष्टाचार पर लम्बी–लम्बी बहस करते हैं एवं व्याख्यान भी देते हैं लेकिन अफसोस तब होता है जब इनकी कथनी व करनी में अन्तर दिखाई देता है। यहाँ की जनता भी अब भ्रष्टाचार को झेलने की आदि हो गई है। भ्रष्टाचार अधिकांश व्यक्तियों के जीवन का अंग बन चुका है। ^xqUukj feMy* ने भ्रष्टाचार को दक्षिण–पूर्व एशिया की ''लोकरीति'' कहा है। इससे पता चलता है कि भ्रष्टाचार को लोग एक 'लोक–रीति' की तरह अपना चुके हैं। इससे निजात पाना अत्यन्त कठिन है।

प्राचीन समय में राज्य व समुदाय का आकार छोटा होने के कारण लोग एक–दूसरे से परिचित होते थे। उनका कार्यक्षेत्र भी सीमित था जिससे भ्रष्टाचार की समस्या इतनी गम्भीर नहीं थी। यद्यपि dkSfVY; ने अपने अर्थशास्त्र में उस युग में पाए जाने वाले विभिन्न प्रकार के भ्रष्टाचारों का उल्लेख किया है। लेकिन उस समय राज्य के कार्यों के सीमित क्षेत्र और लेन–देन के साधनों के अभाव के कारण भ्रष्ट होने या भ्रष्ट करने के अवसर भी सीमित थे। प्राचीन समय में लोग पम्परा व धार्मिक नीतियों के नियमों से बँधे हुए थे। आज ऐसा नहीं है। धीरे–धीरे समय बदला, समुदाय का आकार बढ़ा तो नियंत्रण का अधिकार शासकों के हाथ में आ गया। आज हर कार्य राज्य द्वारा सम्पन्न होता है इसलिए घूस देने की प्रवृति को बढ़ावा मिलता है। आज विभिन्न स्तरों पर जैसे गाँव, कस्बा, शहर, राज्य तथा केन्द्र पर लोकतांत्रिक सरकार के नए स्वरूप और सरकारी क्रियाओं के विस्तार ने विभिन्न प्रकार के भ्रष्टाचार को जन्म दिया है। इस व्यवस्था में कोई हानि किसी को व्यक्तिगत रूप से वहन नहीं करनी पड़ती बल्कि सामूहिक संस्था अथवा राज्य को वहन करनी होती है और ऐसी स्थिति में भ्रष्ट व्यक्ति की पहचान कर पाना भी कठिन है। प्रत्येक विकासशील समाज में भ्रष्टाचार की समस्या किसी न किसी रूप में पनपती है। आज यह एक फैशन बन गया है। जो अधिकारी घूस नहीं लेते या भाई–भतीजावाद नहीं दिखाते उन्हें आऊट–डेटेड मानकर उपहास का पात्र बनाया जाता है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि भ्रष्टाचार की समस्या प्राचीन समय में गम्भीर नहीं थी जबकि आज यह एक गम्भीर समस्या बन चुकी है।

## 6-2 Hkz"Vkpkj dk vFkZ ,oa ifjHkk"kk

eSdkbZoj का कथन कि, 'समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल है' इस तथ्य की पुष्टि करता है कि समाज में सामाजिक सम्बन्धों की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। सामाजिक सम्बन्ध मनुष्य के आचार–व्यवहार के तौर–तरीकों को निर्धारित करते हैं। मानव समाज में पाए जाने वाले आचार–व्यवहार को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है :

1. शिष्टाचार, 2. भ्रष्टाचार। शिष्ट व शालीन व्यवहार शिष्टाचार और इसके विपरीत आचरण को भ्रष्टाचार कहा जाता है। भ्रष्ट का अर्थ निकृष्ट से है और आचार

का तात्पर्य मनुष्य के क्रिया–कलाप से है। इस प्रकार भ्रष्टाचार का अर्थ मानव के निकृष्ट आचार–व्यवहार से हुआ। प्रत्येक समाज अपने सदस्यों के लिए कुछ व्यवहार प्रतिमान निर्धारित करता है और इनका उल्लंघन करना भ्रष्टाचार कहलाता है।

नोट

ifjHkk"kk % भ्रष्टाचार को कई विद्वानों ने परिभाषित किया है जैसे– jkcVl lh- cDl का कहना है, ''कोई प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष व्यक्तिगत लाभ प्राप्त करने के लिए जान–बूझकर प्रदत्त कर्त्तव्य का पालन न करना, राजनीतिक भ्रष्टाचार है। भ्रष्टाचार सदैव किसी स्पष्ट अथवा अस्पष्ट लाभ के लिए कानून और समाज के विरोध में किया जाने वाला कार्य है।'' इस परिभाषा के अनुसार भ्रष्टाचार जानबूझ कर अपने लाभ के लिए किया जाता है। इससे समाज एवं कानून दोनों के नियमों का उल्लंघन होता है।

vkj- ch- xIrk का कथन है कि, ''भ्रष्टाचार का तात्पर्य उन व्यक्तियों द्वारा अर्जित अनुचित लाभ से है, जो सार्वजनिक हितों को तिलांजलि देकर सामाजिक प्रतिष्ठा, पद तथा धन के कारण काननू की आँखों में धूल झोंकने में समर्थ होते हैं।'' इस परिभाषा से यह पता चलता है कि भ्रष्टाचार में लिप्त व्यक्ति अपने लाभ के लिए जन–साधारण के हितों की अवहेलना करते हैं। ऐसे व्यक्ति कानून का उल्लंघन करने से भी नहीं चूकते।

भ्रष्टाचार निरोधक समिति, 1962 ने भ्रष्टाचार के सम्बन्ध में कहा है कि ''एक सार्वजनिक पद (Office) अथवा विशेष स्थिति (Position) के साथ संलग्न शक्ति तथा प्रभाव का अनुचित या स्वार्थपूर्ण प्रयोग ही भ्रष्टाचार है।''

egkj ने भ्रष्टाचार को परिभाषित करते हुए कहा है, ''भ्रष्टाचार कई रूप धारण कर सकता है। जैसे किसी राजनीतिज्ञ द्वारा अपने प्रभाव का किसी सार्वजनिक कार्यतंत्र (Public Functionary) अर्थात् सरकारी कर्मचारी या अधिकारी पर अनुचित उपयोग करना या अपने जातिगत या पारिवारिक बन्धुओं का लाभ पहुँचाना अथवा यह किसी आर्थिक प्रलोभन के कारण भी हो सकता है।''

भ्रटाचार की परिभाषा भारतीय संदर्भ में करते हुए t- ih- feUVjk ने लिखा है कि, ''भ्रष्टाचार वह कार्य है जिसमें अधिकार सम्पन्न व्यक्ति अपने पद, स्तर या प्रभाव का प्रयोग अनुचित लाभ की प्राप्ति के लिए अनुपयुक्त एवं स्वार्थपूर्ण ढंग से करता है।'' इस परिभाषा से तात्पर्य है कि भ्रष्टाचार अधिकतर अधिकार सम्पन्न व्यक्तियों द्वारा किया जाता हैं। Hkkjrh; n.M lafgrk की धारा 161 के अनुसार कोई भी सार्वजनिक कर्मचारी वैध पारिश्रमिक के अतिरिक्त अपने या किसी दूसरे व्यक्ति के लिए जब कोई लाभ इसलिए लेता है कि सरकारी निर्णय पक्षपात ढंग से किया जाए तो यह भ्रष्टाचार है तथा इससे सम्बन्धित व्यक्ति भ्रष्टाचारी है। इससे स्पष्ट होता है कि किसी भी सरकारी कर्मचारी का अपने वैध वेतन के अलावा कुछ भी इस उद्देश्य से ग्रहण करना कि सरकारी निणर्य में पक्षपात किया जाए भ्रष्टाचार कहलाता है

Ýheu एवं tkUl लिखते हैं, ''वे समस्त कार्य जो लोकसेवकों, प्रशासनिक कर्मचारियों तथा आम नागरिकों की ईमानदारी एवं सत्यनिष्ठा का नाश करते हैं और जो प्रभुता एवं अधिकार सम्पन्न व्यक्तियों को अपने सम्मान, कर्त्तव्य परायणता तथा निष्ठापूर्वक दायित्व को निभाने की भावना को त्यागकर घूस एवं अन्य प्रकार के अनुचित लाभों को प्राप्त करने का अवसर या प्रेरणा प्रदान करते हैं।''

नोट

उपर्युक्त परिभाषाओं से निम्न निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं :

1. भ्रष्टाचार एक गम्भीर सामाजिक समस्या है।
2. यह अक्सर अधिकार सम्पन्न व्यक्तियों द्वारा किया जाता है।
3. ऐसे व्यक्ति अपने पद एवं अधिकार का दुरुपयोग अनुचित लाभ प्राप्ति के लिए करते हैं।
4. ऐसे व्यक्ति समाज एवं कानून का उल्लंघन करने के साथ उन्हें प्रभावित करने की क्षमता भी रखते हैं।
5. भ्रष्टाचार में लिप्त व्यक्ति सहयोग और सेवा की भावना को त्याग कर अपने स्वार्थ साधन का कार्य करता है।
6. निजी स्वार्थ के लिए समाज एवं राष्ट्र के हित को भूल जाता है।

b- ,l- ,e- idk'ke ने ''सरकारी सेवार्थियों में व्याप्त भ्रष्टाचार'' का उल्लेख करते हुए निम्न तत्वों की ओर ध्यान दिलाया है :

1. चेतन अवस्था में किया गया कोई भी कार्य जो नियम विरूद्ध है।
2. न्याय या नैतिकता के मान्य सिद्धान्तों के विरूद्ध किया गया कार्य।
3. सार्वजनिक कर्त्तव्य पालन के पक्षपातपूर्ण कार्य।
4. जान–बूझकर कार्य में विलम्ब।
5. जान–बूझकर गुमराह करने के लिए सूचना या रिपोर्ट देना।
6. किसी प्रमाण या तथ्य को दबाना या उसकी गलत व्याख्या करना।
7. जानते हुए भी दूसरे व्यक्तियों के गलत कार्यों को नजरअन्दाज करना।

## 6-3 Hk"Vkpkj d Lo : i

भारतीय समाज के सार्वजनिक जीवन में भ्रष्टाचार का विकास आधुनिक युग की एक महत्त्वपूर्ण देन है। इस समय भारतीय समाज का सम्पूर्ण जीवन भ्रष्टाचार से घिरा हुआ है। भारत में प्रचलित भ्रष्टाचारों का क्षेत्र इतना व्यापक है कि इसके सम्बन्ध में जितना कहा जाए कम है। सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और यहाँ तक कि धार्मिक संस्थाओं में भी भ्रष्टाचार का बोलबाला है। विभिन्न सभागार, पत्रों एवं पत्रिकाओं में भ्रष्टाचार के मामले आए दिन उजागर होते रहते हैं। ''स्पेशल पुलिस स्थापन, दिल्ली (Special Police Establishment, Delhi) द्वारा समय–समय पर प्रकाशित रिपोर्ट से भी पता चलता है कि व्यभिचार, भ्रष्टाचार, उच्च स्तरीय अपराध एवं गैर कानूनी कार्यों में अधिकतर इंजीनियर, डायरेक्टर ऑफ सप्लाइस एण्ड डिस्पोजल्स, वन अधिकारी, सेना अधिकारी, आयकर एवं बिक्रीकर अधिकारी, सार्वजनिक निर्माण विभाग के अधिकारी एवं मंत्रीगण आदि ही फँसे हुए होते हैं। वास्तविकता तो यह है कि सामाजिक जीवन की जटिलता के साथ–साथ भ्रष्टाचार का क्षेत्र भी व्यापक होता जा रहा है। फलस्वरूप अवैध व्यापार, टैक्स की चोरी, घूसखोरी, खाने–पीने की वस्तुओं में मिलावट व कालाबाजारी जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। सरकार को धोखा देकर, कानून की आँखों में धूल झोंक कर अपनी सामाजिक तथा आर्थिक प्रतिष्ठा को बढ़ाने की एक होड़ हमारे समाज में चल रही है। इस प्रकार

यह कहा जा सकता है कि भारतीय समाज में भ्रष्टाचार विभिन्न क्षेत्रों एवं स्तरों पर व्याप्त है जो निम्न प्रकार से है।

नोट

1- vkfFkd {k= e Hk"Vkpkj % आर्थिक क्षेत्र में भ्रष्टाचार का उदाहरण स्टॉक एक्सचेंज में बेईमानी, व्यापार में रिश्वत, भ्रष्ट उपायों से ठेके लेना, झूठे प्रचार और विज्ञापन, कम तोलना, सरकारी टैक्स न देना, फर्मों का दिवाला निकाल कर जनता का पैसा हड़प कर जाना, पेटेन्ट ट्रेड मार्का और कॉपीराइट के नियमों का उल्लंघन, श्रम सम्बन्धी नियमों का उल्लंघन इत्यादि हैं। आज व्यापार में सब तरफ व्यापक मिलावट भ्रष्टाचार का एक उदाहरण है। अधिकतर खाद्य वस्तुओं में किसी न किसी प्रकार की मिलावट पाई जाती है लेकिन सरकारी कर्मचारियों को रिश्वत देकर व्यापारी साफ बच निकलते हैं। कठिनाई से मिलने वाली वस्तुएँ काला बाजारी मार्कर्ट में सब तरफ आसानी से मिल जाती है लगभग सभी वस्तुओं की नकली प्रतिलिपियाँ बाजार में मिल जाती हैं। इसे रोकने का सरकार के पास कोई प्रबन्ध नहीं है। इसके अलावा वर्तमान समय में पूँजीपति अपने कर्मचारियों का आर्थिक शोषण कर अधिक से अधिक धन कमाना चाहते हैं। न केवल पुरुष श्रमिकों का शोषण किया जाता है बल्कि स्त्री तथा बाल श्रमिकों का भी शोषण उद्योगपति करते हैं। गर्भवती महिला श्रमिक को काम से निकाल दिया जाता है। कार्य के दौरान दुर्घटनाग्रस्त होने वाले श्रमिक को मुआवजा देने में आनाकानी करते हैं। कुछ जैसे आपातकाल में भी ये व्यापारी अपने काले कारनामों से बाज नहीं आते बल्कि उस समय तो देश में वस्तुओं की कृत्रिम कमी उत्पन्न कर देते हैं ताकि उन वस्तुओं की कीमतें बढ़ जाएं और वे अधिक से अधिक लाभ कमा सकें। देश पर विदेशी आक्रमण के समय भी ये कालाबाजारी करने से नहीं चूकते। ये नकली दवाइयाँ बेचते हैं। आज बाजार में किसी चीज की शुद्ध ता की गारन्टी नहीं है क्योंकि बिना मिलावट के बाजार में कोई वस्तु होती ही नहीं है। प्रत्येक वस्तु का कोई न कोई विकल्प इन व्यापारियों ने ढूंढ लिया है। बादाम अखरोट की जगह मूंगफली या खोए में शकरकन्द, घी में मिलावट आदि के सैंकड़ों उदाहरण दिए जा सकते हैं। इस प्रकार व्यापारियों द्वारा किए गए भ्रष्टाचार इतने अधिक हैं कि उनकी गिनती करना मुश्किल है। उद्योगपतियों और व्यापारियों के लिए भ्रष्टाचार न केवल अनुपार्जित बड़े लाभों की प्राप्ति का एक सुगम तरीका है वरन् यह उनके व्यवसाय को चलाते रहने का एक आवश्यक साधन भी है।

2- 0;fDr vkj Hk"Vkpkj % बिना अधिकारियों को घूस दिए भी कानून का उल्लंघन किया जा सकता है। जैसे बहुत से दुकानदार कम लाभ दिखाकर कम टैक्स अदा करते हैं। इसी श्रेणी में पढ़े लिखे अपराधी आते हैं। केन्द्रीय राजस्व परिषद का एक अनुमान है कि उच्चरण आय समूह के निर्धारणों द्वारा वार्षिक रूप से लगभग 45 करोड़ का कर छिपाया जाता है। वर्ष 1951 की स्वैच्छिक प्रकटीकरण योजना के अन्तर्गत 20,912 मामलों में स्वयं करदाताओं द्वारा 30 करोड़ रुपए छिपाए गए धन के रूप में स्वीकार किया गया था। इस प्रकार प्रकट की गई राशि उस धनराशि की छह गुनी अधिक थी जो मूलतः होनी बताई गई थी। इससे यह पता चलता है कि व्यक्ति विभिन्न रूपों में करों की चोरी कर भ्रष्टाचार को बढ़ावा देते हैं।

3- i'kklfud {k= e Hk"Vkpkj % प्रशासन में विभिन्न सरकारी दफ्तर, पुलिस, न्यायालय तथा नगरपालिका आदि आती है। इनका अलग–अलग विवरण निम्न प्रकार से दिया जा सकता है :

नोट

3-1 ljdkjh dk;kZy;ksa esa Hkz"Vkpkj % सरकारी अधिकारियों में पाए जाने वाले भ्रष्टाचार के बारे में ihfr'k uUnh का कहना है, ''भ्रष्टाचार का मतलब है कि हर चीज की एक छुपी कीमत होती है। इसकी शुरुआत होती है सरकारी अधिकारियों से, जिनकी गिनती सम्भवतः देश के सबसे अमीर लोगों में होती है। यद्यपि आपका कभी इस ओर ध्यान नहीं जाता, क्योंकि ज्यादातर दौलत नकदी या बेनामी सम्पत्ति के रूप में होती है। एकाध बार यह बाहर निकलती है जब उनमें से किसी–किसी की कमाई इतनी इतराने लगती है कि सी.बी.आई. उन्हें अपने शिकंजे में ले लेती है। सरकार इसे रोकने के लिए वेतन–भत्तों में वृद्धि करती है। लेकिन वास्तव में वह उन अधिकारियों को उनके भ्रष्टाचार, आलसीपन और आम नागरिक को परेशान करने के लिए सौगात देती है। क्योंकि वेतन वृद्धि से न तो उनकी कार्यकुशलता में कोई सुधार या वृद्धि होती है, न ही भ्रष्टाचार में कमी आती है। कई लोगों का यह सोचना है कि इतना पैसा और वह भी उस विशाल धनराशि के अलावा जो वे टेबल के नीचे से कमाते हैं, वे हजारों शासकीय कर्मियों को विलासिता के लिए अनाप–शनाप खर्च हेतु प्रेरित किया है।''

आज अधिकांश सरकारी अधिकारी या कर्मचारी बिना घूस लिए कोई काम नहीं करते। आम जनता का सरकारी अधिकारियों पर से विश्वास उठ गया है। वे किसी भी काम को अपना कर्त्तव्य समझ कर संपादित नहीं करते बल्कि कोई काम भूले–भटके अगर बिना घूस दिए हो भी गया तो उसका अहसान जताते हैं जैसे उन्होंने अपने कर्त्तव्य का पालन नहीं बल्कि जनता को उपकश्त किया है। वरना जब लोग अधिकारियों के पास चक्कर लगाते–लगाते थक जाते हैं तो मजबूरन अपना कार्य सम्पादित करवाने के लिए घूस देनी पड़ती है। जब कोई चरित्रवान् या ईमानदार कर्मचारी इसका विरोध करता है तो अधीनस्थ कर्मचारी या अधिकारी सब उसके विरूद्ध हो जाते हैं और उसे तरह–तरह से परेशान किया जाता है या उसका तबादला करा दिया जाता है। सरकारी अधिकारियों के घूस लेने की प्रवृत्ति के कारण ही गम्भीर से गम्भीर अपराध होते हैं। आज कोई भी अपराधी घूस देकर उनसे नाजायज काम करवा लेता है। क्योंकि ये लोग उच्च अधिकारियों या पुलिस अफसरों को बंधी–बंधाई रकम हर माह पहुँचा कर उनका मुँह बन्द कर देते हैं और बदले में मनमानी करते हैं। इनकी मदद से ही श्वेतपोष अपराध फलता फूलता है।

सार्वजनिक निर्माण विभाग में ओवरसियरो और इन्जीनियरों को रिश्वत दिए बिना कोई भी निर्माण कार्य पास नहीं किया जाता, न ही किसी ठेकेदार का टेण्डर मंजूर हो सकता है। ऐसे लोग कभी कानून की गिरफ्त में आ भी जाते हैं तो फिर भ्रष्ट उपायों से आसानी से निकल जाते हैं। ऐसे लोग कहा करते हैं कि हर आदमी की एक कीमत होती है, वह कीमत चुका कर उससे कोई भी काम लिया जा सकता है।

सरकारी कार्यालयों में भ्रष्टाचार को देखकर यह कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि देश में सबसे अधिक भ्रष्टाचार इनमें ही व्याप्त है। यदि आज इन कार्यालयों में भ्रष्टाचार समाप्त हो जाए और वे ईमानदारी से काम करने लगें तो देश का कायाकल्प हो जाएगा और काफी हद तक देश से भ्रष्टाचार समाप्त हो जाएगा।

3-2 ifyl foHkkx esa Hkz"Vkpkj % पुलिस विभाग में गरीब रिक्शा वाले से लेकर धार्मिक करोड़पति तक सबसे रिश्वत ली जाती है। वास्तव में अपराध फलते–फूलते ही पुलिस के सहयोग से हैं। कोई भी कानून तोड़ने पर पुलिस को पैसा देकर छूटना आसान

बात है। अपराधों को रोकने के लिए कानून तो बन जाते हैं परन्तु उनको क्रियान्वित नहीं किया जाता है। घूस एक ऐसा औजार है जिससे कानून बड़ी आसानी से टूट जाते हैं। कानून तोड़ कर अपराध किए जाते हैं और राजनैतिक कार्यकर्त्ता अपराधियों का साथ देकर समाज के संभ्रांत व्यक्तियों के लिए एक समस्या पैदा करते हैं। पुलिस राजनेता और अपराधियों की सांठ–गांठ के चर्चे आम सुनाई देते रहते हैं।

**नोट**

3-3 U;k;ky;k e Hk"Vkpkj % अन्य कार्यालयों की तरह ही न्याय पालिका का क्षेत्र भी भ्रष्टाचार से अछूता नहीं है। अगर यह कहा जाए कि आज न्याय बिकता है तो गलत नहीं होगा। जिस देश में न्यायालयों में भी व्यापक भ्रष्टाचार हो उसे जनतंत्र की संज्ञा देना जनतंत्र का अपमान करना है। रिश्वत देकर मुकदमें की तारीख बदला लेना, घूस देकर फैसले बदलवाना कोई बड़ी बात नहीं है। न्याय के क्षेत्र में भ्रष्टाचार इतना अधिक है कि भारत में वकील का पेशा ही झूठ बोलने का पेशा माना जाने लगा है। महात्मा गाँधी ने इसीलिए इस पेशे की बहुत निन्दा की थी।

4- fpfdRlk {k= e Hk"Vkpkj % डॉक्टरों को समाज में सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है। मानव को नया जीवन देने वाले के रूप में इनकी गिनती होती है। मरीज इनको भगवान समझता है। लेकिन बहुत अफसोस व शर्मनाक बात है कि आज इस पेशे में भी बहुत सी खामियाँ आ गई हैं। अवैध भ्रूण हत्या व मानव अंगों का व्यापार शव–परीक्षण में गलत रिपोर्ट देना तथा जाली प्रमाण पत्र देकर अपराधी को फाँसी के तख्ते से बचाना है। दवा की दुकान व जाँच प्रयोगशालाओं से कमीशन लेना, सरकारी कर्मचारियों के फर्जी दवाओं के बिलों पर हस्ताक्षर करना आदि कई अपराध इन श्वेतपोष डॉक्टरों द्वारा किया जाना आम बात है। अधिक से अधिक धन कमाने की लालसा में वे अपनी सारी नैतिकता व मानवता को ताक पर रख देते हैं।

5- /kkfeZd {k= e Hk"Vkpkj % धर्म के नाम पर धार्मिक स्थलों पर अनैतिक कार्यों को धर्म के क्षेत्र में पाए जाने वाले भ्रष्टाचार के रूप में देखा जा सकता है। लोग मन्दिर एवं धर्मशालाएँ धार्मिक भावना से बनवाते हैं लेकिन इनकी देखभाल करने वाले पंडे व पुजारियों द्वारा भोले–भाले भक्तों का शोषण किया जाता है। धर्म एवं अन्धविश्वास के नाम पर लोगों को डरा कर पैसा वसूलना, महिलाओं का यौन शोषण, उन्हें देवदासी बनाना आदि घटनाओं से धार्मिक भ्रष्टाचार का पता चलता है। आज बहुत से धार्मिक स्थल गांजा, अफीम आदि नशीले पदार्थों का अड्डा बन गए हैं।

6- lkekftd {k= e Hk"Vkpkj % सामाजिक भ्रष्टाचार अनाथालयों, विधवा आश्रमों, नारी निकेतनों, कामकाजी महिला छात्रावासों, गौशालाओं तथा ऐसे अनेक सार्वजनिक संस्थाओं में देखा जा सकता है। आजकल शिक्षण संस्थाओं में भी व्यापक भ्रष्टाचार देखने में आता है जैसे– कन्याओं की शिक्षण संस्थाएँ, नाट्य व संगीत संस्थाओं में उनका यौन शोषण, कम वेतन देकर अधिक वेतन की रसीद लिखवाना, पास कराने के नाम पर पैसा वसूलना, विद्यार्थियों से बढ़ा–चढ़ा कर फीस लेना, बनावटी खर्च दिखाकर सरकार से अनुदान वसूलना आदि। कहीं–कहीं तो केवल कागजों में ही विद्यालय संचालित होता दिखा कर वर्षों सरकार से सहायता वसूल कर ली जाती है। अधिकतर निजी विद्यालयों और कॉलेजों में प्रबन्ध समिति के सदस्य अपने ही रिश्तेदारों व जान–पहचान के लोगों को भर कर अपने हित में निर्णय करवाते रहते हैं और विद्यादान के नाम अपनी तिजौरियाँ भरते रहते हैं।

नोट

7- jktufrd {k= e Hk"Vkpkj % राजनीति में पूरी तरह से फैल चुके भ्रष्टाचार के कारण ही आज यह हर क्षेत्र में व्याप्त हो चुका है। आज छोटे से छोटे राजनीतिक कार्यकर्ता से लेकर सत्ता के शीर्ष पद पर आसीन व्यक्ति तक सभी भ्रष्टाचार के दलदल में फँसे हुए हैं। आए दिन समाचार पत्रों में मंत्रियों के भ्रष्टाचार में लिप्त होने की खबरें छपती रहती हैं। यह बात अलग है कि इनमें से अधिकतर मामले या तो दबा दिए जाते हैं या सम्बन्धित व्यक्ति को बचा लिया जाता है। बड़े राजनीतिक नेता नीचे के स्तरों तक भ्रष्टाचार फैलाते हैं। बड़े नेताओं द्वारा छोटे कार्यकर्ताओं को मोहरे की तरह इस्तेमाल किया जाता है। लेकिन वे भी इन आकाओं से संरक्षण प्राप्त कर भ्रष्टाचार में लिप्त रहे हैं, पकड़े जाने पर सुरक्षित बच भी जाते हैं।

सरकार की जिन नीतियों से व्यापारियों को लाभ पहुँचता है, वही नीति सरकार अपनाती है क्योंकि ये ही लोग चुनाव के समय उनकी आर्थिक मदद करते हैं। राजनीतिक अपराधीकरण तो आज भारतीय राजनीति का पर्याय बन गई है। आज जिनके पास बाहुबल है, वही सांसद या विधायक बन जाते हैं, ये लोग अपराधिक चरित्र वाले होते हैं, मूल्यों की राजनीति से इनका कोई सरोकार नहीं होता। कहते हैं कि भारत देश को अंग्रेजी के ''पी'' अक्षर ने बरबाद कर दिया है– (1) Population, (2) Poverty, (3) Politicians.

इसके अतिरिक्त संगठित अपराधों के पीछे राजनीतिज्ञों का बहुत बड़ा हाथ रहता है जिसके कारण भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिलता है। संगठित अपराधों में ठगी, जुआ, तस्करी, अपहरण व आतंकवाद को शमिल किया जा सकता है। जिस शहर में राजनीतिक भ्रष्टाचार अधिक होता है उसमें गैर–कानूनी काम अधिक होते हैं और अपराधों पर कोई कार्यवाही भी नहीं की जाती। इस प्रकार कुछ अपराध तो राजनीति कार्यकर्ताओं के भ्रष्ट होने के कारण ही पनपते हैं। उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भ्रष्टाचार के विविध स्वरूप हैं जो कि परस्पर सम्बन्धित हैं।

## 6-4 Hk"Vkpkj d dkj.k

सामान्य रूप से भ्रष्टाचार के मुख्य कारण निम्नलिखित हैं :

1- Hkkfrdoknh vkn'k % आधुनिक युग भौतिकवादी युग है। जिसमें धन एवं भोग–विलास को प्राथमिकता दी जाती है। जिसके पास भी ये भोग–विलास के साधन होते हैं उन्हें समाज में सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है, उनकी समाज में ऊँची प्रतिष्ठा होती है। धन अर्जित करने की अभिलाषा प्रत्येक व्यक्ति के मन में होती है, इसके लिए वह कोई भी नाजायज या गैर कानूनी तरीके को अपनाने में नहीं हिचकिचाता। वह सिर्फ धन कमाना चाहता है। यहाँ तक कि भ्रष्टाचार का बोलबाला धार्मिक स्थलों पर भी देखने को मिलता है। अक्सर मन्दिर के पंडे व पुजारी भक्तजनों द्वारा चढ़ाए गए प्रसाद में से अधिकांश भाग निकाल लेते हैं और उसे दुकानदारों को बेच देते हैं। इस प्रकार भ्रष्टाचार सर्वत्र व्याप्त है और इसका कारण समाज द्वारा भौतिकवादी मूल्यों को सर्वोपरि मानना है।

2- vR;f/kd ifrLi/kk % वर्तमान प्रतिस्पर्धात्मक युग में जीवन के हर क्षेत्र में व्यक्ति को कड़ी प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ता है। जब इस प्रतिस्पर्धा की दौड़ में व्यक्ति जायज या कानूनी तरीके से सफल नहीं हो पाता तब वह भ्रष्ट तरीकों को भी अपनाने से नहीं हिचकते हैं, लोगों में यह गलत धारणा घर कर गई है कि प्रेम, राजनीति

व व्यापार में कुछ भी अनुचित नहीं है। इसलिए वे प्रतिस्पर्धा के दौरान सभी अनुचित व भ्रष्ट तरीके अपनाते हैं। इस प्रकार के विकृत आदर्श के कारण भ्रष्टाचार पनपता व बढ़ता है।

3- tulkf[;dh; fofHkUurk,¡ % शिक्षा, व्यापार व रोजगार के कारण हर जगह विभिन्न राष्ट्र, प्रान्त, लिंग, प्रजाति, जाति एवं भाषा के लोग निवास करते पाए जाते हैं, उन सब में विभिन्नता एवं गतिशीलता के कारण वे कभी आपस में परिचित नहीं हो पाते, उनमें घनिष्ठता नहीं आ पाती। इसलिए अपरिचितों के बीच वह भ्रष्ट आचरण करने में नहीं हिचकिचाता, परिणामस्वरूप मनमाने ढंग से कार्य करते हैं, उन पर कोई नियंत्रण नहीं रहता। वह अपरिचित व्यक्ति के घूस लेने में किसी प्रकार की झिझक महसूस नहीं करता।

4- vi;kZIr osru % चतुर्थ श्रेणी के सरकारी कर्मचारियों में भ्रष्टाचार का एक कारण अपर्याप्त वेतन है। वे भ्रष्ट तरीकों से वेतन की कमी को पूरा करने की कोशिश में लगे रहते हैं। काम निकालने वाले लोग सबसे पहले इनसे ही सम्पर्क करते हैं क्योंकि ये कर्मचारी थोड़े से पैसों से ही व्यक्ति का काम करवाने में सक्षम होते हैं। अक्सर यह देखा गया है कि सरकारी कार्यालयों में बड़े–बड़े अफसरों से काम करवाने के लिए चपरासियों से ही सम्पर्क किया जाता है। रेलवे, कचहरी, तहसील, सप्लाई का दफ्तर आदि में कर्मचारी दो–दो, चार–चार रुपए की घूस लेकर काम करवा देते हैं।

5- iztkrkaf=d 'kklu O;oLFkk % आज हमारे देश की शासन व्यवस्था लोकतांत्रिक पद्धति पर आधारित है जिसमें दलबन्दी को विशेष महत्व दिया जाता है। हमारे देश में विभिन्न प्रकार के राजनीतिक दल पाए जाते हैं। जिनके कारण रिश्वत, पक्षपात, बेइमानी तथा दूसरी कई बुराईयों का बाजार गर्म हो जाता है। प्रजातंत्र में जनता द्वारा चुने हुए लोग ही शासन करते हैं चाहे उनके शासन करने की योग्यता न हो। इसलिए प्रजातंत्र में भ्रष्ट उपायों से मतदाताओं से वोट खरीदे जाते हैं। जब ऐसे लोग सरकार बनाते हैं तो वे अपनी सत्ता को बनाए रखने के लिए हर प्रकार के अनुचित तरीकों का सहारा लेते हैं। चुनावों में खर्च किए गए पैसे को वे सत्ता में आने के बाद फिर से भ्रष्ट आचरण द्वारा बटोरने की कोशिश की जाती है। इतना ही नहीं, वे जिन दल के वोटों के चुना जाता है उस को हर प्रकार से लाभ पहुँचाने की चेष्टा करता है।

6- iztkrkaf=d ljdkj dh fodr O;oLFkk % आमतौर पर प्रजातांत्रिक पद्धति में सत्ता परिवर्तन होने के साथ ही सरकारी अधिकारियों एवं कर्मचारियों का स्थानान्तरण कर अपने विश्वास–पात्र अधिकारियों को पदस्थापित किया जाता है जिससे कि वे उनके हर प्रकार के भ्रष्ट आचरण को प्रश्रय दें, बिना किसी दोष या कारण के अधिकारियों या कर्मचारियों का तबादला कर देना भ्रष्टाचार का जीता–जागता उदाहरण है। चुनाव में जीत कर आए नेता अपनी मनमानी या हितों के साधन के लिए इस प्रकार का काम करके भ्रष्टाचार को बढ़ावा देते हैं।

7- jktuhfrd vkpkj&lafgrk dk vHkko % वर्तमान समय में बड़े–बड़े अनेकों राजनैतिक संगठन तो हैं लेकिन उन पर नियंत्रण रखने के लिए आवश्यक आचार–संहिता का विकास नहीं किया गया। जिस दल के हाथ में सत्ता होती है वे सत्ता का जमकर दुरूपयोग करते हैं। मंत्री, सांसद, उद्योगपति व उच्च अधिकारी सब मिल जुल कर अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए सत्ता एवं पद का दुरूपयोग करते हैं और जनता देखती रहती है।

नोट

8- mPpkf/kdkfj;k dk lg;kx % हमारे देश में भ्रष्टाचार की व्यापकता का एक कारण इसमें उच्च पदासीन अधिकारियों का सहयोग भी है। ये अधिकारी स्वयं तो भ्रष्टाचार हैं ही, इसमें अन्य लोगों की सहायता भी करते हैं। इस प्रकार ये लोग तस्करी, कालाबाजारी, मिलावट व जालसाजी आदि अवैध कार्य करने में इसलिए सफल हो जाते हैं क्योंकि उन्हें यह विश्वास होता है कि उच्च सरकारी अधिकारी, राजनेता, मंत्री व विधायकों का हाथ उनकी पीठ पर है।

9- cnyrs eY; % सामाजिक परिवर्तन के साथ ही समाज के मूल्य भी बदल रहे हैं। प्रायः देखा जाता है कि ईमानदार और कर्त्तव्यनिष्ठ लोग दुःखमय एवं दरिद्रता का जीवन जी रहे हैं तथा भ्रष्ट व्यक्ति सभी भौतिक सुखों को भोग रहा है। इसके अतिरिक्त आज नैतिक मूल्यों का इतना अवमूल्यन हो गया है कि दुश्चरित्र व्यक्ति को भ्रष्ट आचरण करने में कोई संकोच भी नहीं होता। ऐसे ही लोगों के कारण भ्रष्टाचार बढ़ता है और उनकी देखा–देखी दूसरे लोग भी अनैतिक और समाज–विरोधी आचरण की ओर प्रवृत्त होते हैं।

10- ljdkj dk 0;kid fØ;kdyki@ljdkjh dk;ks dk foLr`r {ks= % आज सरकारी कार्य क्षेत्र इतना विस्तृत होता जा रहा है कि कोई भी काम एक विभाग या कार्यालय द्वारा सम्पन्न नहीं किया जा सकता। इसके कारण किसी भी कार्य को करने की प्रक्रिया भी उतनी ही लम्बी हो जाती है जिससे भ्रष्टाचार को फलने फूलने का अवसर मिलता है क्योंकि ऐसी स्थिति में ही राजकीय कर्मचारी या अधिकारी को अपने पद का दुरूपयोग करने के अवसर मिलते हैं। इसका एक कारण यह भी है कि राज्य के कार्यों के लिए कोई एक व्यक्ति उत्तरदायी नहीं होता। बड़े–बड़े राजनीतिज्ञ व अधिकारी इस व्यवस्था का लाभ उठाकर सामुदायिक कोषों का उपयोग अपने हितों के लिए करते हैं। जहाँ कहीं भी शक्ति एवं स्व–निर्णय का अवसर साथ–साथ मिलता है, वहाँ अधिकारों के दुरूपयोग की सम्भावनाएँ बनी रहती हैं।

11- dkuwuh nks"k o dBksj n.M dk vHkko % प्रजातांत्रिक व्यवस्था होने के कारण भारतीय कानून में कई खामियाँ हैं। जिनके कारण भ्रष्ट व्यक्ति साफ–साफ बच जाता है। इसके अलावा भ्रष्टाचार के विरूद्ध जो कानून है वह कठोर होने के बावजूद उसमें भी कोई न कोई रास्ता निकल ही आता है और व्यक्ति बच जाता है। कठोर दण्ड के अभाव के कारण भी व्यक्ति को कानून का कोई भय नहीं है। सरकारी विभागों में भ्रष्टाचार में पकड़े जाने पर कर्मचारी को मात्र तबादला करने के अलावा और कोई कठोर दण्ड नहीं दिया जाता। इससे उन्हें खुल कर भ्रष्टाचार करने में कोई हिचक नहीं होती। यदि भ्रष्टाचारी व्यक्ति को तुरन्त नौकरी से अलग करने के अतिरिक्त जेल व जुर्माने का कठोर दण्ड दिया जाए तो बहुत लोग भ्रष्टाचार में प्रवृत्त होने का साहस करेंगे।

12- tkx:drk dk vHkko % जनता में भ्रष्टाचार के प्रति जागरूकता नहीं है। अक्सर लोग यह सोच लेते हैं कि जो कुछ हो रहा है उससे उनका कोई लेना–देना नहीं है क्योंकि व्यापक सरकारी कार्यप्रणाली के कारण भ्रष्टाचार से किसी को कोई व्यक्तिगत हानि कम ही होती है अतः वे गलत कार्यों को देखकर भी अनदेखा कर देते हैं, लोगों की इस प्रवृत्ति के कारण भ्रष्टाचार को और अधिक बढ़ावा मिलता है।

13- Hk"Vkpkj mUeyu lEcU/kh dk;l djus okyh fdlh l{ke lxBu dk vHkko % दो कारक भ्रष्टाचार में विशेष वृद्धि करने वाले हैं : (1) भ्रष्ट एवं अकुशल सरकारी कर्मियों के साथ कठोर व्यवहार करने की आंशिक अनिच्छा और (2) भारत के सार्वजनिक सेवाओं में प्रदत्त अधिक संरक्षण जो अन्य प्रगतिशील देशों की अपेक्षा बहुत ही अधिक है। इस कारण से भ्रष्टाचार को जड़ से उखाड़ फैंकने के लिए कोई भी सक्षम संगठन नहीं जिसके कारण इसका उन्मूलन नहीं हो रहा है। इसीलिए कहा गया है कि ''जब तक कोई भी भ्रष्ट करने की इच्छा तथा क्षमता रखने वाला व्यक्ति विद्यमान है तब तक भ्रष्टाचार का अस्तित्व नहीं मिट सकता है।

## 6-5 Hk"Vkpkj dh jkdFkke d mik;

भारत में फैले हुए भ्रष्टाचार के विभिन्न पहलुओं के विवेचन से स्पष्ट होता है कि भ्रष्टाचार का उन्मूलन किए बिना देश में किसी सुधार की आशा नहीं की जा सकती। इसके लिए सबसे प्रमुख प्रयास लोगों के नैतिक स्तर को ऊँचा करना है जिससे वे समाज में अपने उत्तरदायित्व को समझें और अनुचित उपायों का सहारा लेने से बचे रहें। फिर भी विभिन्न क्षेत्रों में भ्रष्टाचार को दूर करने के लिए कुछ विशिष्ट सुझाव दिए जा सकते हैं जो इस प्रकार है :

1- jktuhfrKk d ufrd Lrj e l/kkj % जनतंत्र में भ्रष्टाचार का उन्मूलन बहुत कुछ राजनैतिक दलों पर निर्भर करता है क्योंकि इन राजनैतिक दलों के ही लोग चुने जाकर देश की सरकार बनाते हैं। यदि देश के राजनैतिक दलों का नैतिक स्तर ऊँचा किया जाए तो यह आशा की जा सकती है कि भ्रष्टाचार दूर हो सकेगा। इसके लिए सबसे पहले सत्तारूढ़ राजनैतिक दल को उदाहरण उपस्थित करना चाहिए क्योंकि वही यदि भ्रष्ट होगा तो जनता भी उनका अनुसरण करेगी। इसके अलावा चुनाव के समय वे भ्रष्ट तरीकों का सहारा न लें, दल–बदल की नीति का परित्याग करें, चुनाव संहिता का कठोरता से पालन किया जाए। केवल योग्य, सक्षम, कुशल व ईमानदार व्यक्ति को ही प्रत्याशी बनाया जाए। मतदाताओं की भी जिम्मेदारी है कि वे राजनैतिक दलों के बहकावे में न आकर केवल योग्य व्यक्ति का ही चुनाव करें। इसके लिए एक प्रभाव यह हो सकता है कि मतदान करने का अधिकार केवल एक विशिष्ट शिक्षा स्तर के व्यक्ति को ही होना चाहिए। राजनीतिज्ञों में सुधार के लिए आवश्यक है कि निम्न तत्वों को शामिल किया जाए :

(1) नेतृत्व के लिए योग्यता व शिक्षा स्तर का निर्धारण।

(2) राजनीतिज्ञों का नैतिक स्तर व चारित्रिक स्तर।

(3) राजनीतिक अपराधीकरण पर रोक।

(4) जन–जागरुकता का विस्तार।

2- iqfyl foHkkx e l/kkj % पुलिस विभाग में सुधार के दो लाभ होंगे– एक तो स्वयं पुलिस कर्मचारियों में से भ्रष्टाचार दूर होगा दूसरे पुलिस के ईमानदार और सतर्क होने से जनता में भ्रष्टाचारी व्यक्ति अपनी हरकतों से बाज आएंगे। पुलिस भी ईमानदारी और निष्ठा से अपराधियों के विरूद्ध कार्यवाही करे तो भ्रष्टाचार का सफाया निश्चित है। इसके अतिरिक्त पुलिस विभाग में भ्रष्टाचार को दूर करने के लिए आवश्यक है कि उनके

**नोट**

वेतनमान व सेवा दशाओं में भी सुधार किया जाए ताकि वे घसू आदि की ओर आकर्षित न हों।

3- **ljdkjh foHkkxksa esa lq/kkj %** इसके लिए जरूरी है कि कर्मचारियों के आचरण पर कठोर नजर रखना तथा भ्रष्ट पाए जाने पर ऐसे व्यक्ति के विरूद्ध कठोर कार्यवाही करना। इसी तरह अन्य विभागों के अधिकारी जैसे आयकर, बिक्रीकर, आबकारी एवं कस्टम, सार्वजनिक निर्माण विभाग, रेलवे अधिकारी आदि जिनका सीधा सम्बन्ध जनता से होता है लेकिन यही लोग उनसे लेन–देन या रुपए पैसे लेकर ही काम करते हैं। अतः इनका ईमानदार होना आवश्यक है। साथ ही उनके ऊपर भ्रष्टाचार निरोधक विभाग को भी कड़ी नजर रखें।

4- **U;k;ikfydk esa lq/kkj %** न्यायाधीश पक्षपात रहित व बिना किसी राजनैतिक दबाव और सिफारिशों से प्रभावित हुए न्याय करें। आज बिना घूस के न्यायालय में कोई काम नहीं होता। वकील भी धन के प्रभाव में आकर खतरनाक से खतरनाक अपराधी को भी छुड़ा लेते हैं। अतः भ्रष्टाचार को रोकने के लिए न्यायपालिका से भ्रष्टाचार को समाप्त किया जाए।

5- **ns'k dk vkfFkZd fodkl %** अर्थव्यवस्था में सुधार व भ्रष्टाचार को समाप्त करने के लिए निम्न सुधार किए जा सकते हैं– (1) निर्धनता का उन्मूलन, (2) आरक्षण का अंत, (3) रोजगार के अवसरों में वृद्धि, (4) समाज में व्यावसायिक नैतिकता में वृद्धि। यद्यपि यह विश्वासपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि आर्थिक विकास करने से भ्रष्टाचार समाप्त हो जाएगा लेकिन इससे भ्रष्टाचार को रोकने या कम करने में मदद मिल सकती है।

6- **iz'kklfud lq/kkj %** प्रत्येक विभाग भ्रष्टाचार रोकने के लिए वातावरण का निर्माण करे। सत्यनिष्ठा के मार्ग से विचलित करने वाले किसी भी प्रयास को हतोत्साहित करें। प्रशासनिक विलम्बों को यथा सम्भव समाप्त किया जाए। प्रशासकीय कुशलता में वृद्धि, सेवा भावना का विकास, प्रशासकीय नैतिकता का विकास आदि उपायों से भी भ्रष्टाचार को रोका जा सकता है।

7- **lkekftd ewY;ksa esa ifjorZu %** आज समाज में धनी व्यक्ति का आदर किया जाता है। यदि इस मूल्य में संशोधन किया जाए तो समाज का हित होगा। यदि धनी व्यक्ति को आदर का पात्र न मान कर समाज उस व्यक्ति को आदर दे जो ईमानदार हो, कानूनों को माने फिर चाहे वह धनी हो या निर्धन। उन व्यक्तियों को जो ऐसे निशिद्ध कार्य या अपराध करें, अलग कर दिया जाना चाहिए और उनके नामों का प्रचार खुल कर करना चाहिए।

8- **o/kkfud mik; %** उन लोगों के साथ कठोर व्यवहार किया जाए जो घूस देते हैं अथवा जो उत्सवों, उपहारों व भेंट या भोजों आदि के माध्यम से परोक्ष रूप से सरकारी कर्मचारियों व अधिकारियों को प्रभावित करने का प्रयास करते हैं।

9- **tudY;k.k dh Hkkouk %** व्यक्ति अपने स्वार्थ को समुदाय के हित के सामने त्याग दे, वो ऐसा कार्य करे कि भ्रष्टाचार कम हो और समुदाय का कल्याण अधिक। जनता ईमानदार बने और कानूनों का पालन करे। जनकल्याण के आदर्शों को कार्यरूप देने से ही भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाया जा सकता है।

नोट

10- Hk"Vkpkj fojk/kh fu;ek dk dk;kfUor dju okyk mi;Dr lxBu% भ्रष्टाचार निवारण के लिए केन्द्रीय सतर्कता आयोग इन अभियोगों को अधिक कुशलता से निपटा सके इसके लिए उसे अधिक व्यापक एवं स्पष्ट अधिकार दिए जाएं। मामलों की छानबीन के लिए केन्द्रीय जाँच ब्यूरो की सहायता ली जा सकती है। लोक सभा व राज्य सभा के सदस्यों के लिए भी एक आचार संहिता तैयार की जानी चाहिए और उन्हें अधिकारियों पर अनुचित दबाव नहीं डालना चाहिए। न्यायपालिका में व्याप्त भ्रष्टाचार के लिए सभी उच्च न्यायालयों में एक सतर्कता संगठन स्थापित किया जाए। फिर भी यह एक दीर्घकालीन समस्या है जिसके लिए ठोस, स्थिर तथा निरन्तर प्रयास आवश्यक है।

## 6-6 lkjk'k

उपरोक्त विवरणों से पता चलता है कि भ्रष्टाचार को समाप्त करने के लिए व्यापक स्तर पर विभिन्न प्रयासों की आवश्यकता है। भ्रष्टाचार उन्मलून के लिए केवल कानून बना देने से संतोषजनक परिणाम सामने नहीं आ सकते क्योंकि भ्रष्टाचार आज समाज में विकराल रूप धारण कर चुका है। इसीलिए कानूनों को सख्ती से लागू भी किया जाए।

## 6-7 vH;kl i'u

1. भारतीय लोक जीवन में प्रचलित भ्रष्टाचार के विविध रूपों का विश्लेषण कीजिए। इसके निराकरण के लिए सुझाव दीजिए।
2. भारतीय समाज में बढ़ते हुए भ्रष्टाचार के प्रमुख कारणों की विवेचना कीजिए।
3. भारत के लोक जीवन में व्याप्त भ्रष्टाचार का विश्लेषण कीजिए।

# bdkbZ&7 lkekftd U;k;

नोट

## ikB&lajpuk

7.0 उद्देश्य
7.1 प्रस्तावना
7.2 सामाजिक न्याय का अर्थ
7.3 सामाजिक न्याय के आधार का विश्लेषण
7.4 सामाजिक न्याय के संबंध में अंबेडकर की भूमिका
7.5 समावेशी विकास बनाम सामाजिक न्याय
7.6 सामाजिक विकास की आवश्यकता क्यों ?
7.7 समावेशी विकास की माप
7.8 सारांश
7.9 अभ्यास प्रश्न

## 7-0 mís';

इस इकाई से आप निम्न बातों को जान पाएँगेः

- सामाजिक न्याय का अर्थ; और
- सामाजिक न्याय के बारे में अम्बेडकर के विचार।

## 7-1 izLrkouk

सामाजिक न्याय समाज या राज्य के अंदर संपत्ति, परिसंपत्ति, विशेषाधिकार और लाभ हेतु वितरण न्याय का एक विनियोग है। न्याय का सार सबकी भलाई की प्राप्ति है। सामाजिक न्याय के अंतर्गत एक न्यायसंगत और निष्पक्ष सामाजिक व्यवस्था का निर्माण होता है और समुदाय के प्रत्येक सदस्य हेतु न्याय प्रदान करना है। समाज में असमानताओं को दूर करना और समाज के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक मामलों में सभी लोगों को समान अवसर देने की बातें आदि शामिल है।

भारतीय समाज को जातियों और समुदायों में बाँटा गया है, जो श्रेष्ठता और निम्नता के आधार पर समाज की विशिष्टता में बाधा और दीवार का निर्माण करता है। भारत के संदर्भ में सामाजिक न्याय जाति व्यवस्था के सामाजिक अन्याय का प्रतिफल है। ऐसी सामाजिक असमानता न केवल समाज अपितु भारतीय लोकतंत्र के लिए भी एक गंभीर खतरा पैदा करती है। पारम्परिक हिंदू जाति के वर्गीकरण के अंतर्गत पिछड़ा वर्ग और महिलाएँ सदियों से पीड़ित रही हैं क्योंकि उन्हें समानता एवं शिक्षा से दूर रखते हुए उन्नति के अवसरों से वंचित किया गया है। भारतीय समाज के संदर्भ में सामाजिक न्याय इस प्रकार के लोगों को लाभ, सुविधाएँ, रियायतें, विशेषाधिकार और विशेष अधिकार

प्रदान करता है जिन्हें सदियों से ये सुविधाएँ नहीं दी गई हैं। यदि उन उपेक्षित प्रतिभाओं को विकसित करने हु अवसर प्रदान नहीं किए जाते हैं तो भारतीय समाज में सामाजिक असंतुलन बना रहेगा।

नोट

## 7-2 lkekftd U;k; dk vFk

न्याय की तुलना में सामाजिक न्याय की अवधारणा व्यापक है। "सामाजिक" शब्द समाज के साथ जुड़ा हुआ है। इसका व्यापक दायरा है, जिसमें सामाजिक मुद्दे, समस्याएं और सुधार शामिल है जिसके चलते इसमें सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन शामिल है। इसमें समाज के दमित और वंचित वर्गों की उन्नति हेतु किए गए प्रयास शामिल हैं। इस कारण यह सोशल इंजीनियरिंग की माँग करता है, जिसमें समाज को बदलने हेतु सामाजिक समस्याओं से निपटने का प्रयास होता है। कानून के माध्यम से इस प्रकार समाज में सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन लाए जा सकते हैं।

सामाजिक न्याय का उद्देश्य राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक लोकतंत्र का निर्माण करना तथा वर्ग और जाति के भेदभाव को समाप्त करना है। यह लोकतंत्र द्व ारा प्रदत्त व्यक्तिगत स्वतंत्रता के साथ समाजवाद के सिद्धांतों को जोड़ता हैं इसलिए "सामाजिक" शब्द का अर्थ व्यापक है, समाज से जुड़ा हुआ है और इसमें यह बात भी शामिल है कि समाज को कैसे व्यवस्थित किया जाना चाहिए? इसके सामाजिक मूल्यों और संरचनाओं को कैसा होना चाहिए?

विभिन्न दृष्टिकोणों से न्याय की अवधारणा को परिभाषित किया जा सकता है। प्लेटों जो एक ग्रीक दार्शनिक थे। उन्होंने न्याय को सामाजिक जीवन के वास्तविक सिद्धांत के रूप में देखा। अंग्रेजी के राजनीतिक वैज्ञानिक अर्नेस्ट बार्कर के अनुसार न्याय, प्लेटो के विचारों की द्वारसंधि और उनके प्रवचन का पाठ था। अपनी पुस्तक द रिपब्लिक में प्लेटों ने कैफलस, पॉलेमारर्कस और ग्लौकोन जैसे दोस्तों के साथ वार्ता के माध्यम से न्याय की अवधारणा पर चर्चा की है।

कैफलस का कहना है कि सत्य बोलने और किसी के कर्ज का भुगतान करने से न्याय होता है जबकि पोल्लेमर्कस व्याख्या करते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति को उसके लायक उचित चीजों को देने से न्याय होता है। ''न्याय एक कला है जिससे मित्रों को अच्छाई और दुश्मनों को बुराई मिलती है।'' ग्लौकोन का तर्क है कि न्याय ''कमजोर का फायदे'' में है। प्राचीन ग्रीस के कुतर्की थ्रेसिमाचस न्याय को ताकतवरों के फायदे के रूप में अर्थात् दूसरे शब्दों में जिसकी लाठी उसकी भैंस के रूप में देखते हैं।

इन सभी परिभाषाओं को प्लेटों ने खारिज कर दिया क्योंकि उनमें न्याय के रूप में बाहरी और कृत्रिमपन था। प्लेटों हेतु न्याय प्राथमिक नैतिक मूल्य है और आंतरिक रूप से दूसरे आवश्यक और नैतिक गुणों के साथ जुड़ा हुआ है।

अरस्तु एक दूसरे यूनानी दार्शनिक ने ''वितरित न्याय'' की अवधारणा का प्रस्ताव दिया है। अरस्तू का वितरित न्याय वितरण के उस सिद्धांत का नाम है जिसके द्वारा राज्य के नागरिकों के बीच वस्तुओं, सेवाओं, सम्मान और कार्यालय वितरित किए जाते हैं। परंतु वितरण का सिद्धांत एक व्यक्ति के मूल्य या पुण्य पर आधारित है। योग्य और गैर–योग्य के बीच अंतर को सिद्धांत द्वारा पहचाना और संरक्षित किया जाता है। यह असमान की

नोट

साम्यता को दर्शाता है और यह सुनिश्चित करता है कि किसी व्यक्ति के अधिकार, कर्तव्यों और पुरस्कार उनकी योग्यता और सामाजिक योगदान के अनुरूप हैं कि नहीं। इस प्रकार अरस्तु का वितरण न्याय, समानता का दूसरा नाम है। 'न्याय' शब्द का तात्पर्य लोगों का उचित व्यवहार होता है जिसका अर्थ है : न्याय और तर्कसंगतता के सिद्धांतों के आधार पर कानून, जो सभी के लिए वर्ग, लिंग, जाति या जाति भेदभाव के बावजूद समान अधिकार और न्याय का कानून को मुखरित करता है। इसका तात्पर्य है कि राज्य को सही ढंग से और पूरी तरह से लोगों से व्यवहार करना चाहिए, यह नैतिक रूप से उचित होना चाहिए, और इसमें सिर्फ कानूनों को लागू करना चाहिए और उन्हें उचित रूप से अधिनियमि करना चाहिए।

'सामाजिक न्याय' शब्द दो शब्दों से मिलकर बना हैः सामाजिक और न्याय। इनमें से प्रत्येक का एक विशिष्ट अर्थ होता है और जब वह आपस में मिलता है तो एक विशेष अर्थ व्यक्त करता है। जॉन राल्स के अनुसार, सामाजिक न्याय की अवधारणा इस प्रकार हैः

सभी सामाजिक प्राथमिक वस्तुओं – स्वतंत्रता और अवसर, आय और धन, और आत्म सम्मान का आधार बराबर वितरित किया जाता है जब तक कि इनमें से किसी भी या सभी वस्तुओं का असमान वितरण कम से कम इष्ट का लाभ नहीं होताहै।

एक न्यायविद रोजको पाउंड कानूनी रूप से संरक्षित तीन हितों के बारे में वर्गीकरण करते हैं'

- सार्वजनिक हित
- सामाजिक हित
- निजी हित।

भारत के सर्वोच्च के पूर्व न्यायाधीश न्यायमूर्ति वी.आर. कृष्ण अय्यर कहते हैं कि ''सामाजिक न्याय नहीं है, परंतु विवेक है, न कि ऐसे दस्तावेजों से मौखिक उधार लेना, बल्कि सर्वोच्च कानून की सामाजिक शक्ति प्राप्त करना है।'' सामाजिक न्याय लोक उन्मुख होता है, कानूनी न्याय कैनलाइज्ड होता है जिसे कानून द्वारा नियंत्रित और प्रदान किया जाता है।

सामाजिक न्याय की अवधारणा बहुआयामी है और इसे कानून, दर्शन और राजनीति विज्ञान के विद्वानों द्वारा भिन्न–भिन्न तरीके से देखा गया है। सामाजिक न्याय शब्द बहुत व्यापक है और यह क्या है और क्या नहीं है के बीच संतुलन कायम करने का चक्र है। सामाजिक न्याय का तात्पर्य सभी नागरिकों को सामाजिक, भौतिक और राजनीतिक संसाधनों का न्यायसंगत वितरण है। इसमें सभी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक असमानताओं और भेदभाव को दूर करने का प्रयास किया जाता है और इसके तहत सामाजिक मामलों और आर्थिक गतिविधियों में सभी पुरूषों और महिलाओं को समान अवसर प्रदान किए जाते हैं। सामाजिक न्याय सामाजिक अन्याय का प्रतिफल है, यह सभी के लिए स्थिति और अवसर की समानता सुनिश्चित करना चाहता है। आम तौर पर इसे 'कमजोर, गरीब, वृद्ध, निराश्रित, बच्चों, महिलाओं और समाज में अन्य विशेषाधिकार प्राप्त लोगों का अधिकार' के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

नोट

आमतौर पर न्याय का विचार प्लेटों और अरस्तु के प्राचीन दर्शन से चालू होता है। व्यक्तिगत स्वतंत्रता, स्वतंत्रता और अधिकारों के संदर्भ में सामाजिक न्याय का दर्शन किया गया है, जो प्राचीन और मध्यकालीन समाजों में काफी हद तक गौण थे। सामाजिक न्याय की आधुनिक अवधारणा न्याय के नैतिक और नीतिपरक सिद्धांत पर समाज रूप से आधारित है और साथ ही साथ यह मानव अधिकारों के विचार और समानता के सिद्धांत पर भी आधारित है। सामाजिक न्याय के सिद्धांत न्याय के विचार पर आधारित हैं और सामाजिक न्याय अधिक व्यापक तथा सूक्ष्म है।

## 7-3 lkekftd U;k; ds vk/kkj dk fo'ys"k.k

### lkekftd U;k; dh jkWYlokn h vo/kkj.kk

सामाजिक न्याय के सिद्धांत विश्लेषण में जॉन रॉल्स को अग्रदूत के रूप में देखा गया है। जॉन रॉल्स ए थ्योरी ऑफ जस्टिस (1971) में सामाजिक न्याय शब्द का आधुनिक प्रयोग अधिक व्यापक तौर पर किया गया है जिसमें उन्होंने न्याय को निष्पक्षता माना है, जिसे विभाजित न्याय के रूप में देखा जाना चाहिए। वह न्याय को मूलभूत अधिकारों के तहत मानते हैं जिन्हें प्राकृतिक अधिकार भी माना जाता है। न्याय के अन्य आधुनिक सिद्धांतकारों की तरह रावल अलग–अलग स्तरों की बजाय सामाजिक स्तर पर न्याय देने की बात करते हैं। उनका तर्क है कि न्याय का वितरण करते समय व्यक्तियों के प्राकृतिक अधिकारों को समाज में प्रचलित सामाजिक मूल्यों से बेहतर माना जाना चाहिए। वह सामाजिक न्याय को ''समूह'' के कल्याण की एक आकस्मिक अवधारणा हेतु लागू तर्कसंगत विवेक के सिद्धांत'' के रूप में परिभाषित करते है (रॉल्स, 1999:21)

रावल हेतु वितरित न्याय का मूलभूत आधार सामाजिक मूल्यों और प्राकृतिक अधिकारों के बीच अंतर है। वे लिखते हैं कि :

निष्पक्षता के रूप में न्याय प्राकृतिक अधिकार सिद्धांत के लक्षण हैं। यह न केवल प्राकृतिक गुणों पर मौलिक अधिकारों को आधार प्रदान करता है और उनके आधार को सामाजिक मानदंडों से अलग करता है, अपितु यह समान न्याय के सिद्धांतों के आधार पर व्यक्तियों को अधिकार प्रदान करता है और इन सिद्धांतों में एक विशेष बल होता है जिसके खिलाफ अन्य मूल्य सामान्य रूप से प्रबल नहीं हो सकते। हालांकि विशिष्ट अधिकार पूर्ण नहीं हैं, समान स्वतंत्रता की प्रणाली व्यावहारिक रूप से अनुकूल परिस्थितियों में मुखरित होती है (रॉल्स, 1999:443)।

### lkekftd U;k; ds lac/k esa MfoM feyj

रावल की भांति अन्य सामाजिक सिद्धांतकारों ने सामाजिक न्याय के विभिन्न तत्वों की पहचान की है। अन्य सिद्धांतकार हालांकि मोटे तौर पर रॉल्स के ''डिस्ट्रिब्यूट न्याय'' के साथ सहमत है, फिर भी उन्होंने विभिन्न आधारों, सिद्धांतों या सामाजिक न्याय के परिणामों पर जोर दिया है। उदाहरण के तौर पर डैविड मिलर (2003) वितरित और प्रतिवादी न्याय के सिद्धांत अलग हैं। वे सामाजिक न्याय को ज्यादा चुनौतीपूर्व और सामाजिक मानते हैं (जिस उन्होंने बहुलवादी बनाया है।) सामाजिक न्याय संदर्भ

नोट

और स्थिति पर निर्भर होता है (इसे परिस्थितिजन्य बनाया है।) उन्होंने सामाजिक न्याय के तीन सिद्धांतों का प्रस्ताव किया है :

- सामंजस्यपूर्ण समुदायों की जरूरत
- सहायक संगठनों में गुण
- नागरिकता में समानता

इस प्रकार सामाजिक न्याय मानव रिश्तों के माध्यम से निर्धारित होता है (मिलर, 2003:26–27)।

जॉस्ट और केज के सामाजिक न्याय की व्यापक परिभाषा में वितरण, प्रक्रियात्मक और पारस्परिकता की बातें शामिल है। उनके अनुसार, सामाजिक न्याय की बातें इन मामलों (वास्तविक या आदर्श) से संबंधित है जिसमें :

(क) समाज में लाभ और बोझ कुछ आबंटन सिद्धांत (या सिद्धांतों के सेट) के अनुसार फैले हैं

(ख) प्रक्रिया, मानदंड और नियम जो राजनीतिक और अन्य प्रकार के निर्णय लेने वाले व्यक्तियों और समूहों के बुनियादी अधिकार, स्तंत्रता और अधिकारों को संरक्षित करते हैं तथा

(ग) मनुष्य (और शायद अन्य प्रजातियों) की गरिमा का सम्मान न केवल प्राधिकारियों द्वारा किया जाता है बल्कि अन्य संबंधित सामाजिक कलाकारों सहित आम नागरिकों द्वारा किया जाता है (जॉस्ट, जे और ए.सी. केज 2010:1122)।

विभिन्न विद्वानों के अनुसार सामाजिक न्याय के आधार को मार्टिन पॉवले, निक जॉन्स और एलिसन ग्रीन (2011:3) ने संक्षेप में प्रस्तुत किया है। सामाजिक न्याय को विभिन्न विचारों के माध्यम से देखा जा सकता है, जैसे कि पैटर्न, ऐतिहासिक, प्रक्रियात्मक, प्रक्रियात्मक या पात्रता के माध्यम से। पैटर्न का वितरण मोटे तौर पर ''उनके एक्स के अनुसार प्रत्येक को'' पर आधारित होता है, जहां पर एक्स सिद्धांत, आवश्यकता, योग्यता या डेजर्ट की भांति होता है। पैटर्न अंकगणित समानता (बराबर हिस्से में एक केक काटने की भाँति) या आनुपातिक समानता (जहाँ असमान हिस्से को किसी अन्य सिद्धांत पर उचित बताया गया हो) पर आधारित हो सकते हैं। प्रतियोगी सिद्धांत इस प्रकार के हो सकते हैः

- योग्यता, गुण, मूल्य, पात्रता, आवश्यकता (प्लाट एवं अन्य, 1980),
- आवश्यकता, मूल्य, कार्य और योग्यता (टिटमस, 1968),
- जरूरत, लोक हित और योग्यता में योगदान, (रनसीमैन, 1966, हार्वे, 1973), तथा
- अधिकार, गुण और जरूरतत (मिलर, 1976)।

जो. आर. फेगिन ने आग्रह किया है कि ''सामाजशास्त्रियों को अपनी जड़े सामाजिक न्याय हेतु प्रतिबद्ध समाजशास्त्र में पुनः खोजना होगा।'' वे कहते हैं कि–

..... सामाजिक न्याय के लिए संसाधन इक्विटी, निष्पक्षता और विविधता हेतु सम्मान, और साथ ही साथ सामाजिक दमन के मौजूदा रूपों के उन्मूलन की जरूरत है। सामाजिक न्याय उन लोगों के संसाधनों के पुनर्वितरण पर जोर देता है जिन्होंने अन्यायपूर्ण रूप से उन्हें उन लोगों हेतु प्राप्त किया है जो उचित रूप से उनके लायक है,

और इसका मतलब है निर्णय लेनेमें वास्तविकतता में लोकतांत्रिक भागीदारी की प्रक्रियाओं को सुनिश्चित करना है (फेगिन, 2001:5)।

पूँजीवाद हेतु एक विरोधी प्रणाली की वकालत करते हुए, वह मानते हैं कि सामाजिक न्याय न केवल एक मौलिक मानवीय अधिकार है, बल्कि किसी समाज हेतु दीर्घकालीन तौर पर स्थायी होना जरूरी है (फेगिन, 2001:11)।

**नोट**

## 7-4 lkekftd U;k; d lc/k e vcMdj dh Hkfedk

मसौदा समिति के अध्यक्ष के रूप में, अम्बेडकर स्वतंत्र भारत के लिए संविधान का मसौदा तैयार करने में निकट रूप से जुंडे थे। अछूतों के निर्विवाद प्रवक्ता के रूप में, अम्बेडकर ने अनुसूचित जातियों के हितों को ध्यान में रखते हुए संविधान का मसौदा तैया किया। वास्तव में, अम्बेडकर संविधान सभा में आम सहमति की एक पाटी थी कि 'पिछड़ा वर्ग' शब्द तीन सिद्धांत घटकों कों शामिल करेगा :

- अनुसूचित जाति
- अनुसूचित जनजाति
- अन्य पिछड़ा वर्ग

अंबेडकर ने एक नए संविधान के जनादेश के तहत देश में सभी पिछड़े वर्गों के लिए सामाजिक न्याय हासिल करने के कार्य में स्वयं को संबोधित किया।

### ekfyd vf/kdkj

अम्बेडकर को भारतीय संविधान में अधिकार प्रपत्र की आवश्यकता के बारे में आश्वसत थे। वह विशेष रूप से अल्पसंख्यकों और सामान्य रूप से सभी नागरिकों के लिए मौलिक अधिकारों की एक विस्तृत प्रणाली की लगातार मांग कर रहे थे। अल्पसंख्यकों के नेता के रूप में सामाजिक न्याय के लिए उनकी लड़ाई उनके संघर्ष में मुख्य मुद्दा थी। उन्होंने यह भी आश्वस्त किया था कि जब तक सामाजिक न्याय स्वयं संविधान में शामिल नहींकिया जायेगा तब तक सुरक्षित नहीं हो पायेगा।

पहला कार्य जो कि संविधान सभा ने स्वयं को संबोधित किया था, वह एक बिल ऑफ राइट्स का गठन था जिसे सामाजिक न्याय और गैर—भेदभाव के अनुसार गौरव का स्थान मिला था। विधानसभा और समितियों में विभिन्न चरणों के माध्यम से अधिकारों का व्यापक चार्टर जल्द ही विकसित हुआ। भारतीय संविधान में , भेदभाव को रोकने और सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने के उद्देश्य से प्रावधान मूलभूत अधिकार के रूप में जाना जाता है। भारतीय संविधान में मूलभूत अधिकार किसी अन्य संविधान में विधेयक अधिकारों से अधिक व्यापक हैं, क्योंकि भारत एक विषम समाज है, इसमें धर्मों और संस्कृति और सामाजिक स्थितियों की विविधता है। उनका उद्देश्य न केवल नागरिकता की सुरक्षा और गुणवत्त प्रदान करना है, बल्कि नागरिकता, न्याय और निष्पक्षता के विशिष्ट मानकों को भी प्रदान करना है।

भारतीय संविधान में निहित मौलिक अधिकार निम्न हैं :

- कानून के समक्ष समानता की गारंटी देना और कानून का समान संरक्षण (अनुच्छेद 14)

नोट

- धर्म, वंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव पर प्रतिबंध। (अनुच्छेद 15),
- सार्वजनिक रोजगार के मामले में समान अवसर (अनुच्छेद 16)
- अस्पृश्यता का उन्मूलन (अनुच्छेद 17)
- इंसानों को खरीदना और बेचना और श्रमिकों को जबरदस्ती काम पर लगाने पर प्रतिबंध। (अनुच्छेद 23)

हमारे समाज में सामाजिक असमानता, सामाजिक कलंक और सामाजिक असमर्थता को समाप्त करने के अम्बेडकर के प्रयास, इन प्रावधानों में प्रकट हुए।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि अम्बेडकर और हमारे संविधान के अन्य संस्थापकों ने इस बात पर बल दिया कि संविधान का उद्देश्य एक समतावादी समाज स्थापित करना था जहाँ अधिकारों की गारंटी केवल कुछ लोगों को नहीं बल्कि सभी को दी गई थी। वे दृढ़ विश्वास करते थे कि समान अवसर का अधिकार का कोई अर्थ नहीं है, जब तकिक समाज में व्यापक असमानताएं कम नहीं हो जाती। राजनीतिक स्वतंत्रता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता तुच्छ हैं जब भूख के डर से लोगों की विशाल संख्या को कुछ लोगों की इच्छा पर मजबूर होना पड़ता है। निजी संपत्ति का अधिकार उन लोगों के लिए निरर्थक है जिनके सिर पर कोई छत नहीं है। अवकाश का अधिकार या किसी पेशे को चुनने की स्वतंत्रता का बेरोजगार व्यक्ति के लिए कोई अर्थ नहीं है।

मानव अधिकार के संबंध में भारतीय संवैधानिक प्रारूप उल्लेखनीय है, जो समस्या समाधान के रूप में एक महत्वपूर्ण और अद्वितीय प्रयास है। यह एक ओर राजनैतिक और नागरिक अधिकारों के बीच तथा दूसरी ओर सामाजिक और आर्थिक अधिकारों के बीच अथवा व्यक्तिगत अधिकारों और सामाजिक न्याय की मांगों के बीच संतुलन बनाने की कोशिश करता है।

## jkT; uhfr d fun'kkRed fl)kr

जहां मौलिक अधिकारों ने मनमानी राज्य कार्रवाई के खिलाफ व्यक्ति के अधिकारों और स्वतंत्रता की गारंटी दी है, वहीं निदेशात्मक सिद्धां आर्थिक और सामाजिक लक्ष्यों पर जोर देना चाहते हैं। संविधान संस्थापकों का यह इरादा था कि भारतीय संविधान में ऐसी अवधारणाओं और सिद्धांतों को शामिल किया जाए जो सरकारी गतिविधि को निर्धारित करें, जिससे देश में एक सामाजिक और आर्थिक बदलाव आए।

अम्बेडकर ने निम्नलिखित शब्दों में राज्य नीति के निदेशात्मक सिद्धांतों का बचाव किया:

जिसे भी शक्ति प्राप्त होगी, उसे स्वतंत्रता नहीं होगी कि वह इसका प्रयोग अपनी इच्छा से करें। इसके प्रयोग में, उन्हें उन निर्देशों का सम्मान करना होगा जिन्हें निदेशात्मक सिद्धांत कहा जाता है। वह उन्हें अनदेशा नहीं कर सकता है। उसे अदालत में अपने उल्लंघन के लिए जवाब देने की आवश्यकता नहीं है, लेकिन चुनाव के समय मतदाताओं के सामने उन्हें जवाब देना होगा। इन निदेशात्मक सिद्धांतों की महत्त तब सामने आएगी जब सही सरकार सत्ता में आएगी।''

निदेशात्मक सिद्धांत एक कल्याणकारी राज्य और किसी भी आर्थिक शोषण के बिना एक सामाजिक व्यवस्था बनाने का प्रयास करते हैं। अनुच्छेद 38 में इन सिद्धांतों का सार शामिल है :

नोट

राज्य प्रभावी रूप से सुरक्षा और संरक्षण द्वारा लोगों के कल्याण को बढ़ावा देने का प्रयास करेगा एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था जिसमें न्याय, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक राष्ट्रीय जीवन के सभी संस्थानों को सूचित करेगा।

## fo'k"k iko/kku

भारतीय संविधान के भाग XVI के प्रावधानों को विशिष्ट वर्गो–अनुसूचित जाति और जनजाति, एंग्लो–भारतीय और सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़ा वर्ग से संबंधित विशेष प्रावधानों के रूप में वर्णित किया जा सकता है।

- अनुच्छे 330 में प्रावधान किया गया है कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों के लिए लोक सभा सदन में सीट आरक्षित होगी।
- अनुच्छेद 331 राष्ट्रपति द्वारा नामांकन से एंग्लो–भारतीय समुदाय के प्रतिनिधित्व का प्रावधान करता है, यदि उस समुदाय का पर्याप्त रूप से लोक सभा में प्रतिनिधित्व नहीं किया गया है।
- अनुच्छे 332 प्रावधान करता है कि राज्यों की विधान सभाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए सीटें आरक्षित होगी।
- अनुच्छेद 333 राज्यपाल द्वारा नामांकन द्वारा एंग्लो भारतीय समुदाय के प्रतिनिधित्व के लिए प्रावधान करता है, यदि राज्यों के निचले सदनों में इस समुदायों का पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व नहीं किया गया है।
- अनुच्छेद 334 के अनुसार, इस तरह के आरक्षण की अवधि संविधान के प्रारंभ से दस साल के रूप में तय की गई है।
- अनुच्छे 335 में यह कहा गया है कि ''संघ अथवा किसी राज्य के कार्य के संबंध में सेवाओं और अपदों पर नियुक्तियां करने में प्रशासन की दक्षता के अनुरक्षरण के साथ सम्राजस्य में अनुसूचित जातियों और जनजातियों और जनजातियों के सदस्यों के दावे पर विचार किया जायेगा।''
- अनुच्छेद 336 एंग्लो–भारतीय समुदाय के लिए कुछ सेवाओं में नियुक्तियों के लिए विशेष प्रावधानों से संबंधित है।
- अनुच्छेद 337 एंग्लो–भारीय समुदाय के लिए शैक्षिक अनुदान से संबंधित है।
- अनुच्छेद 338 अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त विशेष अधिकारी का प्रावधान करता है, जिसका कर्तव्य अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों के सुरक्षा उपायों से संबंधित सभी मामलों की जांच करना और राष्ट्रपति को रिर्पोट करना है। अनुच्छेद 338 के उद्देश्य के लिए अनुच्छेद 340 (1) के अंतर्गत जैसा विहित किया जाए, आयोग से एक रिर्पोट की प्राप्ति पर राष्ट्रपति द्वारा जैसे विहित किए जाये ऐसे अन्य पिछड़े वर्गों के संदर्भ सहित अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों का संदर्भ समझा जाए।

नोट

- अनुच्छेद 339 अनुसूचित क्षेत्र के प्रशासन और अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के संबंध में रिर्पोट करने के लिए एक आयोग की नियुक्ति का प्रावधान करता हैं।
- अनुच्छेद 340(1), भारत के क्षेत्र में सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग की स्थितियों और उन कठिनाइयों को जांचने के लिए जिसके तहत वे श्रम करते हैं की जांच करने और शिफारिश करने के लिए कि उनकी स्थिति आदि में सुधार करने और ऐसी कठिनाइयों को दूर करने के लिए संघ या किसी राज्य द्वारा कदम उठाया जाना चाहिए हेतु राष्ट्रपति द्वारा एक आयोग की नियुक्ति का प्रावधान करता है।

## 7-5 lekos'kh fodkl cuke lkekftd U;k;

### lekos'kh fodkl

भारतीय संविधान की प्रस्तावना सम्यक मूलक समाज की स्थापना पर बल देती है जिससे कि सामाजिक सशक्तिकरण को मजबूत बनाने के साथ–साथ सामाजिक न्याय को प्रभावी बनाकर देश की एकता और अखंडता को अक्षुण्ण बनाया रखा जा सके। इस अनुक्रम में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही सामाजिक आर्थिक विकास कार्यक्रम की श्रृंखला शुरू की गई। उल्लेखनीय है कि समता मूलक समाज की स्थापना करना भारतीय संस्कृति की एक सनातन विशेषता रही है। सर्वजन हिताय और सर्वजन सुखाय को ही ध्यान में रखकर भारतीय नीति–निर्माता, राजा–महाराजा अपनी शासन प्रणाली को संचालित किया करते रहे।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद अप्रैल 1948 में घोषित प्रथम औद्योगिक नीति तथा 1951 में शुरू हुई नियोजन प्रक्रिया में भी समता मूलक एवं संतुलित विकास तथा समाजवादी समाज की स्थापना पर बल दिया गया।1951–1991 तक देश में प्रचलित नेहरू–महालनोबिस मॉडल तथा 1991 के बाद से लागू राव–मनमोहन मॉडल दोनों में ही संतुलित एवं समतामूलक विकास की अवधारणा को अपनाया गया। परंतु ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में सरकार ने अपनी रणनीति को विकासमूलक बनाते हुए समावेशी विकास की परिकल्पना को सामने लाया।

सरकार समतामूलक विकास के साथ न्याय आधारित विकास की अवधारणा को आगे बढ़ाना चाहती है जो समोवशी विकास के माध्यम से ही किया जा सकता है। भारत में समावेशी विकास की अवधारणा का दर्शन 11वीं पंचवर्षीय योजना में ही हो जाता है। हालांकि 12वीं पंचवर्षीय योजना में इस पर विशेष बल दिया गया है और उसके मुख्य उद्देश्यों में ही समावेशी विकास को सम्मिलित किया गया। समावेशी विकास की अवधारणा 2007 में एशियाई विकास बैंक द्वारा प्रतिपादित की गई। वर्तमान में भी समावेशी विकास के माध्यम से सरकार सामाजिक सशक्तिकरण को मजबूत करके एक नये भारत का निर्माण करना चाहती है।

## l eko'kh fodkl vkj ml d fofo/k i{k

नोट

समावेशी विकास आर्थिक विकास का वह बहुआयामी दर्शन है जो सर्वजन हिताय एवं सर्वजन सुखाय तथा सम्यक न्याय पर आधारित है। समावेशी विकास में गाँधी के रामराज्य तथा प्लेटो के आदर्श राज्य की परिकल्पना को सम्मिलित किया गया है। समावेशी विकास विकास वह मॉडल है जिसके अंतर्गत सर्वाधिक कमजोर व्यक्तियों और सर्वाधिक पिछड़े हुए क्षेत्रों को प्रमुखता प्रदान करते हुए समग्र विकास पर बल दिया जाता है। समावेशी विकास से संबंधित प्रमुख अवधारणात्मक एवं तथ्यात्मक पक्ष निम्नवत् है

समावेशी विकास का वितरणात्मक पक्ष जो केवल इससे सम्बन्धित नहीं है कि आर्थिक विकास दर या वृद्धि दर क्या हैं, कितनी ऊँची हैं और न केवल इससे सम्बन्धित हैं कि जीवन की गुणवत्ता में सुधार हो रहा है या नहीं और न केवल इससे सम्बन्धित है कि मानव विकास सूचकांक ऊपर उठ रहा है या नहीं बल्कि इससे सम्बन्धित है कि उच्च आर्थिक वृद्धि दर से अर्थव्यवस्था का अधिक बड़ा वर्ग जो गरीब तथा जीवन की आवश्यक आवश्यकताओं की सन्तुष्टि से भी वंचित है, लाभान्वित हो रहा है या नहीं बल्कि समावेशी विकास विकास का वह प्रारूप है जो यह सुनिश्चित करता है कि विकास का लाभ गुणात्मक और मात्रात्मक रूप में सभी क्षेत्रों के सभी लोगों को प्राप्त होगा इसका मुख्य लक्ष्य समाज के सबसे कमजोर व्यक्ति और देश के दूर–दराज क्षेत्रों में रहने वाले लोगों का विकास सुनिश्चित करना।

उच्च आर्थिक विकास दर या वृद्धि दर अपने में यह सुनिश्चित नहीं करता है कि विकास समावेशी है। अन्य शब्दों में आर्थिक वृद्धि को साध्य के रूप में नहीं लिया जाना चाहिए बल्कि सभी लोगों को संवृद्धि पहुँचाने के माध्यम के रूप में लिया जाना चाहिए। भारत का अपना विगत वर्षों का अनुभव तथा अन्य देशों का अनुभव यह स्थापित करता है कि आर्थिक वृद्धि गरीबी निवारण की आवश्यक दशा है, पर्याप्त दशा नहीं है।

दूसरे शब्दों में आर्थिक वृद्धि को तेज करने वाली नीतियों के साथ पूरक रूप चाहिए जो यह सुनिश्चित करती हैं कि अधिक से अधिक लोग आर्थिक वृद्धि की प्रक्रिया में जुटते हैं तथा कुछ ऐसी प्रणाली विकसित हो जिसके द्वारा आर्थिक विकास से उत्पन्न लाभ उन लोगों को प्राप्त हो सके जो बाजार प्रक्रिया में भाग नहीं ले पाये हों तथा पीछे छूट गए हों। इसीलिए 11वीं और 12वीं पंचवर्षीय योजना में ऐसी ही विकास प्रक्रिया पर बल दिया गया जिसे समावेशी विकास कहा गया।

समावेशी विकास में लक्षित वर्ग ग्रामीण और शहरी गरीब तथा कमजोर वर्ग हैं जिसमें भूमिहीन श्रमिक, सीमान्त तथा छोटे कृषक, अनुसूचित जाति तथा जनजाति, अल्पसंख्यक समुदाय के कमजोर तथा निर्धन, रिक्साचालक आदि सम्मिलित हैं जो आर्थिक विकास की सामान्य प्रक्रिया विशेष रूप से बाजार व्यवस्था पर आधारित विकास प्रक्रिया में मुख्य धारा से कम लाभान्वित होते हैंपरन्तु समोवशी विकास की प्रक्रिया इस आधारभूत अवधारणा पर आधारित है। कि समाज के सभी वर्ग, सभी क्षेत्र, स्त्री तथा बच्चे, बिना किसी विभेद के विकास की प्रक्रिया से लाभान्वित होंसमावेशी विकास की प्रक्रिया के तीन विशेष पहलू होंगे – आर्थिक विकास की ऊँची वृद्धि दर, उत्पन्न लाभ का बंटवारा तथा वित्तीय समेकन।

नोट

## 7-6 lkekftd fodkl dh vko';drk D;k \

समावेशी विकास की अवधारणा काफी व्यापक एवं बहुआयामी है। समावेशी विकास में समतामूलक विकास, संतुलित क्षेत्रीय विकास तथा समग्र आर्थिक विकास पर ध्यान दिया जाता है। इसके माध्यम से विभिन्न वर्गों, विविध क्षेत्रों, विविध प्रदेशों एवं महिला–पुरुष सभी वर्गों एवं जातियों का विकास करने की समन्वित रणनीति अपनाई जाती है। समन्वित विकास के माध्यम से एक ऐसे कल्याणकारी राज्य की स्थापना की जाती है जिससे विकास का लाभ समाज के सबसे अंतिम पायदान पर बैठे व्यक्ति तथा देश दूर–दराज इलाके को प्राप्त हो जाये समावेशी विकास की अवधारणा की व्यापक विवेचना अग्रलिखित शीर्षकों के अंतर्गत प्रस्तुत है।

### fu/kurk mUeyu ,oa fodkl

निर्धनता भारत की एक प्रमुख सामाजिक आर्थिक समस्या है। इस समस्या के समाधान के लिये सरकार निरंतर प्रयत्नशील है और निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम (उत्पादक एवं गैर उत्पादक कोटि) प्रायोजित कर रही हैं उल्लेखनीय है कि पाँचवी पंचवर्षीय योजना में निर्धनता उन्मूलन को उद्देश्य के रूप में पहली बार सम्मिलित किया गया और उसके बाद लगातार किसी न किसी रूप में सभी पंचवर्षीय योजनाओं में निर्धनता उन्मूलन को केंद्र में रखा जाता रहा है। परंतु अभी तक इसमें पर्याप्त सफलता नहीं मिली है।

### fodkl ,oa jkstxkj

समावेश विकास के अंतर्गत रोजगार सृजन भी एक महत्वपूर्ण विषय वस्तु है। रोजगार के माध्यम से लोगों के जीवन स्तर में सुधार तथा समाजिक असंतुलन को दूर करने की रणनीति अपनायी जाती हैं। वर्तमान में सरकार रोजगार सृजन को प्राथमिकता क्रम में काफी ऊपर रखती है। रोजगार के नये अवसरों का सृजन करना तथा रोजगार के प्रारूप में परिवर्तन करके रोजगार के अवसरों में वृद्धि करना चाहती है।

### xkeh.k ,oa 'kgjh fo"kerk dk lekIr djuk

समावेशी विकास की अवधारणा को सफल बनाने के लिये ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र में विद्यमान विषमताओं एवं विसंगतियों को न्यून ही नहीं करना है बल्कि चरणबद्ध तरीके से इनकों समाप्त भी करना है ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों की आय कम है। इस कारण उनका जीवन स्तर काफी निम्न है। आय कम होने के कारण उपभोग में वृद्धि नहीं हो रही हैं राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण कार्यालय के अनुसार ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में उपभोग अनुपात धीरे–धीरे बढ़ रहा है। परंतु यह शहरी क्षेत्र में अधिक वृद्धि व्यक्त कर रहा है।

## 7-7 leko'kh fodkl dh eki

समावेशी विकास की माप का सर्वाधिक प्रभावी तरीका देश के विकास को इसके सबसे निर्धन हिस्से (जनसंख्या का निचला 20%) के संदर्भ में मापना होता है। समावेशी विकास मूलतः जनसंख्या के निचले चतुर्थांश के वास्तविक विकास से संबंधित है। यह

इससे संबंधित है कि तीव्र आर्थिक वृद्धि के कारण कहाँ तक यह वर्ग लाभान्वित हुआ है। कहाँ तक इनकी गरीबी में कमी हुई है तथा इनकी जीवन की गुणवत्ता में सुधार हुआ। सामाजिक क्षेत्र के विभिन्न घटकों, मुख्यतया शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषक खाने की उपलब्धता, सामाजिक सुरक्षा आदि में होने वाला सुधार इनकी जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाता है तथा यदि इसके साथ ही यदि इस वर्ग की प्रति व्यक्ति आय बढ़ रही हो तो यह कहा जा सकता है कि समावेशी विकास हो रहा है। समावेशी विकास की माप निम्न आधारों पर की जा सकती है।

- प्रति व्यक्ति आय,
- मानव विकास सूचकांक,
- बहुआयामी गरीबी सूचकांक,
- सामाजिक तथा ग्रामीण क्षेत्र में होने वाला व्यय।

ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में विद्यमान विसंगतियों को समाप्त करने के लिय ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि तथा कृषि आधारित उद्योगों का विकास करने के साथ–साथ आधारभूत संरचना क्षेत्र का विकास करना होगा उल्लेखनीय है कि इस संदर्भ में चलाया जा रहा भारत निर्माण कार्यक्रम को अधिक प्रभावी बनाया जाना चाहिए। यहीं नहीं शहरों में मूलभूत सुविधाओं हीं शहरों में मूलभूत सविधाओं का स्तर काफी निम्न है। वर्तमान में सरकार शहरों तथा गाँवों के विकास के लिए स्मार्ट सिटी मिशन तथा स्मार्ट विलेज मिशन योजना को चलाई रही है। इसी क्रम श्याम प्रसाद मुखर्जी रूर्बन मिशन चलाया जा रहा है। इसके साथ–साथ ग्रामीण एवं शहरी विषमता कम करने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में आधारिक सुविधाओं का विकास किया जा रहा है तथा रोजगार के अवसर उपलब्ध कराया जा रहा है। जिससे गाँव से शहरों की ओर पलायन रूक सके।

## lrqfyr {k=h; fodkl

समावेशी विकास के अंतर्गत संतुलित क्षेत्रीय विकास की अवधारणा भी महत्वपूर्ण स्थान रखती है। जिन क्षेत्रों में आधारभूत संरचनात्मक सुविधाएँ अधिक होती है या सुरक्षा की समस्या नही होती है, उन क्षेत्रों में घरेलू तथा विदेशी निवेश दोनों ही अधिक होता है। यही नहीं उन क्षेत्रों में रोजगार सृजन भी अधिक होता है। फलतः क्षेत्रीय असंतुलन उत्पन्न हो जाता है। अतः क्षेत्रीय असंतुलन को दूर करने के लिए आधारभूत संरचना क्षेत्रक त्वरित गति से टिकाऊ विकास किया जाना चाहिए। इसके साथ ही सुरक्षात्मक वातावरण को भी धनात्मक बनाया जाना चाहिए। निवेशकों के मन से भय को निकालने का प्रयास किया जाना चाहिए।

आधारभूत संरचना के अंतर्गत भौतिक एवं सामाजिक दोनों प्रकार की आधारभूत संरचना का विकास किया जाना चाहिए। भौतिक आधारभूत संरचना क्षेत्र में विद्युत सबसे अधिक महत्वपूर्ण है और यह पूर्णतया राज्यों के हाथ में होता है। फलतः इनका विकास पर्याप्त मात्रा में नहीं हो पता हैं अतः विद्युत क्षेत्र के विकास के लिये केंद्र तथा राज्यों के मध्य सहमति ज्ञापन पर हस्ताक्षर होना चाहिए तथा इस क्षेत्र में सार्वजनिक निजी सहभागिता को बढ़ावा देना चाहिए।

सामाजिक संरचना का विकास अति आवश्यक है। अतः शिक्षा पेयजल स्वास्थ्य तथा आवासीय क्षेत्र में सुधारात्मक कदम उठान उठाने की आवश्यकता है। इनकी गुणवत्ता पर भी पर भी ध्यान देना होगा।

नोट

## vu|lfpr tkfr] vu|lfpr tutkfr rFkk vU; fiNM oxl dk çkRlkgu dh vko';drk

समावेश विकास की अवधारणा सर्वजन कल्याण एव समता मूल विकास पर आधारित हैं इन वर्गों के विकास के लिय स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही कानून बनाये जा रहे तथा कदम भी उठाये जा रहे हैं परंतु अभी तक इस दिशा में पर्याप्त सफलता नहीं मिल पायी है। अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के लोगों में शिक्षा एवं जागरूकता का आज भी अभाव है जिसके कारण इनको सरकारी योजनओं का लाभ नहीं मिल पा रहा है। इस वर्ग में शिक्षा का स्तर ऊँचा उठाने के लिये विशेष प्रयास करना होगा अल्पसंख्यक समुदाय में भी शिक्षा के प्रति जागरूकता उत्पन्न करने तथा उनको राष्ट्र की मुख्यधारा में लाने के लिये शिक्षा अति आवश्यक हैं।

## fyxh; vlekurk dk lekIr dju d fy; fo'k"k j.kuhfr vko';d

लिंगीय असंतुलन एवं असमानता को समाप्त करना भी समावेशी विकास का एक विषय वस्तु है। भारत में महिलाओं के साथ आज भी दोयम दर्जे का व्यवहार किया जाता है। भारत में लिंगानुपात का कम होना, महिला साक्षरता का कम होना, मातृत्व मृत्यु दरों में अंतर कन्या भ्रूण हत्या आदि ऐसे संकेतक हैं जिससे वह सिद्ध होता है कि महिलाओं के साथ भेदभाव मूलक व्यवहार किया जाता है। कार्यस्थल पर भी महिलाओं के साथ भेदभाव मूलक व्यवहार किया जाता हैं। कार्यस्थल पर भी महिलाओं का शारीरिक एवं मानसिक शोषण किया जाता है। महिलायें कुपोषण का शिकार अधिक है। महिलाओं के साथ घरेलू हिंसा भी होती रहती है। महिलाओं की निर्णयन प्रक्रिया में भागीदारी भी कम है अतः आवश्यकता इस बात की कि लिंगीय असंतुलन समाप्त करने के लिये महिलाओं के लिए विशेष कानून तथा कार्यक्रम बनाये जाये। प्रशासन एवं निर्णयन प्रक्रिया में महिलाओं की सहभागिता बढ़ायी जाये।

**leko'kh fodkl dh fn'kk e ljdkj }kjk mBk; x; vc rd lLFkkxr rFkk çe|[k uhfrxr dne bl çdkj g :**

- आधारिक संरचना के विकास को बढ़ावा देने के लिये विभिन्न क्षेत्रों में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश की सीमा में वृद्धि तथा विदेशी निवेशकों को रियायतें प्रदान करना।
- सार्वजनिक निजी भागीदारी को बढ़ावा।
- लोगों को बैंकिंग सुविधा उपलब्ध कराने के लिये प्रधानमंत्री जन–धन योजना को प्रचलन में लाना।
- बीमा क्षेत्र को बढ़ावा तथा बीमा क्षेत्र में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश को बढ़ावा।
- ऋण सुविधाओं का विस्तार तथा ऋण प्रक्रियाओं का सरलीकरण।
- शिक्षा का सार्वभौमिकीकरण करना, शिक्षा के क्षेत्र में शोध एवं विकास को बढ़ावा

- कौशल विकास कार्यक्रम को बढ़ावा देना।
- मेक इन इंडिया तथा डिजीटल इंडिया कार्यक्रम की शुरुआत करना।
- सामाजिक सुविधाओं के विकास विस्तार तथा उनकी गुणवत्तायें सुधार।
- निजी क्षेत्र में नये बैंक खोलने के लिए आरबीआई द्वारा नया दिशा निर्देश जारी करना।
- भुगतान बैंक और लघु बैंक की अवधारणा को प्रचलन में लाना।
- मुद्रा बैंक योजना की शुरुआत करना।
- सांसद आदर्श ग्राम योजना को प्रचलन में लाना।
- श्यामाप्रसाद मुखर्जी रुर्बन मिशन की शुरुआत करना।
- मदनमोहन मालवीय शिक्षा मिशन को प्रचलन में लाना।
- बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ और सुकन्या समृद्धि योजना प्रचलन में लाना।
- सरदार वल्लभ भाई पटेल शहरी आवास मिशन की शुरुआत करना।
- ग्रामीण क्षेत्रों में सड़क निर्माण और विद्युतीकरण को बढ़ावा देना तथा विद्युत द्यकी पर्याप्त आपूर्ति सुनिश्चित करना।

## leko'kh fodkl dk lQy cukus d fy, l>ko

समावेशी विकास की अवधारणा अपने आप में एक ऐसी सम्पूर्ण विकासात्मक अवधारणा हैं। जिसके सफल क्रियान्वयन से देश का काया पलट किया जा सकता है। परंतु इसके लिए संसाधनों, ईमानदारी, दृढ़ इच्छा शक्ति, समर्पण तथा राजनीतिक सहमति की आवश्यकता है। समावेशी की अवधारणा समतामूलक विकास पर आधारित है। भारतीय नीति निर्माताओं की नियत शुरू से ही समता मूलक समाज की स्थापना पर केंद्रित रही है। परंतु उनमें दृढ़ इच्छा शक्ति की कमी के कारण इनको मूर्तरूप नहीं दिया जा सका जिसके कारण भारत आज भी पिछड़ा हुआ हैं। ऐसे में समावेशी विकास की परिकल्पना एक अच्छी सोच है। परंतु इसके मार्ग में अनेकों बाधाएं है जिनका हटायें बिना समावेशी विकास कार्य नहीं किया जा सकता है।

उक्त बाधायें निम्नवत् हैं :

- समावेशी विकास के लिये राष्ट्रीय सहमति की आवश्यकता है। आर्थिक, समाजिक तथा शैक्षणिक कार्यक्रमों के बारे में राजनीतिक दलों में सहमति होनी चाहिए। इसके अभाव में विकास कार्य सम्पन्न नही हो सकता है। अतः यह आवश्यकता है कि देश के समग्र विकास के लिये इस प्रकार नीतियाँ बनायी जायें जो राजनीतिक से ऊपर हों। इसमें गैर राजनीतिक व्यक्तियों की सहभागिता सुनिश्चित की जाये।
- समावेशी विकास एवं तीव्र विकास के लिए पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशिप मॉडल अधिक उपयुक्त होता है ताकि सार्वजनिक सहयोग व निजी प्रेरणा के तालमेल से विकास की गति तेज की जा सकेरोजगार बढ़ाया जा सके निर्धानता में कमी लाई जा सके अभी तक भारत में विकास का पीपीपी मॉडल प्रारम्भिक अवस्था में

नोट

ही है अतः इसे भविष्य में अधिक स्पष्ट रूप से विभिन्न क्षेत्रों में लागू करने की आवश्यकता है। तभी इससे आवश्यक लाभ मिल पाएगे।

- समावेशी विकास के लिए पर्याप्त मात्रा में धन की आवश्यकता है। धन की। व्यवस्था करना अपने आप में एक चुनौती हैं परंतु सरकार का कहना है कि देश में बचत तथा निवेश की दरें बढ़ रही हैं इसलिए धन की कमी कोई समस्या नहीं है। विकास की प्रक्रिया में धन का अभाव बाधा के रूप में कार्यशील नहीं हो पायेगी अतः सरकार को धन के लिये घरेलू तथा विदेशी दोनों निवेशों को प्रोत्साहित करना होगा गैर उत्पादक कार्यों पर धन का अपव्यय रोकना होगा।
- धन के अपव्यय को रोकने के लिये अंकेक्षण व्यवस्था की और प्रभावी तथा परिणामोन्मुखी बनाया जाना चाहिए। कार्यक्रमों का मूल्यांकन करते समय उसकी गुणवत्ता, प्रतिफल तथा समय को ध्यान में रखा जाना चाहिए। इसके साथ–साथ केंद्रीय योजना निगरानी तंत्र विकसित किया जाना चाहिए।
- समावेशी विकास केवल आर्थिक नियोजन के माध्यम से ही संभव नहीं है बल्कि इसके लिये सुधारों को एक नई दिशा देनी होगी तथा उसकों गतिशील बनाना होगा। सुधारों की प्रक्रिया को राजनीतिक प्रशासनिक, न्यायिक, शैक्षणिक आदि सभी क्षेत्रों में एक साथ अपनाना होगा यही नहीं केंद्र तथा राज्यों को अपने आपसी भेदभाव भूला कर एक साथ मिलकर काम करना होगा।

lekos'kh fodkl ds ekxZ esa ck/kk,¡ foÙkh; %

- वित्तीय संसाधनों की कमी और अनुकूलतम उपयोग न होना, योजनाओं का प्रभावपूर्ण तरीके से क्रियान्वयन न होना।
- ईमानदारी, दृढ़–इच्छा शक्ति, समर्पण और राजनैतिक सहमति का अभाव, दीर्घकालीन रणनीति का अभाव, निर्णयन प्रक्रिया में विलंबन। सामाजिक जागरूकता और प्रशासनिक सक्रियता एवं जवाबदेही का अभाव।
- सामाजिक, लेखांकन एवं मूल्यांकन व्यवस्था का प्रभावी न होना।
- जन प्रतिनिधियों और लोक सेवकों का प्रभावपूर्ण तरीके से कार्य न करना।
- निरीक्षणकारी और दंडात्मक व्यवस्था का प्रभावी न होना।

## 7-8 lkjka'k

lekos'kh fodkl dh vko';drk fuEu dkj.kksa ls iM+rh gS%

- गरीबी एवं बेरोजगारी की समस्या का निराकरण करने के लिए
- सामाजिक एवं आर्थिक विषमता कम करने के लिए।
- क्षेत्रीय विषमता कम करने के लिए।
- ग्रामीण एवं नगरीय विषमता कम या समाप्त करने के लिए।

- समाज के कमजोर वर्गो विशेषतः एससी/एसटी और अन्य पिछड़ा वर्ग के लोगों के जीवन स्तर में सुधार लाने के लिए।
- लिंगीय असंतुलन दूर करने के लिए।
- सामाजिक सुरक्षा और सामाजिक न्याय की स्थापना सुनिश्चित करने के लिए
- सामाजिक सुविधाओं से वंचित लोगों के जीवन स्तर में सुधार लाने के लिए
- आंतरिक सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए' सामाजिक विघटन और संघर्षों को रोकने के लिए
- सामाजिक एवं राजनीतिक व्यवस्था में लोगों का विश्वास बनाये रखने के लिए समतामूलक समाज की स्थापना सुनिश्चित करने के लिए
- संवैधानिक आदर्शों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए।

नोट

## 7-9 vH;kl i'u

1. सामाजिक न्याय से क्या अभिप्राय है? स्पष्ट करें।
2. भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय से संबंधित अनुच्छेदों का वर्णन करें।
3. सामाजिक न्याय एवं समावेशी विकास किस प्रकार एक–दूसरे से संबंधित हैं? व्याख्या करें।

# bdkbZ&8 vlekurk % fyax] tkfr ,oa oxZ

## ikB&lajpuk

**नोट**


8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना एवं अर्थ

8.2 विषमता की आधारभूत विशेषताएँ

8.3 विषमता का उद्भव

8.4 विषमता के मूल आधार

8.5 विषमता के विभिन्न स्वरूप

8.6 भारतीय समाज में विद्यमान विषमता

8.7 समाज में विषमता के निराकरण हेतु सुझाव

8.8 सारांश

8.9 अभ्यास प्रश्न


## 8-0 mís';

विषमता प्रकृति का शाश्वत एवं सार्वभौमिक सत्य है। प्रकृति में समानता की अवधारणा का आदर्शात्मक रूप पाया नहीं जाता। यहाँ तक कि एक ही माँ के गर्भ से अल्प समयावधि के अन्तर से जन्म लेने वाले तथाकथित 'जुडवाँ बच्चों' में भी पूर्णतः समानता दृष्टिगोचर नहीं होती। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि समानता की अवधारणा मात्र कोरी कल्पना के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। जब नैसर्गिक रूप से प्रकृति में समानता देखने को नहीं मिलती तो मनुष्य द्वारा निर्मित सामाजिक व्यवस्था में समानता ढूंढना सतही स्तर के बौद्धिक प्रयास के समान प्रतीत होता है। अतः विषमता एक ऐसा तथ्य एवं सत्य है जो व्यक्तिगत एवं सामाजिक, इन दोनों स्तरों पर देखने को मिलता है। आज तक के मानव इतिहास का सिंहावलोकन करने से यह तथ्य सहज ही समझा जा सकता है कि विषमताएँ सभी समाजों में और प्रत्येक काल में शाश्वत सत्य के समान विद्यमान थीं, विद्यमान हैं और विद्यमान रहेंगी। एल्विन गूल्डनर ने अपनी पुस्तक 'कमिंग क्राइडसिस इनव्रैस्टर्न सोशियोलोजी–1970' में लिखा है कि ''मानव की कुछ विशेषताएँ सभी जीवों में समान रूप से पाई जाती हैं, मानव की कुछ विशेषताएँ ऐसी होती हैं, जो उसकी स्वयं की विशिष्टता होती है। वे अन्य प्राणियों में नहीं पाई जाती।'' गूल्डनर का यह अभिमत विषमता के दृष्टिकोण को स्पष्टतः उजागर करता है। वास्तविक सत्य तो यह है कि हम आदर्शात्मक दृष्टिकोण से बौद्धिक स्तर पर समानता की चर्चा तो कर सकते हैं पर सामाजिक जीवन में उसे देखना नामुमकिन सा प्रतीत होता है। समानता एक उच्च आदर्श है, परन्तु विषमता एक अनुभवपरक सत्य है।

किसी भी समाज में समाजवादी दृष्टिकोण से समानता को देखने का प्रयास कोरी कल्पना के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकता। वर्तमान वैश्वीकरण के दौर में, जिसमें निजीकरण एवं खुलेपन की विचारधाराएँ अनवरत रूप से अपना अस्तित्व सिद्ध कर चुकी

हैं, समानता को ढूंढना असम्भव सा प्रतीत होता है। निजीकरण की विचारधारा व्यक्तिगत स्वार्थ एवं आर्थिक लाभ पर केन्द्रित है, जिसमें ध्येय की प्राप्ति के लिए गला काट प्रतिस्पर्द्धा एवं प्रतियोगिता का सामना करना पड़ता है। अतः वर्तमान आर्थिक एवं औद्योगिक युग में असमानता का विद्यमान रहना, एक ऐसी अवांछित अपरिहार्यता है जिसके बिना उक्त युग के विकास की कल्पना नहीं की जा सकती। विषमता व्यक्ति एवं समाज की चेतना का अभिन्न अंग बन चुकी है, जो एक पीढ़ी से लेकर दूसरी पीढ़ी तक समाजीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से बिना किसी हस्तक्षेप के हस्तांतरित हो रही है।

विषमता वर्तमान समय की एक प्रमुख सामाजिक–आर्थिक समस्या का रूप ले चुकी है। जिसने अनेक समस्याओं को जन्म दिया है। भारतीय संविधान की विचारधारा किसी भी प्रकार की विषमता एवं असमानता के विरूद्ध है। यहाँ पर यह उल्लिखित करना उपयुक्त होगा कि वर्तमान दौर की दो प्रमुख सामाजिक–राजनैतिक विचारधाराएँ–

1. मानव की कुछ विशेषताएँ कतिपय जीवों में देखी जा सकती हैं और प्रजातन्त्र एवं समाजवाद, दोनों ही मानव की समानता पर आधारित हैं, परन्तु दोनों ही विचारधाराओं में विषमता स्पष्टतः दृष्टिगोचर होती है। यद्यपि विषमता के स्वरूप एवं प्रकार में भिन्नता समय, काल, स्थान एवं परिस्थिति के अनुसार देखी जा सकती है।

वर्तमान समय में औद्योगीकीकरण के माध्यम से विकास की गंगा चहुँ ओर तीव्र गति से बह रही है, जिसके परिणामस्वरूप विषमता के प्राचीन स्वरूप लुप्त प्रायः हो गए हैं एवं उनके स्थान पर कतिपय नवीन स्वरूप दृष्टिगोचर हो रहे हैं। यूरोप, उत्तरी अमेरिका एवं जापान जैसे विकसित राष्ट्रों में औद्योगिक एवं आर्थिक प्रगति के कारण विषमताओं का उग्र रूप देखने को कम ही मिलता है, जबकि भारत में स्थिति भयावह बनी हुई है। तीसरे विश्व के अल्पविकसित एवं अविकसित राष्ट्रों में असमानता के परम्परागत स्वरूप वर्तमान समय में भी विद्यमान हैं। इन राष्ट्रों में निर्धन एवं धनवानों के मध्य एक गहरी खाई देखने को मिलती है। महज इतना ही नहीं, वरन् भिन्न–भिन्न वर्गो एवं समुदायों के लोगों के जीवन स्तर एवं जीवन शैली में रात–दिन का अंतर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। ये राष्ट्र आर्थिक, भौतिक एवं वैचारिक दृष्टिकोण से आदर्शात्मक समानता के नजदीक पहुँचने के लिए बेताब हैं तथा वहाँ समानता की विचारधारा की जड़ें इतनी गहरी पहुँच चुकी हैं कि इनका जीवन के विभिन्न आयामों में असरदार प्रभाव सहज रूप में देखा जा सकता है। दूसरी ओर अविकसित एवं अल्पविकसित राष्ट्रों में परम्परावादी, सामन्तवादी एवं गुलामी की मानसिकता से सरोबार विचारों को इन राष्ट्रों के सांस्कृतिक तत्वों, सांस्कृतिक संकुलों एवं सांस्कृतिक प्रतिमानों में देखा जा सकता है। सामाजीकरण के द्वारा ये विचार जड़वादी मानसिकता का रूप लेते हुए भविष्य की पीढ़ियों में भी हस्तांतरित हो रहे हैं।

## 8-1 iLrkouk ,o vFk

विषमता या असमानता की अवधारणा को उचित एवं सही रूप से समझने के लिए समानता की अवधारणा को समझना अपरिहार्य है। सामान्य अर्थों में समानता का तात्पर्य सभी प्रकार के सन्दर्भों में समस्त लोगों में बिना किसी भेदभाव के परस्पर बराबरी से है। इसका आशय यह है कि मानव–मानव के मध्य किसी भी प्रकार का भेदभाव विद्यमान न हो। सभी मनुष्यों को समान शिक्षा, सुविधाएँ, वेतन, सम्पत्ति अर्जन एवं जीवन अवसर बिना किसी भेदभाव के सहज रूप से प्राप्त हों।

**नोट**

समानता की अवधारणा में यह बोध अन्तर्निहित रहता है कि सभी व्यक्तियों को अपने सर्वांगीण विकास के समान अवसर मिलते हैं तथा समस्त प्रकार की निर्योग्यताओं और विशेषाधिकारों के शमन पर बल दिया जाता है। इसका आशय यह है कि जाति–प्रजाति, लिंग, धर्म, भाषा, प्रान्त–स्थान, क्षेत्र, संस्कृति, सामाजिक स्थिति इत्यादि के आधार पर किसी भी प्रकार का विभेद न तो वास्तविक रूप में किया जाता है और न ही स्वीकार किया जाता है तथा न हीं इसे किसी भी रूप में सामाजिक स्वीकृति, मान्यता एवं संस्तुति प्रदान की जाती है।

मूलतः सामाजिक असमानता का अर्थ किसी भी समरूप समाज में प्रमुखतया पारिवारिक पृष्ठभूमियों, सामाजिक परम्पराओं एवं परिपाटियों, आय–सम्पदा, राजनैतिक प्रभाव, आचरण, शिक्षा, नैतिकता इत्यादि पर आधारित भिन्नताओं के कारण सामाजिक पद–प्रतिष्ठा, अधिकार एवं अवसरों में उत्पन्न अन्तर को सामाजिक असमानता के सम्बोधन से अभिहित करते हैं। सामाजिक प्रतिष्ठा की भिन्नता का हस्तान्तरण एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पारिवारिक संस्थाओं, सम्पत्ति स्वामित्व तथा उत्तराधिकार की संस्थाओं के साथ–साथ समान सामाजिक वर्ग श्रेणी के व्यक्तियों के सम्पर्को द्वारा सम्भव होता है।

विषमता के अन्तर्गत लोगों को अपने व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास के अवसर प्राप्त नहीं होते। समाज में विशेषाधिकार विद्यमान रहता है तथा जन्म, जाति, प्रजाति धर्म, भाषा, आय व सम्पत्ति के आधार पर अन्तर देखा जा सकता है। इन्हीं आधारों पर एक मनुष्य दूसरे मनुष्य से, एक समूह दूसरे समूह से, एक समुदाय अन्य समुदाय से, एक जाति या प्रजाति अन्य जाति या प्रजाति से, एक धर्म दूसरे धर्म से उच्चता एवं निम्नता का भेद बनाए रखने के साथ–साथ उचित सामाजिक दूरी भी बनाता है। विषमता को अभिव्यक्त करने वाले प्रमुख कारकों में शक्ति, सत्ता, पद, प्रभुत्व, आर्थिक असमानता, सामाजिक विभेद तथा उत्पादन के साधनों पर असमान अधिकार इत्यादि प्रमुख स्थान रखते हैं। विषमता का आशय किसी समूह, समुदाय अथवा समाज के लोगों के जीवन–अवसर तथा जीवन शैली की भिन्नताओं से है, जो विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों में इनकी असमान स्थिति में जीवनयापन करने के कारण होती है। प्रख्यात समाजशास्त्री आन्द्रे बिताई का मत है कि सामाजिक परम्पराओं तथा मानदण्डों के बिना किसी भी समाज की कल्पना करना असम्भव है और ये ही सामाजिक असमानतओं को जन्म देने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं।

## 8-2 fo"kerk dh vk/kkjHkr fo'k"krk,¡

विषमता की अवधारणा को बौद्धिक रूप से समझने के लिए निम्नांकित विशेषताओं का विश्लेषण करना महत्वपूर्ण है :

1- **lkekftd rF; dk :i esa%** विषमता एक ऐसा सामाजिक तथ्य है जिसकी प्रकृति सामाजिक है, अर्थात् यह सम्पूर्ण समाज में व्याप्त है तथा यह व्यक्ति केन्द्रित नहीं है। विषमता व्यक्तिगत गुणों यथा– आयु, लिंग, रंग, बौद्धिक क्षमता इत्यादि पर आधारित नहीं होती। इसे समाज द्वारा निर्धारित पदों, परिस्थितियों, शक्तियों एवं अधिकारों में भिन्नता के आधार पर

समझा जा सकता है। सामाजीकरण की प्रक्रिया के द्वारा चेतन एवं अचेतन रूप में व्यक्ति सामाजिक मानदण्डों, मानकों, आदर्शों एवं मूल्यों को अपने व्यक्तित्व में समाहित कर, समाज में व्याप्त विषमता को अंगीकार करता है। सामाजिक संस्थाऐं यथा—शैक्षिक, वैवाहित, पारिवारिक, धार्मिक, राजनैतिक, आर्थिक इत्यादि समाज में विषमता को जन्म देने में सहायक सिद्ध होती हैं।

2- lEi.k fo'o e 0;kIrrk % सम्पूर्ण विश्व में कोई भी समाज ऐसा नहीं है, जहाँ पर किसी न किसी रूप में विषमता पाई नहीं जाती हो। यद्यपि भिन्न—भिन्न समाजों में इसके स्वरूपों एवं आधारों में भेद हो सकता है। कार्ल मार्क्स की वर्गविहीन साम्यवादी, राजनैतिक एवं सामाजिक व्यवस्था की कल्पना केवल कल्पना के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। न तो प्राचीन काल में सैद्धान्तिक रूप में वर्गविहीन समाज था और न ही इस प्रकार का समाज भविष्य में रहेगा। इससे यह स्पष्ट होता है कि विषमता मानव समाज की नैसर्गिक विशेषता है।

3- fHkUu&fHkUu Lo:i % विश्व के सभी समाजों में तथा सभी युगों में विषमता के भिन्न—भिन्न स्वरूप देखने को मिलते हैं। विषमता के ये स्वरूप देश, काल, परिस्थिति एवं सामाजिक—राजनैतिक एवं आर्थिक व्यवस्था के अनुसार अपने स्वरूप का निर्धारण करते हैं। यूरोप, अफ्रीका, अमेरिका एवं लेटिन अमेरिका के देशों में किसी न किसी प्रकार का भेदभाव विद्यमान रहा है और वर्तमान समय में भी प्रचलन में है। भारत में विषमता का आधार जाति व्यवस्था है और पश्चिमी देशों में असमानता वर्ग व्यवस्था पर आधारित होती है। इसी प्रकार अगर हम सभी राष्ट्रों की परस्पर तुलना करें तो पायेंगें कि इनमें असमानता के विभिन्न स्वरूप देखने को मिलते हैं।

4- fo"kerk dk leUo;d vfLrRo % विषमता के अनेक आयाम हाते हैं। इनकी संख्या का निर्धारण नहीं किया जा सकता। पद, व्यवसाय, आय, शक्ति, सत्ता, शिक्षा, प्रस्थिति इत्यादि विषमता के प्रमुख आयाम हैं। किसी समय विशेष में एक समाज में विषमता के एक से अधिक आधार प्रचलन में रह सकते हैं। उदाहरण के लिए, भारत में वर्तमान समय में जाति, वर्ग, पद परिस्थिति, शिक्षा, शक्ति—सत्ता इत्यादि सामाजिक विषमता के व्यावहारिक आधार, प्रचलन में हैं।

5- vifjorlu'khy iÑfr % सामाजिक विषमता एक सामाजिक तथ्य है तथा इसकी उत्पत्ति सामाजिक कारणों एवं सामूहिक अनुभवों के द्वारा होती है। इनमें समाज समय के साथ—साथ समाज की इच्छानुसार वांछित परिवर्तन कर सकता है, परन्तु किसी व्यक्ति के द्वारा विषमता की संरचना में व्यक्तिगत कारणों से प्रभावी परिवर्तन नहीं हो सकता।

6- le; lkis{krk % सामाजिक स्थिरता एक सामाजिक तथ्य है, परन्तु यह एक गतिशील तथ्य है। इसमें समय—समय पर वांछित परिवर्तन हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, सदियों से भारत में विद्यमान जाति व्यवस्था की संरचना में परिवर्तन होते रहे हैं। 1917 की क्रांति के पश्चात् रूस की सामाजिक—राजनैतिक व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन देखे जा सकते हैं।

## 8-3 fo"kerk dk mnHko



विषमता के संदर्भ में समाज वैज्ञानिकों की जिज्ञासा इसकी उत्पत्ति से सम्बन्धित प्रश्नों को लेकर सदैव रही है। समाज वैज्ञानिकों ने असमानता की उत्पत्ति क्यों और कैसे होती है, के संबंध में अनेक दृष्टिकोण प्रस्तुत किए हैं। मुख्यतः विषमता की उत्पत्ति के सम्बन्ध में छह प्रकार के दृष्टिकोण समीचीन मालूम पड़ते हैं, ये हैं :

1. प्राकृतिक विभेद।
2. व्यक्तिगत सम्पत्ति के परिणाम के रूप में।
3. श्रम–विभाजन।
4. युद्ध एवं विजय का परिणाम।
5. प्रकार्यात्मक व्याख्या।
6. मानदण्डों, अभिमति एवं शक्ति का परिणाम।

**1- ikdfrd foHkn 0;k[;k %** विषमता की उत्पत्ति एवं उद्भव के संदर्भ में इस दृष्टिकोण के प्रमुख समर्थक के रूप में अरस्तु का नाम प्रमुख है। अरस्तु ने अपनी कृति ''पॉलीटिक्स'' में अपना मत प्रस्तुत करते हुए लिखा है कि मनुष्य प्राकृतिक रूप से ही असमान है। स्वतन्त्र, गुलाम, स्त्री तथा पुरूष प्राकृतिक रूप से ही विषम है। स्वतन्त्र एवं पुरूष लोग, गुलाम एवं स्त्रियों से श्रेष्ठ होते हैं। इसीलिए ये लोग इन पर शासन करते हैं। वस्तुतः प्रकृति ने ही इन्हें प्रभुत्व एवं शासन करने वाले गुण नैसर्गिक रूप से प्रदान किए हैं। इन गुणों का उन्मूलन नहीं किया जा सकता। अतः समाज में विद्यमान असमानता एवं श्रेणीबद्धता नैसर्गिक एवं प्राकृतिक है। अरस्तु के इन विचारों का समर्थन अनेक विद्वानों ने किया है।

विषमता की उत्पत्ति के संदर्भ में अरस्तु के उपर्युक्त विचारों में अनेक त्रुटियाँ विद्यमान हैं। अरस्तु ने प्राकृतिक एवं सामाजिक असमानता में किसी भी प्रकार का भेद नहीं किया है, जबकि प्राकृतिक एवं सामाजिक असमानता पूर्णतः स्वतन्त्र व्यवस्थायें हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ पर यह लिखना समीचीन होगा कि असमानता की व्याख्या प्राकृतिक आधार पर पूर्ण रूप से स्थापित नहीं की जा सकती। रूसों ने अरस्तु के इन विचारों का खण्डन किया है तथा प्राकृतिक समानता के विचारों का प्रबल समर्थन किया है। रूसों ने प्राकृतिक नियमों के आधार पर समानता की व्याख्या करने का प्रयास किया है।

**2- 0;fDrxr lEifÙk d ifj.kke d :i e fo"kerk %** विषमता को व्यक्तिगत सम्पत्ति का परिणाम मानना इसकी प्रथम समाजशास्त्रीय व्याख्या है। अरस्तु ने प्रत्येक समाज में तीन वर्गों – सम्पन्न, मध्यम एवं निर्धन का उल्लेख किया है। आर्थिक आध ाार पर समाज में विद्यमान असमानता की व्याख्या काफी पुरानी है। इस संदर्भ में रूसों ने अपना मत प्रकट करते हुए ये विचार प्रस्तुत किये कि प्रारम्भिक अवस्था में मानव साम्यवादी जीवन व्यतीत करता था और इनमें समानता विद्यमान थी, परन्तु व्यक्तिगत सम्पत्ति की भावना के उद्भव ने समाज में विषमता को जन्म दिया। फरग्यूसन, मिल, जेम्स, मेडिसन इत्यादि ने रूसों के विचारों का समर्थन किया। इनका मत है कि सम्पत्तिवान एवं सम्पत्तिहीन लोगों ने समाज में भिन्न–भिन्न प्रकार के स्वार्थों को जन्म दिया है। उदाहरण

के लिए भूस्वामी, भूमिहीन, सूदखोर, व्यापारी, निर्माता इत्यादि वर्गों के स्वार्थ भिन्न–भिन्न हैं। ये वर्ग अलग–अलग प्रकार के मानदण्डों एवं नियमों को जन्म देते हैं तथा संघर्ष को जन्म देने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं।

नोट

कार्ल मार्क्स एवं एडम स्मिथ भी भूमि, सम्पत्ति एवं श्रम को विषमता के लिए उत्तरदायी महत्वपूर्ण कारक मानते हैं। कार्लमार्क्स एवं रूसो व्यक्तिगत सम्पत्ति को विषमता का कारण मानते हैं। इसीलिए कार्ल मार्क्स 'साम्यवादी समाज' की स्थापना के लिए एवं रूसों 'प्राकृतिक समाज' की स्थापना के लिए व्यक्तिगत सम्पत्ति के उन्मूलन को प्रमुख स्थान प्रदान करते हैं।

उपर्युक्त मत को पूर्णतः स्वीकार नहीं किया जा सकता, क्योंकि अनेक साम्यवादी राष्ट्रों में व्यक्तिगत सम्पत्ति को समाप्त करने के पश्चात् भी वहाँ पर अनेक प्रकार के वर्ग एवं आय पर आधारित विषमता देखी जा सकती है।

3- vlekurk dk L=ksr Je foHkktu % एंजिल, कार्लमार्क्स, स्मालर, दुर्खीम इत्यादि ने श्रम विभाजन के आधार पर समाज में असमानता की व्याख्या की। एंजिल्स ने श्रम विभाजन के आधार पर वर्ग संरचना के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जो कि असमानता को जन्म देने का प्रमुख कारक है। स्मालर ने श्रम विभाजन के आधार पर भिन्न–भिन्न व्यावसायिक समूहों की व्याख्या की है। इसी प्रकार समाजशास्त्र के प्रमुख आधार स्तम्भ इमाइल दुर्खीम ने समाज में श्रम विभाजन के आधार पर विषमता की व्याख्या की है। जॉर्ज सिमेल, शुमपीटर, फरग्यूसन, पहेलबैग इत्यादि समाज वैज्ञानिकों ने श्रम विभाजन को विषमता का स्रोत मानने वाली विचारधारा का समर्थन किया है। राल्फ डेहरनडोर्फ ने इस मत का खण्डन करते हुए कहा है कि श्रम विभाजन विषमता को जन्म नहीं देता, वरन् यह तो केवल मात्र कार्य का बंटवारा ही है।

4- vlekurk % ;q) ,oa fot; dk ifj.kke dk :i esa % पहेल बैग ने विषमता की उत्पत्ति के संदर्भ में अपने विचार प्रकट करते हुए यह मत प्रकट किया कि विषमता युद्ध और विजय का अवश्यम्भावी परिणाम है। प्रत्येक युग में शासक वर्ग ने युद्ध एवं विजय के आधार पर स्वयं को सर्वोच्च प्रस्थिति से विभूषित किया है तथा समाज में अन्य वर्गों की उत्पत्ति का कारक भी बने हैं।

5- fo"kerk dh izdk;kZRed O;k[;k % किंग्सले डेविस, विलबर्ट ई.मूर, टालकॉट पारसन्स इत्यादि समाजशास्त्रियों ने सामाजिक स्तरीकरण की अवधारणा को प्रकार्यवादी दृष्टिकोण से समझाने का प्रयास किया है। प्रकार्यवादी समाज वैज्ञानिक समाज में व्याप्त विषमता को समाज के अस्तित्व, स्थायित्व एवं निरन्तरता के लिए प्रकार्यात्मक आवश्यकता मानते हैं, जिसे समाप्त नहीं किया जा सकता। प्रकार्यवादी समाजशास्त्रियों का मत है कि समाज पद–परिस्थितियों का जाल है। सभी पद समान महत्व के नहीं होते। कुछ पद अधिक महत्व के होते हैं एवं अन्य पदों का महत्व सापेक्षिक रूप से कम होता है। प्रत्येक पद के साथ निश्चित पारिश्रमिक एवं पुरस्कारों की व्यवस्था निर्धारित निश्चित होती है। जिन पदों को समाज अपने अस्तित्व, स्थायित्व एवं निरन्तरता के लिए अपरिहार्य एवं अधिक उपयोगी स्वीकार करता है, उन पदों के प्रतिफल के रूप में अधिक पारिश्रमिक एवं पुरस्कार निर्धारित किए जाते हैं। समाज में इन महत्वपूर्ण पदों को अर्जित करने के लिए विशेष योग्यता, प्रतिभा एवं प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। कुछ पदों का प्रशिक्षण

नोट

अधिक खर्चीला होता है तथा इन पदों का प्रशिक्षण कुछ अधिक कठिन भी होता है। इन पदों को समाज का प्रत्येक व्यक्ति अर्जित नहीं कर सकता। इसीलिए इन पदों के प्रतिफल के रूप में अधिक पारिश्रमिक सुविधाऐं एवं पुरस्कार जुड़े रहते हैं। इस प्रकार भिन्न–भिन्न समाजों में विभिन्न पदों की समाज की आवश्यकतानुसार श्रेणियाँ एवं महत्व निर्धारित होते हैं, जिनके अनुरूप इनके प्रतिफल के रूप में भिन्न–भिन्न मात्रा में पारिश्रमिक सुविधाऐं एवं पुरस्कार जुड़े रहते हैं। प्रतिफल की भिन्न–भिन्न श्रेणियाँ समाज में विषमता को जन्म देती हैं। अतः विषमता के अभाव में समाज के विभिन्न कार्यों की पूर्ति सम्भव नहीं हो पाती। मेलविन एम. ट्यूमिन, टी.बी. बोटोमार इत्यादि समाजशास्त्रियों ने इस सिद्धान्त की आलोचना की है। इनका मत है कि यह निर्णय करना कठिन है कि अमुक कार्य की समाज में अधिक उपयोगिता है तथा अमुक कार्य समाज के अस्तित्व के लिए गौण है। प्रकार्यवादी समाजशास्त्री विषमता के अप–प्रकार्य की चर्चा नहीं करते।

6- fo"kerk % ekun.Mk] vfHkefr ,oa 'kfDr dk ifj.kke % Ralph Dahrendorf ने प्रकार्यवादी परिप्रेक्ष्य में निहित त्रुटियों को दूर करते हुए लिखा है कि असमानता एक समूह के व्यय पर अन्य समूह द्वारा लाभ या फायदा अर्जित करने के कारण उत्पन्न होती है। डेहरनडॉर्फ विषमता के लिए मानव प्रकृति और व्यक्तिगत सम्पत्ति को उत्तरदायी नहीं मानते। वे असमानता के लिए सामाजिक मानदण्ड, अभिमति तथा शक्ति को उत्तरदायी मानते हैं। इनकी स्वीकृति अथवा अस्वीकृति में ही असमानता के विचार निहित हैं। प्रत्येक समाज में विद्यमान मानदण्ड, समाज के सदस्यों के व्यवहारों को नियमित एवं नियंत्रित करते हैं। इन मानदण्डों की पृष्ठभूमि में सामाजिक अभिमति प्रच्छन्न रूप से कार्य करती है। मानदण्डों की पालन करने वाले सदस्य को पुरस्कार एवं उल्लंघन करने वाले व्यक्ति को प्रतिफल के रूप में दण्ड दिया जाता है। अभिमति, शक्ति एवं सत्ता की व्यवस्था के द्वारा समाज में क्रियान्वित की जाती है।

## 8-4 fo"kerk ds ey vk/kkj

विश्व में व्याप्त भिन्न–भिन्न समाजों में असमानता के भिन्न–भिन्न आधार देखने को मिलते हैं। इन आधारों में निम्नलिखित आधार प्रमुख स्थान रखते हैं :

1. जाति, प्रजाति एवं जन्म।
2. शिक्षा।
3. पद।
4. व्यवसाय।
5. आय।
6. सम्पत्ति
7. शक्ति।

1- tkfr] iztkfr ,oa tUe % जाति, प्रजाति एवं जन्म असमानता को जन्म देने के लिए उत्तरदायी कारक होते हैं। परम्परागत रूप से स्वीकार्य उच्च कुल जाति, प्रजाति एवं उच्च वंश में जन्म लेने वाले लोग स्वयं को अन्य लोगों से श्रेष्ठ समझते हैं। यह श्रेष्ठता और हीनता का भाव ही असमानता को जन्म देता है। इसी प्रकार रंग रूप इत्यादि

भी विषमता को जन्म देते हैं। गोरे लोग काले लोगों की तुलना में अपने आप को श्रेष्ठ समझते हैं। श्वेत वर्णीय यूरोप एवं अमेरिका के लोग काले रंग के नीग्रों लोगों से अपने आप को श्रेष्ठ समझते हैं। इसी प्रकार ब्राह्मण एवं अन्य उच्च जाति के लोग अनुसूचित जाति एवं इनके समकक्ष जाति से स्वयं को उच्च समझते हैं। ग्रामीण भारतीय समाज में जाति–व्यवस्था, ऊंच–नीच एवं असमानता का एक मूलभूत आधार है।

2- f'k{kk % वर्तमान औद्योगिक एवं सूचना तन्त्र से सम्बद्ध समाज में शिक्षा सम्बन्धी अन्तर असमानता को जन्म देने एवं इसका प्रचार–प्रसार करने में महत्वपूर्ण कारक है। शिक्षित लोग अपने बच्चों को अच्छे स्कूलों में पढ़ने की सुविधा उपलब्ध कराते हैं तथा निर्धन एवं अभावग्रस्त लोग राजकीय विद्यालयों में अध्ययन करवाते हैं। वर्तमान समय में प्राथमिक शिक्षा एवं उच्च शिक्षा एक महंगा उपक्रम बन जाने के कारण यह गरीब एवं निर्धन लोगों की पहुंच से दूर हो चुकी है। इस शिक्षा का फायदा साधन–सम्पन्न लोग ही उठा पाते हैं। जिसके फलस्वरूप ये लोग समाज में उच्च आय अर्जन करने वाले एवं सम्मानजनक पद प्राप्त करने में सफल हो पाते हैं तथा जो इस शिक्षा से वंचित हो जाते हैं, वे निचले क्रम के पद स्वीकार कर समाज में विषमता को संस्थागत जामा पहनाते हैं। इस प्रकार आर्थिक विषमता, जीवन जीने के असमान स्तर एवं असमान सुविधायें समाज में व्याप्त विषमता की खाई को चौड़ा करने के साथ–साथ इसे संस्थागत रूप से सामाजिक संरचना में स्वीकार्य बनाते हैं।

3- in % प्रकार्यात्मक सिद्धान्त के अनुसार समाज में कुछ पद समाज के अस्तित्व एवं संगठनात्मक एकता बनाये रखने के लिए अपरिहार्य होते हैं। समाज में भिन्न–भिन्न पदों में श्रेणीबद्धता पाई जाती है। इस श्रेणीबद्धता के अनुरूप इन पदों में प्रतिष्ठा निहित होती है। भिन्न–भिन्न समाजों में पदों का आधारप्रदत्त एवं अर्जित, इन दोनों योग्यताओं के आधार पर होता है। परम्परागत भारत में जाति–व्यवस्था की उच्चता एवं संस्कारों की शुद्ध ता, उच्च पद एवं प्रतिष्ठा का मूलभूत आधार रहा है, परन्तु आधुनिक नगरीकृत भारतीय समाज में यह आधार बदल रहा है और इसके स्थान पर आधुनिक शिक्षा एवं प्रशासनिक पदों ने उच्च स्थान ग्रहण किया है। उच्च पद प्राप्त करने वाला चाहे वह किसी भी जाति से हो समाज में उच्च स्थान पाता है तथा वह अपने आप को अन्य लोगों से उच्च समझता है। इस प्रकार पदों की श्रेणीगत विभिन्नता समाज में असमानता को पनपाने में सहायक सिद्ध होती है।

4- 0;olk; % नेस्फील्ड के अनुसार जाति–व्यवस्था का आधार व्यवसाय है। इन व्यवसायों में ऊंचनीच का एक संस्तरण पाया जाता है। इस संस्तरण के अनुरूप कुछ व्यवसाय अधिक प्रतिष्ठित माने जाते थे। विभिन्न व्यवसायों का इस प्रकार का मूल्यांकन इनसे सम्बद्ध लोगों में असमानता को पनपाता है। आध्यात्मिक ऊर्जा संग्रहण के कार्य में संलग्न ब्राह्मणों का समाज में, उच्छिष्ट एवं मल उठाने वाले निम्न जाति के लोगों से ऊंचा स्थान रहा है। इस संदर्भ में यह लिखना उचित होगा कि व्यवसायों के साथ शुद्धता एवं अशुद्धता तथा पवित्रता एवं अपवित्रता का बोध भी भारतीय जाति–व्यवस्था में संस्कारों के माध्यम से लोगों में गहन रूप से जुड़ा हुआ है। इस प्रकार भिन्न–भिन्न व्यवसायों में पाया जाने वाला संस्तरण समाज में असमानता को जन्म देने का महत्वपूर्ण उत्तरदायी कारक है।

5- vk; % समाज में भिन्न–भिन्न लोगों की आय में पर्याप्त अन्तर देखने को मिलता है। आय सम्बन्धी भिन्नता के परिणाम स्वरूप लोगों में भोजन, वस्त्र, आवास, आभूषण

तथा जीवन की सुख–सुविधायें जुटाने सम्बन्धी अन्तर पाये जाते हैं। ये विभेद समाज में विषमताओं को जन्म देते हैं। इस प्रकार समाज में लोगों की आयों में श्रेणीबद्धता असमानता को जन्म देने में महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

**नोट**

6- lEifÙk % विश्व के सभी समाजों में सम्पत्ति स्तरीकरण का एक प्रमुख आधार है और सम्पत्ति ही असमानता के लिए प्रमुख रूप में उत्तरदायी कारक है। सम्पत्ति के आधार पर सभी प्रकार के समाजों में ऊंच–नीच का भेद पाया जाता रहा है। सम्पत्ति की मात्रा के अनुरूप समाज में लोगों का ऊंच नीच में स्तरीकरण होता रहा है। जिनके पास अधिक सम्पत्ति है उनके पास जीवन जीने के अधिक अवसर होते है। इनके पास विलासिता और सुख–सुविधाओं की वस्तुओं को खरीदने की क्षमता भी अधिक होती है। इसके ठीक विपरीत जैसे–जैसे लोगों के पास सम्पत्ति कम होती जाती है, लोगों की स्थिति निम्न होती जाती है और इस प्रकार समाज को असमानता के विभिन्न आयाम देखने को मिलते हैं। कार्ल मार्क्स ने समाज में सम्पत्ति को असमानता पैदा करने की दृष्टि से निर्णायक आधार माना है।

7- 'kfDr % असमानता एवं विषमता को निर्धारित करने वाला एक तत्व शक्ति एवं सत्ता भी है। जो लोग जितना अधिक शक्ति एवं सत्ता पर नियन्त्रण स्थापित करते हैं वे उतने ही समृद्धशाली होते हैं। शक्ति एवं सत्ता के आधारों पर समाज में भिन्नता देखने को मिलती है। जिन लोगों के पास जितनी अधिक शक्ति एवं सत्ता होगी, उतनी ही अधिक उन लोगों की स्थिति ऊँची होगी। इस प्रकार शक्ति एवं सत्ता के क्रमबद्ध श्रेणीकरण के अनुरूप समाज में विषमता देखने को मिलती है। सत्ता एवं शक्तिविहीन लोग समाज में निर्धन एवं गरीब कहलाते हैं तथा इनकी समाज में निम्न स्थिति होती है। इसी प्रकार धार्मिक, राजनैतिक एवं आर्थिक आधारों पर शक्ति एवं राजनैतिक शक्ति का असमान वितरण, समाज में विभिन्न प्रकार के वर्गभेदों को दृष्टिगोचर करता है। धार्मिक शक्ति के आधार पर धर्म के ठेकेदारों मुनि महात्माओं, पण्डित पुजारियों, मुल्ला–मौलवियों, पादरियों इत्यादि तथा आमजन के बीच विषमता देखने को मिलती है।

## 8-5 fo"kerk dh fofHkUu Lo:i

विषमता की उपर्युक्त वर्णित व्यवस्था से यह तथ्य स्पष्ट हो चुका है कि यह विश्व में विद्यमान समस्त समाजों की एक ऐसी विशेषता है, जिसे मिटाया नहीं जा सकता। कार्ल मार्क्स ने विश्व के सभी समाजों का ऐतिहासिक अध्ययन करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला कि सभी समाजों में असमानता पर आधारित स्तरीकण के निम्नलिखित स्वरूप होते हैं :

1. प्राचीन समाज।
2. सामन्तवादी समाज
3. पूँजीपति समाज।

मार्क्स ने यह बताया कि प्राचीन समाज में गुलाम एवं इनके मालिक, ये दो वर्ग पाए जाते थे। सामन्तवादी व्यवस्था में समाज में अनेक समूह देखने को मिलते थे। यह बेगारी पर आधारित समाज व्यवस्था थी। पूँजीवादी समाज व्यवस्था पूँजीपति एवं श्रमिकों के विभाजन पर आधारित है। इस व्यवस्था के अन्दर भी अनेक वर्ग पाए जाते हैं। वर्तमान

विश्व में तीव्र गति से परिवर्तन हो रहे हैं। इसलिए मार्क्स द्वारा वर्णित समाज में विभाजन का स्वरूप देखने को नहीं मिलता तथा इस वर्गीकरण में वर्तमान समय में विद्यमान अनेक वर्गों को समायोजित नहीं किया जा सकता है।

वर्तमान समय में वैश्वीकरण, निजीकरण एवं खुलेपन की आँधी ने सम्पूर्ण विश्व को आप्लावित कर रखा है। पूँजीपति एवं साम्यवादी, ये दोनों समाज इस आँधी में पूर्ण रूप से सरोबार हैं। औद्योगिक पूर्व, औद्योगिक एवं साम्यवादी सामाजों में पाए जाने वाले विषमता के स्वरूप छिन्न–भिन्न होते नज़र आ रहे हैं। सूचना–तकनीकी की क्रान्ति द्वारा जनित घुमंतुक (मोबाईल) यंत्र अब प्रत्येक मनुष्य की अपरिहार्यता बन गया है। समाज पर सूचना तकनीकी से सरोबार क्रांति आने वाले समय में विषमता के कौन से स्वरूप समाज के सामने प्रस्तुत करेगी, यह तो भविष्य के गर्भ में अन्तर्निहित है।

टामे बोटोमोर ने समाज में विभाजन के चार स्वरूपों को प्रस्तुत किया है, जो निम्नांकित है :

1. दास प्रथा।
2. सम्पदा/जागीरें।
3. जाति व्यवस्था।
4. सामाजिक वर्ग।

1- nkl iFkk % दास प्रथा समाज व्यवस्था का वह स्वरूप था, जिसमें प्रत्येक दास का एक स्वामी (मालिक) होता था। इस मालिक के अधीन वह अपना जीवन यापन करता था। मालिक का हुकुम दास के लिए सर्वोपरि आज्ञा के समान होता था। स्वामी दास से अपने कार्य करवाने हेतु बल का प्रयोग करने में पूर्ण रूप से स्वतन्त्र होता था। दास स्वामी की सम्पत्ति होता था, जिसका क्रय एवं विक्रय किया जा सकता था। दास राजनीतिक अधिकारों से वंचित, समाज द्वारा तिरस्कृत व्यक्ति था। दास की अधीनता इस प्रकार की थी कि उसे अनिवार्य रूप से श्रम करना ही पड़ता था। समाज में एक धुरी पर दास एवं दासप्रथा विद्यमान थी तो दूसरी धुरी पर इनके स्वामियों से मिलकर कुलीन लोगों का एक ऐसा कुलीनतंत्र था, जो पूर्णतः दासों के श्रम पर आधारित था।

दास प्रथा असमानता के चरम बिन्दु का परिचायक है, जिसमें व्यक्तियों के एक समूह को सामाजिक–राजनैतिक अधिकारों से पूर्णतः वंचित कर दिया जाता है। प्राचीन यूनान एवं रोमन साम्राज्य तथा मध्यकालीन दक्षिणी अमेरिका में यह समाज व्यवस्था प्रचलन में थी। आधुनिक समय में मानवाधिकार एंव प्रजातान्त्रित मूल्यों के प्रतिकूल होने के कारण इस प्रथा का उन्मूलन हो चुका है।

2- lEink@tkxhj % मध्यकालीन यूरोप में जागीर प्रथा सामाजिक एवं राजनैतिक व्यवस्था का प्रचलित स्वरूप था, जिसे प्रथा एवं कानून द्वारा स्वीकृति तथा मान्यता प्राप्त थी। मुख्यतः जागीर प्रथा तीन वर्गों में विभाजित थी – 1. पादरी, 2. सरदार (कुलीन) एवं 3. साधारणजन। प्रत्येक वर्ग की संस्कृति (जीवन–शैली) अन्य वर्गों से विशिष्टीकृत थी। तत्कालीन यूरोपीय समाज में राज्य चर्च के अधीन था। इसीलिए सामाजिक संस्तरण में सर्वोच्च स्थान पादरियों का था। बोटोमोर ने जागीर प्रथा की तीन विशेषताओं का वर्णन किया है – 1. प्रत्येक जागीर की एक वैधानिक परिभाषा थी। उसके अधिकार,

नोट

विशेषाधिकार, कर्त्तव्य एवं दायित्वों के आधार पर समाज में उसकी एक सुनिश्चित प्रस्थिति होती थी। 2. जागीरों में स्पष्ट श्रम–विभाजन देखने को मिलता है। सरदार (कुलीन) वर्ग पर समाज में सभी की रक्षा का दायित्व था। पादरी वर्ग पारलौकिक सत्ता से सभी की समषद्धि एवं खुशहाली के लिए प्रार्थना करते थे तथा जन साधारण कृषि एवं अन्य कार्यों में संलग्न थे। 3.जागीरें राजनीतिक समूह थी। इनके पास राजनैतिक शक्ति विद्यमान थी। मध्यकालीन यूरोप में विद्यमान जागीर प्रथा के कुछ लक्षण भारत में मौर्यकाल, गुप्तकाल एवं मुगलकाल में व्याप्त सामन्ती व्यवस्था में देखने को मिलते हैं, परन्तु इसका स्वरूप आर्थिक एवं सैनिक रहा है।

3- tkfr 0;oLFkk % भारत में सामाजिक असमानता सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक दोनों रूपों में समाज द्वारा स्वीकृत रही है। जाति प्रथा विषमता का वह विशिष्टीकृत स्वरूप है, जो केवल भारत में ही देखने को मिलता है। जाति व्यवस्था परम्परावादी कृषि प्रधान भारतीय समाज मे,प्रभावशाली रूप में सदियों से विद्यमान रही है। जाति व्यवस्था में व्याप्त असमानता को धर्म की स्वीकृति एवं समर्थन प्राप्त है। इसके साथ–साथ प्रथागत कानून, नैतिक एवं धार्मिक सिद्धान्तों ने भी इसका पुरजोर समर्थन किया है।

जाति एक ऐसा समूह है जिसकी सदस्यता जन्मजात होती है। प्रत्येक जाति का एक नाम और एक व्यवसाय होता है। एक जाति के लोगों का निश्चित वंशानुगत पेशा होता है तथा एक जाति के सदस्य अपनी ही जाति में विवाह करते हैं। प्रत्येक जाति की अपनी एक विशिष्ट संस्कृति (जीवन शैली) होती है। संक्षेप में, शास्त्रानुसार जाति व्यवस्था की प्रमुख विशेषतायें निम्नलिखित हैं :

1. जाति समाज का खण्डात्मक विभाजनयुक्त स्तरीकरण है।
2. जाति की सदस्यता जन्मजात है।
3. प्रत्येक जाति एक अन्तर्वैवाहिक समूह है।
4. जाति व्यवस्था में उच्चता एवं निम्नता का एक संस्तरण पाया जाता है।
5. प्रत्येक जाति का एक वंशानुगत पेशा/व्यवसाय होता है।
6. प्रत्येक जाति के सदस्य अन्य जाति के साथ अन्तःक्रिया करते समय खानपान एवं सामाजिक सहवास सम्बन्धी परम्परागत नियमों का पालन करते हैं।
7. प्रत्येक जाति की एक जातीय पंचायत होती है, जो इसके सदस्यों से जाति के नियमों का पालन करवाती है।
8. जाति की सदस्यता मृत्यु पर्यन्त तक होती है अर्थात् कोई भी व्यक्ति अपने प्रयास द्वारा अथवा उपलब्धि के द्वारा अपनी जाति की सदस्यता बदल नहीं सकता।

इस प्रकार जाति की उपर्युक्त वर्णित विशेषताओं का अध्ययन करने के पश्चात् हम यह कह सकते हैं कि जाति व्यवस्था में अन्तर्निहित ऊंच–नीच का संस्तरण तथा शस्त्रीय दृष्टिकोण से उच्च एवं निम्न जातियों के बीच विद्यमान अधिकारों एवं कर्त्तव्यों का असमान वितरण भारतीय समाज में सामाजिक असमानता के लिए प्रमुख रूप से उत्तरदायी कारण है। सामाजिक असमानता का घिनौना स्वरूप अस्पृष्यता के रूप में भारतीय समाज में देखने को मिलता है। महज इतना ही नहीं कुछ जातियों को जन्म से इतना अछूत मान लिया

गया कि उनकी छाया तक देखना भी अशुभ माना जाने लगा तथा उन्हें उच्च जातियों द्वारा उपभोग कि, जाने वाले समस्त अधिकारों से वंचित कर दिया गया।

कार्ल मार्क्स की विचारधारा के अनुसार उत्पादन के समस्त साधनों पर विशेषतः भूमि पर नियन्त्रण उच्च जाति के लोगों के हाथों में रहा तथा निम्न जातियों व अस्पृश्य जातियों के सदस्यों को इससे वंचित किया गया। ये लोग केवल अपना श्रम बेचकर अथवा अन्य पेशों को अपनाकर अपना भरण–पोषण करते रहे हैं। गाँवों में वर्तमान समय में भी सिर पर मैला ढोने की प्रथा विद्यमान है। यद्यपि इसे कानून के द्वारा अवैध घोषित किया गया है। इन निम्न जातियों को समाज में शक्ति सत्ता एवं प्रभुत्व से वंचित कर दिया गया, क्योंकि संस्तरण प्रणाली में इनका स्थान सबसे नीचे था। इस प्रकार हम देखते हैं कि उच्च एवं निम्न जातियों में सांस्कृतिक विभेद पाया जाता है। प्रदत्त गुणों पर आधारित जाति–व्यवस्था प्रणाली में जन्म को महत्व दिया जाता है न कि व्यक्तिगत उपलब्धियों एवं अर्जित गुणों को।

**नोट**

4- oxi 0;oLFkk % औद्योगिक समाजों में वर्ग व्यवस्था सामाजिक स्तरीकरण का एक प्रमुख आधार है। एक समान सामाजिक प्रस्थिति वाले व्यक्तियों के समूह को एक वर्ग कहा जाता है। एक वर्ग कतिपय सामान्य विशेषतायें जैसे – समान सामाजिक आर्थिक प्रस्थिति, समान जीवन के अवसर, समान जीवन शैली एवं एक निश्चित सामाजिक स्तर लिए हुए होता है। कार्ल मार्क्स ने उत्पादन के साधनों के सम्बन्धानुसार वर्ग को परिभाषित किया है। वर्ग का आधार केवल आर्थिक ही नहीं है वरन् सामाजिक सांस्कृतिक भी है।

वर्ग की प्रमुख विशेषतायें निम्नलिखित हैं :

1. वर्ग एक ऐसा समूह है जिसका आधार आर्थिक होता है।
2. वर्ग में उच्चता एवं निम्नता का क्रम पाया जाता है।
3. एक वर्ग के सभी सदस्यों की समान सामाजिक प्रस्थिति होती है।
4. प्रत्येक वर्ग में वर्ग चेतना देखने को मिलती है। यह वर्ग चेतना एक वर्ग के लोगों को अपने अधिकारों के प्रति सचेत एवं सजग रखती है।
5. एक वर्ग मुक्त या खुली व्यवस्था है जिसमें एक व्यक्ति अपनी योग्यता एवं उप. लब्धियों के आधार पर अपने वर्ग की सदस्यता त्यागकर अन्य वर्ग में सम्मिलित हो सकता है।
6. वर्ग की सदस्यता पूर्णतः अर्जित होती है। प्रत्येक वर्ग के सदस्यों को जीवन के कुछ विशिष्ट अवसर एवं सुविधायें समान रूप से प्राप्त होते हैं। एक वर्ग की एक निश्चित संस्कृति (जीवन जीने का तरीका) होती है।
7. वर्ग गतिशील होते हैं, अर्थात् वर्ग की सदस्यता को बदलना आसान एवं सम्भव है।
8. एक वर्ग में बाह्य एवं अभ्यान्तरिक गुण विद्यमान होते हैं। वर्ग के बाहरी लक्षणों में आवास, शिक्षा, आय, खानपान, पहनावा इत्यादि सम्मिलित किये जाते हैं।
9. वर्ग व्यवस्था वाले समाजों में सामाजिक गतिशीलता अधिक देखने को मिलती है।

नोट

बोटोमोर का मत है कि वर्ग अपेक्षाकृत उन्मुक्त समूह होते हैं, जिनका आधार निर्विवाद रूप से आर्थिक होता है, परन्तु वे आर्थिक समूहों से अधिक होते हैं। वर्ग औद्योगिक समाजों के लाक्षणिक समूह हैं। मुख्यतः वर्ग व्यवस्था युक्त समाजों में साधारणतया तीन प्रकार के वर्ग पाये जाते हैं :

1. उच्च वर्ग।
2. मध्यम वर्ग।
3. निम्न वर्ग।

जिनका आधार आर्थिक उपलब्धि, आय एवं सम्पत्ति होता है। वर्तमान औद्योगिक एवं सूचना क्रान्ति के आप्लावित समाजों में विभिन्न कार्यों में असमानता अनेक रूपों में दृष्टिगोचर होती है। उच्च वर्ग के लोग शक्ति एवं सत्ता से सम्पन्न युक्त होते हैं। इन लोगों का राजनीति में वर्चस्व होता है तथा उत्पादन के साधनों पर अधिकार एवं नियन्त्रण भी होता है। इसके ठीक विपरीत, श्रमिक वर्ग होता है जो अपने श्रम को बेचकर अपने परिवार का भरण–पोषण करता है। इन दोनों वर्गों के बीच एक ऐसा वर्ग भी होता है, जिसे मध्यम वर्ग कहते है, जो कि पूंजीपति एवं श्रमिक, शासक एवं शासित, धनी एवं निर्धन के मध्य स्थापित होता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि वर्ग व्यवस्था में भी गतिशील विषमता पाई जाती है जिसे व्यक्ति अपने प्रयासों से दूर कर सकता है।

## 8-6 Hkkjrh; lekt esa fo|eku fo"kerk

भारतीय समाज अनेक व्यवस्थाओं का एक पुंज है। परम्परागत रूप से भारत एक कृषि प्रधान देश है। जिसमें समाज व्यवस्था के रूप में जाति व्यवस्था पाई जाती है। जिसकी चर्चा हम पूर्व में कर चुके हैं। ग्रामीण समाज में जाति व्यवस्था का जटिल स्वरूप देखने को मिलता है। ग्रामीण समाज में कृषि व्यवस्था के अनेक स्वरूप देखने को मिलते हैं। मोटे तौर पर इन्हें छह स्तरों में विभाजित किया जा सकता है, ये हैं :

1. गैर–खेतीहर भूस्वामी।
2. गैर–खेतीहर पट्टेदार।
3. खेतीहर भूस्वामी।
4. खेतीहर रैयत।
5. बटाईदार।
6. भूमिहीन खेतीहर मजदूर।

इन छह स्तरों के मध्य सामाजिक असमानता के अनेक स्वरूप देखने को मिलते हैं। इन स्तरों में जीवनयापन करने वाले कृषकों के मध्य जीवन अवसर तथा जीवन शैली में पर्याप्त मात्रा में विभेद देखा जा सकता है। सामान्यतः बड़े भू–स्वामी ऊँची जाति के लोग होते हैं तथा भूमिहीन मजदूर निम्न या अस्पृश्य जाति के सदस्य होते हैं। परम्परागत भारतीय समाज में भूमि के नियन्त्रण एवं उपयोग में असमानताओं को व्यावहारिक एवं न्यायसंगत रूप में स्वीकार किया गया है। जाति–व्यवस्था ने इन असमानताओं को उन मानदण्डों एवं मूल्यों के द्वारा स्थायित्व प्रदान किया है, जो कृषि अधिक्रम के लिए वांछित रहे हैं।

नोट

वर्तमान में समय भारत में तीव्र गति से औद्योगिकरण एवं नगरीकरण हो रहा है, जिसके परिणामस्वरूप वर्ण–व्यवथा के गुण नगरों एवं औद्योगिक क्षेत्र में स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर हो रहे हैं। इनमें जाति की व्यवसाय के साथ सम्बद्धता के सम्बन्ध टूटते जा रहे हैं। इन क्षेत्रों में निर्धनता एवं अमीरी के बीच असमानता के भिन्न–भिन्न स्तर देखने को मिलते हैं। रेल यात्रा के दौरान रेल पटरी के दोनों तरफ दृष्टिपात करने से गन्दी बस्तियों का अभावग्रस्त जीवन अनायास ही देखने को मिल जाता है तथा दूसरी ओर हजारों ऐसे लोग भी हैं जो भव्य भवनों में वातानुकूलित जीवन शैली का उपभोग कर रहे हैं। वास्तविक सत्य तो यह है कि समाज में व्याप्त असमानता के भिन्न–भिन्न स्तरों को मिटाकर एक करना असम्भव कार्य है। लेकिन समाज के उन स्तरों में जीवनयापन करने वाले लोगों के लिए मूल भूत जीवनयापन करने की सुविधाओं की व्यवस्था की जा सकती है, जिनसे ये वंचित हैं।

## 8-7 lekt esa fo"kerk dk fujkdj.k gsrq lq>ko

भारतीय समाज भिन्न–भिन्न व्यवस्थाओं से मिलकर बना है जिनमें विषमता के अनेक स्वरूप देखने को मिलते हैं। इनके निराकरण हेतु निम्नांकित प्रयास किए जा सकते हैं :

1. देश के आर्थिक विकास की गति को तीव्र किया जाए, क्योंकि आर्थिक विकास निर्धनता एवं बेरोजगारी को घटाकर विषमता को कम करता है।
2. सामाजिक एवं राजनैतिक विषमता को दरू करने के लिए दृढ़ राजनैतिक इच्छा शक्ति की महती आवश्यकता है, जिससे कि वे काननू बनाये जा सकें, जिनका क्रियान्वयन व्यावहारिक स्तर पर किया जा सके।
3. समाज में प्रजातांत्रिक मूल्यों का विकास करने के लिए एक सामाजिक एवं राजनैतिक आन्दोलन चलाने की सख्त आवश्यकता है।
4. पिछड़े वर्ग के लोगों के समुचित विकास के लिए सरलीकृत विकास कार्यक्रमों को प्रारम्भ किया जाना चाहिए। भारत में पद दलित, जनजातीय समूह एवं अन्य पिछड़े वर्गों के उत्थान हेतु आरक्षण नीति में समयत्र पर सुधार करने की आवश्यकता है, जिससे कि इस नीति का फायदा इन वर्गों में अति पिछड़े समूहों को मिल सके।
5. राजनैतिक तथा प्रशासनिक कार्यक्रमों को पिछड़े वर्गों के लिए सहज एवं सुलभ बनाना चाहिए।
6. भूमि एवं पूंजी के पुनः वितरण की व्यवस्था में समाज की आवश्यकतानुसार सुधार किए जाने चाहिए।
7. गरीबों के चहुंमुखी विकास के लिए तथा अनिश्चितता एवं भय को हटाने के लिए भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में बीमा योजनाओं का क्रियान्वयन करना चाहिए।
8. समाज में व्याप्त प्रशासनिक एवं राजनैतिक भ्रष्टाचार का उन्मूलन करने के लिए नये सिरे से प्रयास करने की महती आवश्यकता है।
9. खुले विश्वविद्यालयों के माध्यम से निर्धन वर्ग एवं जाति के लोगों के लिए सरकार द्वारा प्रवेश शुल्क एवं परीक्षा शुल्क में अनुदान दिया जाना चाहिए।

नोट

10. दूरस्थ क्षेत्रों में कार्यरत स्वयंसेवी संगठनों को उपयुक्त आर्थिक मदद देकर सक्षम बनाना चाहिए।
11. समाज में सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक एवं कानूनी चेतना लाने के लिए समन्वित प्रयास किया जाना चाहिए।

## 8-8 lkjk'k

विषमता एक ऐसा शाश्वत सत्य है जो समस्त जीवों में एवं सभी प्रकार की व्यवस्थाओं, संस्थाओं एवं अभिकरणों में देखने को मिलता है। सृष्टि की रचना के समय से वर्तमान समय तक विषमता के नाना प्रकार के स्वरूप समाज एवं प्राकृतिक वातावरण में देखने को मिलते हैं। समातना एक ऐसा आदर्शात्मक विचार है जिसका व्यावहारिक अस्तित्व देखने को बड़ी मुश्किल से मिलता है। विषमता जाति, प्रजाति, लिंग, धर्म, भाषा, प्रान्त, क्षेत्र, संस्कृति, सामाजिक स्थिति, शिक्षा, पद, व्यवसाय, आय, सम्पत्ति, शक्ति इत्यादि के आधार पर देखी जा सकती है। वर्तमान समय में विषमता को आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टिकोण से समझने का प्रयास किया जाता है। विषमता एक ऐसी सामाजिक–आर्थिक समस्या है जिसके निराकरण हेतु समाज एवं राज्य द्वारा प्रयास किये जा रहे हैं।

## 8-9 vH;kl iz'u

1. विषमता की आधारभूत विशेषताएँ कौन–कौन सी हैं ?
2. विषमता के आधारभूत तत्वों पर प्रकाश डालिये?
3. टॉम बोटोमार द्वारा प्रस्तुत विषमता के चार स्वरूपों को वर्णन कीजिये?

# bdkbl&9 vYil[;d lenk;k dk fodkl

नोट

## ikB&lajpuk

9.0 उद्देश्य
9.1 प्रस्तावना
9.2 अल्पसंख्यक समुदाय कौन है?
9.3 अल्पसंख्यकों के लिए विशेष प्रावधान
9.4 अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के वर्तमान प्रावधान
9.5 अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर घोषणापत्र
  9.5.1 अल्पसंख्यकों के अधिकार
  9.5.2 राज्यों के कर्त्तव्य
9.6 अन्य प्रावधान
9.7 निगरानी रचनातंत्र
  9.7.1 कार्यकारी समूह
9.8 राज्यों तथा क्षेत्रीय समूहों की प्रतिक्रिया
  9.8.1 अल्पसंख्यकों को निरन्तर भय के स्रोत
9.9 अल्पसंख्यक कल्याण
9.10 सारांश
9.11 अभ्यास प्रश्न

## 9-0 mís';

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप निम्नलिखि के बारे में समझ सकेंगे,

- अल्पसंख्यक समूह किस प्रकार हमेशा अलाभांवित परिस्थितियों में जीवन व्यतीत करते हैं;
- अल्पसंख्यक समूहों के सदस्यों को विशेष सुविधाएँ देना आवश्यक है ताकि वे प्रभावकारी समानता का आनन्द उठा सकेंगे,
- अल्पसंख्यक की सांस्कृतिक (cultural), धार्मिक (religious) तथा भाषायी पहचान (linguistic identity) के संरक्षण के लिए विशेष उपायों की आवश्यकता क्यों हैं; और
- अल्पसंख्यकों समूहों की सुरक्षा के लिए अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकार मानदण्ड तथा इनके कार्यान्वयन तथा निगरानी से संबंधित रचनातंत्रा कौन से हैं।

नोट

## 9-1 iLrkouk

मानव अधिकारों के सार्वभौमिक घोषणापत्र का अनुच्छेद 1 यह उद्घोषण करता है कि "प्रतिष्ठा एवं अधिकारों के दृष्टि से सभी मानव स्वतंत्र एवं समान है।" संसार के सभी व्यक्तियों को समान प्रतिष्ठा एवं अधिकारों का आवश्वासन देने की यह नैतिक प्रतिबद्ध ता पिछली दो शताब्दियों में मानव अधिकार आंदोलन की प्रमुख चिंता रही है। आधुनिक युग में इसकी अभिव्यक्ति 1945 में संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के अनुच्छेद 55 में हुई जिसमें यह कहा गया कि चार्टर नस्ल, लिंग, भाषा अथवा धर्म के आधार पर बिना किसी भेदभाव के मानव अधिकारों एवं स्वतंत्रताओं का सर्वव्यापी सम्मान तथा अनुपालन आश्वस्त करें। संयुक्त राष्ट्र के सभी सदस्यों, चाहें उनकी राजनीतिक व्यवस्था केसी भी हो, से अपेक्षा की जाती है कि वे अपने संविधान एवं कानून में सभी लोगों एवं नागरिकों की भाषा, धर्म, संस्कृति अथवा किसी अन्य आधार पर बिना कोई प्रतिकूल अंतर किए भेदभाव हीनता का आश्वासन दें।

वे कौन से अधिकार एवं स्वतंत्रताएँ हैं जिनकी सभी समूहों से समान उपभोग की गारंटी की अपेक्षा की जाती है? एक वाक्य में इसका उत्तर है : "सभी अधिकार सभी के लिए" (All Rights For All) अर्थात् सभी व्यक्तियों/नागरिकों एवं समुदायों तथा समूहों के लोगों के लिए नागरिक, राजनीतिक, आर्थिक–सामाजिक–सांस्कृतिक अधिकार। तथापि यह मानव जाति का समान अनुभव रहा है कि ऐतिहासिक दृष्टिकोण से अल्पसंख्यक समुदाय के सदस्यों के साथ भेदभाव किया गया है। अल्संख्यकों से हमारा अभिप्राय भाषा, धर्म अथवा संस्कृति पर आधारित अपेक्षाकृत छोटे एवं संवेदनशील समूहों से होता है जो किसी एक राज्य में प्रधान समूह अथवा समूहों से अलग होते हैं तथा जिनके साथ राष्ट्रीय जीवन के साझे सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक क्षेत्रों में कई प्रकार के भेदभाव अथवा उपेक्षा की जा सकती है। इसके अतिरिक्त इन समुदायों को सांस्कृतिक संघटन के लिए बहुसंख्यक समुदाय के दबाव का भी सामना करना पड़ सकता है जिसके परिणामस्वरूप उन्हें अपनी अलग भाषा, लिपि अथवा अन्य धार्मिक व्यवहारों का संरक्षण करना मुश्किल हो सकता है। कई समाजों एवं देशों में, कुछ धार्मिक एवं नस्लीय समाजों को कई तथाकथित ऐतिहासिक गलतियों के लिए कलंकित किया जाता है अथवा उनके रंग अथवा वंश के आधार पर उन्हें बौद्धिक दृष्टिकोण से निम्न समझा जाता है।

प्रधान धर्मों, नस्लों, भाषाओं तथा संस्कृतियों की इस अन्तर्निहित श्रेष्ठता के दावे, तथा बाकी मानवता के लिए सांस्कृतिक मानदण्ड स्थापित करने के दावे को नकारते हुए, अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकार कानून सभी छोटे अथवा निम्न समुदायों के अधिकारों को गारंटी देता है अर्थात् यह अल्पसंख्यकों को अपनी संस्कृति का आनन्द उठाने, अपना धर्म अपनाने तथा प्रचार करने तथा अपनी भाषा का प्रयोग करने का अधिकार देता है। इसके अतिरिक्त यह सदस्य–राज्यों पर यह उत्तरदायित्व डालती है कि इन अल्पसंख्यकों की अनन्य अस्मिता के संरक्षण एवं विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियों का निर्माण करें।

अतः हम पाते हैं कि इस तथ्य को स्वीकार करते हुए कि कोई भी समाज अथवा राज्य समानुरूप नहीं हैं, मानव अधिकार आंदोलन की प्रमुख चिंता प्रत्येक व्यक्ति के समान परन्तु भिन्न होने का अधिकार अथवा भिन्न परंतु समान होने का अधिकार आश्वस्त करता है।

समानता का यह लक्ष्य था विविध को यह सम्मान कमजोर एवं बलवान को समान न्याय आश्वस्त करने के व्यापक उद्देश्य के अंग हैं। इस संदर्भ में 26 अक्टूबर 1937 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का प्रस्ताव ध्यान देने के योग्य है क्योंकि यह व्यक्ति एवं समूहों की संपूर्ण स्वतंत्रता एवं अवसर का उपयोग करने के अधिकार पर आधारित है तथा भारतीय जीवन के संवर्धन के स्रोत के रूप में विविधता के दृष्टिकोण पर आधारित हैः "कांग्रेस का उद्देश्य एवं स्वतंत्र एवं संयुक्त भारत का है जहाँ कोई वर्ग अथवा समुदाय, अल्पसंख्यक अथवा बहुसंख्यक अपने लाभ के लिए किसी दूसरे का शोषण न कर सके, जहाँ राष्ट्र के सभी तत्व भारत के लोगों की सांझी स्वतंत्रता एवं प्रगति में मिलकर सहयोग करें। एक सांझी स्वतंत्रता में एकता तथा पारस्परिक सहयोग के उद्देश्य का अर्थ भारतीय जीवन की सम्पन्न विभिन्नता तथा सांस्कृतिक विविधता को किसी भी प्रकार से दबाना नहीं है; बल्कि इनका संरक्षण किया जाना आवश्यक है ताकि समाज में सभी व्यक्तियों एवं प्रत्येक समुदायों को अपनी योग्यता तथा रुचि के अनुसार निर्बाध विकास करने के लिए स्वतंत्रता एवं अवसर प्रदान किया जा सके।"

## 9-2 vYil[;d lenk; dku g \

अल्पसंख्यक की कोई सामान्य परिभाषा नहीं है। विभिन्न लेखकों तथा विद्वानों ने विशिष्ट परिस्थितियों के संदर्भ में इन्हें अलग–अलग तरीके से परिभाषित किया है। अन्तर्राष्ट्रीय न्याय के स्थायी न्यायालय (Permanent Court of International Justice; PCIJ) ने 1930 में यह टिप्पणी की, "अल्पसंख्यक समुदाय लोगों का समूह है जो किसी एक देश अथवा क्षेत्र में रह रहा है जिसका अपना अनन्य नस्ल, धर्म, भाषा अथवा परम्पराएँ हैं तथा वह नस्ल, धर्म, भाषा तथा एकता की भावना जैसी परम्पराओं से एक सूत्र में बंधा है ताकि वे अपनी परम्पराओं को संरक्षित कर सके, अपनी धार्मिक आस्थाओं के स्वरूप को बनाए रखे, अपने बच्चों की शिक्षा तथा पालन पोषण अपनी नस्ल की पंरपराओं तथा भावनाओं के अनुरूप कर सके तथा एक दूसरे की परस्पर सहाया कर सके।" न्यायालय का यह निर्णय प्रो. कापोटोरी द्वारा तैयार की गई अल्पसंख्यकों की सुरक्षा की रिपोर्ट में अल्पसंख्यक की परिभाषा का प्रारंभिक बिन्दु बन गया। नागरिक, राजनीतिक अधिकारों की अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा के अनुच्छेद 27 के कार्यान्वयन के लिए भेदभाव की रोकथाम तथा अल्पसंख्यकों की सुरक्षा पर संयुक्त राष्ट्र सहआयोग द्वारा निर्देशित अध्ययन रिपोर्ट (Study Report) में प्रो. कापोटोरी ने 1977 में "अल्पसंख्यक" की निम्नलिखित परिभाषा दी हैः

"गैर–प्रधान स्थिति में एक ऐसा मानव समुदाय जो संख्या के दृष्टिकोण से किसी राज्य की बाकी जनसंख्या से निम्न है, जिसके सदस्यों की उस राज्य के नागरिक होने के बावजूद अपनी प्रजातीय, धार्मिक एवं भाषाई विशेषताएँ हैं जो बाकी जनसंख्या से भिन्न हैं तथा जो, चाहे अप्रत्यक्ष रूप से ही सही, एकता की भावना दिखाते हैं जिसका उद्देश्य संस्कृति, प्रथाओं, धर्म तथा भाषा संरक्षण करना होता है।"

संयुक्त राष्ट्र तथा इसके संगठन जैसे मानव अधिकार आयोग तथा भेदभाव की रोकथाम तथा अल्पसंख्यकों की सुरक्षा पर सह–आयोग अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर घोषणा के निर्माण के लिए अल्पसंख्यक की स्पष्ट परिभाषा तलाश करने के कार्य में जुटा हुआ है।

**नोट**

क्योंकि सदस्य–राज्यों के बीच परिभाषा पर कोई सहमति नहीं हो पाई, अतः इसे आधिकारिक रूप से स्वीकार नहीं किया गया। परंतु बाद में, डिशेंस घोषणापत्र के निर्माण के दौरान, सह–आयोगक ने श्री जे. डिशेंस (J. Deschenes) द्वारा तैयार की गई रिपोर्ट पर विचार किया जिसमें अल्संख्यक की निम्नलिखित परिभाषा दी गई थी।

"एक राज्य के नागरिकों का समूह जो उस राज्य में जनसंख्या के दृष्टिकोण से कम तथा गैर–प्रधान स्थिति में हैं, जिसकी कुछ ऐसी प्रजातीय, धार्मिक तथा भाषाई विशेषताएं हैं जो वहाँ के बहुसंख्यक समूह से भिन्न हैं, जिनकी आपस में एकता की भावना है तथा जो चाहे अप्रत्यक्ष रूप से ही सही, अपना अस्तित्व बनाए रखने की सामूहिक इच्छा रखता है तथा जिनका उद्देश्य बहुसंख्यक समूह के साथ कानूनी एवं वास्तविक दोनों स्तरों पर समानता प्राप्त करना है।" तथापि सह–आयोग की इस परिभाषा पर भी कोई सर्वसहमति नहीं बन पाई।

परिभाषा पर सर्वसहमति के अभाव के कारण कुछ हद तक भिन्न देशों में, "भिन्न अल्पसंख्यक परिस्थितियाँ – ऐतिहासिक अथवा समकालीन – रही हैं। परंतु उपरोक्त दोनों परिभाषाओं में स्थापित मानदण्ड – जिनमें अल्पसंख्यकों को ऐसे समुदाय के रूप में देखा गया है जिसके अपनी सजोई अस्मिता की स्थायी विशेषताएँ हैं, परंतु जो संख्या एवं शक्ति के दृष्टिकोण से अति संवेदनशील है, – अस्मिता आधारित अल्पसंख्यकों की सर्वव्यापक स्थिति का पर्याप्त रूप से वर्णन कर देती है, हालाँकि इसमें अमेरिका के अप्रफीकी अमरीकन अथवा भारत के दलितों को निहित नहीं किया गया जिनके उफपर नस्ल अथवा सामाजिक, उत्त्पति के कारण नकारात्मक पहचान थोंप दी गई। इनके मामले में मुद्दा अस्मिता का संरक्षण नहीं है बल्कि सामूहिक या परास्थिति एवं अवसर की समानता प्राप्त करना है। कापोटोरी ने एक अल्पसंख्यक समूह निश्चित करने के लिए कुछ व्यक्तिमूलक तथा वस्तुमूलक मानदण्ड भी स्थापित किए। वस्तुमूलक दृष्टिकोण से एक अल्पसंख्यक समूह राज्य की अन्य जनसंख्या की तुलना में निम्न ही नहीं होना चाहिए, इसे गैर–प्रधान स्थिति में भी होना चाहिए। व्यक्तिमूलक दृष्टिकोण से कापोटोरी के अनुसार अल्पसंख्यक समूहों में अपनी संस्वृफति, परम्परा, धर्म तथा भाषा को संरक्षित करने की दृढ़ इच्छा शक्ति होनी चाहिए। अल्पसंख्यकों का यह व्यक्तिमूलक आयाम इन्हें उन लोगों से अलग करता है जो बहुसंख्यक समुदाय से संघटित होने के लिए तैयार होते हैं तथापि, डेशीन्स ने अल्पसंख्यक की परिभाषा करते हुए इसकी तीन विशेषताएँ बताई : 1. संख्या की निम्नता, 2. गैर–प्रधान स्थिति, 3. ऐसी प्रजातीय धार्मिक तथा भाषाई विशेषताएँ जो इन्हें बहुसंख्यक लोगों से अलग करती है। डेशीन्स के अनुसार अस्मिता का संरक्षण अल्पसंख्यक परिस्थिति का अनिवार्य अंग नहीं है। किसी समुदाय की अल्पसंख्यक स्थिति का केन्द्रीभूत तत्व इसकी शक्ति तक अपर्याप्त पहुँच के परिणामस्वरूप पैदा होने वाली भेद्यता है।

## 9-3 vYi l[;dk d fy, fo'k"k iko/kku

सामाजिक कल्याण आर्थिक विकास तथा राजनीतिक भागेदारी के सामूहिक राष्ट्रीय क्षेत्रा में प्रभावशाली समानता के व्यवहार का आनन्द उठाने के लिए अल्पसंख्यकों के लिए विशेष प्रावधानों की आवश्यकता होती हैं ताकि उनके विरुद्ध भेदभावपूर्ण/बहिष्करण सम्बन्धित व्यवहारों को निष्क्रिय किया जा सके। इसके विपरीत क्योंकि उसकी भाषा अथवा संस्कृति की उपेक्षा हो सकती है अथवा बहुसंख्यक समुदाय द्वारा सृदश्यीकरण के लिए

दबाव हो सकता है अतः अल्पसंख्यक भाषा तथा संस्कृति एवं अनेक धार्मिक रीतिरिवाजों के कुछ सार्वजनिक प्रदर्शन के अस्तित्व एवं विकास के लिए विशेष उपाय करने की आवश्यकता हो सकती है।

**नोट**

अल्पसंख्यकों के लिए विशेष प्रावधानों का सिद्धांत निश्चयात्मक रूप से अंतर्राष्ट्रीय न्याय के स्थायी न्यायालय (PCIJ) ने अल्बानिया में अल्पसंख्यक स्कूलों (The Minority Schools in Albania) के मुकदमें में निर्मित किया। न्यायालय के अनुसार अल्पसंख्यकों के अधिकार का उद्देश्य दोहरा है : 1. अल्पसंख्यक समुदाय के लिए बाकी जनसंख्या के साथ शांतिपूर्ण तरीके से रहने तथा उनके साथ सहायो को सुदृढ़ करना परंतु साथ ही उन विशेषताओं को भी संरक्षित करना है जो उन्हें बहुसंख्यक समुदाय से अलग करती है तथा उनकी विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। न्यायालय का विचार था कि यह दोनों विशेषताएँ आपस में गुंथी हुई हैं क्योंकि बहुसंख्यक और अल्पसंख्यकों में उतनी देर तक सच्ची समानता नहीं आ सकती जब तक अल्पसंख्यकों को अपनी संस्थाओं से वंचित किया जाता जिसके परिणामस्वरूप उन्हें वह सब कुछ न्यौछावर करने पर मजबूर किया जाता है जो उनके जीवन का सार है। अतः न्यायालय का मानना था कि–

nkuk idkj dh lekurk, % तथ्य की समाना तथा प्रत्यक्ष कानूनी समानता अर्थात् कानून की शब्दावली में भेदभाव का अभाव– जरूरी है। कानूनी समानता सभी प्रकार के भेदभावों पर प्रतिबंध लगाती है, जबकि तथ्यों की समानता का अर्थ भिन्न व्यवहार की आवश्यकता हो सकता है, कुछ ऐसे परिणाम प्राप्त करने के लिए जो भिन्न परिस्थितियों में संतुलन बनाए रखे। ऐसे मामले दिखाई देना आम बात है जहाँ बहुसंख्यक एवं अल्पसंख्यक, (जिनकी परिस्थितियाँ तथा आवश्यकताएँ भिन्न होती है) दोनों के साथ समान व्यवहार वास्तव में असमानता की तरफ ले जाता है कि अल्पसंख्यकों तथा बहुसंख्यकों के बीच समानता प्रभावशाली तथा वास्तविक समानता होनी चाहिए। यही इस प्रावधान का सच्चा अर्थ है।

iFke fo'o ;) d mijkUr vYil[;dk dk eík % विशेषतः उनकी सुरक्षा तथा अधिकारों का मुद्दा – विशेष रूप से उभर कर सामने आ गया। लींग ऑफ नेशन्स की स्थापना के समय नवनिर्मित राज्यों, तथा अन्य राज्यों जो लींग के सदस्यता प्राप्त करने के इच्छुक थे, के अंदर नस्लीय एवं राष्ट्रीय अल्पसंख्यकों के सामूहिक अधिकार तथा भेदभाव हीनता की बात कही गई– परंतु इसका घोर विरोध हुआ। तथापि लींग ऑफ नेशन्स ने अल्पसंख्यकों के लिए अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा को स्वीकार किया। परिणामस्वरूप अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के लिए कुछ संधियों को भी अपनाया गया। पंरतु इन संधियों के कार्यान्वयन का रचनातंत्र काफी कमजोर था।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद, विशेषकर संयुक्तत राष्ट्र की स्थापना के बाद, अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के मुद्दे को दोबारा से उठाया गया। प्रारंभ में विभिन्न नेताओं की यह सामान्य भावना थी कि मानव अधिकारों की गारंटी तथा विभिन्न राज्यों में परस्पर मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध अल्पसंख्यक समस्या का हल प्रदान कर देंगे। परंतु वास्तविकता यह थी कि अधिकतर राज्यों में अल्पसंख्यक समुदाय प्रधान वर्ग के निरंतर दबाव में थे। अतः संयुक्त राष्ट्र को अल्पसंख्यक संरक्षण के मुद्दे में लिप्त होना पड़ा। संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकार आयोग ने 1962 में भेदभाव की रोकथाम एवं अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के लिए एक उप–आयोग की

**नोट**

स्थापना की। इस सह–आयोग ने अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर एक घोषणापत्र तैयार किया जिसे आमसभा ने 1992 में अपनाया। इससे पहले अल्पसंख्यक अधिकारों का वर्णन नागरिक/राजनीतिक अधिकारों की अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा में किया गया था। ये अभी वहीं है।

## 9-4 vYil[;dk dh lj{kk d orleku iko/kku

मानव अधिकारों के सार्वभौमिक घोषणापत्र में यह स्पष्ट कर दिया था कि संपूर्ण मानव मात्र बिना किसी प्रकार के भेदभाव– जैसे नस्ल, रंग, लिंग, भाषा, राजनीतिक अथवा कोई अन्य मत, सामाजिक उत्पत्ति, सम्पत्ति, जन्म अथवा अवस्थिति – के सभी अधिकारों एवं स्वतंत्रताओं के हकदार हैं। दूसरे शब्दों में, घोषणापत्र ने यह स्पष्ट कर दिया कि अधिकारों की उपलब्धि के संदर्भ में बहुसंख्यक अथवा अल्पसंख्यक नाम की कोई चीज नहीं है। इसके बाद नागरिक, राजनीतिक अधिकारों की प्रसंविदा के अनुच्छेद 27 में अल्पसंख्यकों के अधिकारों की सुरक्षा के लिए यह लिखा गया :

वे राज्य जहाँ प्रजातीय, धार्मिक अथवा भाषाई अल्पसंख्यक रहते हैं, ऐसे अल्पसंख्यक समुदाय के लोगों को, अपने समूह के अन्य सदस्यों के साथ मिलकर अपनी संस्कृति का आनन्द उठाने, अपने धर्म का पालन अथवा प्रचार करने तथा अपनी भाषा का प्रयोग करने के अधिकार से वंचित नहीं किया जाएगा।

प्रारंभ में ऐसा विचार था कि इस प्रावधान की प्रकृति नकारात्मक है अर्थात् यह केवल अल्पसंख्यक समुदाय के सदस्यों के समानता के अधिकार पर राज्य द्वारा किसी प्रकार प्रतिबंध लगाने से मना करता है। परंतु बाद में इसकी व्याख्या सकारात्मक दृष्टिकोण से गई। मानव अधिकार समिति ने 1994 में अपनी सामान्य टिप्पणी में अनुच्छेद 27 की यह व्याख्या दीः

हालाँकि अनुच्छे 27 की अभिव्यक्ति नकारात्मक है तथापि यह अनुच्छेद एवं 'अधिकार' के अस्तित्व को मान्यता देता है और माँग करता है कि इसका खण्डन नहीं किया जाएगा। अतः प्रत्येक सदस्य–राज्य का यह दायित्व है कि वह इसके खण्डन एवं उल्लंघन के विरुद्ध इसके अस्तित्व एवं उपभोग की सुरक्षा का आश्वासन दें। अतः इनकी सुरक्षा के लिए सकारात्मक उपायों की आवश्यकता है, केवल राज्य के कार्यो के विरूद्ध ही नहीं (वैधानिक, न्यायिक अथवा प्रशासनिक) बल्कि राज्य के अंदर रहने वाले अन्य व्यक्ति के विरुद्ध भी।

हालाँकि अनुच्छेद 27 में सुरक्षित किए गए अधिकार व्यक्तिगत अधिकार हैं परंतु ये अधिकार अल्पसंख्यक समुदाय द्वारा अपनी संस्कृति, भाषा अथवा धर्म को बचाए रखने की योग्यता पर निर्भर करते हैं। अतः अल्पसंख्यकों की अस्मिता को बचाए रखने, इनके सदस्यों को अपनी संस्कृति तथा भाषा का प्रयोग एवं विकास करने तथा समुदाय के अन्य सदस्यों के साथ मिलकर अपने धर्म का अनुपालन करने के लिए राज्यों को सकारात्मक कदम उठाने की आवश्यकता पड़ सकती है। इस संदर्भ में ध्यान देने योग्य बात यह है कि ये सकारात्मक उपाय प्रसंविदा के अनुच्छेद 2(1) तथा 26 का अवश्य सम्मान करें– भिन्न, अल्पसंख्यक समुदायों के बीच व्यवहार तथा उन समुदायों से संबंधित लोगों था

जनसंख्या के शेष भाग के बीच व्यवहार – दोनों दृष्टिकोणों से। तथापि यदि इन उपायों का संबंध अनुच्छेद 27 में गारंटी किए गए अधिकारों की परिस्थितियों को सुधारने का है तो उन्हें प्रसंविदा के अंतर्गत न्यायोचित भेदभाव कहा जा सकता है बशर्ते कि ये तर्क पूर्ण तथा निष्पक्ष मानदण्डों पर आधारित हों।

उपरोक्त स्पष्टीकरण के बावजूद तथ्य है कि प्रसंविदा केवल न्यूनतम परम्परागत अल्पसंख्यक अधिकारों (अर्थात् सांस्कृतिक, धार्मिक, भाषाई) की सुरक्षा की बात करती है। साथ ही ये अधिकार व्यक्तियों को अल्पसंख्यक समुदाय के सदस्य के रूप में मिले हुए हैं न कि अल्पसंख्यकों को एक समुदाय के रूप में। इन विषयों को बाद में संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकार आयोग के उप–आयोग ने उठाया।

सह आयोग के भेदभावहीनता की धारणा तथा अल्पसंख्यकों की सुरक्षा को निम्न प्रकार से परिभाषित कियाः

1. भेदभाव की रोकथामः किसी भी ऐसे कार्य की रोकथाम जो किसी व्यक्ति अथवा समूह को ऐसे समान व्यवहार से रोकते हैं जिसकी वे आशा करते हैं।
2. अल्पसंख्यकों की सुरक्षा का अर्थ है गैर–प्रधान समूह की सुरक्षा जो सामान्यतः बहुसंख्यक समूह के साथ समानता के व्यवहार की इच्छा रखने के साथ, अपनी मूल विशिष्टताओं के संरक्षण के लिए विभेदीकृत व्यवहार की भी आशा करता है जो उन्हें बहुसंख्यक समुदाय से अलग करते हैं। इसका अर्थ है कि ऐसे व्यक्तियों अथवा समुदायों के साथ विभेदीकृत व्यवहार, यदि वह इन समुदाय के कल्याण अथवा संतुष्टि के लिए प्रयुक्त किया जाता है, न्यायोचित है।

अन्य कार्यो के अतिरिक्त सह–आयोग ने अल्पसंख्यकों के अधिकारों के लिए एक घोषणापत्र पर भी चर्चा आरंभ की।

## 9-5 vYil[;dk d vf/kdkjk ij ?kk"k.kki=

जैसा कि उफपर चर्चा की गई है कि भेदभाव की रोकथाम तथा अल्पसंख्यकों की सुरक्षा से सम्बन्धित उप–आयोग की स्थापना 1962 में की गई। इस उप–आयोग ने अल्पसंख्यकों से संबंधित मुद्दों का गहराई से अध्ययन किया तथा अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर एक घोषणापत्र की आवश्यकता सुझाई। ऐसे एक घोषणापत्र का मसौदा 1979 में युगोस्लाविया द्वारा मानव अधिकार आयोग को सौंपा गया। इस मसौदे ने आगे चर्चा के लिए आधार तैयार किया जो 1980 के दशक में चलती रही। अन्ततः राष्ट्रीय या प्रजातीय, धार्मिक या भाषाई अल्पसंख्यकों के अधिकारों का घोषणापत्र 1992 में तैयार हुआ था संयुक्त राष्ट्र आमसभा द्वारा अपनाया गया। यह घोषणापत्र नागरिक, राजनीतिक अधिकारों की प्रसंविदा के अनुच्छेद 27 से प्रेरित था। तथापि इसने इन अधिकारों को सशक्त एवं सुस्पष्ट किया जिसने अल्पसंख्यक समुदाय के लोगों को अपनी सामूहिक अस्मिता बनाए रखने अथवा उसका विकास करने के योग्य बनाया। अल्पसंख्यकों के कार्यकारी समूह के अध्यक्ष प्रो. अस्बजन एइडी के (Prof. Asbjon Eide) अनुसार, यह घोषणापत्र अल्पसंख्यकों के अधिकारों तथा उन राज्यों, जहाँ वे रहते हैं, के कर्त्तव्यों की बात करता है। जहाँ अधिकारों को "व्यक्ति के अधिकार" के रूप में स्पष्ट किया गया है वहाँ उन राज्यों के अल्पसंख्यकों के प्रति कर्त्तव्य, पाक्षिक रूप से, के समूह के रूप में है। जहाँ व्यक्ति इन अधिकारों का

दावा कर सकते हैं वहाँ राज्य इनका कार्यान्वयन अल्पसंख्यकों के सामूहिक अस्तित्व के लिए पर्याप्त परिस्थितियों की उपस्थिति का आवश्वासन दिए बिना नहीं कर सकता।

### 9-5-1 vYi l[;dk d vf/kdkj

नोट

राष्ट्रीय अथवा प्रजातीय, धार्मिक तथा भाषाई अल्पसंख्यकों से संबंधित लोगों के अधिकारों पर घोषणापत्र 18 दिसम्बर 1992 को संयुक्त राष्ट्र आमसभा द्वारा अपने प्रस्ताव संख्या 47/135 के माध्यम से अपनाया गया। यह घोषणापत्र अल्पसंख्यकों के अस्तित्व, विकास तथा विशिष्ट अस्मिता के अधिकार की सुरक्षा के मानदण्ड निर्धारित करता है जिसमें राज्यों से माँग की गई है कि वे वास्तकि समानता स्थापित करने तथा विशिष्ट अस्मिता की सुरक्षा के लिए सकरात्मक परिस्थितियों के निर्माण के लिए विशेष कदम उठाए।

घोषणापत्र के अनुच्छेद 1 के अनुसार सदस्य–राज्य अपनी सीमाओं के अंदर अल्पसंख्यकों के अस्तित्व था उनकी राष्ट्रीय अथवा प्रजातीय, सांस्कृतिक, धार्मिक तथा भाषाई पहचान की सुरक्षा करेंगे तथा उनकी अस्मिता को प्रोसाहन देने के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ जुटाएँगे। यह अनुच्छेद आगे लिखता है कि इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए सदस्य–राज्य उपयुक्त वैधानिक अथवा अन्य कदम उठाएँगे। अल्पसंख्यकों की अस्मिता तथा संस्कृति के संरक्षण के लिए अन्य उपायों में न्यायिक, प्रशासनिक, व्यावसायिक, शैक्षणिक नीतियाँ निहित की गई है।

घोषणापत्र के अनुच्छेद 2 में अल्पसंख्यकों के विशिष्ट अधिकारों की चर्चा की गई है। अनुच्छेद 2.1 के अनुसार इन अधिकारों का मूल आधार यह है कि राष्ट्रीय अथवा प्रजातीय, धार्मिक, भाषाई अल्पसंख्यकों से सम्बंधित लोग अपनी संस्कृति का आनन्द उठा सकें, अपने धर्म का अनुपालन तथा प्रचार कर सकें तथा निजी एवं सार्वजनिक स्तर पर बिना किसी हस्तक्षेप अथवा भेदभाव के स्वतंत्रतापूर्वक अपनी भाषा का प्रयोग कर सकें।

इस अनुच्छेद में निम्न अधिकार दिए गए हैं :

1. राष्ट्रीय तथा, जहाँ उपयुक्त हो, क्षेत्रीय स्तर पर उन अल्पसंख्यकों समूहों, जिसका वे भाग हैं, अथवा उन क्षेत्रों जहाँ वे रहते हैं, से संबंध राष्ट्रीय अथवा, जहाँ उपयुक्त हों, क्षेत्रीय स्तर पर लिए जाने वाले निर्णयों में प्रभावशाली भागेदारी। परन्तु, यह भागेदारी राष्ट्रीय विधिनिर्माण के प्रतिकूल नहीं होनी चाहिए।
2. अपने अलग समुदाय स्थापित करने तथा उन्हें बनाए रखने का अधिकार।
3. बिना किसी भेदभाव के, अपने समूह के लोगों, अन्य अल्पसंख्यक समूहों के लोगों तथा विश्व के अन्य नागरिकों के साथ (जिनके साथ वे प्रजातीय, धार्मिक अथवा भाषाई दृष्टिकोण से संबंधित हैं) स्वतंत्रता एवं शान्तिपूर्ण सम्बन्ध बनाने का अधिकार।

घोषणापत्र का अनुच्छेद 3 यह स्पष्ट कर देता है कि अल्पसंख्यक समुदाय से संबंधित लोग इन अधिकारों का व्यक्तिग स्तर पर तथा समूह के अन्य लोगों के साथ मिलकर एक समुदाय के रूप में, बिना किसी भेदभाव के उपयोग कर सकते हैं। इसमें यह भी स्पष्ट कर दिया गया है कि इस घोषणापत्र में दिए गए अधिकारों के प्रयोग करने अथवा न करने से अल्पसंख्यक समुदाय के किन्हीं व्यक्ति को कोई नुकसान नहीं होगा।

## 9-5-2 jkT;k d dÙk0;

घोषणापत्र में दिए गए अधिकारों का अध्ययन स्पष्ट कर देता है कि ये अधिकार केवल नकारात्मक नहीं है जो राज्यों को स्वतंत्राता एवं समानता में हस्तक्षेप करने पर प्रतिबंध लगाते हैं। प्रभावशाली कार्यान्वयन के लिए ये अधिकार राज्यों से सकारात्मक उपायों की माँग करते हैं। अतः घोषणापत्र उन कदमों की चर्चा भी करता है जो राज्य को उठाने चाहिए ताकि इन अधिकारों का सही ढंग से उपभोग हो सके। ये निम्नलिखित है :

### vu|PNn 4

1. जहाँ आवश्यक हो राज्य यह आश्वस्त करेंगे कि अल्पसंख्यक समूह से संबंधित व्यक्ति अपने मानव अधिकारों तथा मौलिक स्वतंत्रताओं का बिना किसी भेदभाव तथा कानून के समक्ष समानता के संदर्भ में उपभोग कर सकें।
2. राज्य इस प्रकार की अनुकूल परिस्थितियों के निर्माण के लिए कदम उठाएँगें जो अल्पसंख्यक समुदाय से संबंधित लोगों को अपनी विशिष्टताओं की अभिव्यक्ति करने तथा अपनी संस्कृति, भाषा, धर्म, परंपराओं तथा रीति रिवाजों का विकास करने के योग्य बनाएँ, केवल ऐसे मामलों को छोड़कर जहाँ कुछ विशिष्ट परम्पराएँ राष्ट्रीय कानूनों का उल्लंघन करती हैं अथवा वे अंतर्राष्ट्रीय कानून के विरुद्ध हैं।
3. राज्य इस प्रकार के उपयुक्त कदम उठाएँ, जिनमें जहाँ संभव हो सके, अल्पसंख्यक समुदाय के लोगों को अपनी मातृभाषा सीखने था अपनी मातृभाषा में पढ़ने के लिए पर्याप्त अवसर मिल सके।
4. जहाँ संभव हो, राज्यों को शिक्षा के क्षेत्र में ऐसे कदम उठाने चाहिए जिनसे उनके क्षेत्राधिकार में रहने वाले अल्पसंख्यकों के इतिहास, परम्पराओं, भाषा तथा संस्कृति के ज्ञानवर्धन को प्रोत्साहन मिल सके। साथ ही अल्पसंख्यकों को संपूर्ण समाज का ज्ञान प्राप्त करने के लिए भी पर्याप्त अवसर प्रदान किए जाने चाहिए।
5. राज्यों को ऐसे उपयुक्त कदम उठाने चाहिए जिससे अल्पसंख्यक समुदाय के लोग देश के आर्थिक विकास तथा वृद्धि में पूरी तरह भाग ले सके।

### vu|PNn 5

1. राष्ट्रीय नीतियों तथा कार्यक्रमों का योजना निर्माण तथा कार्यान्वयन इस प्रकार किया जाएगा जिनमें अल्पसंख्यकों के न्यायोचित हितों को ध्यान में रखा जाए।
2. राज्यों के बीच सहयोग तथा सहायता संबंधी कार्यक्रम का योजना निर्माण तथा कार्यान्वयन इस प्रकार किया जाए जिनमें अल्पसंख्यकों के न्यायोचित हितों को ध्यान में रखा जाए।

### vu|PNn 8

घोषणापत्र में दिए गए अधिकारों के प्रभावकारी उपभोग के लिए राज्यों द्वारा उठाए गए कदम प्रत्यक्षतः मानव अधिकारों के सार्वभौमिक घोषणापत्र में दिए गए समानता के अधिकार के विरुद्ध नहीं माने जाएँगे।

नोट

उपरोक्त प्रावधानों से यह स्पष्ट है कि घोषणापत्र को अपनाने का अभिप्राय है कि राज्य, किन्हीं भी परिस्थितियों में, अल्पसंख्यकों के अस्तित्व का सम्मान एवं संरक्षण करें था इनके सदस्य अपने जीवनयापन के सभी आवश्यक संसाधन बनाए रखें। इसके अतिरिक्त अस्बजन एइडी के अनुसार राज्य केवल इन अल्पसंख्यक समुदायों के साथ किसी प्रकार का भेदभाव न करे बल्कि इसकी भेदभावों से सुरक्षा भी करें। इसके अतिरिक्त राज्य हर रूप में इन्हें अपनी अस्मिता बनाए रखने तथा उसका विकास करने के लिए अनुकूल परिस्थितियों का निर्माण करेंगे। ये सभी कार्य राज्य के कर्त्तव्य हैं। अतः आशय यह है कि राज्य इन अधिकारों का कार्यान्वयन अपने उपलब्ध संसाधनों की अधिकतम सीमा तक करेंगे तथा वे ईमानदारी से घोषणापत्र के उद्देश्यों को प्राप्त करने की कोशिश करेंगे।

## 9-6 vU; iko/kku

नागरिक–राजनीतिक अधिकारों की अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा, (ICCPR) के अनुच्छेद 27 तथा राष्ट्रीय एवं प्रजातीय, धार्मिक तथा भाषाई अल्पसंख्यकों से संबंधित लोगों के अधिकारों के घोषणापत्र के अतिरिक्त कुछ अन्य अंतर्राष्ट्र प्रापत्र भी अल्पसंख्यकों को सुरक्षा प्रदान करेत हैं। निम्नलिखित अन्तर्राष्ट्रीय प्रापत्रों के प्रावधान – विशेषतः अल्पसंख्यकों के विरूद्ध भेदभाव, असहिष्णुता, हिंसा, घृणा, अपराध आदि – भी अल्पसंख्यकों के अधिकारों की सुरक्षा पर प्रभाव डालते हैं।

1. 1945 का संयुक्त राष्ट्र चार्टर
2. जनसंहार के अपराध की रोकथाम तथा सजा पर संयुक्त राष्ट्र का अभिसमय, 1948
3. मानव अधिकारों का सार्वभौमिक घोषणापत्र, 1948
4. शिक्षा में भेदभाव के विरुद्ध अभिसमय, यूनेस्को, 1960
5. सभी प्रकार के नस्लीय भेदभाव के उन्मूलन पर संयुक्त राष्ट्र का अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमय, 1965
6. आर्थिक–सामाजिक–सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा
7. नस्ल तथा नस्लीय पूर्वाग्रह पर यूनेस्को घोषणापत्र, 1978
8. धार्मिक विश्वास पर आधारित सभी प्रकार की असहिष्णुता तथा भेदभाव के उन्मूलन पर संयुक्त राष्ट्र घोषणापत्र, 1981
9. बाल अधिकार अभिसमय, 1989
10. मानव अधिकारों पर विश्व अभिसमय का वियाना घोषणापत्र तथा कार्यकारी योजना,
11. अल्पसंख्यकों के लिए रचनात्मक राष्ट्रीय प्रबंध पर भेदभाव की रोकथाम तथा अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के लिए उप–आयोग के विशेष रिर्पोटर अस्बजन एइडी की रिपोर्ट।

12. मानव अधिकार आयोग का संयुक्त राष्ट्र प्रस्ताव 1995/24 जिसका शीर्षक है राष्ट्रीय या प्रजातीय धार्मिक तथा भाषाई अल्पसंख्यकों से संबंधित लोगों के अधिकार, जिसमें अल्पसंख्यकों के लिए एक कार्यकारी समूह का निर्माण किया गया।
13. सभी प्रकार के नस्लीय भेदभाव के उन्मूलन पर अंतर्राष्ट्रीय अभिसमय के अंतर्गत बनाई गई नस्लीय भेदभाव के उन्मूलन समिति द्वारा अपनाई गई सामान्य सिफारिश।
14. राष्ट्रीय अथवा प्रजातीय, धार्मिक तथा भाषाई अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर घोषणापत्र पर अस्बंजन एइडी की कमेन्ट्री, संयुक्त राष्ट्र प्रापत्र E/CN.4/sub.2/AC.5/2001/2
15. नस्लवाद, नस्लीय भेदभाव, विदेशी द्वेष तथा सम्बन्धित असहिष्णुता के विरूद्ध विश्व अभिसमय का डरबन (Durban) घोषणापत्र तथा कार्यकारी योजना संयुक्त राष्ट्र 2001

## 9-7 fuxjkuh jpukr=

अंतर्राष्ट्रीय अभिसमयों तथा प्रसंविदाओं की अवस्थिति बहुपक्षीय संधियों की होती है। इनमें से अधिकतरने संधियों के प्रावधानों के कार्यान्वयन के निरीक्षण के लिए स्वायत्त विशेषज्ञों की समितियाँ स्थापित की हुई है। आप पहले पढ़ चुके हैं कि निम्नलिखित कुछ संधि आधारित निगरानी संस्थाएँ हैं जिनका कार्य सम्बद्ध अभिसमयों/प्रसंविदाओं में अल्पसंख्यकों से संबंधित प्रावधानों तथा मानदंडों को सदस्य–राज्यों द्वारा अनुपालन का निरीक्षण करना है :

1. नागरिक–राजनीतिक अधिकारों की अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा (ICCPR) के अंतर्गत मानव अधिकार समिति
2. आर्थिक–सामाजिक–सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा (ICESCR) के अंतर्गत आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक अधिकार समिति
3. सभी प्रकार के नस्लीय भेदभाव के उन्मूलन पर संयुक्त राष्ट्र के अंतर्राष्ट्रीय अभिसमय के अंतर्गत नस्लीय भेदभाव के उन्मूलन समिति
4. बाल अधिकार समिति

सभी सदस्य–राज्यों का कर्त्तव्य है कि वे अपनी अपनी प्रारंभिक रिपोर्ट संधि की स्वीकृति अनुवर्ती रिपोर्ट पाँच वर्ष में एक बार प्रस्तुत करें जिनमें उनसे आशा की जाती है कि वे उन सभी विशेष वैधानिक, प्रशासनिक तथा न्यायिक कदमों, नीतियों तथा कार्यक्रमों की सूचना दें जो उन्होंने अल्पसंख्यकों के विरुद्ध भेदभाव को समाप्त करने के लिए उठाए हैं। उन्हें अल्पसंख्यकों की भागेदारी का अंश अर्थात् अल्पसंख्यकों के बच्चों, आर्थिक विकास, सामाजिक कल्याण, शिक्षा स्वास्थ्य जैसे क्षेत्रों में अल्पसंख्यकों की भागेदारी के अंश पर आँकड़ें भी प्रदान करने होते हैं।

नोट

नागरिक–राजनीतिक अधिकारों की अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा, (ICCPR) के अनुच्छेद 20(2) के अंतर्गत राज्यों का कर्त्तव्य है कि किसी प्रकार की राष्ट्रीय, नस्लीय अथवा धार्मिक घृणा के प्रचार को रोके जो भेदभाव, हिंसा अथवा शत्रुता को भड़का सकती है।

राज्यों की रिपोर्ट पर विचार करते समय, विभिन्न संधि संगठन, आर्थिक–सामाजिक–सांस्कृतिक अधिकारों पर अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा, महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव उन्मूलन समिति, या उत्पीड़न के विरुद्ध समिति सरकारी प्रतिनिधियों से अल्पसंख्यकों के बारे में प्रश्न पूछ सकते हैं और पूछते भी है। इन रिपोर्टो का संधि संगठनों द्वारा सार्वजनिक बैठकों में परीक्षण होता है जिनमें गैर–सरकारी संस्थाएँ तथा आम जनता भी भाग ले सकती है। अल्पसंख्यक समुदाय तथा गैर–सरकारी संगठन समिति के सदस्यों को सम्बद्ध सूचनाएँ प्रदान कर सकते हैं।

HRC, CERD तथा CAT सदस्य राज्यों द्वारा कथित मानदंडों के उल्लंघन से संबंधित संधि आधारित शिकायतें अथवा आवेदनपत्र भी प्राप्त कर सकती हैं, बशर्ते कि संबद्ध राज्य ने उस संधि को स्वीकृति दी हो तथा इस विशिष्ट प्रक्रिया को स्वीकार किया हो। राष्ट्रीय अथवा प्रजातीय, धार्मिक तथा भाषाई अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर घोषणापत्र एक बाध्यकारी संधि नहीं है। अतः इसके अंतर्गत कार्यान्वयन का कोई बाध्यकारी रचनातंत्र नहीं है। तथापि विभिन्न सदस्य–राज्यों पर संयुक्त राष्ट्र के संगठनों विशेषकर कार्यकारी समूहों तथा रिर्पोटरों के माध्यम से नजर रखी जाती है।

### 9-7-1 dk;dkjh leg

घोषणापत्र के अनुपालन की निगरानी के लिए एक अर्थपूर्ण रचनातंत्र प्रदान करने के लिए मानव अधिकार आयोग ने अपने प्रस्ताव 1995/24 में निर्णय लिया जो वर्ष में पाँच दिन के लिए बैठक करेगा तथा घोषणापत्र में वर्णित अल्पसंख्यकों के अधिकारों को प्रचारित करेगा।

यह विशेषत हैः

1. राष्ट्रीय तथा नस्लीय, धार्मिक तथा भाषाई अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर घोषणापत्र के प्रोत्साहन तथा व्यावहारिक उपलब्धियों की जाँच करना।
2. अल्पसंख्यकों की समस्याओं के संभव हलों का परीक्षण करना जैसे अल्पसंख्यकों के बीच परस्पर तथा सरकार के साथ आपसी तालमेल को प्रोत्साहन।
3. राष्ट्रीय तथा नस्लीय, धार्मिक तथा भाषाई अल्पसंख्यकों के अधिकारों के वृहत्तर प्रोत्साहन तथा सुरक्षा के लिए उपयुक्त उपाय सुझाना।

## 9-8 jkT;k rFkk {k=h; leguk dh ifrfØ;k

अधिकतर देशों का दावा है कि उनके देशों में अल्पसंख्यक समुदाय समानता एवं भेदभावहीनता के अधिकारों का आनन्द उठा रहे हैं, उनकी भाषा, संस्कृति, तथा धर्म पूरी तरह सुरक्षित है जबकि असलियत यह है कि पश्चिम के उदारवादी धर्मनिरपेक्ष प्रजातांत्रिक देशों ने भी अल्पसंख्यकों की भाषा तथा संस्कृति के संरक्षण एवं विकास के लिए पर्याप्त कदम नहीं उठाए हुए हैं। उदाहरण के लिए, फ्रांस में धर्मनिरपेक्षता के नाम पर सांस्कृतिक समानुरूपता को प्रोत्साहि किया जाता है। सार्वजनिक नौकरियों में नस्लीय

एवं धार्मिक भेदभाव काफी व्यापक है। तथापि इंग्लैण्ड, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया जैसे देशों में, बहुसंस्कृतिवाद को अब काफी हद तक स्वीकार किया जाने लगा है।

इस संदर्भ में भारत का रिकॉर्ड भी मिला जुला है। इसके धार्मिक अल्पसंख्यक समुदायों को कई बार जन हत्या का सामना करना पड़ता है, जिसमें कई बार कानून की रक्षा करने वालों की परोक्ष सहमति होती है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 25–28 धार्मिक स्वतंत्रता तथा इससे संबंधित अधिकार प्रदान करते हैं। अनुच्छेद 29 अल्पसंख्यकों की भाषा एवं लिपि की सुरक्षा करता है। भारत सरकार ने 1992 में एक अधिनियम द्वारा अल्पसंख्यकों के लिए राष्ट्रीय आयोग (National Commission on Minorities) की भी स्थापना की हुई है। अल्पसंख्यकों की सुरक्षा एवं कल्याण के लिए इसने कई और कदम उठाए हैं जिनका वर्णन अन्य इकाई में किया जाएगा।

पाकिस्तान तथा बांग्लादेश में अहमदियों जैसे अल्पसंख्यकों को अपने धर्म का स्वतंत्र रूप से अनुसरण करने की इजाजत नहीं है। पाकिस्तान का ईशनिन्दा कानून धार्मिक अल्पसंख्यकों तथा धार्मिक असहमति रखने वालों के लिए खतरा है।

यूरोप में अल्पसंख्यकों के अधिकारों की सुरक्षा के लिए क्षेत्रीय रचनातंत्रों का निर्माण किया गया है। इनमें से कुछ क्षेत्रीय यूरोपीय समझौते निम्नलिखित हैं:

1. मानव अधिकार तथा मूल स्वतंत्रताओं की सुरक्षा पर अभिसमय, कॉउन्सिल ऑफ यूरोप, 1950
2. यूरोपीय सोशल चार्टर, कॉउन्सिल ऑफ यूरोप, 1961
3. राष्ट्रीय अल्पसंख्यकों पर विशेषज्ञों की जेनेवा बैठक, सी एस सी ई, 1991
4. मानवीय आयाम अभिसमय की मास्कों बैठक के प्रापत्र, सी एस सी ई, 1991
5. मानवीय आयाम पर हेलसिंकी निर्णय, सी एस सी ई, 1992
6. राष्ट्रीय अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के लिए प्रेफमवर्क सम्मेलन, यूरोप परिषद, 1994
7. राष्ट्रीय अल्पसंख्यकों के शिक्षा संबंधी अधिकारों पर हेग सिपफारिशें, अर्न्तप्रजातीय सम्बन्ध फाउण्डेशन, 1996

### 9-8-1 vYil[;dk dk fujUrj Hk; d स्त्रkr

आक्रामक राष्ट्रवाद, धार्मिक कट्टरवाद, असहिष्णुता तथा विदेश द्वेष के उदय के पश्चात् विश्व के कई देशों, यूरोप, अमेरिका, दक्षिण एशिया समेत, में अल्पसंख्यक समुदाय आसान निशाना बन गए हैं। सितम्बर 11, 2001 (9/11) की घटना के पश्चात् मुस्लिम समुदाय को यूरोप तथा अमेरिका में संदेहास्पद दृष्टिकोण से देखा जाता है। इसी तरह भारत में कट्टरवाद का उदय भी मुसलमानों तथा ईसाइयों के लिए खतरा है।

कई यूरोपीय देशों में, "इस्लामभय" (Islamophobia) को धार्मिक असहिष्णुता की अभिव्यक्ति के रूप में स्वीकार किया जाता है। इन सभी प्रवृत्तियों पर 2001 के डरबन घोषणा तथा कार्य योजना, 2001 में विचार किया गया जिसमें माँग की गई कि सदस्य–राज्य अल्पसंख्यकों पर असंकलित आँकड़ें प्रकाशि करें तथा अभिशासन संस्थाओं की सामाजिक दृष्टि से और अधिक व्यापक बनाऐं। यहाँ यह याद रखना जरूरी है कि इस प्रकार की सिफारिशें भारत में भी अल्पसंख्यकों पर कई आयोगों तथा समितियों ने दी है। सभी जगह

नोट

सामान्य राय यह है कि अल्पसंख्यकों की पहचान तथा सुरक्षा चार शर्तो पर आधारित हैं: उनके अस्तित्व की सुरक्षा, गैर–बहिष्करण, भेदभावहीनता तथा गैर–सम्मिलन। यह भी एक तथ्य है कि अल्पसंख्यकों की सुरक्षा समाज में शांति तथा मेलमिलाप को बढ़ावा देती है तथा विकास के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार करती है। किसी भी तरह से यह देश की एकता तथा अखण्डता को खतरा नहीं है।

## 9-9 vYil[;d dY;k.k

अल्पसंख्यक कार्य मंत्रालय का गठन 29 जनवरी, 2006 को किया गया था। इसका उद्देश्य 6 (छह) अधिसूचित अल्पसंख्यक समुदायों मुस्लिमों, इसाईयों, सिक्खों, बौद्धों, पारसियों और जैनियों के कल्याण और सामाजिक, आर्थिक विकास के लिए नीतियां, योजनाएं और कार्यक्रम तैयार करना है, जो भारत की आबादी का 19 प्रतिशत से अधिक है। अक्टूबर 2016 से, मंत्रालय के आदेश पत्र का विस्तार किया गया ताकि इसमें हज यात्रियों के लिए भी व्यवस्था की जा सके।

### vYil[;dk d dY;k.k d fy, 15 l=h dk;Øe

अल्पसंख्यकों के कल्याण के लिए प्रधानमंत्री के द्वारा नये 15 सूत्री कार्यक्रम की घोषणा जून 2006 में की गई थी। इस कार्यक्रम के उद्देश्य इस प्रकार हैं:

(क) शिक्षा के अवसरों में बढ़ोतरी,

(ख) मौजूदा और नई योजनाओं के जरिए स्वरोजगार के लिए ऋण सहायता में वृद्धि और राज्य व केंद्र सरकार की नौकरियों में भर्ती के जरिए आर्थिक गतिविधियों और रोजगार में अल्पसंख्यकों की उचित भागीदारी सुनिश्चित करना,

(ग) ढांचागत विकास से जुड़ी योजनाओं में उचित भागीदारी सुनिश्चित करते हुए अल्पसंख्यकों के जीवन स्तर में सुधार लाना,

(घ) सांप्रदायिक हिंसा की रोकथाम और नियंत्रण करना।

नए कार्यक्रम का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि उपेक्षितों के लिए बनाई गई विभिन्न सरकारी योजनाओं का लाभ अल्पसंख्यक समुदाय के उपेक्षित वर्गों को मिलें। इन योजनाओं का लाभ समान रूप से अल्पसंख्यकों तक भी पहुंचना सुनिश्चित करने के लिए नए कार्यक्रम में अल्पसंख्यकों की अधिक संख्या वाले क्षेत्रों में विकास परियोजनाओं का कुछ हिस्सा केंद्रित करने पर विचार किया गया है। यह भी प्रावधान किया गया है कि जहां तक संभव हो, विभिन्न योजनाओं के अंतर्गत 15 प्रतिशत वास्तविक लक्ष्य एवं वित्तीय परिव्यय अल्पसंख्यकों के लिए निर्धारित हों।

### vYil[;d Nk=k d fy, Nk=ofÙk ;k tuk

मंत्रालय अधिसूचित अल्पसंख्यक समुदायों के छात्रों को शिक्षा की दृष्टि से मजबूत बनाने के लिए निम्नलिखित तीन छात्रवृत्ति योजनाएं लागू कर रहा है

1. मैट्रिक पूर्व छात्रवृत्ति
2. मैट्रिक के बाद छात्रवृत्ति; और
3. योग्यता और धन आधारित छात्रवृत्ति

छात्रवृत्ति योजनाओं में पारदर्शिता सुधारने के लिए 2017–18 के दौरान छात्रवृत्तियों की संख्या बढ़ाने के लिए अल्पसंख्यक मामलों के मंत्रालय सहित भारत सरकार के विभिन्न मंत्रालयों के लिए राष्ट्रीय छात्रवृत्ति पोर्टल (एनएसपी) का एक नया और संशोधित संस्करण शुरू किया गया। इस मंत्रालय की उपरोक्त तीनों छात्रवृत्ति योजनाएं इस पोर्टल पर हैं। छात्रवृत्तियां प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण (डीबीटी) मोड में छात्रों के बैंक खातों में हस्तांतरित कर दी जाती है। जहां आधार संख्या उपलब्ध है छात्रों के बैंक खातों को उनसे जोड़कर ऐसे खाता में धनराशि हस्तांतरित की जा रही है।

1- efVªd iwoZ Nk=ofÙk ;kstuk % अल्पसंख्यक समुदायों के छात्रों के लिए मैट्रिक पूर्व छात्रवृत्ति योजना को 30 जनवरी, 2008 में मंजूरी दी गई थी। केंद्रीय क्षेत्र की इस योजना के लिए केंद्र से शत–प्रतिशत धनराशि मिलती है। पिछली परीक्षा में 50 प्रतिशत अंक पाने वाले छात्र, जिनके माता–पिता/अभिभावक की सालाना आमदनी 1.00 लाख रूपये से अधिक नहीं है वह इस योजना के अंतर्गत मैट्रिक पूर्व छात्रवृत्ति प्राप्त करने के हकदार हैं। योजना के अंतर्गत नवीनीकरण के अलावा हर वर्ष 30 लाख नई छात्रवृत्तियां देने का प्रस्ताव है। 30 प्रतिशत छात्रवृत्तियां लड़कियों के लिए अलग रखी गई हैं। प्रत्येक चुने हुए छात्र को 1000 रूपये से लेकर 10,700 रूपये तक की छात्रवृत्ति दी जाती है। योजनावधि (2012–17) के दौरान 414.50 लाख ताजा छात्रवृत्तियां देने और पिछली के नवीनीकरण के लिए 12वीं पंचवर्षीय योजना में 5,000 करोड़ रूपये के खर्च की व्यवस्था की गई है।

2- efVªd ds ckn Nk=ofÙk ;kstuk % अल्पसंख्यक समुदायों के छात्रों के लिए मैट्रिक के बाद छात्रवृत्ति योजना 2007 में शुरू की गई थी। यह केंद्रीय क्षेत्र की योजना है जो भारत में सरकारी आवासीय उच्चतर माध्यमिक स्कूलों/कॉलेजों सहित उच्चतर माध्यमिक स्कूलों/कॉलेजों और संबंद्ध राज्य सरकारों/केंद्रशासित प्रशासन द्वारा पारदर्शी तरीके से चुनेगए और अधिसूचित पात्र निजी संस्थानों में अध्ययन के लिए प्रदान की जाती है। पिछले वर्ष की वार्षिक परीक्षा में 50 प्रतिशत अंकपाने वाले छात्र, जिनके माता–पिता/अभिभावकों की सलाना आमदनी 2.00 लाख रूपये से अधिक नहीं है वह इस छात्रवृत्ति को प्राप्त करने के हकदार हैं। योजना के अंतर्गत नवीनीकरण के अलावा हर वर्ष 5 लाख नई छात्रवृत्तियां देने का प्रस्ताव है। 30 प्रतिशत छात्रवृत्तियां के लिए अलग रखी गई हैं। यदि पर्याप्त संख्या में लड़कियां उपलब्ध नहीं होगी तो ये छात्रवृत्तियां लड़कियों के लिए अलग रखी गई हैं। यदि पर्याप्त संख्या में लड़कियां उपलब्ध नहीं होगी तो ये छात्रवृत्तियां पात्र लड़कों को दे दी जाएंगी। 12 वीं पंचवर्षीय योजना अवधि (2012–17) के दौरान 37.02 लाख ताजा छात्रवृत्तियां देने और नवीनीकरण के लिए 2850.00 करोड़ रूपये का खर्च प्रदान किया गया है।

3- ;kX;rk vkSj /ku vk/kkfjr Nk=ofÙk ;kstuk % योग्यता और धन आधारित छात्रवृत्ति योजना केंद्रीत क्षेत्र की योजना है जिसे 2007 में शुरू किया गया था। इस छात्रवृत्ति का शत–प्रशित खर्च केंद्र सरकार द्वारा वहन किया जाता है। इसके अंतर्गत उपयुक्त प्राधिकार द्वारा मान्यता प्राप्त संस्थानों में स्नातक एवं स्नातकोत्तर स्तरों पर व्यावासयिक और तकनीकी पाठयक्रमों के लिए छात्रवृत्तियां दी जाती हैं। इस योजना के अंतर्गत हर साल नवीनीकरणों के अतिरिक्त 60,000 नयी छात्रवृत्तियां प्रदान किए जाने का

नोट

प्रस्ताव है। 30 प्रतिशत छात्रवृत्तियां लड़कियों के लिए अलग रखी गई हैं। यदि पर्याप्त संख्या में लड़कियां उपलब्ध नहीं होगी तो ये छात्रवृत्तियां पात्र लड़कोंको दे दी जाएंगी।

योजना में पेशेवर और तकनीक कोर्स के लिए 85 संस्थानों को सूचीबद्ध किया गया है। अल्पसंख्यक समुदाय के पात्र छात्रों को इन संस्थानों में दाखिला दिया जाता है और कोर्स की पूरी फीस लौटा दी जाती है अन्य संस्थानों में पढ़ने वाले छात्रों की कोर्स फीस 20,000 रूपये प्रतिवर्ष लौटा दी जाती है। इसके अलावा एक दिवाछात्र 5,000 रूपये और छात्रावास में रहने वाला छात्र 10,000 रूपये भरण–पोषण भत्ते का भी हकदार है। पात्रता के लिए छात्र ने किसी ऐसे तकनीकी अथवा पेशेवर संस्थान में दाखिला लिया हो जो उपयुक्त प्राधिकार द्वारा मान्यता प्राप्त हो। यदि छात्र का दाखिला प्रतिस्पर्धा परीक्षा के बिना हुआ है तो उसके 50 प्रतिशत से कम अंक नहीं होने चाहिए। उसके परिवार की वार्षिक आय सभी स्रोतों से 2.50 लाख रूपये से अधिक नहीं होनी चाहिए। 12वीं पंचवर्षीय योजना (2012–17) के दौरान 4.91 लाख ताजा छात्रवृत्तियां देने और नवीनीकरण के लिए 1580 करोड़ रूपये का खर्च प्रदान किया गया है।

## ekSykuk vktkn jk"Vªh; QSyksf'ki

अल्पसंख्यक छात्रों के लिए मौलाना आजाद राष्ट्रीय फैलोशिप (एमएएनएफ) योजना की शुरूआत केंद्रीय क्षेत्र की योजना के रूप में 2009 में की गई थी। इस योजना को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) के जरिए लागू किया गया। योजना के अंतर्गत शत–प्रतिशत केंद्रीय सहायता प्रदान की जाती है। योजना का उद्देश्य एम.फिल और पीएचडी पाठयक्रमों जैसे उच्च अध्ययनों के लिए केंद्र सरकार द्वारा अधिसूचित अल्पसंख्यक समुदायों के छात्रों को वित्तीय सहायता के रूप में 5 वर्ष की फैलोशिप प्रदान करना है। फैलोशिप में मान्यता प्राप्त सभी विश्वविद्यालय/संस्थान शामिल है। यह फैलोशिप ऐसे रिसर्च स्कॉलर को दी जाती है जो जेआरएफ/एसआरएफ बनने के लिए नियमित और पूर्णकालिक एम.फिल और पीएचडी पाठयक्रम की पढ़ाई कर रहा है, यूजीसी के नियम एम.फिल पूर्व और पीएचडी पूर्व अवस्था में लागू होंगे। इसमें स्न्नातकोत्तर स्तर पर न्यूनतम 55 प्रतिशत अंक हासिल करना अनिवार्य है। 30 प्रतिशत फैलोशिप महिला उम्मीदवारों के लिए निर्धारित की गई है। यदि महिला उम्मीदवारों की संख्या कम पाई जाती है तो इसे उसी अल्पसंख्यक समुदाय के पुरूष उम्मीदवारों को दे दिया जाता है।

## Uk;k lojk&eq¶r dksfpax vkSj lca) ;kstuk

अल्पसंख्यक समुदाय के उम्मीदवारों के लिए मुफ्त कोचिंग और संबंद्ध योजना की शुरूआत मंत्रालय द्वारा 2007 में की गई थी।

## ubZ mM+ku

इस योजना का उद्देश्य उन अल्पसंख्यक उम्मीदवारों को वित्तीय सहायता प्रदान करना है जो संघ लोक सेवा आयोग, कर्मचारी चयन आयोग और राज्य लोक सेवा आयोग द्वारा कराई जा रही प्रारंभिक परीक्षा को पास कर रहे हैं ताकि उन्हें संघ और राज्य सरकारों की प्रशासनिक सेवाओं में नियुक्ति के लिए प्रतिस्पर्धा के योग्य बनाया जा सके और प्रारंभिक परीक्षा को पास करने वाले उम्मीदवारों को संधि वित्तीय सहायता प्रदान करके प्रशासनिक सेवाओं में अल्पसंख्यकों का प्रतिनिधित्व बढ़ाया जा सके।

## पढ़ो परदेस में

इस योजना का उद्देश्य अधिसूचित अल्पसंख्यक समुदाय के आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के योग्य छात्रों को ब्याज सब्सिडी देना है ताकि उन्हें विदेश में उच्च शिक्षा के बेहतर अवसर मिल सकें और उनके नियोजन की संभावना बढ़ सके। योजना के अंतर्गत ब्याज सब्सिडी योग्य छात्रों को केवल एक बार उपलब्ध होगी चाहे स्नातकोत्तर शिक्षा के लिए अथवा पीएचडी स्तर के लिए छात्र को स्नाकोत्तर, एम.फिल अथवा पीएचडी स्तर पर विदेश में मान्यता प्राप्त पाठयक्रम में दाखिला मिला हो। इस योजना को एक प्रमुख बैंक यानी केनरा बैंक के जरिए लागू किया गया है। जैसाकि अल्पसंख्यक कार्य मंत्रालय (एमडीएमए) द्वारा योग्यता और धन आधारित योजना और केनरा बैंक के बीच समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए गए हैं।

## नई रोशनी

मंत्रालय ने नई रोशनी नाम से एक विशिष्ट योजना लागू की है। यह योजना सभी स्तरों पर सरकारी व्यवस्थाओं, बैंकों और मध्यस्थों के साथ बातचीत के लिए ज्ञान, उपकरण और तकनीक प्रदान करने के लिए अल्पसंख्यक महिलाओं के नेतृत्व विकास, उन्हें अधिकार संपन्न बनाने और उनमें विश्वास कायम करने के उद्देश्य से लागू की गई। इस योजना को गैर सरकारी संगठनों के जरिए लागू किया गया है।

## राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग

1978 में स्थापित अल्पसंख्यक आयोग, राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग कानून, 1992 लागू होने के बाद संवैधानिक निकाय बन गया और इसका नाम राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग कर दिया गया। पहले संवैधानिक राष्ट्रीय आयोग की स्थापना 1993 में की गई थी। एनसीएम 1992 केकानून में 1995 में संशोधन किया गया और आयोग में उपाध्यक्ष के पद का प्रावधान किया गया। 1995 में संशोधन के साथ आयोग में सदस्य संख्या 7 (अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष सहित) कर दी गई। अधिनियम की धारा 3(2) के तहत प्रावधान है कि अध्यक्ष सहित 5 सदस्य अल्पसंख्यक समुदाय से होंगे।

## राज्य अल्पसंख्यक आयोग

तेरह राज्य सरकारों आंध्र प्रदेश, असम, बिहार, छत्तीसगढ़, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली, झारखंड, कर्नाटक, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु व पश्चिम बंगाल सरकारों ने अल्पसंख्यकों के लिए संवैधानिक आयोग स्थापित किये। वहीं दो राज्यों मणिपुर व उत्तराखंड ने गैर–संवैधानिक आयोगों का गठन किया।

## भाषायी अल्पसंख्यक आयोग (सीएलएम)

भाषायी अल्पसंख्यकों के लिए आयुक्त (सीएलएम) का कार्यालय संविधान के अनुच्छेद 350बी के प्रावधान के मुताबिक जुलाई 1957 में स्थापित किया गया था जो राज्य पुनर्गठन आयोग (एसआरसी) की सिफारिशों के फलस्वरूप संविधान (7वां संशोधन) कनून, 1956 के कारण अस्तित्व में आया। अनुच्छेद 350 बी में व्यवस्था है कि सीएलएम भारत में भाषायी अल्पसंख्यकों को संविधान के अंतर्गत प्रदान किए गए। सभी मामलों की जांच कर सकता है और ऐसे अंतराल में इन मामलों की जानकारी राष्ट्रपति को दे सकता है। जब

राष्ट्रपति निर्देश दे सकते हैं और सभी ऐसी रिर्पोटों को संसद के दोनों सदनों में रखने के लिए प्रेरित करते हैं और राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों की संबद्ध सरकारों/प्रशासनों को भेजतेहैं। सीएलएम संगठन का मुख्यालय दिल्ली में है और इसके तीन जोनल कार्यालय बेलागवी, चेन्नई और कोलकाता में हैं। सीएलएम राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों के साथ उन सभी मामलों पर बात करता है जो संवैधानिक और राष्ट्रीय सहमति के साथ भाषायी अल्पसंख्यकों को प्रदान किए गए संरक्षण के कार्यान्वयन से जुड़े हैं। भाषायी अल्पसंख्यकों के आयुक्त की जुलाई 2014 से जून 2015 की अवधि तक की 52वीं रिपोर्ट को क्रमशः 3 मई, 2016 और 4 मई, 2016 को राज्य सभा और लोक सभा में रखा गया था।

## Hkk"kk;h vYil[;dk d fy, lo/kkfud lj{k.k

भारत के संविधान के अंतर्गत धार्मिक और भाषायी अल्पसंख्यकों को कुछ सुरक्षा प्रदान की गई है। संविधान का अनुच्छेद 29 और 30 अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा करता है और उनकी अलग भाषा, लिपि और संस्कृति की रक्षा करने और उनकी पसंद के शैक्षणिक संस्थान स्थापित करने और उनका प्रबंध करने के उनके अधिकार को मान्यता देता है। अनुच्छेद 347 किसी राज्य अथवा किसी हिस्से की बहुत अधिक आबादी द्व ारा बोली जाने वाली किसी भाषा को आधिकारिक मान्यता के लिए राष्ट्रपति के निर्देश का प्रावधान करता है। उससे इस उद्देश्य के लिए राष्ट्रपति विशिष्ट निर्देश दे सकते हैं। अनुच्छेद 350 केंद्र/राज्य में इस्तेमाल होने वाली किसी भी भाषा में केंद्र अथवा राज्य के किसी प्राधिकार की शिकायतों के निपटारे के लिए अभिवेदन देने का अधिकार प्रदान करताहै। अनुच्छेद 350ए में भाषायी अल्पसंख्यक समूहों से ताल्लुक रखने वालोंके बच्चों को प्रारंभिक शिक्षा मातृ भाषा में देने की व्यवस्था है। अनुच्छेद 350 बी भाषायी अल्पसंख्यक आयुक्त के रूप में नियुक्त विशेष अधिकारी प्रदान करता है जो संविधान के अंतर्गत भाषायी अल्पसंख्यकों को प्रदान किए गए सुरक्षा संबंधी सभी मामलों की जांच करता है।

## dnh; oDQ ifj"kn

वक्फ मुस्लिम कानून द्वारा मान्यता प्राप्त उद्देश्यों के लिए धार्मिक, पवित्र अथवा धर्मार्थ उद्देश्यों के लिये चूल अथवा अचल परिसंपत्तियों का स्थायी समर्पण है। इन धार्मिक पहलुओं के अलावा वक्फ सामाजिक और आर्थिक उत्थान का माध्यम भी है। वक्फ बोर्ड के कामकाज से संबंधित मुद्दों और देश में वक्फ के समुचित प्रशासन से संबंधित मुद्दों के बारे में परामर्श देने के लिए केंद्र सरकार ने 1964 में केंद्रीय वक्फ परिषद की स्थापना वक्फ कानून, 1954 की धारा 8 ए के अंतर्गत (अब वक्फ कानून 1995 की धारा (9) की उपधारा (1) के रूप में पढ़ें) एक संवैधानिक निकाय के रूप में की। वर्तमान परिषद का 2005 में पुनर्गठन किया गया। वक्फ के प्रभारी केंद्रीय मंत्री केंद्रीय वक्फ परिषद के अध्यक्ष भी हैं। केंद्रीय वक्फ परिषद शहरी वक्फ संपत्तियों के विकास और शिक्षा विकास कार्यक्रमों के कार्यान्वयन से समाज के विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

## njxkg [oktk lkgc dkuu

इस कानून के अंतर्गत दरगाह ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती (आरए) की दरगाह और उसके धर्मार्थ दान के समुचित प्रबंध के लिए प्रावधान किये जाते हैं। इस केंद्रीय कानून के अंतर्गत, दरगाह का प्रबंध, उसके धर्मार्थ दान का नियंत्रण और प्रबंधन केंद्र सरकार

द्वारा नियुक्त दरगाह समिति के रूप में जानी जाने वाली प्रतिनिधि समिति के पास है। राजस्थान के अजमेर में जिले में स्थित ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती की दरगाह अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त वक्फ है। इस दरगाह का संचालन दरगाह ख्वाजा साहब अधिनियम 1955 के तहत किया जाता है। भारत सरकार की मदद से शहरी विकास मंत्रालय और स्थानीय प्रशासन के जरिए राजस्थान सरकार सक्रिय भागीदारी से दरगाह समिति सालाना उर्स में शामिल होने वाले लाखों जायरीनों के ठहरने के लिए एक योजना लागू कर रही है। यह सुविधा पहले विश्राम स्थली के नाम से जानी जाती थी और अब इसका नामकरण गरीब नवाज मेहमानखाना कर दिया गया है। इसका उद्देश्य दरगाह ख्वाजा साहब के जायरीनों के लिए बुनियादी सुविधाएं प्रदान करना है।

## 9-10 lkjk'k

सभी युगों में, बड़े समाजों एवं देशों के अंदर कुछ ऐसे समुदाय भी रहते रहे हैं जिनकी संख्या समाज के प्रधान समुदाय/समुदायों की अपेक्षा काफी कम होती है था जिनके सदस्य उपेक्षा एवं भेदभावों को सहन करते रहे हैं। ये अल्पसंख्यक समुदाय, जिनकी भाषा, संस्कृति तथा धर्म बहुसंख्यक समाज से भिन्न होतें हैं, अपनी भाषा तथा परम्पराओं को सुरक्षित करने में कठिनाई अनुभव करते हैं। पुराने समय में ऐसे समुदायों का शक्ति तथा पद से बहिष्कार तथा उनके सदस्यों को समान अवसरों से वंचित रखने को समाज की वास्तविकता के रूप में स्वीकार किया जाता था।

आज मानव इतिहास में पहली बार, भिन्न परंतु समान होने का अधिकार या समान होने का अधिकार या समान परंतु भिन्न होने के अधिकार को समानता तथा भेदभावहीना के सर्वव्यापी मानव अधिकार मानदण्डों के अंतर्गत सुदृढ़ किया गया है।

आज ऐसा भी अनुभव किया जा रहा है कि इन असहाय अल्पसंख्यक समुदायों द्वारा अपने समान अधिकारों के उपभोग के लिए विशिष्ट उपाय करने की आवश्यकता है। बिना विशिष्ट उपायों के केवल कानून के समक्ष समानता देने से वास्तविकता समानता प्राप्त नहीं होगी। नागरिक राजनीतिक अधिकारों की अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा (ICCP) के अनुच्छेद 27 पर आधिकारिक टिप्पणी तथा अल्पसंख्यक समुदाय से सम्बन्धित लोगों के अधिकार पर घोषणापत्र के अनुच्छेद 8(3) में यह स्पष्ट कर दिया गया है कि इस प्रकार के विशिष्ट उपाय समानता के अधिकार का उल्लंघन नहीं होंगे। हालाँकि नागरिक–राजनीतिक अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा (ICCPR) का अनुच्छेद 27 का सम्बन्ध अल्पसंख्यक संस्कृति, धर्म तथा भाषा की पहचान के अधिकार के साथ है तथापि विशिष्ट उपायों के सिद्धान्त का आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक अधिकारों तक विस्तार तक दिया गया है क्योंकि अल्पसंख्यकों के अस्तित्व, प्रतिष्ठा तथा धार्मिक स्थलों को समय–समय पर खतरा बना रहता है, अतः राज्य से आशा की जाती है कि वे कानून के शासन का कड़ाई से पालन करें जिसके लिए पुलिस, सशस्त्र सेनाओं तथा न्यायिक व्यवस्था में अल्पसंख्यकों का उचित प्रतिनिधित्व होना चाहिए। वैधानिक तथा अन्य निर्वाचित संस्थाओं में अल्पसंख्यकों का उचित प्रतिनिधित्व आश्वस्त करने के लिए ऐसा अनुभव किया जा रहा है कि चुनाव प्रतिक्रया को इस तरह अपनाया जाना चाहिए जो अल्पसंख्यकों के प्रति मैत्रीपूर्ण हो ताकि प्रजातंत्र असली अर्थो में अन्तर्वेशित बन सकें, यह केवल बहुमत पर आधारित न हों।

नोट

उपरोक्त सभी चिन्ताओं ने बहुसंस्कृतिवाद तथा बहुलवाद के सिद्धांतों को जन्म दिया है जो विविधता को समृद्धि का एक स्रोत समझते हैं।

इसका विपरीत दृष्टिकोण, अल्पसंख्यकों को "वे" समझना तथा उन्हें शक की निगाह से देखना तथा उनकी निंदा करना आदि कई प्रकार के झगड़े पैदा कर देता है तथा बल के प्रयोग का कारण होता है तथा पृथक्कतावाद को बढ़ावा देता है। अतः मानव अधिकार आंदोलनों की कार्य सूची पर अन्तर–सामुदायिक सम्बन्ध, विवादों का निबटारा तथा शांति प्रमुख विषय हैं।

## 9-11 vH;kl i'u

1. अल्पसंख्यकों की प्रमुख विशेषताएँ क्या हैं?
2. अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के कारण बताइए।
3. अल्पसंख्यकों की संस्कृति, भाषा तथा धर्म को संरक्षित करना कठिन क्यों है?
4. अल्पसंख्यकों के लिए विशेष उपायों का औचित्य क्या है?
5. अन्तर्राष्ट्रीय न्याय के स्थायी न्यायालय ने समानता के लिए अल्पसंख्यकों के लिए भिन्न व्यवहार की आवश्यकता की किस प्रकार व्याख्या की है?
6. अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकार कानून में अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के लिए क्या प्रावधान हैं?
7. नागरिक–राजनीतिक अधिकारों की अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा, (ICCPR) के अनुच्छेद 27 पर मानव अधिकार समिति की सामान्य कमेन्ट्री किस पर है?
8. नागरिक–राजनीतिक अधिकारों की अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा, (ICCPR) के अन्तर्गत मानव अधिकार समिति का निगरानी रचनातंत्र किस प्रकार कार्य करता है?
9. अल्पसंख्यकों को मिलने वाली धमकियों के क्या स्रोत हैं?

# bdkbZ&10 vU; fiNM+k oxksZa dk fodkl

**नोट**

## ikB&lajpuk

10.0 प्रस्तावना

10.1 मंडल आयोग

10.2 ओबीसी का उप–वर्गीकरण

10.3 राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग (NCBC)

10.4 अन्य पिछड़ा वर्गों का कल्याण

10.5 सारांश

10.6 अभ्यास प्रश्न

## 10-0 izLrkouk

अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसी) एक वर्ग है, यह सामान्य वर्ग यानी जनरल में ही सम्मिलित होता है पर इसमें आने वाली जातियां गरीबी और शिक्षा के रूप में पिछड़ी होती हैं यह भी सामान्य वर्ग का भाग है। ये जातियाँ वर्गीकृत करने के लिए भारत सरकार द्वारा प्रयुक्त एक सामूहिक शब्द है। यह अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के साथ–साथ भारत की जनसंख्या के कई सरकारी वर्गीकरण में से एक है 'भारतीय संविधान में ओबीसी ''सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों 'के रूप में वर्णित किया जाता है, और भारत सरकार उनके सामाजिक और शैक्षिक विकास को सुनिश्चित करने के लिए हैं – उदाहरण के लिए, ओबीसी सार्वजनिक क्षेत्र के रोजगार और उच्च शिक्षा के क्षेत्र में 27 प्रतिशत आरक्षण के हकदार हैं। जातियों और समुदायों के सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक कारकों के आधार पर जोड़ा या हटाया जा सकता है सामाजिक न्याय और अधिकारिता भारतीय मंत्रालय द्वारा बनाए रखा गया। ओबीसी की यह सूची गतिशील है। 1985 तक, पिछड़ा वर्ग के मामलों में गृह मंत्रालय में पिछड़ा वर्ग प्रकोष्ठ के बाद देखा गया था। कल्याण की एक अलग मंत्रालय अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों से संबंधित मामलों के लिए भाग लेने के लिए (सामाजिक एवं अधिकारिता मंत्रालय को) 1985 में स्थापित किया गया था। अन्य पिछड़े वर्गों के सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण से संबंधित कार्यक्रमों के कार्यान्वयन, और अन्य पिछड़ा वर्ग, पिछड़ा वर्ग के लिए राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग वित्त एवं विकास निगम और राष्ट्रीय आयोग के कल्याण के लिए गठित दो संस्थानों से संबंधित मामले है 'दिसंबर 2018 में ओबीसी उप–जातियों के उप–वर्गीकरण के लिए आयोग की एक रिपोर्ट के अनुसार, अन्य पिछड़ा वर्गों और ओबीसी के रूप में वर्गीकृत सभी उप–जातियों के 25 फीसदी जातियां ही ओबीसी आरक्षण का 97: फायदा उठा रही हैं, जबकि कुल ओबीसी जातियों में से 37 प्रतिशत में शून्य प्रतिनिधित्व है।

## 10-1 eaMy vk;ksx

1 जनवरी 1979 को दूसरा पिछड़ा वर्ग आयोग स्थापित करने का निर्णय राष्ट्रपति द्वारा अधिकृत किया गया था। आयोग को लोकप्रिय मंडल आयोग के रूप में जाना जाता

नोट

है, इसके अध्यक्ष बिन्देश्वरी प्रसाद मंडल ने दिसंबर 1980 में एक रिपोर्ट पेश की, जिसमें कहा गया है कि ओबीसी की जनसंख्या, जिसमें हिंदुओं और गैर हिंदुओं दोनों शामिल हैं, मंडल आयोग के अनुसार कुल आबादी का लगभग 52% है। 1979–80 में स्थापित मंडल आयोग की प्रारंभिक सूची में पिछड़ी जातियों और समुदायों की संख्या 3, 743 थी। पिछड़ा वर्ग के राष्ट्रीय आयोग के अनुसार 2006 में ओबीसी की पिछड़ी जातियों की संख्या अब 5,013 (अधिकांश संघ राज्य क्षेत्रों के आंकड़ों के बिना) बढ़ी है। मंडल आयोग ने ओबीसी की पहचान करने के लिए 11 संकेतक या मानदंड का विकास किया, जिनमें से चार आर्थिक थे।

हालांकि, इस खोज की आलोचना की गई थी, राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण में यह आंकड़ा 32% है। भारत में ओबीसी की सही संख्या पर पर्याप्त बहस है, जिसमें जनगणना पक्षपातपूर्ण राजनीति द्वारा समझौता किया गया है। आम तौर पर इसका अनुमान लगाया जा सकता है, लेकिन मंडल आयोग या राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण द्वारा उद्धृत आंकड़ों की तुलना में कम।

## 10-2 vkchlh dk mi&oxhZdj.k

अक्टूबर 2017 में, भारत के राष्ट्रपति राम नाथ कोविन्द ने भारतीय उच्चतम न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश जी रोहिणी की अगुवाई में, भारतीय संविधान के अनुच्छेद 340 के तहत पांच सदस्यीय आयोग को ओबीसी उप–वर्गीकरण के विचार को तलाशने के लिए अधिसूचित किया। राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग के आयोग ने 2011 में इसकी सिफारिश की थी और एक स्थायी समिति ने भी इसे दोहराया था। समिति के पास तीन बिंदु जनादेश है :

केन्द्रीय ओबीसी सूची के तहत आने वाले विभिन्न जातियों और समुदायों के बीच ''आरक्षण के लाभों के असमान वितरण की सीमा'' की जांच करना।

वास्तविक उप–वर्गीकरण के लिए तंत्र, मापदंड और मापदंडों को पूरा करने के लिए वास्तविक ओबीसी आरक्षण 27: रहेगा और इसके भीतर समिति को फिर से व्यवस्था करना होगा।

### vkchlh dh dsUæh; lwph ds fy, fdlh Hkh nksgjko dks gVkdj vkns'k ykuk

समिति को अपने संविधान के 12 हफ्तों में रिपोर्ट देना होगा। उत्तर प्रदेष में निम्न ओबीसी लगभग 35: आबादी का निर्माण करते हैं। ओबीसी उप–वर्गीकरण राज्य स्तर पर 11 राज्यों : पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, कर्नाटक, झारखंड, बिहार, जम्मू क्षेत्र और हरियाणा, और पांडुचेरी के केंद्रशासित प्रदेशों से पहले ही लागू किए जा चुके हैं। केंद्रीय ओबीसी सूची के उप–वर्गीकरण एक ऐसा विचार है जो लंबे समय से अतिदेय रहा है।

केंद्रीय मंत्रिमंडल ने अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसी) के उप–वर्गीकरण के मुद्दे की जांच के लिए संविधान के अनुच्छेद 340 के तहत एक आयोग की स्थापना के प्रस्ताव को मंजूरी दी। ओबीसी की क्रीमी लेयर 6 से बढ़ाकर 8 लाख रुपये की गई। आयोग की अवधि 31 मई 2019 तक बढ़ा दी गई है। इसकी रिपोर्ट में कहा गया है कि 97: ओबीसी आरक्षण के प्रमुख लाभार्थियों में कुर्मी, यादव, जाट (भरतपुर और ढोलपुर जिले के अलावा राजस्थान की जाट केंद्रीय ओबीसी सूची में हैं), सैनी, थेवर, एझावा और वोक्कलिगा जातियां है।

## 10-3 jk"Vªh; fiNMk oxZ vk;ksx (NCBC)

नोट

ifjp; % 102वाँ संविधान संशोधन अधिनियम, 2018 राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग (NCBC) को संवैधानिक दर्जा प्रदान करता है।

इसे सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों के बारे में शिकायतों तथा कल्याणकारी उपायों की जाँच करने का अधिकार प्राप्त है।

इससे पहले NCBC सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय के तहत एक सांविधिक निकाय था।

i"BHkfe % 1950 और 1970 के दशक में काका कालेलकर और बी.पी. मंडल की अध्यक्षता में क्रमशः दो पिछड़ा वर्ग आयोगों की नियुक्ति की गई।

1992 के इंद्रा साहनी मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने सरकार को निर्देश दिया था कि वह लाभ और सुरक्षा के उद्देश्य से विभिन्न पिछड़े वर्गों के समावेशन और बहिष्करण पर विचार करने तथा जाँच एवं सिफारिश के लिये एक स्थायी निकाय का गठन करे।

इन निर्देशों के अनुपालन में संसद ने वर्ष 1993 में राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग अधिनियम पारित किया और NCBC का गठन किया।

वर्ष 2017 में 123वाँ संविधान संशोधन विधेयक संसद में प्रस्तुत किया गया ताकि पिछड़े वर्गों के हितों को अधिक प्रभावी ढंग से संरक्षित किया जा सके।

अगस्त 2018 में इस विधेयक को राष्ट्रपति की सहमति मिली और NCBC को संवैधानिक दर्जा प्रदान किया।

संसद द्वारा एक अलग विधेयक पारित कर राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग अधिनियम, 1993 को निरस्त कर दिया गया है। अतः 1993 का अधिनियम अब अप्रासंगिक हो गया है।

### NCBC dh lajpuk

आयोग में पाँच सदस्य होते हैं जिसमें अध्यक्ष, उपाध्यक्ष तथा तीन अन्य सदस्य शामिल हैं। इनकी नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा हस्ताक्षरित एवं उसके मुहरयुक्त आदेश द्वारा होती है।

अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और अन्य सदस्यों के पद की सेवा शर्तें तथा कार्यकाल का निर्धारण राष्ट्रपति द्वारा किया जाता है।

### laoS/kkfud çko/kku

अनुच्छेद 340 अन्य बातों के साथ–साथ ''सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों'' की पहचान करने, उनके पिछड़ेपन की स्थितियों को समझने और उनके सामने आने वाली कठिनाइयों को दूर करने के लिये सिफारिशें करने की आवश्यकता से संबंधित है।

102वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा भारतीय संविधान में दो नए अनुच्छेदों 338 B और 342 A को जोड़ा गया। यह संशोधन अनुच्छेद 366 में भी कुछ परिवर्तन करता है।

अनुच्छेद 338 B सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों से संबंधित शिकायतों और कल्याणकारी उपायों की जाँच करने के लिये NCBC को अधिकार प्रदान करता है।

अनुच्छेद 342 A राष्ट्रपति को विभिन्न राज्यों एवं केंद्रशासित प्रदेशों में सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों को निर्दिष्ट करने का अधिकार प्रदान करता है। इन वर्गों को निर्दिष्ट करने के लिये वह संबंधित राज्य के राज्यपाल से परामर्श कर सकता है। हालाँकि यदि पिछड़े वर्गों की सूची में संशोधन किया जाना है तो इसके लिये संसद द्वारा अधिनियमित कानून की आवश्यकता होगी।

### 'kfä ;k¡ ,oa dk;Z

NCBC सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों को संविधान या किसी अन्य कानून के तहत प्रदत्त संरक्षण उपायों के कार्यान्वयन का मूल्यांकन करने हेतु संबंधित सभी मामलों की जाँच एवं निगरानी करता है।

सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के सामाजिक–आर्थिक विकास में भाग लेता है तथा सलाह देता है और संघ एवं किसी भी राज्य के अंतर्गत उनके विकास की प्रगति का मूल्यांकन करता है।

यह आयोग सुरक्षापायों के कार्यान्वयन पर अपनी वार्षिक रिपोर्ट राष्ट्रपति को प्रस्तुत करता है। इसके अलावा आयोग जब भी उचित समझे अपनी रिपोर्ट राष्ट्रपति को प्रस्तुत कर सकता है। राष्ट्रपति द्वारा संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष यह रिपोर्ट प्रस्तुत की जाती है।

इस तरह की कोई भी रिपोर्ट या उसका कोई हिस्सा, जो किसी भी राज्य सरकार से संबंधित हो, की एक प्रति राज्य सरकार को भेजी जाएगी।

NCBC सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के संरक्षण, कल्याण एवं विकास तथा उन्नति के संबंध में ऐसे अन्य कार्यों का भी निर्वहन करता है, जिन्हें संसद द्वारा बनाए गए कानून के प्रावधानों के अधीन राष्ट्रपति द्वारा विशेष रूप से उल्लिखित किया गया हो।

किसी भी मामले पर सुनवाई के दौरान इसे दीवानी न्यायालय के समान शक्तियाँ प्राप्त होती हैं।

### u;k vk;ksx vius iqjkus Lo:i ls fdl çdkj vyx gS \

नए अधिनियम ने यह स्वीकार किया है कि पिछड़े वर्गों को आरक्षण के अलावा विकास की भी आवश्यकता है।

अधिनियम में सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों (Socially and Educationally Backward Classes & SEdBCs) के विकास और विकास प्रक्रिया में नए NCBC की भूमिका से संबंधित प्रावधान किये गए हैं।

नए NCBC को पिछड़े वर्गों की शिकायतों के निवारण का अतिरिक्त कार्य सौंपा गया है।

अनुच्छेद 342 (A) पिछड़े वर्गों की सूची में किसी भी समुदाय को शामिल करने या हटाने के लिये संसदीय सहमति की अनिवार्यता को अधिक पारदर्शी बनाता है।

सूची–समावेशन और आरक्षण के अलावा यह विकास एवं कल्याण के सभी मापदंडों में समानता के प्रति प्रत्येक समुदाय के व्यापक तथा समग्र विकास एवं उन्नति को आवश्यक बनाता है।

## e|í

ऐसा माना जा रहा है कि राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग के नए संस्करण द्वारा विश्वसनीय और प्रभावी सामाजिक न्याय व्यवस्था प्रदान किये जाने की संभावना नहीं है।

नए NCBC की सिफारिशें सरकार के लिये बाध्यकारी नहीं हैं।

चूँकि इसे पिछड़ेपन को परिभाषित करने का प्राधिकार प्राप्त नहीं है, इसलिये यह विभिन्न जातियों द्वारा उन्हें पिछड़े वर्गों में शामिल किये जाने के लिये की जा रही मांगों के रूप में व्याप्त वर्तमान चुनौती का समाधान नहीं कर सकता है।

NCBC की व्यापकता को बनाए रखने तथा निकाय की इसके मूल (अनुच्छेद 340) से संबद्धता को समाप्त कर सरकार ने संविधान विशेष संरक्षण की संपूर्ण योजनाओं को खतरे में डाल दिया है।

विशेषज्ञ निकाय की जो विशेषताएँ सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्देशित की गईं थीं, वे नए NCBC की संरचना में उपलब्ध नहीं हैं।

हाल में जारी कुछ आँकड़ों से एस.सी.एस.टी. और ओबीसी श्रेणियों के विषम प्रतिनिधित्व का पता चलता है, ऐसे में मात्र संवैधानिक स्थिति तथा अधिक अधिनियमों से जमीनी स्तर पर समस्याओं का समाधान नहीं होगा।

अनुच्छेद 338 B (5) NCBC के परामर्श से पिछड़े वर्ग की सूची के आवधिक संशोधन संबंधी सर्वोच्च न्यायालय के अध्यादेश पर मौन है।

## l|>ko

इस संरचना में एक विशेषज्ञ निकाय की वे सुविधाएँ प्रदर्शित होनी चाहिये जो सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अनिवार्य की गई हैं।

सरकार द्वारा जातिगत जनगणना के निष्कर्षों और आयोग की सिफारिशों संबंधी जानकारी सार्वजनिक डोमेन पर उपलब्ध कराई जानी चाहिये।

आयोग की संरचना में लैंगिक संवेदनशीलता और हितधारकों के प्रतिनिधित्व को दर्शाया जाना चाहिये।

वोट बैंक की राजनीति के स्थान पर मूल्य आधारित राजनीति के मार्ग का अनुसरण किया जाना चाहिये ताकि आरक्षण का लाभ केवल समाज के पिछड़े वर्गों को ही मिल सके।

## 10-4 vU; fiNMk oxk dk dY;k.k

### vU; fiNMk oxk d fy, eSfVd iwo Nk=ofÙk

इस योजना में, व्यय 50:50 के अनुपात में केंद्र और राज्य के बीच बंट जाता है इस योजना का उद्देश्य अन्य पिछड़ा वर्गों (ओबीसी) के बच्चों को मैट्रिक पूर्व तक अध्ययन के लिए प्रोत्साहित करना है पात्रता के लिए आय की सीमा 2,50,000 प्रतिवर्ष से अधिक नहीं होनी चाहिए।

नोट

## vU; fiNMk oxk d fy, efVd d ckn Nk=ofÙk

योजना का उद्देश्य मैट्रिक के बाद/सेकेंडरी के बाद के स्तरों पर अध्ययन कर रहे ओबीसी छात्रों को वित्तीय सहायता प्रदान कर उन्हें पीएचडी डिग्री के स्तर तक लाना है। ये छात्रवृत्तियां मान्यता प्राप्त संस्थानों में अध्ययन के लिए उस राज्य सरकार/केंद्रशासित प्रशासन के जरिए दी जाती हैं जिससे आवेदनकर्ता ताल्लुक रखता है। यह योजना सीमित धनराशि योजना है। योजना के अंतर्गत, राज्य सरकारों/केंद्रशासित प्रशासनों को बजट की उपलब्धता के अनुसार उनकी प्रतिबद्ध देनदारी से अधिक 100 प्रतिशत केंद्रीय सहायता प्रदान की जाती है पात्रता के लिए माता पिता/अभिभावक की आय एक लाख प्रतिवर्ष (यदि काम में लगा है, स्व–रोजगार से होने वाली आय सहित) है।

## vkchlh yMdk vkj yMfd;k d fy, Nk=kokl k dk fuek.k

अन्य पिछड़ा वर्गों के लड़के और लड़कियों के लिए छात्रावासों के निर्माण की योजना में 2017–18 से संशोधन किया गया। इस योजना का उद्देश्य विशेष रूप से ग्रामीण इलाकों के सामाजिक और शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े छात्रों को छात्रावास की सुविधा प्रदान करना है ताकि वे सेकेंडरी और उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकें।

1. विभिन्न क्षेत्रों में छात्रावास में प्रति सीट पर खर्च विभिन्न इलाकों में इस प्रकार हैः
   (क) पूर्वोत्तर क्षेत्र–3.50 लाख रूपये प्रति सीट,
   (ख) हिमालयी क्षेत्र–3.25 लाख रूपये प्रति सीट
   (ग) देश के शेष हिस्से–3 लाख रूपये प्रति सीट (अथवा संबद्ध राज्य सरकार के लिए दरों की अनुसूची के अनुसार जो भी कम हो)
2. लड़कों के लिए छात्रावासों के निर्माण की लाग 60:40 के अनुपात में केंद्र और राज्य आपस में बांटेंगे
3. लड़कियों के छात्रावासों के मामले में राज्य सरकारों को 90 प्रतिशत केंद्रीय सहायता दी जाएगी और 10 प्रतिशत लागत राज्य सरकारें वहन करेंगी,
4. संघ शासित प्रदेशों के मामले में केंद्रीय सहायता 100 प्रतिशत होगी और पूर्वोत्तर राज्यों और 3 हिमालयी राज्यों (जम्मू और कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और उत्त. राखंड) के लिए यह 90 प्रतिशत है;
5. लड़के और लड़कियों के छात्रावासों के लिए केंद्रीय विश्वविद्यालयों/संस्थानों के लिए केंद्र सरकार की हिस्सेदारी 90 प्रतिशत है और शेष 10 प्रतिशत केंद्रीय विश्वविद्यालय/संस्थान द्वारा वहन किया जाएगा;
6. छात्रावास का निर्माण कार्य काम मिलने के 18 महिनें के भीतर अथवा केंद्रीय सहायता की पहली किश्त जारी होने के दो वर्ष के भीतर पूरा हो जाना चाहिए, जो भी पहले हो।
7. किसी भी मामले में समय 2 वर्ष से अधिक बढ़ाया नहीं जाएगा परियोजना में देरी के कारण यदि लागत बढ़ती है तो उसे राज्य/संस्थान द्वारा वहन किया जाएगा

8. एकीकृत छात्रावास का प्रस्ताव जिसमें अन्य पिछड़े वर्गों के लिए आवश्यक संख्या में सीटें आरक्षित हैं उस परियोजना के अंतर्गत विचार किया जाना चाहिए,
9. सांसद आदर्श ग्राम योजना (एसएजीवाई) के अंतर्गत चुने गए आदर्श गांवों में अन्य पिछड़े वर्गों के लड़के और लड़कियों के लिए छात्रावासों के निर्माण का कार्य हाथ में लिया जा सकता है बशर्ते, भूमि उपलब्ध हो और चुना गया गांव वर्तमान शैक्षणिक संस्थान के जलग्रहण क्षेत्र में स्थि हो।

## vkchlh Nk=ksa ds fy, jk"Vªh; QSyksf'ki

इस योजना का उद्देश्य ओबीसी छात्रों को वित्तीय सहायता प्रदान करना है ताकि वे विश्वविद्यालयों, अनुसंधान संस्थान और वैज्ञानिक संस्थानों में एम.फिल और पीएचडी जैसी उच्च शिक्षा को डिग्रियां प्राप्त कर सकें। इस योजना के अंतर्गत अन्य पिछड़ा वर्गों (ओबीसी) के छात्रों को वर्ष 2014–15 से प्रतिवर्ष कुल 300 जूनियर रिसर्च फैलोशिप और 2016–17 से 300 सीनियर रिसर्च फैलोशिप प्रदान की जा रही हैं योजना को लागू करने के लिए यूजीसी शीर्ष एजेंसी है और यह उपयुक्त तारीख पर मीडिया में विज्ञापन के जरिए योजना को अधिसूचित करता है। योजना में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) द्वारा मान्यता प्राप्त सभी विश्वविद्यालय/संस्थान शामिल हैं। फैलोशिप एम.फिल और पीएचडी करने वाले रिसर्च के छात्रों को दी जाती है। जे.आर.एफ स्तर के लिए फैलोशिप की दर 25,000 प्रतिमाह और एस.आर.एफ. स्तर के लिए यह 28,000 प्रतिमाह है।

इस योजना का उद्देश्य अन्य पिछड़ा वर्गों (ओबीसी) और आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों (ईबीसी) के योग्य छात्रों को ब्याज सब्सिडी देना है ताकि उन्हें विदेश में उच्च शिक्षा के लिए बेहतर अवसर मिल सकें और उनके नियोजन के अवसर बढ़ सकें। ओबीसी उम्मीदवारों की पात्रता के लिए, नियोजित उम्मीदवार की सभी स्रोतों से आमदनी, अथवा बेरोजगार उम्मीदवार के मामले में उसके माता–पिता/अभिभावक की कुल आमदनी वर्तमान क्रीमीलेयर मानदंड से अधिक नहीं होनी चाहिए। ईबीसी उम्मीदवार की पात्रता के लिए नियोजित उम्मीदवार की सभी स्रोतों से कुल आमदनी अथवा बेरोजगार उम्मीदवार के मामले में उसके माता–पिता/अभिभावक की कुल आमदनी 2.50 लाख प्रतिवर्ष से अधिक नहीं होनी चाहिए। एक वर्ष के लिए कुल व्यय में से 50 प्रतिशत राशि लड़कियों के लिए ब्याज सब्सिडी के रूप में रखी जाती है।

## bZchlh Nk=ksa ds fy, eSfVªd ds ckn Nk=ofÙk

यह राज्य सरकार और केंद्रशासित प्रदेशों के जरिए लागू केंद्र प्रायोजित योजना है। योजना का उद्देश्य मैट्रिक के बाद अथवा सेकेंडरी कक्षा की पढ़ाई कर रहे ईबीसी छात्रों को वित्तीय सहायता प्रदान करना है। इसकी पात्रता के लिए माता–पिता/अभिभावक की आय की सीमा 1.00 लाख प्रतिवर्ष (स्व–रोजगार सहित) है।

## [kkukcnks'kk@v)Z [kkukcnks'kk ¼Mh,uVh½ ds fy, eSfVªd iwoZ vkSj eSfVªd ds ckn MkW- vEcsMdj Nk=ofÙk

यह वर्ष 2014–15 में शुरू की गई केंद्र प्रायोजि योजना है जिसे उन डीएनटी छात्रों के कल्याण के लिए शुरू किया गया था जो एससी, एसटी, ओबीसी में शामिल नहीं

है। पात्रता के लिए आय की सीमा 2.00 लाख रूपये प्रतिवर्ष है। इस योजना को राज्य सरकारों/केंद्रशासित प्रशासनों के जरिए लागू किया गया। व्यय केंद्र और राज्य 75:25 के अनुपात में आपस में बांटते हैं।

नोट

## Nk=kokl k d fuekZ.k dh ukukth n'ke[k ;kstuk

यह वर्ष 2014—15 में शुरू की गई केंद्र प्रायोजित योजना है जिसे राज्य सरकारों/केंद्रशासित प्रशासनों/केंद्रीय विश्वविद्यालयों के जरिए लागू किया गया है। इस योजना का उद्देश्य उन डीएनटी छात्रों को छात्रावास की सुविधा प्रदान करना है जो एससी, एसटी अथवा ओबीसी में शामिल नहीं है ताकि वे सेकेंडरी और उच्च शिक्षा हासिल कर सकें। पात्रता के लिए आय सीमा 2.00 लाख रूपये प्रतिवर्ष है। केंद्र सरकार देशभर से प्रतिवर्ष अधिकतम 500 सीटें प्रदान करेगी। येाजना के अंतर्गत व्यय मानक छात्रावास के लिए प्रति सीट 3.00लाख रूपये है (जो केंद्र और राज्य के बीच 75:25 के अनुपात में बांटा जाता है) और फर्नीचर के लिए 5,000 रूपये प्रति सीट है। छात्रावास का निर्माण काम मिलने के 18 महीने के भीतर अथवा केंद्रीय सहायता जारी होने के दो वर्ष के भीतर पूरा होना चाहिए, जो भी पहले हो। किसी भी मामले में समय 2 वर्ष से अधिक बढ़ाया नहीं जाएगा। परियोजना में देरी के कारण यदि लाग बढ़ती है तो उसे राज्य/संस्थान द्वारा वहन किया जाएगा।

## jk"Vªh; fiNMk oxZ foÙk vkSj fodkl fuxe

राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग वित्त और विकास निगम (एनबीसीएफडीसी) को लाभ नहीं कमाने वाली कम्पनी के रूप में 1992 में शामिल किया गया। जिसका उद्देश्य पिछड़े वर्गों के लाभ के लिए आर्थिक और विकास संबंधी क्रियाकलापों को बढ़ावा देना तथा इन वर्गों के गरीब तबके को कौशल विकास अैर स्व—रोजगार उद्यम में सहायता करना है। यह सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय के अंतर्गत भारत सरकार का उपक्रम है। निगम लक्षित समूह जैसे पिछड़े वर्गों के सदस्यों को विभिन्न प्रकार के ऋण देता है। पिछड़े वर्गों के सदस्य जिनके परिवार की वार्षिक आय गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों की आय से दोगुने से कम (यानी ग्रामीण इलाकों में 98,000 रूपये और शहरी इलाकों में 1,20,000 रूपये) है। वह एनबीसीएफडीसी योजना के अंतर्गत एससीए के जरिए ऋण ले सकते हैं। विकास संबंधी अन्य गतिविधियों के अलावा, निगम देश के प्रमुख मेलों जैसे भारतीय अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मेला, दिल्ली हाट, सूरजकुंड क्रॉफ्ट मेला के साथ—साथ संबद्ध राज्यों में आयोजि प्रदर्शनियों/मेलों में भाग लेने के अवसर प्रदान करके लक्षित समूहों के कारीगरों के लिए मार्केटिंग की सुविधा को बढ़ावा दे रहा है।

एनबीसीएफडीसी परंपरागत कारीगरों को मार्केटिंग संपर्क स्थापित करने के लिए इन प्रदर्शनियों में अपने उत्पादों को प्रदर्शित करने के लिए मंच प्रदान करके मदद करता है। एनबीसीएफडीसी निगम की उन योजनाओं, विविध उत्पादों और सेवाओं को दर्शाने के लिए अपने राज्य की रास्ता दिखाने वाली एजेंसियों को प्रदर्शनियां आयोजित करने अथवा उनमें भाग लेने के लिए प्रेरित करता है जिनके लिए एनबीसीएफडीसी ने एससीए के जरिए देश के विभिन्न भागों के पिछड़े वर्गों के सदस्यों को वित्तीय सहायता प्रदान की है।

## 10-5 lkjk'k

नोट

संविधान निर्माण के दौरान स्पश्ट आश्वासन दिया गया था कि शासकीय नौकरियों का बंटवारा निष्पक्ष एवं अनुकूल पद्धति से होना चाहिए, जिसमें किसी भी वर्ग को शिकायत का मौका न मिले। आरंभ में सार्वजनिक क्षेत्र की नौकरियों में अनुसूचित जाति को 15 फीसदी तथा अनुसूचित जनजाति को 7.5 फीसदी आरक्षण दिया गया था।

बाद में अन्य पिछड़ा वर्ग हेतु आरक्षण का प्रावधान लागू हुआ। मंडल आयोग की सिफारिशों को मूल आधार बनाकर उच्चतम न्यायालय द्वारा 50 फीसदी की सीमा को ध्यान में रखकर पिछड़ों को 27 फीसदी आरक्षण की सिफारिश की गई। यह मंडल केस के नाम से ज्ञात है। एक शर्त इसमें लगा दी गई, जो उन्नत हो गए हैं, उन्हें लाभान्वित होने वालों की सूची से अलग कर दिया जाए। इस प्रकार क्रीमी लेयर को लाभ से अलग करने का कानून बना। साथ ही कहा कि आरक्षण केवल प्रारंभिक नियोजन तक सीमित रहे, क्योंकि अनुच्छेद 16 (4) पदोन्नतियों में किसी आरक्षण की इजाजत नहीं देता और जोर देकर कहा कि कुल आरक्षित कोटा, कुछ असाधारण स्थितियों को छोड़कर 50 प्रतिषत से अधिक नहीं रहना चाहिए।

नागरिकों के पिछड़े वर्ग पद की परिभाषा संविधान में नहीं दी गई है। पर अनुच्छेद 16 (4) में सामाजिक पिछड़ेपन पर बल दिया गया है न कि आर्थिक दृष्टि से पिछड़ेपन पर, इसलिए पिछड़े वर्ग की पहचान केवल और मात्र आर्थिक मानदंड पर नहीं किया जा सकता। इसी प्रावधान को ध्यान में रखकर न्यायालय ने उस अधिसूचना को अवैध ठहरा दिया था, जिसके द्वारा आर्थिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग को 10 फीसदी अतिरिक्त पद आरक्षित करने का प्रयास किया गया था।

केरल सरकार ने इस संबंध में एक उल्लेखनीय फैसला लिया था। 2008 में केरल में सरकार ने गरीबी रेखा से नीचे वाली उच्च जातियों के गरीब छात्रों के लिए सरकारी कॉलेजों में 10 फीसदी और विश्वविद्यालयों में 7.5 फीसदी सीटें आरक्षित कीं। केरल हाईकोर्ट में इस फैसले की संवैधानिकता को चुनौती दी गई। कोर्ट ने राज्य सरकार के फैसले को उचित ठहराया।

केरल उच्च न्यायालय की कोच्चि खंडपीठ ने केरल मुस्लिम जमात काउंसिल की उस याचिका को खारिज कर दिया था, जिसमें उच्च जाति के आर्थिक रूप से कमजोर लोगों को शिक्षण संस्थानों में आरक्षण देने के आदेश को चुनौती दी गई थी।

अदालत ने आदेश से सहमति जताते हुए कहा था कि उच्च और स्नातकोत्तर स्तर पर पिछड़े वर्गों के छात्रों को योग्य छात्रों के साथ प्रतिस्पर्धा करके दाखिला लेना चाहिए। राज्य में मुसलमानों की बेहतर होती स्थिति पर टिप्पणी करते हुए अदालत ने यह भी कहा था कि केरल में मुसलमानों की स्थिति में बड़ा बदलाव आया है। यह सही समय है कि इस समुदाय के नेता अपने ऊपर लगा पिछड़े का लेबल उतार फेंके तथा अन्य के साथ प्रतिस्पर्धा करने को तैयार हों।

नोट

संविधान के अनुच्छेद 46 में कहा गया है कि अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य दुर्बल वर्गों के षिक्षा और अर्थ संबंधी हितों में इजाफा होना चाहिए।

संविधान के अनुच्छेद 334 के अनुसार लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के स्थानों के आरक्षण का प्रावधान कुल जनसंख्या के अनुपात में हो। संविधान के अनुच्छेद 15 के भाग 4 द्वारा पिछड़े वर्ग के आरक्षण का प्रावधान है। फिर भी नागरिकों के पिछड़े वर्ग की परिभाषा संविधान में नहीं दी गई है, किंतु संविधान के प्रावधानों की व्याख्या में यह बिल्कुल स्पष्ट कर दिया है कि पिछड़े वर्ग का अर्थ सामाजिक तौर से पिछड़ी जातियों से ही है। इसके अंतर्गत आर्थिक पिछड़ेपन को वरीयता नहीं दी गई है।

## 10-6 vH;kl i'u

1. अन्य पिछड़ा वर्ग को परिभाषित कीजिए।
2. मंडल आयोग की सिफारिशों की व्याख्या करें।
3. अन्य पिछड़ा वर्गों के कल्याण हेतु सरकार ने क्या कदम उठाए हैं?

# bdkbZ&11 nfyr oxZ dk fodkl

नोट

ikB&lajpuk

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 दलित की परिभाषा

11.3 दलित के समानार्थी शब्दों की अर्थवत्ता की परख

11.4 दलित चेतना आंदोलन

11.5 अनुसूचित जाति कल्याण

11.8 सारांश

11.9 अभ्यास प्रश्न

## 11-0 mís';

सदियों से मानवीय अधिकारों से वंचित और तिरस्कृत भारतीय समाज का बहुसंख्यक वर्ग जो आज भी वर्ण–व्यवस्था और अस्पृश्यता का दंश झेल रहा है, उसके समता मूलक संघर्षो और आंदोलनों से उपजी दलित चेतना से आप परिचित होंगे। अब इस इकाई का सोद्देश्यपूर्ण ढंग से अध्ययन करने के उपरांत आप :

- वर्ण–व्यवस्था, जाति और अस्पृश्यता पर टिकी सामाजिक व्यवस्था के आयामों को समझ सकेंगे;
- असमानता, अन्याय और शोषण के विरुद्ध छेड़े गए साहित्येतर और साहित्यिक आंदोलनों से अवगत होंगे;
- हिन्दू–व्यवस्था द्वारा विभिन्न नामों से अभिहित जैसे शूद्र, अन्त्यज, पंचमा, अछूत, हरिजन आदि नामों के बरक्स दलि अस्मिता से भली–भाँति परिचित होंगे;
- यातना, दमन और उत्पीड़न से उपजी दलित चेतना एवं दलित वेदना को दलित साहित्य के माध्यम से समझ सकेंगे;
- भारतीय समाज व्यवस्था और ब्राह्मणवाद के वर्चस्व को परख सकेंगे; और
- प्रामाणिकता के ताप से गुजरते हुए वर्ण–व्यवस्था का खात्मा और समाज में समता, स्वतंत्रता और बंधुत्व की स्थापना की दलित साहित्य की मूल अवधारणा को तर्कपूर्ण ढंग से जान सकेंगे।

आइए, यह पहली इकाई आपके समक्ष है। इसका गंभीरता से अध्ययन करें।

## 11-1 izLrkouk

भारतीय समाज में व्याप्त वर्ण–व्यवस्था, जाति, अस्पृश्यता, शोषण, दमन और

नोट

उत्पीड़न के खिलाफ संघर्ष की लंबी ऐतिहासिक प्रक्रिया रही है। ईसा पूर्व गौतम बुद्ध के समय से आज तक अन्याय और वर्चस्व के विरुद्ध सामाजिक परिवर्तन के लिए धार्मिक, सांस्कृति, सामाजिक और राजनीतिक आंदोलन चलते रहे हैं। समय और काल परिवेष के अपने दबावों के फलस्वरूप यह आंदोलन तीव्रता और ठहराव से गुजरेत हुए नया आकार पाता रहा है। सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को अग्रसर करते हुए आज दलित साहित्य भी वर्ण–व्यवस्था के बरक्स एक सशक्त आंदोलन है।

हिंदू धर्म प्रणित समाज व्यवस्था इतनी जटिल है कि आज भी भारतीय समाज हजारों जातियों में बंटा हुआ है। जातिगत भेदभाव इस वैज्ञानिक युग में आज भी जड़ जमाए हुए है। दलित साहित्य इस जड़ को उखाड़ फेंकने के लिए कृतसंकल्प है। दलित साहित्य के प्रखर साहित्यकार ओम प्रकाश बाल्मीकि के शब्दों में, 'भारतीय समाज में वर्णव्यवस्था के आधार जो बंटवारा हुआ, उसकी ही देन है जातिभेद। जो असमानता, वर्चस्व और शोषण पर आधारित है। वर्ण–व्यवस्था के पक्षधर यह मानने को तैयार ही नहीं हैं कि विकास को रोक देने वाली यह व्यवस्था प्रगति पथ को सीमित कर देती है और समाज को संकीर्णता में बांध देती है।'

उल्लेखनीय है कि वर्णाश्रम–व्यवस्था पुनर्जन्म और कर्मफल के तर्क पर आधारित है। इसके तर्कों के अनुसार पूर्व जन्म में किए गए कर्म के अनुसार ऊँची या नीची जातियों में जन्म होता है, यानि जाति स्वयं भगवान का करिश्मा है। दलितों के लिए निर्विकार भाव से सवर्णो की सेवा करना आवश्यक बना दिया गया– यही उनकी मुक्ति का मार्ग था। ऐसे में यह समझना कोई मुश्किल काम नहीं रह जाता कि यह मुक्ति का मार्ग था या गुलामी का।

हिंदू समाज की सारी मान्यताएं दलितों के विरोध में खड़ी हैं। समाज में प्रचलित मुहावरें और लोकोक्तियां इस बात के अकाट्य प्रमाण प्रस्तुत करती हैं। भारतीय समाज में ऐसी अनेक कहावतें प्रचलित हैं जो दलितों के प्रति घृणा–भाव को दर्शाती हैं। किसी भी व्यक्ति से बात करते समय यह जुमला सुनने को मिल जाता है कि – 'क्या मुझे चोर–चमार समझ रखा है। 'एक कहावत है कि 'कोदो सावां अन्न नहीं, डोम–चमार जन नहीं।' ये तो बस कतिपय उदाहरण हैं। यदि ऐसे मुहावरों को इकट्ठा करें तो एक पूरे ग्रंथ की रचना हो सकती है। उपरोक्त कहावतें दलितों की स्थिति को ही बयान करती हैं। इसी तरह साहित्य कलाओं (लोक साहित्य तथा लोक कला) को 'इस वर्ण–व्यवस्था ग्रस्त समाज में कुछ जाति–विशेष से जोड़कर उनका उपहास करते हुए प्रायः उन्हें कला या साहित्य–क्षेत्र से दूर रखने का निरन्तर प्रयास किया जाता है। उदाहरण के लिए, उत्तर प्रदेश के कुछ लोकनृत्यों को चमार से 'चमरउव', कहार से 'कहरव', धोबी से 'धोबियउव' आदि कहकर न सिर्फ उन्हें उपेक्षित किया जाता है, बल्कि असंस्कृत भी समझा जाता है, जबकि ये सारी परंपराएं भरतमुनि के नाटयशास्त्र की पंरपरा से जुड़ी हैं। 'इन मान्यताओं में दलितों के प्रति जो अपमान, तिरस्कार और घृणा का भाव है, उसकी अभिव्यक्ति दलितों के नामकरण में भी परिलक्षित होती है।'

भारतीय समाज–व्यवस्था की भेदभाव पूर्ण क्रूर प्रणाली ने धार्मिक चोंगा पहनकर और मर्यादा का आवरण ओढ़कर ब्राह्ममणवाद का रूप धारण किया; जिसने धार्मिक कर्मकांड,

अंधविश्वास और जन्मना ऊँच–नीच की भावना को वैधता प्रदान की। आज भी तमाम संवैधानिक कानूनों के बावजूद परंपरागत रूप में ये मानवीय कुरीतियां और भयानकता के साथ हमारे समाज में विद्यमान हैं। भुक्तभोगी समाज साहित्यिक और राजनीतिक आंदोलन के साथ इस विकास प्रणाली के प्रतिरोध में खड़ा है, जिसका स्वरूप अखिल भारतीय दलित लेखन में झलक रहा है।

नोट

बुद्ध (ईसा पूर्व 563–483 ई.पू.) द्वारा विषमता के खिलाफ छेड़ा गया संघर्ष पूरे बौद्ध काल में विद्यमान रहा, लेकिन बौद्ध धर्म के विनाश के बाद प्रतिरोध की गति धीमी पड़ गई। साहित्य में सिद्धों, नाथों और संतों ने अपनी बानियों के माध्यम से इस संघर्ष और आंदोलन को जगाए रखा। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में म. ज्योतिबा फूले और 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में डॉ. आंबेडकर द्वारा छेड़ा गया सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक आंदोलन दलित उत्थान का प्रेरणा स्त्रोत बना।

दिलचस्प और अचंभित कर देने वाली बात यह थी कि स्वतंत्रता आंदोलन के केंद्र में दलित मुक्ति का प्रश्न शामिल नहीं था। उपनिवेशवाद की दोहरी मार झेल रही जातियों की चिंता राष्ट्रीय आंदोलन के एजेंडे से गायब थी। कांग्रेस और हिंदू नेताओं ने मुसलमानों के पृथक राजनैतिक अधिकारों तथा हितों को स्वीकार कर लिया था। इस समझौते में यह चिंता नहीं की गई कि दलित वर्गो के भी कुछ हित हैं और उन्हें भी राजनैतिक अधिकार मिलने चाहिए। यह स्थिति दलित वर्ग के लिए चिंताजनक थी। उन्हें भय था कि यदि अंग्रेजों ने भारत को आजाद कर दिया तो यह आजादी दलितों के लिए क्या महत्व रखती है? इस चिंता का मुख्य कारण यह था कि कांग्रेस और हिंदू महासभा के पास आजादी की कोई स्पष्ट रूपरेखा नहीं थी। अंग्रेजों से मुक्ति के बाद आजाद भारत की सरकार का स्वरूप क्या होगा और सत्ता किनके हाथों में आएगी, यह अनिश्चय की स्थिति में था। इसलिए डॉ. आंबेडकर को कहना पड़ा था, "अछूतों को डर है कि भारत की स्वतंत्रता हिंदू राज स्थापित करेगी और अछूतों के लिए दरवाजे बंद हो जाएंगे। सदैव के लिए उनके जीवन की सभी आशाएं, स्वतंत्राता और उनकी खुशियों के स्रोत बंद हो जाएंगे तथा वे केवल लकड़ी चीरने वाले और पानी खींचने वाले ही बना दिए जाएंगे।"

डॉ. आंबेडकर ने गांव को भारतीय गणतंत्र की अवधारणा का शत्रु माना था। उनके अनुसार हिंदुओं की ब्राह्मणवादी और पूँजीवादी व्यवस्था का जन्म भारतीय गांव में ही होता है। डॉ. आंबेडकर का कहना है कि भारतीय गांव हिंदू–व्यवस्था के कारखाने हैं। उनमें ब्राह्मणवाद, सामंतवाद और पूँजीवाद की साक्षात अवस्थाएं देखी जा सकती हैं। उनमें स्वतंत्रता, समता और बंधुत्व के लिए कोई स्थान नहीं है।

फुले और डॉ. आंबेडकर के आंदोलन का केन्द्र महाराष्ट्र रहा, इसलिए दलित साहित्य की अनुगूंज सर्वप्रथम प्रखर रूप में मराठी में ही सुनाई पड़ी। दलित अस्मिता का संघर्ष सचेतन रूप में महाराष्ट्र से शुरू होकर अखिल भारतीय स्वरूप ले चुका है। जो साहित्य और साहित्येतर दोनों ही मोर्चो पर अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहा है।

ज्योतिबा फुले ने सामाजिक विषमता के खिलाफ संघर्ष करने हेतु 'सत्यशोधक आंदोलन' का नेतृत्व किया। जातिभेद–धर्मभेद की आलोचना करते हुए उन्होंने मानव की समानता का प्रचार किया। उपलब्ध सभी साधनों द्वारा उन्होंने ब्राह्मणवाद को नष्ट करने की नीति को अपनाया। उनके सत्यशोधक आंदोलन का मुख्य कार्य था – सामाजिक

नोट

विषमता को नष्ट करना, ईश्वर और भक्त के बीच के दलालों को नष्ट करना, शिक्षा के द्वार सभी के लिए खोलना। चार सूत्री कार्यक्रम को लेकर उनका आंदोलन आगे बढ़ रहा था। उनके यही कार्य और विचार बाबासाहेब डॉ.आंबेडकर के प्रेरणा स्त्रोत बने। उन्होंने महात्मा फुले को अपना गुरु माना है। डॉ. आंबेडकर ने सन् 1927 से सन् 1930 तक एक सुनियोजित आंदोलन चलाया। जिसकी प्रमुख घटना है 'महाड का चवदार तालाब का आंदोलन' दलितों को सवर्णों द्वारा उपयोग में लाए जाने वाले पानी के किसी भी स्रोत को छूने का अधिकार नहीं था। इस अपमान को खत्म करने और दलितों को मानव अधिकार दिलाने के लिए यह सत्याग्रह शुरू किया गया थां डॉ. आंबेडकर ने बुद्ध धर्म को स्वीकार करके बुद्ध धर्म के मूल तीन तत्व स्वतंत्रता, समता और भाई चारे को संघर्ष का मुद्दा बनाते हुए दलित मुक्ति आंदोलन को सक्रिय बनाया। हिंदू–धर्म की वर्ण–व्यवस्था के कारण अंधकारणपूर्ण जीवन बिताने पर दलितों को मजबूर किया गया और उसे सत्ता, संपत्ति, शिक्षा से वंचित रखा गया। इस विषमतापूर्ण स्थिति के खिलाफ लड़ने के लिए उन्होंने अभियान चलाया, जिसकी साहित्यिक अभिव्यक्ति दलित साहित्य है जो दलित साहित्य आंदोलन के रूप में शुरू हुआ। दलिों को उनके अधिकार दिलाने के लिए जिस संघर्ष की शुरूआत डॉ. आंबेडकर ने दलित मुक्ति आंदोलन द्वारा की थी उसे पूर्णता की ओर ले जाने के लिए दलित साहित्य का आंदोलन सक्रिय है।

## 11-2 nfyr dh ifjHkk"kk

सदियों से जिसे साहित्य और समाज के हाशिए पर फेंक दिया गया था तथा जिसे शूद्र, अतिशूद्र, अंत्यज, चाण्डाल, अवर्ण, पंचम, हरिजन आदि नामों से निहित करके घृणा, हिकारत, निरीह और दया का पात्र बना दिया गया था, वही आज प्रखर आत्मबोध के साथ इन सारी शब्दावलियों को ठुकराकर स्वयं 'दलित' के रूप में अपनी अस्मिता का बोध साहित्य, समाज और राजनीति तीनों ही स्तरों पर करा रहा है। प्रख्यात मराठी दलित साहित्यकार शरण–कुमार लिंबाले के शब्दो में, 'दलित' को 'दया' से घृणा है, उसे दया और सहानुभूति नहीं 'अधिकार' चाहिए। आज इसकी अनुगूंज मराठी से शुरू होकर हिंदी और अन्य भारतीय भाषा–साहित्यों में नकार, वेदना और आक्रोश के साथ दलित साहित्य के रूप में सुनी जा सकती है।

'दलित' शब्द के अंतर्गत कुचले गए, दबाए गए जनों की जीवन कहानी उतनी ही पुरानी है, जितनी भारतीय हिंदू संस्कृति पुरातन है। चातुर्वर्ण्य–व्यवस्था ऋग्वैदिक काल से लेकर अद्यतन जातियों की श्रेष्ठता–क्रम में विद्यमान है। वेदों, स्मृतियों, पुराणों में व्यक्त जीवन पद्धति वर्ण–व्यवस्था पर टिकी हुई है। इस तरह का मिथ्या प्रचार आज भी जारी है कि इनका सृष्टा मानव नहीं ईश्वर हैं। इन अवधारणाओं के प्रतिपादक सभी धार्मिक ग्रंथ प्रत्येक वर्ण का कार्य बतला चुके हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के भार तले 'शूद्र' सबसे नीचे आता है, जिसका कर्तव्य तीनों वर्णों की सेवा करना बताया गया है।

"स्वर्ग प्राप्ति की इच्छा से इस जन्म में तथा अगले जन्म के उद्देश्य से शूद्र को ब्राह्मण की सेवा करनी चाहिए, क्योंकि जिसे ब्राह्मण का सेवक माना जाता है, उसे सभी सुख–शांति प्राप्त होती है।" (मनुस्मृति, 10,122)

लगभग 200 ई. पू. से 200 ई. सन् के बीच शूद्रों की स्थिति का ज्ञान मनु के विधि

ग्रंथ 'मनुस्मृति' से प्राप्त होता है। मनु ने अपने ग्रंथ में शूद्रों के प्रति घोर अमानवीयता का परिचय दिया है। शूद्रों और स्त्रियों को विद्या एवं वेद–अध्ययन के अधिकारों से वंचित तो रखा ही गया था साथ ही, वेद–पठन सुनना भी वर्जित था।

नोट

मौर्यकालीन रचना 'कौटिल्य का अर्थशास्त्र' में कौटिल्य ने विहित किया है कि जब कोई शूद्र अपने को ब्राह्मण कहे, देवताओं की सम्पत्ति चुराए या राजा का बैरी हो तो विषैली दवाओं का प्रयोग करके उसकी आंखे नष्ट कर दी जाएं या उससे आठ सौ पण जुर्माना वसूला जाए।

व्याख्याकारों के अनुसार माना जाता है कि वैदिक काल में चातुर्वर्ण्य–व्यवस्था गुण, कर्म, एवं स्वभाव के आधार पर निर्धारित होनी थी, जिसमें ऊंच–नीच, उत्तम–अधम, स्पृश्य–अस्पृश्य जैसी संकीर्णताओं के लिए कोई स्थानी नहीं था, कर्म के आधार पर ही व्यक्ति के वर्ण का निर्धारण होता था। कर्म के आधार पर व्यक्ति अपने वर्ण को परिवर्तित कर सकता था। किंतु यह वर्ण–व्यवस्था उत्तर वैदिक काल तक आते–आते जन्म पर आधारित होकर जाति के रूप में परिवर्तित हो गई। वास्तव में द्विजों ने अपने वर्चस्व एवं अभिजात्यता को अक्षुण्ण बनाए रखने के उद्देश्य से कालान्तर में वर्ण–व्यवस्था को जन्म पर आधारित जाति व्यवस्था में रूपांतरित कर दिया। इस प्रकार वैदिक काली चातुर्वर्ण्य–व्यवस्था के चार वर्ण न केवल चार जातियों में परिवर्तित हो गए, अपितु हजारों जातियों एवं उपजातियों में विभक्त हो गए।

डॉ. आंबेडकर का निष्कर्ष था कि "भारतीय समाज का ताना–बाना अभी जाति–व्यवस्था पर आधारित है और भारतीय समाज के विभिन्न स्तरों में परिवर्तन का निर्धारण भी जाति के आधार पर होता है। प्रत्येक हिंदू (यहां इसका प्रयोग व्यापक अर्थ में किया जा रहा है) जिस जाति में जन्म लेता है उसकी वह जाति ही उसके धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक और पारिवारिक जीवन का निर्धारण करती है। यह स्थिति मां की गोद से लेकर मृयु की गोद तक रहती है।"

समय की गतिशीलता और परिवर्तनशीलता के साथ सामाजिक व्यवस्था के अंतर्गत शूद्रों–अतिशूद्रों को विभिन्न कालखंडों में जिन भिन्न–भिन्न नामों से अभिहित किया गया। इनमें अधिकतर नाम उनके द्वारा दिए गए जो अस्पृश्य समुदाय के नहीं थे। चाण्डाल, अंत्यज, अवर्ण, अस्पृश्य, हरिजन आदि नाम जो हिंदू वर्ण–व्यवस्था से अलग पहचान रखते हैं तथा समाज में इनकी हीन दशा का बोध कराते हैं– ये तमाम नामकरण इनको हीन तथा स्वयं को श्रेष्ठ मानकर निहित किए गए।

महात्मा गांधी द्वारा लिए गए 'हरिजन' शब्द का विरोध इस वर्ग द्वारा निम्नलिखित तर्कों के आधार पर किया गया–

1. 'हरिजन' शब्द में दया का भाव निहित है।
2. मंदिरों में देवदासियों की संतानों को भी 'हरिजन' नाम दिया गया था, जिनकी सामाजिक पहचान 'अवैध संतति' की थी।
3. नामकरण करने वाले अस्पृश्यों से इतर वर्ग स्वयं को 'हरिजन' क्यों नहीं कहते? क्या वे हरि के जन नहीं हैं?

नोट

4. 'हरिजन' शब्द में हीनता का बोध निहित है।

सन् 1991 में उ.प्र. और म.प्र. सरकारों द्वारा और बाद में केंद्र सरकार (चंद्रशेखर सरकार) द्वारा 'हरिजन' शब्द को प्रशासनिक, सामाजिक एवं व्यावहारिक स्तर पर प्रयोग न करने का अध्यादेश जारी किया गया। इसके पीछे तर्क यह था कि जिनके लिए इस शब्द का प्रयोग किया जाता है। उन लोगों को यह नामकरण पसंद नहीं, लेकिन सरकार ने 'हरिजन' के स्थान पर अनुसूचित जाति (एस.सी.) को शासकीय कार्यो के लिए उचित माना, जबकि 'दलित' शब्द अपनी पहचान बना चुका था।

नामकरण की ऐतिहासिक प्रक्रिया की व्यापकता में न जाते हुए कुछ निम्नलिखित बिंदुओं पर ध्यान केंद्रित करके 'दलित का आशय' तक हम पहुंच सकते हैं:

शूद्र पहचान से इतर एक ऐसा वर्ग जिसकी पहचान अस्पृश्य के रूप में बनी। जिन्हें हिंदू व्यवस्था में समायोजित करने के उद्देश्य से इन्हें 'पंचम' और महात्मा गांधी द्वारा 'हरिजन' नाम दिया गया।

सन् 1931 में प्रशासनिक तौर पर डिप्रेस्ड क्लास के स्थान पर एक्सटीरियर क्लास (बाहरी या बहिष्कृत वर्ग) नाम दिया गया, जिसके आधार पर डॉ. आंबेडकर ने 1931 के गोलमेज सम्मेलन, लंदन में इन जातियों को बहिष्कृत या हिंदू जातीय संरचना से बाहर की जाति के रूप में वैधता प्राप्त हो जाने के बाद पृथक निर्वाचन का प्रस्ताव रखा, जिसका महात्मा गांधी ने विरोध किया।

भारत सरकार अधिनियम 1935 के तह डिप्रेस्ड क्लास और एक्सटीरियर क्लास के स्थान पर 'अनुसूचित जाति', 'अनुसूचित जनजाति' शब्द प्रशासनिक तौर पर प्रयोग में आए। इस प्रकार जातीय संरचना और सामाजिक आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखकर सरकारी तौर पर उत्थान हेतु जातियों की अनुसूची तैयार की गई। इसी आधार पर अनु. जाति, अनु. जनजाति एवं अन्य पिछड़ा वर्ग नामक प्रशासनिक शब्द प्रयुक्त हुए, जिनको सामाजिक अस्मिता बोध के रूप में 'दलित' शब्द के अंतर्गत समायोजित करने की कोशिश की गई। 'दलित पैंथर्स' ने अपने घोषणा–पत्र में 'दलित' शब्द को परिभाषित करते हुए कहा है – "दलित का अर्थ है अनुसूचित जाति, बौद्ध, कामगार, भूमिहीन, मजदूर, गरीब किसान, खानाबदोश जातियां, आदिवासी और नारी समाज।" स्पष्ट है दलितों की और प्रकारान्तर से मनुष्य की पीड़ा को अभिव्यक्ति देने का कार्य 'दलित' शब्द कराता है।

'दलित का आशय' समझने के व्रफम में प्रयुक्त 'दलित पैंथर्स' के बारे में हम दलित चेतना और दलित आंदोलन पर प्रकाश डालते हुए समझ सकेंगे। डॉ. आंबेडकर को दलित आंदोलन का प्रेरक और प्रवर्त्तक मानने वाले सुविख्यात मराठी दलित साहित्यकार डॉ. गंगाधर पानतावणे 'दलित' शब्द को व्याख्यायित करते हैं: 'दलित क्या है' 'दलित' कोई जाति नहीं बल्कि परिवर्तन और क्रांति का प्रतीक है। दलित मानवतावाद में विश्वास करता है। परंतु वह ईश्वर के अस्तित्व, पुनर्जन्म, आत्मा तथा उन तथाकथित धार्मिक ग्रंथों को अस्वीकार करता है जो भेदभाव की शिक्षा देते हैं। वह भाग्य तथा स्वर्ग की अवधारणाओं को भी अस्वीकार करता है, क्योंकि ये ही विचार उसको दासत्व का बोध कराते रहे हैं। वह इस देश में दबाए सताए हुए समाज का प्रतिनिधित्व करता है, जो वर्षों से जानवर से भी बदतर जिंदगी जीने को अभिशप्त हैं। वह विरोध करता है एक बहुत ही सूझ–बूझ के साथ विकसित की गई हिंदू सामाजिक–व्यवस्था का जिसने कि मानव के रूप में

उसके अस्तित्व को कभी स्वीकार ही नहीं किया तथा मानवीय गरिमा का निरन्तर निरादर किया गया। जिसके मृत–प्राय शरीर को पीड़ा और वेदना का संत्रास झेलना पड़ा। यही अलगावाद का बोध उन हजारों दलितों के पुर्जागरण का अक्षय स्त्राोत है।

नोट

कंवल भारती का मानना है कि 'दलित वह है जिस पर अस्पृश्यता का नियम लागू किया गया है। जिसे कठोर और गन्दे कार्य करने के लिए बाध्य किया गया है। जिसे शिक्षा ग्रहण करने और स्वतंत्र व्यवसाय करने से मना किया और जिस पर अछूतों ने सामाजिक निर्योग्यताओं की संहिता लागू की, वही और वही दलि है, और इसके अंतर्गत वही जातियां आती हैं, जिन्हें अनुसूचित जातियां कहा जाता है।

डॉ. विमल थोरात ने अपनी पुस्तक "मराठी दलित कविता और साठोत्तरी हिंदी कविता में सामाजिक और राजनीतिक चेतनाय में 'दलित' शब्द की अवधारणागत व्याख्याएं प्रस्तुत की हैं। वह लिखती हैं कि विभिन्न विचारकों ने दलित शब्द की विभिन्न परिभाषाएं की हैं। डॉ. आंबेडकर ने दलित शब्द को अस्पृश्य के स्थान पर अपनाया। अस्पृश्य की जो व्याख्या अनटचेबुल (The Untouchable) नामक अपने अंग्रेजी ग्रंथ में दी उससे यही पता चलता है। दलित का आशय डॉ. आंबेडकर से गिरिजन, विमुक्त जातियाँ, अपराधी घोषित की हुई जातियाँ ऐक्स ब्रिफमिनल ट्राईब्ज (डीनोटीपफाईड) (Ex-criminel tribes) (denotified) और अछूत, इन तीनों समुदायों को अस्पृश्य ;दलितद्ध कहा जाता है। उपर्युक्त व्याख्या के अनुसार 'दलित' शब्द में शोषि, पीड़ित और आर्थिक दृष्टि से दुर्बल सभी वर्गों का समावेश हो जाता है। इन सभी जातियों की गुलामी और दासता का स्वरूप सामाजिक, आर्थिक और सांस्वृफतिक है इसलिए दलित शब्द का प्रयोग "उन सभी उपेक्षित जातियों, जनजातियों के लिए किया गया है।"

डॉ. आंबेडकर ने व्हॉट कांग्रेस एंड गांधीजी हैव डन टू द अनटचेबल्स (What congress and Gandhiji have done to the Untouchables) 'कांग्रेस और गांधी ने दलितों का क्या किया। कांग्रेस और गांधी ने दलितों को क्या दिया। नामक ग्रंथ में 'अस्पृश्य' शब्द के लिए जिन पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग किया है, उससे 'अस्पृश्य' शब्द का बोध होता है। उन्होंने अस्पृश्य (अनटचेबल्स) (Untouchables) कांग्रेस और गांधी ने दलितों को क्या दिया? के लिए डीप्रेस्ड कलासस, शेडयूल्ड कास्ट (Depressed castes) और सरवाईड कास्टम (Servide castes) इन शब्दों का प्रयोग किया है। इसके कारणों को बताते हुए वे लिखते हैः 'इस पुस्तक में मैंने अस्पृश्य वर्ग के लिए डिप्रेस्डक्लासेस, शैडयूल्ड कास्ट्स और गुलाम वर्ग इन नामों का प्रयोग किया है जिसका कारण है अस्पृश्य वर्ग के लिए समय–समय पर अधिकृत और अनाधिकृत तौर पर इन शब्दों का प्रयोग हुआ है। 'गवर्नमेन्ट ऑफ इंडिया' द्वारा शैडयूल्ड कास्ट का प्रयोग होता है। सन् 1936 के बाद इस शब्द का प्रयोग होता रहा, इससे पूर्व गांधी जी द्वारा हरिजन और सरकार की ओर से डिप्रेस्ड क्लासेस कहा जाता था। अतः ये सारे शब्द प्रयोग समानार्थी ही हैं और अस्पृश्य वर्ग के लिए ही प्रयुक्त भी किये गये हैं।"

डॉ. आंबेडकर की उक्त व्याख्या के अनुसार 'दलित' शब्द 'अस्पृश्य' का पर्यायवाची है और इन सभी दलि जातियों, जनजातियों के प्रति दलित साहित्य प्रतिबद्ध है। सन् 1956 में बाबासाहेब के नेतृत्व हुए में धर्मान्तर आंदोलनों में लाखों की संख्या में शामिल होकर दलितों ने हिंदू धर्म त्याग करके बुद्ध धर्म को स्वीकार किया। महाराष्ट्र में अस्पृश्य वर्ग में

**नोट**

प्रमुख रूप से महार, मातंग और चमार जातियाँ शामिल है। लेकिन बुद्ध धर्म को स्वीकार सबसे अधिक संख्या में महारों ने किया और दलित साहित्य आंदोलन में 'नव बौद्धों की ही सक्रियता दिखाई देती है।" इस कारण कुछ लोग दलित साहित्य को एक विशिष्ट जाति द्वारा निर्मित साहित्य कहकर इसकी गरिमा को गिराना चाहते हैं। परंतु डॉ. आंबेडकर द्वारा दी गई व्याख्याओं से यह स्पष्ट है कि 'दलित' और 'दलित साहित्य' सर्व समावेशक शब्द है जिनमें अनेक दलित जातियाँ–जनजातियाँ अंतर्भत हैं।'

## 11-3 nfyr d lekukFkh 'kCnk dh vFkoÙkk dh ij[k

'दलित' शब्द की व्याख्या कुछ विचारकों ने सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों को महवत्वपूर्ण मानकर की है। इन आधारों पर तीन भिन्न विचारधाराएं सामने आती हैं। सामाजिक परिस्थिति के साथ आर्थिक आधार को महत्वपूर्ण मानने वाले विचारकों का एक दल है जिनमें डॉ. म.ना. वानखड़े, बाबुराव बागुल, नामदेव ढसाल, डॉ. सदाकर्‌हाडे, राव साहेब कसबे, शरच्चन्द्र मुक्बिोध, प्र. श्री नेरुरकर आदि प्रमुख हैं। अतः 'दलित' शब्द का अर्थ बुद्ध धर्मीय अथवा पिछड़े वर्ग तक ही सीमि नहीं है। जो पीड़ित, शोषित हैं ऐसे सभी लोग दलि वर्ग में शामिल हैं।

बाबुराव बागूल के अनुसार, 'दलित वह है जो वर्ण–व्यवस्था और उसकी मानसिकता को ध्वस्त कर देना चाहता है। दलित इस विश्व और जीवन को नये रूप में ढालना चाहता है, जिसके हाथों को इस युग ने प्रज्ञावंत प्रलयंकारी बनाने के लिये, शस्त्र तथा शास्त्रों को उपलब्ध करा दिया है।' इस व्याख्या के अंतर्गत अमरीकन गोरे और ताम्र वर्ण के लोग और अप्रफीकी तथा एशियाई देशों के काले, गोरे और पीतवणीय भी समाविष्ट हैं।

नामदेव ढसाल के शब्दों में : "अनुसूचित जातियां, बौद्ध, श्रमिक, मजदूर, भूमिहीन किसान, गरीब किसान और खानाबदोश जातियां, आदिवासी आदि सभी 'दलित' हैं।"

सदा कर्‌हाड़े का कहना है कि : 'आर्थिक और सामाजिक रूप से पिछड़े हुए वर्ग को मिलाकर एक सर्व समावेशक दलित वर्ग माना जाना चाहिए जिसमें मजदूर, श्रमिक और अस्पृश्य और जिनका शोषण होता है वे सभी शामिल हैं।'

इन व्याख्याओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि उक्त लेखक दलित शब्द के अंतर्गत सामाजिक और आर्थिक रूप से शोषित सभी का समावेश करके इस शब्द को एक व्यापक रूप देना चाहते हैं। लेकिन इस प्रयास में वे 'दलित' की मूल व्याख्या और उसकी अर्थवत्ता का अतिक्रमण करके अस्पृश्यता के मूलभूत सामाजिक प्रश्न से अलग हट जाते हैं। इन वक्तव्यों पर टिप्पणी करते हुए म.भी. चिटणीस कहते हैं कि 'दलित साहित्य आंदोलन को शोषितों के साहित्यिक आंदोलन से संबोधित करना चाहिए। इस प्रकार आर्थिक रूप से शोषित ब्राह्मण वर्ग का दलितों में समावेश करना पड़ेगा। मेरे विचार से जाति वर्ग के रूप में 'दलित' शब्द की व्याख्या करनी चाहिए। केवल आर्थिक शोषण के आधार पर इस शब्द की व्याख्या एकतरफा होगी। दलित वर्ग भार देश का पुरातन, मूक और अस्पृश्य वर्ग था जिसका अनुभव आज शब्द रूप लेकर साकार हो रहा है। अतः इस ऐतिहासिक संदर्भ को ध्यान में रखते हुए 'दलित' शब्द की व्याख्या करनी चाहिए। 'मात्रा आर्थिक दृष्टिकोण से ललित और दलित साहित्य की व्याख्या करने वाले समीक्षकों पर वर्गवादी (मार्क्सवादी) होने का आरोप लगाया गया है। इस तरह की दृष्टि रखने वाले

दलित वर्ग के मूल सामाजिक प्रश्नों पर विचार नहीं करते। यह भी सवाल उठाया जाता है कि 'भारतीय समाज की जाति व्यवस्था को नष्ट किये बिना पाश्चात्य देशों की वर्ग पद्धति यहां पर केसे लागू की जा सकती है, वर्गवादी व्यवस्था के लागू होने पर भी यहां की जाति–व्यवस्था नष्ट नहीं हो सकती क्योंकि इसकी जड़े बहुत गहरी गड़ चुकी हैं। भारतीय मानसिकता इसे पूर्ण रूप से ग्रहण कर चुकी है।' यही नहीं बल्कि आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर दलित वर्ग के प्रति जातिग दृष्टिकोण में परिवर्तन नहीं होता और इनके साथ अन्य कथित सवर्ण वर्ग के सामाजिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक संबंध जाति मर्यादाओं की परंपरागत सोच को लांगती नहीं।

**नोट**

दलित साहित्य आंदोलन दलित मुक्ति आंदोलन के अस्पृश्यता विरोधी आंदोलन का साहित्यिक रूप है। अतः इसे मात्र आर्थिक विषमता को मिटाने वाला आंदोलन नहीं कहा जा सकता। वह सामाजिक तथा आर्थिक विषमता मिटाने के लिए प्रबिद्ध आंदोलन है।

सामाजिक समानता के लिए दलित मुक्ति आंदोलन और दलित साहित्य आंदोलन साथ–साथ सक्रिय रहे हैं। सामाजिक समता, बंधुत्व और स्वतंत्रता को दलि साहित्य आंदोलन का एक महत्वपूर्ण आधार मानने वाले विचारकों में प्राचार्य चिटणीस, राजा ढाले, केशव मेश्राम, गंगाधर पानतावणे, प्रा. रा. भि. जोशी आदि प्रमुख हैं।

केशव मेश्राम के शब्दों में : "हजारों वर्षों से जो अत्याचारों को झेल रहे हैं ऐसे अस्पृश्यों को ही दलित कहना चाहिए और इन्हीं को आधार बनाकर दलित लेखकों द्वारा निर्मित साहित्य को ही दलित साहित्य कहना चाहिए।"

राजा ढाले का मत हैः 'हमारा साहित्य आज दलित साहित्य के नाम से पहचाना जाता है। कुछ लोग दलित शब्द से ध्वनित होने वाली अस्पृश्या को भुलाकर आर्थिक रूप से शोषित दशा को ही अपनी वेदना समझकर व्याख्या करते हैं। अस्पृश्यता नष्ट करने का इससे सरल रास्ता और कौन सा हो सकता है कि अस्पृश्यता को हम खुद ही भूल जायें। अपना दुख भूल कर जो दूसरों के दुख को सीने पर बोझ की तरह ढो रहे हैं वे अपनी अस्मिता को समझ नहीं पाये हैं वही अस्पृश्यता के बदले आर्थिक दशा को महत्वपूर्ण समझ रहे हैं। वे यह भूलते हैं कि बद्तर आर्थिक दशा का मूल भी अस्पृश्यता के निर्मित कठघरों में ही है।' राजा ढाले उन साहित्यकारों का विरोध करते हैं जो अस्पृश्यता के बदले आर्थिक दशा में दलित साहित्य के स्रोत ढूंढ रहे हैं।

रा.भि. जोशी के मराठी लेख के एक अंश का हिन्दी अनुवाद इस प्रकार हैः

"दलित शब्द अधिक व्यापक है, परंतु सभी दलित अस्पृश्य नहीं हैं। कुछ जातियां आर्थिक, सामाजिक दृष्टि से दलित हो सकती हैं परन्तु उन्हें अस्पृश्य नहीं माना जाता है। दलितत्व से अस्पृश्यता ज्यादा भयंकर और अमानुष है। इस अमानुषिकता के शिकार जो कल रहे हैं, वे आज भी हैं। अस्पृश्य शब्द का प्रयोग परंपरा के अनुसार अस्पृश्य समझे गये इस अर्थ में उन्हीं जातियों के संबंध में किया जाना चाहिए।"

डॉ. मांडे के विचार इस प्रकार हैं : 'ऐसे व्यक्तियों के समूह को दलित कहा जाना चाहिए जिनका मनुष्य के रूप में जीने का अधिकार छीन लिया गया है और जिन पर जन्म से ही विशिष्ट प्रकार का जीवन व्यतीत करने की जबर्दस्ती की जाती है। मनुष्य के रूप में उसकी प्रतिष्ठा को नकारा गया है और जिन्हें सम्मान की जिन्दगी बसर करने से

वंचित रखा गया है, वे दलित हैं।'

**नोट**

इन तथ्यों से स्पष्ट होता है कि 'दलित' शब्द उस व्यक्ति के लिए प्रयुक्त होता है जो समाज–व्यवस्था के तहत सबसे निचली पायदान पर है। वर्ण–व्यवस्था ने जिसे अछूत या अंत्यज की श्रेणी में रखा। जिसका दलन हुआ, शोषण हुआ – इस समूह को ही संविधान में अनुसूचित जातियां कहा गया है जो जन्मता अछूत है। इस प्रकार 'दलित' शब्द साहित्य के साथ जुड़कर एक ऐसी साहित्यिक धारा की ओर संकेत करता है, जो मानवीय सरोकारों और संवेदनाओं की अभिव्यक्ति है।

## 11-4 nfyr psruk vkanksyu

दलित साहित्य की दार्शनिक और वैचारिक पृष्ठभूमि को समझे बिना आप दलित चेतना आंदोलन और उससे प्रेरित दलि साहित्य आंदोलन को समझ नहीं सकेंगे। दलित चेतना का उत्पत्ति के स्रोतों को हमें जानना पड़ेगा तभी हमें दलित साहित्य की विशिष्टता और सामाजिक न्याय के लिए तत्पर साहित्यिक अभिविन्यास को समझने का अवसर मिलेगा। दलित चेतना के दार्शनिक और वैचारिक आधार का स्रोत गौतम बुद्ध ही रहे हैं। बुद्ध भारतीय इतिहास के प्रथम व्यक्ति हैं, जिन्होंने वर्ण–व्यवस्था के औचित्य को चुनौती दी और उसे अवैज्ञानिक, अमानवीय बताया। श्रावस्ती प्रवास के दौरान सुनित नामक भंगी को अपने संघ में शामिल करके दलितोद्धार का वह मार्ग प्रशस्त किया जो आने वाले युगों–युगों तक दलित–मुक्ति का मार्ग अवलोकित करता रहा। भक्तिकाल में दलित संत कवियों की बानियों में चेतना की वह चिनगारी सुलगती रही जो आधुनिक काल तक आते–आते डॉ. आंबेडकर के विशालतम व्यक्तित्व के रूप में धधक उठी। आधुनिक दलित चेतना की प्रबल प्रेरणा डॉ. आंबेडकर का युग प्रवर्तक व्यक्तित्व और कृतित्व है। विशेष रूप से महाराष्ट्र से शुरू हुए दलित साहित्य आंदोलन पर उनके विचार और दर्शन का प्रभाव स्पष्ट रूप से दृष्टिगत है।

दलित चेतना, इसकी मूल प्रेरणा और आंदोलन को हिंदी के वरिष्ठ दलित लेखक और कवि ओम प्रकाश वाल्मीकि के कथनों से समझने का प्रयास करें :

दलित चेतना एक प्रति सांस्कृतिक चेतना है, बल्कि एक वैकल्पिक चेतना भी है। इसलिए विद्रोही है। इस चेतना की जड़ में भारतीय सामाजिक संरचना है। जो न सिर्फ जाति पर आधारित है बल्कि इसे धार्मिक वैधता भी प्रदान करती है। जाति–व्यवस्था सामाजिक दुराव के सिद्धांत पर आधारित है। यह हमारे सामाजिक संबंधों को ही नहीं बल्कि धार्मिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक पक्षों को भी प्रभावित करती है। यह गुलामी की संपूर्ण व्यवस्था है, हिंदू समाज–व्यवस्था में प्रारंभ से ही धर्म प्रधान और अर्थ गौण रहा है। व्यावहारिक स्तर पर हिंदुत्व की जो अवधारणा आम आदमी तक पहुंचती है, वह बहुत हद तक जातीय आचार–व्यवहार और संस्कार से परिसीमित हुई रहती है। स्वतंत्रता के बाद भी यह स्थिति किसी न किसी रूप में बनी हुई है। संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारों और सुरक्षा कानूनों के बावजूद दलित वर्ग को मूलभूत सुविधाओं से वंचित रखने का प्रयास जारी है' और इसकी सफलता के लिए हर समय धर्म, परंपरा, संस्कृति का हवाला देकर इसकी निरंतरता के लिए हिंसा, सत्ता और धर्म का सहारा लिया जाता है। आर्थिक रूप

से कमजोर, पिछड़ा सामाजिक रूप से निम्न होने का अभिशाप झेलता, सांस्कृतिक रूप से नकारा गया दलित वर्ग कथित उच्चवर्ग के हाथों पर स्तर उत्पीड़ित होने को अभिशप्त है।

नोट

दलित चेतना का सीधा सरोकार 'मैं कौन हूं?' से बहुत गहरे तक जुड़ा हुआ है। चेतना का संबंध दृष्टि से होता है। जो दलितों की सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और सामाजिक भूमिका की छवि के तिलस्म को तोड़ती है। मानव अधिकारों से वंचित सामाजिक तौर पर नकार दिया जाना यानि दलित होना है और उसकी अस्तित्व और अस्मिता की लड़ाई यानी चेतना ही दलित चेतना है। जो दलित आंदोलनों के एक लंबे इतिहास की देन है। अलग–अलग कालखंडों में यह अलग रूपों में दिखाई पड़ी है। भक्ति–काल के कवियों में यह रूप अलग है, लेकिन इस चेतना के बीज वहां मौजूद हैं, जिसे कालांतर में एक संघर्षशील, बौद्धिक रूप मिलता है ज्योतिबा फुले के संघर्ष के रूप में। आगे चलकर यह रूप एक नए और जुझारू रूप में विकसित होता है डॉ. भीमराव आंबेडकर के जीवन–संघर्ष में, जो दलितों में एक नई चेतना का सूत्रपात करता है जिसे मुक्ति–संघर्ष की चेतना कहना ज्यादा प्रासंगिक होगा। यही चेतना साहित्य की प्रेरणा बनकर दलित–साहित्य के रूप में दिखाई देती है। जिसमें मुक्ति, स्वतंत्रता के गंभीर सरोकार विद्यमान है। अनीश्वरवाद, अनात्मवाद, वैज्ञानिक दृष्टिबोध, पाखंड–कर्मकांड का विरोध, सामाजिक न्याय की पक्षधरता, वर्ण–व्यवस्था का विरोध, सामंतवाद विरोध, पूँजीवाद, बाजारवाद का विरोध, सांप्रदायिका का विरोध, ब्राह्मणवाद का विरोध, अधिनायकवाद का विरोध, जैसे सवाल दलित साहित्य के सरोकारों में शामिल हैं।'

6 दिसंबर सन् 1956 को दलितों के क्रांति दूत और आदर्श डॉ.बी.आर.आंबेडकर का महापरिनिर्वाण के उपरान्त करीब डेढ़ दशक तक सामाजिक परिवर्तन का कारवां रूक सा गया था। स्वतंत्रता दिवस की रजत जयंती से दो वर्ष पूर्व 1970 ई. में महाराष्ट्र में आंदोलन की लहर पुनः पुनर्जीवित हुई। दलित दृष्टि और चिंतन पर शोधरत अमेरिकन लेखिका एलिनॉर जिलियट द्वारा अंग्रेजी में लिखित एक लेख के हिंदी रूपान्तर से कुछ अंश इस प्रकार है – '1970 के शुरूआती दौर में मराठी आंदोलनों ने अंग्रेजी प्रेस द्वारा नोटिस लेने योग्य पर्याप्त महत्ता प्राप्त की – ये हैं दलित पैंथर्स और दलित साहित्य।

## 11-5 vuqlfpr tkfr dY;k.k

सामाजिक न्याय तथा सषक्तिकरण मंत्रालय अनुसूचित जातियों के हितों की निगरानी करने वाला प्रमुख मंत्रालय है। अनुसूचित जातियों के हितों को बढ़ावा देने की मुख्य जिम्मेदारी केंद्र तथा राज्य सरकारों के सभी मंत्रालयों के अपने–अपने कार्य क्षेत्रों में तो है ही, साथ ही यह मंत्रालय विषेश रूप से तैयार योजनाओं के जरिए अहम क्षेत्रों में पहल कर इस कार्य को और आगे बढ़ाता है। राज्य सरकारों तथा केंद्रीय मंत्रालयों द्वारा अनुसूचित जातियों के हितों की रक्षा तथा उन्हें बढ़ावा देने वाले प्रयासों की निगरानी भी की जाती है।

अनुसूचित जाति विकास ब्यूरो के तहत यह मंत्रालय अनुसूचित जाति उप–योजना (SCSP) का क्रियांवयन करता है, जो अनुसूचित जातियों के लाभों के लिए सभी सामान्य विकास क्षेत्रों से लक्षित वित्तीय तथा भौतिक लाभों के प्रवाह को सुनिश्चित करने वाली

नोट

एक छत्र रणनीति है। इस रणनीति के तहत राज्य केंद्र शासित प्रदेशों को उनकी वार्षिक योजनाओं के एक हिस्से के रूप में अनुसूचित जातियों की विशेष घटक योजनाओं (SCP) का संचालन तथा क्रियांवयन करना होगा। वर्तमान में 27 राज्य तथा ऐसे कें. शा. प्रदेश – जिनमें बड़ी संख्या में अनुसूचित जातियों की मिलती है, अनुसूचित जाति उप–योजना का क्रियांवयन कर रहे हैं।

अनुसूचित जातियों के विकास का अन्य नीतिगत प्रयास है विशेष घटक योजना को विशेष केंद्रीय सहायता, जिसमें राज्यों केंद्र प्रदेशों की अनुसूचित जाति उपयोजनाओं को शत–प्रतिशत सहायता दी जाती है, जिसके कुछ आधार हैं जैसे– राज्यों केंद्र शासित प्रदेशों में अनुसूचित जातियों की जनसंख्या, राज्य केंद्र शासित प्रदेशों में अनुसूचित जाति का तुलनात्मक पिछड़ापन, राज्य केंद्र शासित प्रदेशों में अनुसूचित जाति के परिवारों को गरीबी की रेखा के नीचे से ऊंचा उठाने के लिए लागू समेकित आर्थिक विकास कार्यक्रमों की प्रतिशतता, राज्य केंद्र शासित प्रदेशों की SC जनसंख्या की प्रतिशतता के मुकाबले वार्षिक योजना के लिए अनुसूचित जाति उप–योजना की प्रतिशतता।

इस मंत्रालय के तहत गठित राष्ट्रीय अनुसूचित जाति वित्त तथा विकास निगम गरीबी की रेखा से दोगुना नीचे बसर करने वाली अनुसूचित जातियों के लोगों की आय सृजन गतिविधियों के लिए ऋण सुविधा प्रदान करता है (वर्तमान में ग्रामीण क्षेत्रों के लिए रु. 40,000 वार्षिक तथा शहरी इलाकों के लिए रु. 55,000 वार्षिक)।

इस मंत्रालय के तहत आने वाला अन्य निगम है– राष्ट्रीय सफाई कर्मचारी वित्त तथा विकास निगम (NSKFDC), जो सफाई कर्मचारियों, मैला साफ करने वालों तथा उनके आश्रितों को उनके सामाजिक–आर्थिक विकास हेतु आय सृजन गतिविधियों के लिए ऋण सुविधा प्रदान करता है।

अनुसूचित जातियों के अधिकारों की रक्षा के लिए मंत्रालय दो अधिनियमों को लागू करता है, जो इस प्रकार हैं :

1. नागरिक अधिकार अधिनियम (सुरक्षा) 1955

2. अनुसूचित जाति तथा जनजाति (उत्पीड़न सुरक्षा अधिनियम 1989)।

यह मंत्रालय अनुसूचित जाति के विकास से जुड़े निम्नांकित अहम मामलों से भी निपटता है :

20 सूत्री कार्यक्रम के सूत्र 11(A) की निगरानी– अनुसूचित जाति को न्याय।

अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए निजी सेक्टर में आरक्षण समेत सक्रिय कदम उठाना

vuqlfpr tkfr mi&;kstuk ¼,llh,lih½

अनुसूचित जाति विकास ब्यूरो के तहत यह मंत्रालय अनुसूचित जाति उप–योजना (SCSP) का क्रियान्वयन करता है, जो अनुसूचित जातियों के लाभों के लिए सभी सामान्य विकास क्षेत्रों से लक्षित वित्तीय तथा भौतिक लाभों के प्रवाह को सुनिश्चित करने वाली रणनीति है। इस रणनीति के तहत राज्य केंद्र शासित प्रदेशों को उनकी वार्षिक योजनाओं

नोट

के एक हिस्से के रूप में अनुसूचित जातियों की विशेष घटक योजनाओं (SCP) का संचालन तथा क्रियान्वयन करना होगा। वर्तमान में 27 राज्य तथा ऐसे केंद्र शासित प्रदेश– जिनके पास अनुसूचित जातियों की बड़ी संख्या है, अनुसूचित जाति उप–योजना का क्रियान्वयन कर रहे हैं।

## fo’k"k çkRlkgu ;kstuk

अनुसूचित जातियों के विकास का अन्य नीतिगत प्रयास है विशेष घटक योजना को विशेष केंद्रीय सहायता, जिसमें राज्यो केंद्र शासित प्रदेशों की अनुसूचित जाति उपयोजनाओं को शत–प्रतिशत सहायता दी जाती है, जिसके कुछ आधार हैं जैसे– राज्यों केंद्र शासित प्रदेशों में अनुसूचित जातियों की जनसंख्या, राज्य केंद्र शासित प्रदेशों में अनुसूचित जाति का तुलनात्मक पिछड़ापन, राज्य केंद्र शाषित प्रदेशों में अनुसूचित जाति के परिवारों को गरीबी की रेखा के नीचे से ऊंचा उठाने के लिए लागू समेकित आर्थिक विकास कार्यक्रमों की प्रतिशतता, राज्य केंद्र शासित प्रदेशों की अनुसूचित जाति जनसंख्या की प्रतिशतता के मुकाबले वार्षिक योजना के लिए अनुसूचित जाति उप–योजना की प्रतिशतता।

इस मंत्रालय के तहत गठित राष्ट्रीय अनुसूचित जाति वित्त तथा विकास निगम गरीबी की रेखा से दोगुना नीचे बसर करने वाली अनुसूचित जातियों के लोगों की आय सृजन गतिविधियों के लिए ऋण सुविधा प्रदान करता है (वर्तमान में ग्रामीण क्षेत्रों के लिए रु. 40,000 वार्षिक तथा शहरी इलाकों के लिए रु. 55,000 वार्षिक)।

## efVd ds ckn Nk=ofÙk dh ;kstuk

**jk"Vªh; vuqlwfpr tkfr foÙk vkSj fodkl fuxe %** राष्ट्रीय अनुसूचित जाति तथा जनजाति वित्त तथा विकास निगम की स्थापना भारत सरकार द्वारा 8 फरवरी 1989 को की गई थी, जिसका नाम राष्ट्रीय अनुसूचित जाति तथा जनजाति वित्त तथा विकास निगम (NSFDC) पड़ा। इसे कंपनी अधिनियम 1956 के तहत अनुच्छेद 25 (कंपनी जो लाभ के लिए काम नहीं करती है) के अधीन एक पूर्ण रूप से सरकारी कंपनी के रूप में शामिल कर लिया गया।

इसे गरीबी की रेखा से दोहरा नीचे बसर करने वाले लोगों के आर्थिक उत्थान के लिए वित्त मुहैय्या कराने तथा फंड की उपलब्धता का कार्यभार सौंपा गया है। यह संबंधित राज्य केंद्र शासित प्रदेशों प्रशासन द्वारा नामित, राज्य चौनेलाइजिंग एजेंसी के जरिए लक्षित समूहों के लिए आय सृजन योजनाओं हेतु वित्तीय सहायता प्रदान करते है। इसका प्रबंधन एक निर्देशक मंडल द्वारा किया जाता है, जिसमें केंद्र सरकार, राज्य अनुसूचित जाति विकास निगम, अनुसूचित जातियों के वित्तीय संस्थान तथा गैर–सरकारी सदस्य शामिल होते हैं।

**míís’; %** राष्ट्रीय अनुसूचित जाति तथा जनजाति वित्त तथा विकास निगम गरीबी की रेखा से दोहरा नीचे बसर करने वाले अनुसूचित जातियों के लोगो को आर्थिक विकास को बढ़ावा देने तथा अन्य स्रोतों से वित्त तथा फंड उपलब्ध कराने वाली शीर्ष संस्थान है।

**{kerk fodkl çf’k{k.k dk;Øe %** वस्त्र प्रौद्योगिकी, कम्प्यूटर प्रौद्योगिकी, इलेक्ट्रॉनिक टेस्ट इंजीनियरिंग, मोबाइल फोन रिपेयरिंग, बीपीओ कॉल सेंटर तथा ऑटोमोबाइल रिपेयरिंग इत्यादि जैसे उभरते रोजगारों में राष्ट्रीय अनुसूचित जाति तथा

नोट

जनजाति वित्त तथा विकास निगम लक्षित समूह के शिक्षित बेरोजगार युवकों के लिए अपने SCAs के जरिए योग्यता विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाता है।

ये कार्यक्रम प्रतिष्ठित सरकारी/अर्ध सरकारी स्वायत्त संस्थानों द्वारा चलाए जाते हैं तथा प्रशिक्षु को प्रशिक्षण के दौरान प्रति माह 500/ रु. भत्ता मिलता है। जून 2009 से इस भत्ते की राशि बढ़ाकर 1000/– रु. प्रति माह कर दी गई है।

लाभार्थियों को नौकरी पाने में भी सहायता दी जाती है और उन्हें अपना खुद का रोजगार आरंभ करने के लिए मदद प्रदान की जाती है, जिसके लिए राष्ट्रीय अनुसूचित जाति तथा जनजाति वित्त तथा विकास निगमके जरिए वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है।

## 11-8 lkjka'k

अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 की सं. 33 ऐसा अधिनियम जो अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के खिलाफ होने वाले अत्याचार के अपराधों की रोकथाम करता है, ऐसे अपराधों के लिए विशेष अदालत प्रदान करता है तथा ऐसे अपराधों के शिकार व्यक्तियों को राहत व पुनर्वास प्रदान करता है।

## 11-9 vH;kl i'u

1. दलित समुदाय से क्या अभिप्राय है? स्पष्ट करें।
2. दलित समुदाय के उत्थान हेतु सरकार द्वारा क्या प्रयास किए गए हैं?
3. अनुसूचित जातियों के कल्याण हेतु क्या कदम उठाए जाने चाहिए?

# bdkbZ&12 firl`Ùkk ,oa ySfxd HksnHkko

नोट

## ikB&lajpuk

12.0 लक्ष्य और उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 महिलाओं के मुद्दे क्यों ?

12.3 महिलाओं के मुद्दे और लिंग विषयक समानता

12.4 लिंगीकृत, लिंग विषयक निर्धारण और लिंग प्ररूपण

12.5 पितृसत्ता

12.5.1 एक विचारधारा के रूप में पितृसत्ता—संस्थाकरण और वैधीकरण

12.5.2 भारतीय महिलाएं और पितृसत्ता

12.6 महिलाओं के मुद्दे पितृसत्ता और पुरूष—प्रधानता को चुनौती देते हैं

12.7 लिंग (जेंडर) विषयक भेद और असमानता को ध्वस्त करना

12.8 लिंग (जेंडर) विषयक भूमिकाओं का उन्मूलन

12.9 सारांश

12.10 अभ्यास प्रश्न

## 12-0 y{; vkSj mís';

19वीं शताब्दी के मध्य से ही महिलाओं से संबंधित बहुत से मुद्दे समाज सुधारकों और महिला सक्रियवादियों (कार्यकर्त्ताओं) के केन्द्रीय बिंदु बन गये। समाज के विकास था उससे संबद्ध सामाजिक और राजनैतिक परिवर्तनों के साथ—साथ क्षेत्रीय और स्थानीय जरूरतों की प्रतिक्रिया के रूप में महिला विषयक मुद्दे विषयक मुद्दे विषम होते चले गये। फिर भी महिलाओं से संबंधित केन्द्रीय मुद्दा जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में लिंग भेद के कारण होने वाली असमानताएं रहीं। इस इकाई का मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित को स्पष्ट करना हैः

- महिलाओं के मुद्दे से जुड़े विविध सत्यों और एक अध्ययन के रूप में महिलाओं के मुद्दों का उभरना,
- महिलाओं के उभरते हुए मुद्दों के लिए आधार,
- समाज में असमानता बनाम समानता,
- लिंग (जेंडर) विषयक मुद्दे और लिंग (जेंडर) विषयक व्यवस्था, समाज में महिलाओं के लिए स्थान,
- विचारधारा के रूप में पितृसत्ता—संस्थाकरण और वैधीकरण,

**नोट**

- लिंगीकृत (जेंडर्ड) नौकरियां और सामाजिक असमानता,
- महिलाओं की विभिन्न संसाधनों तक पहुंच तथा उन पर नियंत्रण,
- भारतीय संविधान के अनुसार लिंग समानता,
- महिलाओं का अधिकार मानवाधिकार है,
- एक न्यायपूर्ण समाज के लिए लिंग भेद और असमानताओं को ध्वस्त करना, और
- महिलाओं की स्वतंत्रता के लिए प्रस्तावों और संभावनाओं के बारे में जानना।

## 12-1 iLrkouk

अनेक वर्षों तक महिलाओं के लिए इतिहास में कोई स्थान नहीं था और महिलाओं के अनुभव अदृश्य थे। वे 'अपरिवर्तनशील' घरेलू जीवन तक ही सीमित थी। लिंग (जेंडर) विषयक भेद को या तो सामान्यतया निर्विवाद स्वीकार किया जाता था अथवा महिलाओं से संबंधित चाहे जिन मुद्दों पर विचार किया जा रहा था, इसके संदर्भ में अप्रासंगिक माना जाता था। स्त्री अधिकारवादी कृतियों का सबसे महत्वपूर्ण बुनियादी योगदान महिलाओं से जुड़े विषयों की व्याख्या करना तथा अनेक नए प्रश्न पूछना था। स्त्रियों की दशा को सिद्धान्तबद्ध करने के लिए अनेक अवधारणाओं का प्रयोग किया गया है। विगत दशकों में दस्तावेजीकरण, लिंग (जेंडर) विषय असमानताओं के स्रोतों तथा उनसे निपटने के तरीकों को पहचानने पर काफी शैक्षणिक एवं शोध कार्य किए गए हैं। लिंग विषयक अध्ययन, विशेष रूप से महिलाओं के बारे में, जिनका विकास इस जागृति पर हुआ है कि महिलाएं समाजशास्त्रीय और अन्य विवरणों में हाशिए पर थीं अथवा उनके साथ इस तरह का व्यवहार किया जाता था कि उनके सामान्य माता—गृहणी के रूढ़िबद्ध रूप का पता चलता था। समाजशास्त्र में महिलाओं को पुरुषों के जीवन की व्याख्याओं के आधार पर विकसित प्रतिमानों में निर्विवाद रूप से ढाल कर उन पर शोध किये गये। लिंग विषयक समाजशास्त्रियों द्वारा इतिहासकारों, अर्थशास्त्रियों, नृविज्ञानियों और मनोवैज्ञानिकों पर समालोचनात्मक ध्यान दिया गया है। विगत तीन दशकों में लिंग के विषय में समाजशास्त्रियों और अन्य समाज वैज्ञानिकों ने काफी कुछ कहा है। लिंग सामाजिक जीवन की अत्यंत ही व्यापक विशेषता है जिसे हम समझना चाहते हैं। इसके अलावा, सामाजिक संबंधों, अभिज्ञानों और संस्थाओं पर इसके प्रभाव के माध्यम से लिंग अनेक सामाजिक प्रक्रियाओं से अत्यंत ही जटिल रूप से जुड़ा हुआ है। इस इकाई में लिंग विषयक व्यवस्था, जो कि सामाजिक दुनिया के संगठनकारी सिद्धांतों में से एक है, की रूपरेखा की गवेषणा की जाएगी।

## 12-2 efgykvk d eíi D;k \

महिलाओं के मुद्दों में, समाज में उन तत्वों की पहचान करना तथा उन्हें चुनौती देना शामिल है जिनकी प्रकृति लिंगिकृत (जेंडर्ड) है तथा विकासात्मक संदृश में महिलाओं के लिए अत्यधिक हानिकारक हैं। ये वही तत्व हैं जो या तो महिलाओं को नकार देते हैं या उनके प्रतिकूल होते हैं। यह प्रश्न उठा है कि किस तरह 'शाश्वत' मूल्यों की परिभाषा की जाती है, किस तरह उस दिशा में 'सत्य' को तोड़ा—मरोड़ा जाता है जिससे कि पुरूषों का हित साधन होता है।

नोट

''महिलाओं के सवाल'' बहुधा सामाजिक प्रचलन की लिंग विषयक निहितार्थों के बारे में पूछे हैं। इन वाद विवादों के अंतर्ग लिंग विषयक सामनता और लैंगिक (sex) विभेदों के व्यापक मुद्दे हैं। इन लैंगिक विभेदों का महत्व क्या है? इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए समाजशास्त्री को दो संबंधित मुद्दों की जांच करना है–

1. लैंगिक (sex) विभेद का विस्तार/परिमाण, और
2. सभी भूमंडलीय समाजों, कालावधियों और स्थितियों में इन विभेदों की सुसंगति या एकरूपता।

ये मुद्दे महत्वपूर्ण हैं क्योंकि वस्तुतः कोई भी विशेषता अथवा आचरण नहीं जो विश्वस्त रूप से सभी पुरूषों को सभी महिलाओं से अलग करता हो। लैंगिक विभेदों के अनुरूपता से विभिन्न युगों में वर्ग, धर्म, नृवंशीयता, कालावधि अथवा किसी अन्य सामाजिक संदर्भो में उनके सापेक्षिक स्थायित्व का पता चलता है।

''महिलाओं का प्रश्न'' लिंग विषयक पूर्वाग्रह की पूरी तरह से खोजबीन की अपेक्षा करता है और लिंग विषयक न्याय की मांग करता है। महिलाओं के मुद्दों में बुनियादी बातें लिंग पर आधारित अहित का पर्दाफाश करने और पता लगाने में है (इसके विषय में विस्तार से इकाई 4 में देखें)। समाज में इस लिंगीकृत दशा की गवेषणा करनी होगी जो कतिपय संस्थाओं को सुगम बनाता है तथा उन युक्तियों को खोज निकालता है जिसमें महिलाओं के अनुभव तथा हितों की अनदेखी की जाती है।

लिंग विषयक असमानता एक ऐसा विषय है जिस पर काफी चर्चा की जाती है। लिंग विषयक समानता हेतु ऐतिहासिक संघर्ष के दृश्यों के पीछे समानता के अभिप्राय के बारे में अत्यंत ही पुराना और अभी भी जारी वाद विवाद निहित है। अब प्रश्न यह है कि क्या समानता प्राप्त करने के लिए अवसर की समानता के उपबंध की आवश्यकता है अथवा क्या इसका अभिप्राय परिणाम की समानता हासिल करना है? पुरूष और महिला के बीच भेद की प्रकृति क्या है और यह किस तरह से उनके बीच समानता हासिल करने से संबंधित है? वह कसौटी क्या होगी जिसके आधार पर लिंग विषयक समानता की उपलब्धि का निर्णय करना है? क्या समानता का अभिप्राय यह है कि महिलाओं को पुरूषोचित मानदंड, मूल्य और जीवन शैली अपनाना होगा? लिंग विषयक समानता किस तरह से नृवंशीयता और लैंगिकता से संबंधित है? क्या समानता का अभिप्राय ''समान अधिकारों'' से है?

लिंग विषयक अध्ययनों के केन्द्र में मुख्य रूप से दो मुद्दे हैं (क) क्या समाना से सभी महिलाओं के साथ, उनके विभेदों के रहते हुए भी, उसी प्रकार का व्यवहार अपेक्षि है जैसा कि सभी पुरूषों के साथ किया जाता है और (ख) क्या समानता से महिलाओं और पुरूषों के बीच विभेदों को चिन्हित करना और इसका संभरण करना अपेक्षित है। समानता के परिप्रेक्ष्य में, लिंग को ऐसा सहज गुण माना जाता है जिसका सामाजिक मूल्यों अथवा सामाजिक अधिकारों के वितरण में अधिक महत्व नहीं होना चाहिए।

विद्वानों का एक समूह इससे सहमत नहीं है कि आधुनिक समाजों में सभी महिलाएं समान रूप से अत्याचार की शिकार हैं तथा हानिकर अवस्था में हैं। यह आवश्यक है कि महिलाओं की विभिन्न समूहों के अनुभवों और उनके द्वारा झेली जा रही समस्याओं को पहचानें (ये उन अनुभवों पर बल देते हैं जिनसे भिन्न आयु वर्गों, व्यवसायों, जाति, वर्ग

और नृवंशीय पृष्ठभूमि की महिलाओं के विभिन्न समूह रूबरू होते हैं।) उनका मानना है कि महिलाओं का दमन होता है, किन्तु यह सभी महिलाओं को एक बराबर और एक ही तरह से प्रभावित नहीं कर रहा है।

नोट

## 12-3 efgykvk d eí vkj fyx fo"k;d lekurk

समानता की परिभाषा बराबर होने की अवस्था अथवा दशा के रूप में की जा सकती है। जब मानवीय समानता की बात आती है तो इसका अभिप्राय विशेष रूप से सामाजिक प्रस्थिति अथवा कानूनी और राजनीतिक अधिकारों की दृष्टि से समानता से है। लिंग विषयक अध्ययनों में बराबरी के रूप में समानता का यह विचार वाद–विवाद का विषय बन गया। बीसवीं शताब्दी के अंत तक पुरूषों के साथ महिलाओं की समानता सुनिश्चित करने के लिए अनेक विधान थे। समान कार्य के लिए समान वेतन अधिनियम और लिंग भेदभाव अधिनियम जैसे अधिनियमों का लक्ष्य भेदभाव वाले प्रचलनों का निषेध कर महिलाओं और पुरूषों के बीच समानता को बढ़ावा देना है।

लिंग विषयक समानता की चिन्ता असमान व्यवहार वाले क्षेत्रों की पहचान करके और कानूनी सुधारों के माध्यम से उनका उन्मूलन करके वे अधिकार और विशेषाधिकार जो पुरूषों को प्राप्त हैं, महिलाओं को भी दिलाना है। समानता के परिप्रेक्ष्य में लिंग को एक ऐसा सहज लक्षण माना जाता है जिसे सामाजिक मूल्यों अथवा सामाजिक अधिकारों के वितरण में महत्वपूर्ण नहीं होना चाहिए। लिंग विषयक–तटस्थता अथवा उभयलिंगता के माध्यम से समानता प्राप्त की जाती है। इसका यह अभिप्राय हो सकता है कि प्रभुत्वशाली समूह (पुरूष) के मूल्यों, संस्थाओं और जीवन शैली में अधीनस्थ समूह (महिलाओं) के आत्मीकरण के माध्यम से समानता के लक्ष्य को प्राप्त किया जाता है। समानता के सिद्ध ांतकारों के लिए, लक्ष्य लिंग विषयक–तटस्थता है, जहां सार्वजनिक क्षेत्र में महिलाएं समान नागरिक के रूप में पुरूषों के साथ भागीदारी करने के लिए समर्थ हैं।

पुरी दुनिया में अनेक देशों में विकास के लिए महत्वपूर्ण लक्ष्य के रूप में लिंग विषयक समानता को व्यापक रूप से स्वीकार किया गया है। लिंग विषयक समानता के लिए बढ़ते हुए समर्थन और ध्यान को इस मान्यता से और भी सहारा मिला कि इससे महिलाओं और बच्चों के जीवन–स्तर में सुधार होगा। अब अनेक लोग यह भी मानते हैं कि लिंग–विषयक समानता में वृद्धि करना जनसंख्या नीतियों का अत्यावश्यक घटक होगा। लिंग विषयक समानता को बढ़ावा देना, महिलाओं की अधिकार सम्पन्नता और महिलाओं के विरूद्ध सभी प्रकार के भेदभावों तथा हिंसा का उन्मूलन और महिलाओं की प्रजननता पर उनका नियंत्रण सुनिश्चित करना जनसंख्या और विकास से संबंधित कार्यक्रमों की नींव हैं। सरल शब्दों में, महिलाओं और पुरूषों की भूमिकाओं में विभेद के ह्रास के साथ ही समाज में महिलाओं की प्रस्थिति का उत्थान होता है तथा उनके अधिकार में वृद्धि होती है एवं अपनी लैंगिकता तथा प्रजननशील जीवन का नियंत्रण उनके हाथ में होता है।

महिलाएं और लिंग विषयक सामाजिक निर्माण अधिकतर पितृसत्तात्मक समाज में महिलाएं और पुरूष जो भूमिका धारण करते हैं उसमें महिलाओं को अत्यल्प अवसर और विशेषाधिकार प्राप्त हैं। समाज के सभी क्षेत्राों में सामान्यया महिलाओं को पुरूषों की अपेक्षा कम अधिकार प्राप्त हैं। अर्थव्यवस्था, राजनीतिक प्रणाली और अन्य सामाजिक संस्थाओं

द्वारा लिंग विषयक असमानता की संरचना की जा सकती है तथा इसे कायम रखा जा सकता है। 'लिंग–विषयक प्रथाएं' सांस्कृतिक अथवा सामाजिक रूप से निर्मित होती है जिसका अभिप्राय यह है कि उनकी परिभाषा समाज की सामाजिक संरचना और संस्थाओं के अंदर तथा इनके माध्यम से किया गया है। लिंग समाज में पुरूषों और महिलाओं द्वारा निभाई जाने वाली अलग–अलग भूमिकाओं तथा उनके द्वारा प्रयोग किए जाने वाले सापेक्षिक अधिकारों का उल्लेख करता है। यद्यपि अलग–अलग समाजों में लिंग की अभिव्यक्ति अलग–अलग रूप से होती हैं। कोई भी समाज ऐसा नहीं है जहां पुरूष और महिलाएं बराबर भूमिका निभाते हों अथवा एक समान अधिकार का प्रयोग करते हों। महिलाओं केक जीवन पर इस असमाना के प्रभाव में भी काफी अंतर है। समाज के अंदर महिलाएं हमेशा घाटे की स्थिति में रही हैं और कुछ ऐसी विशेष परिस्थितिया है जिनमें पुरूष प्रधानता और इसके वर्तमान स्वरूप का निर्माण हुआ है। महिलाओं के मुद्दों के उपागम व्यक्तिगत जीवन, सामाजिक संस्थाओं, सामाजिक संगठनों और नीयिों में लिंग की केन्द्रीय भूमिका को पहचानेंगे। महिलाओं के मुद्दों पर बल देने का मुख्य उद्देश्य समाज में महिलाओं को उनका उपयुक्त अधिकार देना है।

समाज महिला को पुरूष का अधीनस्थ मानता है। महिलाओं के साथ संस्कृति, परंपरा, प्रथाओं और धर्म के नाम पर सिर्फ उनके लिंग के कारण भेदभाव तथा वंचित किया जाता है। ये महिलाओं को जीवन, भोजन, शिक्षा, मनोरंजन इत्यादि के बुनियादी अधिकारों से वंचित करते हैं तथा सदैव ही समाज में महिलाओं को राजनीकि और आर्थिक रूप से अधिकारहीन रखने की प्रवृत्ति रही है जिससे कि जीवन के सभी क्षेत्रों में उनमें स्वतंत्रता की कमी हो और निर्णय लेने की क्षमता नहीं रहे। इससे यह परिलक्षित होता है कि लिंग विषयक भेदभाव और लिंग विषयक पूर्वाग्रह के साथ पितृसत्तात्मक बुनियाद पर किस तरह सामाजिक संस्थाओं का निर्माण हुआ है। महिलाओं के मुद्दे महिलाओं के विरूद्ध सभी अपमानजनक प्रथाओं का पर्दाफाश करेंगे, बहुधा पुरूषों के अनुभवों की उपेक्षा करेंगे और इसके द्वारा अत्यधिक अयुक्तिसंगत, गैर–कानूनी, अन्यायपूर्ण संस्थागत प्रथाओं पर काबू पाने की चुनौती देता है। समाज महिलाओं के अनुभव की और उपेक्षा नहीं करेगा, महिलाओं की लिंग के प्रति चेतना को नहीं बढ़ाएगा तथा महिलाओं को समान अधिकार तथा उत्तरदायित्व और मर्यादा प्रदान करेगा जो कि उनके पूर्ण मानवीय संभावनाओं के स्वीकार करने का परिणाम है। लिंग विषयक समानता स्थापित करने में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि सामाजिक जीवन का आकार प्रदान करने में आज लिंग का जितना प्रभाव है उसे कम कर दिया जाए। लिंग का महत्व कम करने से लिंग विषयक असमानता में कमी आएगी। लिंग विषयक असमानता में कमी आने से लिंग विषयक विभेद और भेदभाव में कमी आएगी।

## 12-4 fyxhdr] fyx fo"k;d fu/kkj.k vkj fyx i:i.k

कोई भी चीज तब लिंगीकृत होती है जब वह स्वयं और स्वतः सक्रिय रूप से ऐसी सामाजिक प्रक्रिया में संलग्न होती है जो महिलाओं और पुरूषों के बीच भेद प्रस्तुत और पुनः प्रस्तु करती है। "लिंग विषयक निर्धारण" और "लिंगीकृत" वह अवधारणाएं हैं जो "उन परिणामों को व्यक्त करती है जिनका निर्माण सामाजिक रूप से हुआ है तथा जो पुरूषों को महिलाओं की तुलना में लाभ की स्थिति में रखते है।"

समाज उस समय लिंगीकृत होता है जब इसका स्वरूप या तो "पुरूषोचित" है

नोट

अथवा "स्त्रियोचित" है अथवा जब यह लिंग द्वारा विभेद का प्रतिरूप प्रदर्शित करता है। संस्कृति, संस्थाओं और संगठन के लिंगीकृत अभिलक्षण महिलाओं को अधीनस्थ स्थिति में रखते हैं। ऐसी प्रक्रियाएं– अथवा प्रथाएं है जिससे एक संस्था के "लिंगीकृत" स्वरूप का पता चलता है। "लिंग विषयक निर्धारण" उस प्रक्रिया पर ध्यान केन्द्रित करता है जिसके माध्यम से नियोजन में पुरूषों और महिलाओं के बीच अधिकार संबंध की रचना होती है और किस तरह "लाभ तथा अलाभ, शोषण था नियंत्रण; क्रिया और भावना; अर्थ और पहचान पुरुष और महिला के बीच भेदभाव की दृष्टि से प्रतिरूपित की जाती है। अनेक उदाहरण हैं जिनसे समकालीन समाजों की संस्कृति, संस्थाओं तथा संगठनों के लिंगीकृत स्वरूप का पता चलता है जैसे, शिक्षा और प्रशिक्षण, वैतनिक कार्य घरेलू कार्य और बच्चे की देखभाल, लोकप्रिय मीडिया संस्कृति और राजनीति का लिंगीकृत स्वरूप। लिंगीकृत संस्थाओं के परिप्रेक्ष्य से, लिंग विषयक अलगाव 'पुरूष' और 'महिला' नौकरियों के बीच सांस्थानिक बाधा से प्रस्फुटित होता है। लिंग प्ररूपण (जेंडर टाइपिंग) उन सामाजिक प्रक्रियाओं का परिणाम है जिनके माध्यम से सामूहिक रूप से अर्थ आरोपित किया जाता है और इसे सुदृढ़ किया जाता है। यह किसी एक लिंग के लिए कतिपय कार्यों, भूमिकाओ, नौकरियों और व्यवसायों को उपयुक्त तथा दूसरे के लिए अनुपयुक्त बताकर स्वयं को थोपता है। यह उस पारंपरिक समझ को स्थापित करता है कि किसे किस प्रकार का काम करना चाहिए। इस प्रकार लिंग–प्ररूप लिंगीकृत संस्था के रूप में कार्य के एक पहलु का प्रतिनिधित्व करता है। कार्य के लिंगीकृत पहलु बहुध बेमतलब होते हैं जिन्हें बिना प्रमाण के ही सत्य मान लिया जाता है और यह अत्यंत ही युक्तिपूर्वक संचालित होता है। पुरूषों की नौकरियों की तुलना में महिलाओं की नौकरियों को महत्वहीन माना जाता है। जिन समाजों में महिलाओं की अपेक्षा पुरूषों को हमेशा अधिक महत्व दिया जाता है, वे अन्य संस्थाओं में भी इस मूल्यांकन का प्रसार करते हैं। महिलाओं द्वारा संपादित क्रियाकलापों को पुरूषों द्वारा संपादित क्रियाकलापों की अपेक्षा बहुधा महत्वहीन समझने की प्रवृत्ति होती है।

पुरूष कतिपय पुरूष–चिन्हित क्षेत्रों में विशेषीकरण द्वारा और इसके पुरूषोचित घटकों तथा विचारधाराओं पर बल देकर स्वयं की महिलाओं से अलग कर सकते हैं। वे अपने पौरूष को बनाए रखने के लिए अनेक युक्तियां भी अपनाते हैं। एक पितृसत्तात्मक व्यवस्था समाज में लिंगात्मक वर्गीकरण का सच्चा प्रतिबिम्ब है।

## 12-5 fir'lÙkk

जब समाज पर पुरूषों का प्रभुत्व होता है तथा यह उनके द्वारा शासित होता है तो यह पितृसत्तात्मक है। इस दृष्टिकोण से पुरूष शासक वर्ग है और महिला शासित वर्ग है। स्त्री अधिकारवादियों ने तक्र दिया है कि परिवारों में अधिकांश शक्ति पुरूषों के पास होती है, कि महिलाओं की अपेक्षा अधिक वेतन वाले और उच्चतर प्रस्थिति वाले नौकरियों में उनके नियोजित होने की प्रवृत्ति रहती है तथा उनकी प्रवृत्ति राजनीतिक सत्ता पर एकाधिकार स्थापित करने की भी होती है। परिवर्तनवादी स्त्री अधिकारवादियों के लिए लिंग विषयक असमानता की व्याख्या करने के लिए पितृसत्ता सबसे महत्वपूर्ण अवधारणा है। वैल्बी (1990) बताते हैं कि समाज के स्त्री अधिकारवादी समझ के केन्द्र में पितृसत्ता ही है।

## 12-5-1 ,d fopkj/kkjk ds :i esa firlÙkk& lLFkkdj.k vkSj o/khdj.k

लिंग विषयक असमानता के विश्लेषण के लिए "पितृसत्ता" अपरिहार्य है। यह महिलाओं के उपर पुरूषों के नियंत्रण, जिसके कई कारण हो सकते है, के लिए एक अत्यंत विशद शब्द है। पितृसत्ता एक विचारधारा अथवा प्रतीती है जिसके अनुसार पुरूष महिलाओं से श्रेष्ठ हैं। सामाजिक संस्थाओं का निर्माण लिंग संबंधी पूर्वाग्रह के साथ पितृसत्तात्मक बुनियाद पर हुआ है। पितृसत्तामक विचारधारा के सृजन और इसे स्थायित्व प्रदान करने में धर्म ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। पूरे विश्व में पितृसत्तात्मक विचारधारा एक प्रमुख विचारधारा है जो कि पितृसत्तात्मक विचारधारा के पितृवंशीय संस्थाओं को पैतृक वंश परम्परा (कुल) और पितृवंशीय विरासत को शासित करता है। यह विचारधारा सामाजिक व्यवस्थाओं को कायम रखने तथा जनमानस पर नियंत्रण रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

वैल्बी (1990) छः पितृसत्तात्मक ढांचों को चिन्हित करते हैं जो समाज में महिलाओं को प्रतिबंधित करता है और पुरूष की प्रधाना बनाए रखने में सहायक होता है। ये हैं पितृसत्तात्मक संस्कृति, लैंगिकता, घर के अंदर पितृसत्तात्मक संबंध, वैतनिक कार्य, महिलाओं के प्रति पुरूषों की हिंसा और राज्य। इनमें से प्रत्येक संरचना परस्पर स्वतंत्र है किन्तु वे एक दूसरे पर प्रभाव भी डालते हैं। समाज में पुरूषों और महिलाओं की क्रियाओं से प्रत्येक संरचना का पुनरुत्पादन हुआ है अथवा इसमें परिवर्तन होता है।

पितृसत्तात्मक समाज में महिला शोषित वर्ग और पुरूष शोषक वर्ग है। "सभी वैचारिक मान्यताओं" के पुरूष सदृश पितृसत्तात्मक दृष्टि से नारी और नारीत्व की परिभाषा करते हैं और सभी महिलाएं इस परिभाषा के अंतर्गत आती है। इस प्रकार का लैंगिक दमन जो लिंग विषयक संबंधों से उत्पन्न होता है, सामाजिक और सांस्कृतिक शोषणों का सर्वाधिक आधारभूत संबंध है और यह एक ऐसा संबंध है जिससे सभी अन्य शोषक संबंधों की उत्पत्ति होती है। लैंगिक शोषण के इस संबंध को महिलाओं पर निरंतर शारीरिक हिंसा तथा मनोवैज्ञानिक आक्रामकता के माध्यम से बनाए रखा जाता है। इस प्रकार लिंग विषयक और यौन संबंधी दमन कार्य एक व्यवस्था के रूप में पितृसत्ता के संदर्भ में के अंदर जारी रहता है जो "व्यक्तियों, संस्थाओं और मूल्यों" के माध्यम से कार्य करता है। लिंग संबंधी शोषण पितृसत्ता के अंतर्गत प्रणालीबद्ध है और यह छुटपुट हिंसा का मामला तथा भेदभावकारी घटना नहीं है। स्त्री अधिकारवादी सवालों और विश्लेषण के अध्यधीन स्थिति के अलावा पितृसत्ता की व्यवस्थित प्रकृति का पालन किया जाता है।

कतिपय जैविक, भौतिक, मनोवैज्ञानिक, वैचारिक, समाजशास्त्रीय, शैक्षणिक, आर्थिक, धार्मिक और प्रेरक घटक हैं जो पितृसत्ता के अस्तित्व की व्याख्या करते हैं। इसमें पुरूषों के लिए उच्चतर सामाजिक प्रस्थिति तथा महिलाओं के लिए निम्नतर सामाजिक प्रस्थिति की व्यवस्था है। मानवीय समाज में सभी प्रमुख संस्थाएं जैसे परिवार, धर्म, विधि, न्यायपालिका, शिक्षा, अर्थव्यवस्था, राजनीति, ज्ञान, मीडिया इत्यादि "लिंगीकृत" है और यह पितृसत्तात्मक प्रकृति के हैं। सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों ने वैध रूप से पुरूषों के अनुभवों को प्रतिबिम्बित किया है और उन मूल्यों की परिभाषा में भागीदारी से महिलाओं को अलग कर दिया है। महिलाएं भी ऐसे मूल्यों और उन मूल्यों पर आधारित प्रथाओं का समर्थन करती है क्योंकि उन्हें चयन की स्वतंत्रता नहीं दी जा रही है। सामाजिक व्यवस्था और संबंधित

प्रथाएं, पुरूष प्रभुत्व और भेदभाव, अवहेलना नियंत्रण, शोषण, उत्पीड़न, अपमान, परिवार के अंदर कार्यस्थल पर और समाज में हिंसा का समर्थन करते हैं।

नोट

इस समय किसी एक पितृसत्तावादी द्वारा महिलाओं का बहुत अधिक शोषण नहीं हो रहा है किंतु इसकी जगह पुरूषों द्वारा सामूहिक रूप से सार्वजनिक क्षेत्रों में उनकी अधीनता के माध्यम से शोषण किया जा रहा है। जैसा कि वैल्बी ने कहा है, "अब महिलाएं घरेलू चूल्हे तक ही सीमित नहीं हैं, अपितु वे पूरे समाज में संचरण कर सकती हैं तथा शोषण का शिकार हो सकती है।

## 12-5-2 Hkkjrh; efgyk,a vkj fir`lÙkk

भारत में महिला उत्पीड़न की चिरकालिक और सतत परम्परा रही है। दृश्यमान और अयधिक शक्तिशाली पितृसत्ता और धर्म भारतीय समाज पर शासन करते हैं। भारतीय समाज में यथार्थ में लिंग संबंधी असमानता को विभिन्न प्रकार की सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक असमानाओं से भिन्न नहीं किया जा सकता है। महिलाओं का यौन श्रेणी में आरोपण पारंपरिक सामाजिक संरचना में अत्यंत की गहराई से टिके सामाजिक कृत्यों के श्रेणीकरण का परिणाम प्रतीत होता है।

इसके अतिरिक्त, चँकि रीति–रिवाजों, रुढ़ियों और कानून के माध्यम से पुरूषों द्वारा इन एजेंसियों का संरक्षक होने के नाते महिलाओं की तुच्छ यौन भूमिकाएं स्थापित और सुदृढ़ की गई है, महिलाओं की स्वतंत्रता और मुक्ति के लिए संघर्ष अधिक आगे नहीं बढ़ सका है। महिलाओं के पक्ष में अनेक अधिनियमों के पारित होने और भारत के संविधान द्वारा समानता की गारंटी करने के बाद भी, आज तक जीवन के सभी क्षेत्रों में महिलाओं का उत्पीड़न कहीं अधिक स्पष्ट और व्यापक रूप से विद्यमान है।

भारतीय सामाजिक संरचना ने पुरूषों को अधिक स्वतंत्रता और स्वच्छंदता तथा महिलाओं पर प्रभुसत्ता प्रदान की है। पितृसत्तात्मक प्राधिकार की संरचना और परम्परागत परिवार तथा समाजीकरण प्रक्रिया अनुरूपता है। सदियों से महिलाएं सामाजिक शोषण और पुरूषों की अधीनता के विभिन्न रूपों का निशाना रही है। आर्थिक शोषण के कारण और भी अधिक तथा प्रत्यक्ष रूप से सामाजिक उत्पीड़न हुआ था महिलाओं को अपने आत्मसम्मान एवं स्वतंत्रता की कीमत पर भारी मूल्य चुकाना पड़ा। पुरूषोन्मुखी और पुरूष प्रधानता वाली मूल्य प्रणाली ने हर जगह समाज को अपने प्रभाव में रखा जहाँ जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में महिलाओं की अधीनता प्रत्यक्ष रूप से प्रकट हुई।

भारत में सांस्कृतिक विकास और सामाजिक प्रक्रिया में महिलाओं की भूमिका को कम आंका गया और उसे कम महत्व दिया गया। भारत में भाषा, साहित्य, शिक्षा, प्रतीक, कला, स्थापत्य सीखने की प्रक्रिया यह सभी पुरूषों के प्रभुव में तथा पुरूष केन्द्रित है। यह महिलाओं के प्रति लिंगीकृत और नकारात्मक मूल्य प्रणाली को इंगि करता है तथा समाज में उनकी निम्न स्थिति का समर्थन करता है। मूल्यों और सामाजिक मनोवृत्तियों का प्रयोग इन मूल्य का प्रस्तुतीकरण और संप्रेषण अपनी प्रकृति में अत्यधिक अयुक्तिसंगत और महिला विरोधी है।

इतिहास के कालक्रम में विकसित परम्परागत सामाजिक संरचना, परिवार, विवाह, अंधविश्वासों, विश्वासों, रीति–रिवाजों, धर्म और धार्मिक अनुष्ठान महिलाओं के सतत् शोषण का समर्थन करते हैं जिसका समाज में उनकी स्थिति पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है।

महिलाएं और लिंग विषयक सामाजिक रचना पितृसत्ता एक सांस्कृतिक (वैचारिक) व्यवस्था है जो पुरूषों और ऐसी सभी चीजें जो पुरूषोचित हैं को विशेषाधिकार प्रदान करता है तथा एक राजनीतिक व्यवस्था जो पुरूषों के हाथों में सत्ता सौंपती है, का समर्थन करता है एवं इस प्रकार महिलाओं की कीमत पर पुरूषों का हितसाधन करता है। पुरूष सिर्फ 'पितृसत्ता का वाहक' है और वह सिर्फ महिलाओं को भयभीत करता है तथा उन पर अत्याचार करता है। महिलाओं का अनुभव पुरूषों के अनुभव से बिल्कुल भिन्न है। कुछ समाजशास्त्रियों का विचार है कि पूँजीवादी पितृसत्ता के अंतर्गत, 'आर्थिक संबंध यौन संबंधों से संबद्ध है।' पितृसत्ता अपनी परिभाषा लैंगिक विभेदों पर राजनीतिक, नैतिक और सामाजिक अभिप्रायों को आरोपित करता है। इन सभी आयामों में महिलाओं को तुच्छ माना जाता है।

पितृसत्ता के अंतर्गत लिंग एक अपवर्जनीय श्रेणी है। पितृसत्ता में पुरूषों और महिलाओं का मूल्यांकन समान रूप से नहीं किया गया है, बल्कि वास्तव में, पुरूष सामाजिक दृष्टि से महिलाओं की अपेक्षा अधिक आदरणीय है। पितृसत्ता की जड़ें महिलाओं को अधिकार और स्वायत्तता से वंचित रखने की आवश्यकता में गहरी जमा हुई हैं। जननी होने के कारण महिलाओं को कुछ हद तक अधिकार और सम्मान की असंगतियों का स्वीकरण करना पड़ता है। मानवीय समाज युग्म श्रेणियों पर आधारित है। ये वह श्रेणी हैं जो पुरूषों और महिलाओं के बीच मौलिक भेद पर आधारित हैं, सकारात्मक अथवा नकारात्मक, जहां महिलाएं हमेशा ही तुच्छ अधीनस्थ स्थिति धारण करती है। पुनः इन युग्म विरोधियों को पदसोपान में व्यवस्थित किया गया है और ये एक दूसरे के प्रति विरोधपूर्ण संबंध में विद्यमान हैं। एक श्रेणी के रूप में महिलाओं ने आपस में उत्पीड़न को बांटा। पुरूष विकास और पितृसत्ता दोनों आंशिक रूप से महिलाओं को अधिकार तथा स्वायत्ता से वंचित रखने की आवश्यकता में निहित हैं।

परिवर्तनवादी स्त्री अधिकारवादी सामाजिक असमानता और लिंग भेद के बीच संबंधों का विश्लेषण करते हैं; महिलाओं पर पुरूषों की प्रधानता, सामाजिक असमाना को आधार प्रदान करती प्रतीत होती है और महिलाओं के यौन उत्पीड़न की बुनियाद महिलाओं के आर्थिक, सांस्कृतिक और सामाजिक अधीनता में है। परिवर्तनवादी स्त्री अधिकारवादी लिंग को एक प्रणाली मानते हैं।लिंग की दैहिक प्रकृति स्त्री लैंगिकता पर पुरूषोचित नियंत्रण के माध्यम से पुरूष प्रधानता को बनाए रखना सुनिश्चित करता है। उनके लिए लिंग विषयक उत्पीड़न, उत्पीड़न का सबसे मौलिक रूप है और पितृसत्तात्मक समाजों की आर्थिक संरचना का पूर्वगामी है।

लैंगिकता कोई तटस्थ शब्द नहीं है, यह पुरूष लैंगिकता के बारे में बतलाता है जिसके प्रकारांतक (अथवा विचलन) के रूप में स्त्री लैंगिकता में स्वीकार किया जाता है। "अनिवार्य विषमलिंगी लैंगिकता" की विचारधारा, गर्भनिरोध और गर्भपा के अधिकार पर प्रतिबंध, बन्ध्याकरण सहित पुनरुत्पादक प्रौद्योगिकियों का नियंत्रण और पुरूष लैंगिक हिंसा जैसी रणनीतियों, जिसमें से प्रत्येक स्त्री लैंगिकता पर पुरूष नियंत्रण सुनिश्चित करता है, के माध्यम से स्त्री लैंगिकता पर नियंत्रण स्थापित किया जाा है। शूलस्मिथ फायरस्टोन

नोट

(1970) के अनुसार पितृसत्तात्मक समाज में लैंगिक उत्पीड़न, उत्पीड़न का मौलिक और बुनियादी स्वरूप है। एण्ड्रिया डवोर्किन (1978) भी फारस्टोन के इस सहज ज्ञान से सहमत है कि महिलाओं का उत्पीड़न उन कारणों से उत्पन्न होता है जो मूल रूप से जैविक हैं, कि महिलाएं अपनी लैंगिकता के माध्यम से उत्पीड़ित होती है। वह महिलाओं की लैंगिकता पर नियंत्रण करने तथा महिलाओं को उनकी जैविकता में कैद रखने के लिए चिकित्सकीय और प्रौद्योगिकीय उन्नति को और अधिक परिष्कृत पितृसत्तात्मक रणनीति के रूप में देखती हैं। डवोर्किन की दृष्टि में महिलाओं को पुरूष हिंसा की सर्वदाव्यापी धमकियों द्वारा निष्क्रिय तथा अधीनस्थ रखा गया है। महिलाएं अपनी आज्ञाकारिता को निष्ठ बनाने के लिए पितृसत्तात्मक मूल्यों को आत्मसात करती हैं; वे रुढ़िवादी मानसिक धारणा से जुड़ी रहती है, वे नतमस्तक स्वामिभक्ति का प्रदर्शन करती हैं, वे स्वयं के प्रति हिंसा से बचने के लिए असंतोष या प्रतिरोध का तनिक भी आभास नहीं होने देती हैं। पितृसत्तात्मक संस्कृति में प्रत्येक महिला के सामने पुरूष हिंसा का यह खतरा मंडराता रहता है। बलात्कार, पत्नी की पिटाई, जबरन गर्भ धारण करना, चिकित्सकीय वध, लिंग–प्रेरित हत्या, परपीड़न कामुक मनोवैज्ञानिक दुर्व्यवहार कुछ दंड हैं जिन्हें डवोर्किन ने निराश्रयता, सम्मानच्युति (जाति बहिष्कार), मृत्यु (जला देना) के अतिरिक्त वर्गीकृत किया है जिनसे विद्रोही महिलाओं को दंडित किया जाता है। पितृसत्तात्म्क समाज की संस्थाएं तथा मूल्य उसे नीचा दिखाते हैं, प्रतिष्ठाहीन करते हैं, उसकी शक्तिहीनता को महिमामंडित करते हैं, उसकी इच्छा और उसके अस्तित्व की सबसे ईमानदार अभिव्यक्ति को प्रतिबंधित करने तथा उसे पंगु बनाने पर जोर देते हैं। पितृसत्ता के अधीन पुरूष प्रधानता और महिला निःस्वार्थता या अदृष्यता के मूल्य दैनिक जीवन में अभिव्याप्त है। पुरूष शक्ति की अन्य रणनीतियां जो महिलाओं तक लैंगिक पहुंच सुनिश्चित करती हैंः वेष्यावृत्ति, दाम्पत्य बलात्कार, पत्नी की पिटाई, कौटुम्बिक व्यभिचार (अगभ्यागमन), दुल्हन की कीमत, पुत्रियों को बेचना, पर्दा इत्यादि शामिल हैं। पुरूष और महिला अधीनता के परिप्रेक्ष्य से आतंकवाद और यौन दुर्व्यवहार की रणनीति स्वाभाविक और अपरिहार्य प्रतीत होती है, यदि उन्हें अगोचर नहीं छोड़ दिया जाता है।

शैला राऊबोथम (1973) बताती हैं कि प्रारंभिक मताधिकार युग में स्त्रीअधिकारवाद उदार था और इसका लक्ष्य समान अधिकारों की प्राप्ति था; उत्पादन के बाह्य विश्व अथवा परिवार या लैंगिकता की आंतरिक दुनिया में परिवर्तन किए बिना पूँजीवाद में महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन हो सकता है। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य के मार्क्सवादी परम्परा के स्त्री अधिकारवादियोयं की चिन्ता कार्यस्थल पर महिलाओं की स्थिति को बेहतर बनाने और कानूनी संबंधों में सुधार पर जोर देना था। समाजवादी स्त्री अधिकारवादियों का विचारहै कि ये उत्पीड़क संबंध पितृसत्तात्मक समाज में विद्यमान शक्ति संरचनाओं से प्रेरित हैंः जिनके कारण वर्ग और प्रजातीय पृष्ठभूमि के अनुरूप उत्पीड़न का अलग–अलग ढंग से अनुभव किया जाता है। सामाजिक संबंध सामाजिक विचारधारा में प्रतिबिम्बित होते हैं जो प्रत्येक महिला में अभिव्यक्त होता है और महिलाओं की कार्यकलापों से संबद्ध होता है।

महिलाओं के मुद्दे महिलाओं को प्रभावी तरीके से नियंत्रित करने वाले पितृसत्तात्मक मूल्यों को चुनौती देते हैं। ये समाज में पुरूषों के प्राधिकार और उनके निहित अथवा प्रवृत्त हितों को भी चुनौती देते हैं क्योंकि वे उत्पीड़क हैं। महिलाओं के मुद्दे पितृसत्तात्मक

लिंग विषयक भूमिकाओं के सामाजिक रूप से अनुकूलन को भी चुनौती देते हैं तथा महिलाओं की अपनी पहचान की मांग करते हैं। अब इक्कीसवीं सदी में महिलाएं पुरूषों के पितृसत्तात्मक शर्तों का विरोध करने के लिए पर्याप्त आवाज उठा सकती हैं।

**नोट**

## 12-7 fyax ¼tsMj½ fo"k;d Hksn vkSj vlekurk dk /oLr djuk

संस्थाकरण और वैधीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से लिंग विषयक असमानता का पुनरुत्पादन होता है। सामाजिक संरचना में महिलाएं और उनकी दिनचर्या ही है जो इन असमानताओं को बनाए रखती हैं। लिंग सामाजिक प्रथाओं की बहुस्तरीय प्रणाली हैं जो भेदभाव उत्पन्न करता है। ये मुद्दे महत्वपूर्ण है क्योंकि सामाजिक जीवन का अधिकांश पहलू– सिर्फ लिंग के क्षेत्र में ही– स्थायी है, व्यवस्थित है तथा इसमें अपेक्षाकृत धीमी गति से परिवर्तन होता है। अतएव लिंग भेद और असमानताओं को नष्ट करने में कतिपय कठिनाइयां हैं।

प्रश्न यह है कि लिंग विषयक निर्धारण की गहरी संस्थाग सामाजिक प्रक्रिया में सामाजिक परिवर्तन किस प्रकार आता है। प्रथम, अत्यधिक संस्थागत सामाजिक संबंध भी सामाजिक परिवर्तन से निरापद नहीं हैं। वस्तुतः यह सामाजिक परिवर्तन अनिवार्य और सतत है तथा यह भूमंडलीय समाज, जिसमें विविधता और बढ़ रही है, पर विशेष रूप से खरा उतरता है। परिवर्तन असमान है अर्थात सामाजिक दुनिया के सभी भागों में एक ही समय में अथवा एक ही प्रकार से परिवर्तन नहीं होता है। बहुस्तरीय प्रणाली के रूप में लिंग विषयक क्रम और लिंग विषयक पद्धति विशेरूष रूप से आमूल–चूल परिवर्तन अथवा अव्यवस्था का प्रतिरोधक होता है। इस प्रणाली को ध्वस्त करने में बहुत ही अधिक समय लगेगा तथापि लिंग विषयक क्रम में लघु किंतु कतिपय महत्वपूर्ण चुनौतियां मौजूद है। इस प्रकार की चुनौतियां वृहतर लिंग विषयक समानता की दिशा में निरर्थक प्रयास कर चुकी हैं।

लिंग विषयक अवधारणा का सृजन व्यक्तिगत अन्तर्क्रिया और संस्थागत स्तर पर होता है और इसलिए बृहत्तर समाज में सामाजिक परिवर्तन द्वारा प्रत्येक स्तर पर अलग–अलग रूप में प्रभावित हो सकता है। बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध के दौरान लिंग विषयक क्रम में महत्वपूर्ण परिवर्तन हो रहे हैं। कार्य और परिवार के संस्थागत स्तर पर परिवर्तन होते हैं जो कि महिलाओं और पुरूषों के लिंग विषयक पहचान में परिलक्षित होते हैं। महिलाओं ने वेतन के लिए काम किया और पुरूषों ने बच्चों की देखभाल में हिस्सेदारी की तथा उनसे घर–गृहस्थी की जिम्मेदारियों के निर्वहन में हाथ बंटाने की आशा की जाती है। लिंग विषयक पद्धति और लिंग विषयक क्रम के एक भाग में परिवर्तन होने से अन्य स्तरों पर भी परिवर्तन के द्वार खुल जाते हैं। उदाहरण के लिए हमारी अगली पीढ़ी की समाजीकरण की प्रक्रियाओं और प्रथाओं में युवा महिलाओं और पुरूषों की लिंग विषयक पहचानों की नई वास्तविकताओं को स्वीकारा और उसके साथ समायोजन किया जाएगा तथा यह पुरूष का जीवन यापन का साधन कमाने वाला और महिला का मां–गृहणी के परम्परागत द्विभाजन में अब कम जकड़ा हुआ है। धीरे–धीरे परिवार और समाज में श्रम विभाजन की अवधारणा समाप्त हो जाएगी। पुरूषों के साथ संबंधों में महिलाओं को मोल–तोल की अधिक शक्तित होगी और पुरूष के परिवार, बच्चें तथा गृहकार्य में अधिक संलग्नता की उम्मीद है।

नोट

कभी–कभी व्यक्ति पहले बदलता है और नए प्रकार के संबंधों को जन्म देता है जो अंततः संस्थाओं पर उन परिवर्तनों को स्वीकार करने के लिए दबाव बनाता है। संस्थाओं में परिवर्तन आसानी से नहीं किया जा सकता है, इसके लिए एकीकृत, सतत्, सामूहिक और सचेत कार्रवाई की आवश्यकता होती है। किम्मेल (2000) नोट करती है कि बीसवीं शताब्दी महिलाओं की प्रस्थिति में अभूतपूर्व उथल–पुथल, संभवतः भूमंडलीय समाज में लिंग विषयक संबंधों में अतिमहत्वपूर्ण परिवर्तन का साक्षी रहा है। उन्होंने साक्ष्य के रूप में जिन परिवर्तनों का उदाहरण दिया है उनमें मताधिकार, वस्तुतः सभी नौकरियों में काम का अधिकार, पुरूषों के साथ समान शर्तों पर शैक्षणिक संस्थाओं में प्रवेश का अधिकार और यहां तक कि सैन्य सेवा में भी योगदान करने का अधिकार सम्मिलित है। उन्होंने इसे 'अर्धपूर्ण क्रान्ति' कहा है। यह नाटकीय परिवर्तनों के साथ शुरू होगा जो कि समाज में पुरूषों के जीवन की अपेक्षा महिलाओं के जीवन और काम में शुरू हो चुका है। किम्मेल का सुझाव है कि "इसने शेष आधी क्रांतिः पुरूषों के जीवन में परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त कर दिया है।"

असमान सामाजिक परिवर्तन से लिंग विषयक भूमिकाओं, लिंग विषयक पद्धति और लिंग विषयक क्रम को ध्वस्त करने के माध्यम से कम की अपेक्षा बृहत्तर लिंग विषयक समानता आई है। पिछले पांच दशकों से विशेष रूप से पाश्चात्य देशों में लिंग विषयक क्रम में परिवर्तन सामान्यतया इस दिशा में हुआ है। इस प्रकार एक सीमा तक व्यक्तिगत, अंतर्क्रियात्मक और संस्थागत स्तरों पर लिंग विषयक असमानता में कमी आई है। तथापि, भूमंडलीय समाज में लिंग विषयक असमानता के उन्मूलन के लिए लम्बा सफर तय करना है। लिंग विषयक समानता की तुलना में लिंग विषयक असमानता अधिक चर्चा का विषय हैं क्योंकि असमानता संस्थागत और वैधीकृत है। अतएव लिंग विषयक समानता हासिल करने के लिए भविष्य में लम्बा सफर तय करना होगा।

लिंग विषयक समानता का रास्ता लिंग विषयक मामलों के महत्व को कम करने से गुजरता है। इसका अर्थ यह है कि सामाजिक जीवन को आकार प्रदान करने में लिंग विषयक मामलोंका आज की अपेक्षा काफी कम प्रभाव होगा। उदाहरण के लिए सामाजिक परिवर्तन को बृहत् लिंग विषयक समानता के लिए साक्ष्य के रूप में विचार किया जा सकता है जो कि मतदान, नियोजन और शिक्षा के क्षेत्रों में लिंग विषयक मामलों को कम महत्व देने के सफल प्रयास को निरूपित करता है। सच्चे अर्थों में लिंग विषयक विमर्श से रहित समाज सभी क्षेत्रों अर्था सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक जीवन के कानूनी पहलुओं में परिवर्तन लाएगा। संस्थाओं को लिंग विषयक विमर्श से पृथक करने का यह अर्थ है कि उनका आचरण, नीतियां और संरचना लिंग विषयक विमर्श के प्रति निरपेक्ष होंगे। व्यक्तियों के लिए विषयक विमर्श से पृथक होने का अभिप्रायहै कि लिंग विषयक विमर्श लोगों की विशेषताओं, व्यक्तित्वों और पहचानों का प्राथमिक निर्धारक नहीं रह जाएगा।

लिंग विषयक असमानता को कम करने के लिए लिंग संबंधी भेदभाव को समाप्त करना एक अनिवार्य पूर्व शर्त है। लिंग संबधी असमानता कम करने से लिंग संबंधी भेदों में कमी आती है। आज महिलाओं और पुरूषों में भिन्नता की अपेक्षा समानता अधिक दिखाई पड़ती है जिससे न सिर्फ लोगों के समझ और सहज ज्ञान में परिवर्तन का पता चलता है कि अपितु यह विगत की अपेक्षा कहीं अधिक लिंग विषयक समानता का प्रत्यक्ष परिणाम

है। लिंग विषयक असमानता को पुनः प्रस्तुत करने वाली शक्तियों की जड़ें गहरी है किंतु इसने लिंग विषयक असमानता को कम करने और लिंग विषयक भेद का उनका समर्थन करने वाले को रोका भी नहीं है।

## 12.8 लिंग (जेंडर) विषयक भूमिकाओं का उन्मूलन

अनेक स्त्री अधिकारवादी लेखकों ने लिंग विषयक भूमिकाओं के उन्मूलन की वकालत की है और माता–गृहणी की भूमिका इसके लिए प्रमुख लक्ष्य के रूप में चुना गया है। ऐन ओकली (1974) महिलाओं की उन्मुक्ति के लिए निम्नलिखित कदम उठाने की दलील देती है :

(क) गृहणी की भूमिका का अनिवार्य रूप से उन्मूलन किया जाए। ओकली गृहकार्य के लिए वेतन जैसे कम परिवर्तनवादी समाधनों को अस्वीकार करती है, वह तर्क देती है कि इससे इस बात को बल मिलेगा कि महिलाएं गृहणी के समतुल्य हैं।

(ख) परिवार, इस समय जिस स्थिति में है, का अनिवार्य रूप से उन्मूलन कर देना चाहिए। यह प्रस्ताव पहले ही तर्क का विस्तार है क्योंकि गृहणी और माता की भूमिका एक ही चीज का अभिन्न अंग है। परिवार का उन्मूलन करने से वह चक्र भी टूट जाएगा जिसमें पुत्री अपनी मां से और पुत्र अपने पिता से भूमिका सीखता है।

(ग) सामाजिक जीवन के सभी क्षेत्रों में श्रम का लिंग आधारित विभाजन अनिवार्य रूप से समाप्त कर दिया जाए।

ओकली तर्क देती है, ''हमें वैचारिक क्रांति की आवश्यकता है, हमारी संस्कृति में विद्यमान लिंग विषयक भूमिकाओं को विचारधारा में क्रांति, लिंग विषयक पहचान की अवधारणाओं की क्रांति।'' इस प्रकार पुरूषों और महिलाओं को व्यक्तियों के रूप में देखा जाए न कि नर और नारी के रूप में।

केट मिल्लेट (1970) एक परिवर्तनवादी स्त्रीअधिकारवादी लेखिका है जिनका तर्क है कि सांस्कृतिक दृष्टि से परिभाषिक लिंग विषयक भूमिका विहीन समाज में प्रत्येक व्यक्ति एक आंशिक, मर्यादित और धर्मानुवर्ती व्यक्तित्व की अपेक्षा एक संपूर्ण व्यक्तित्व का विकास" करने के लिए स्वतंत्र होगा। इस प्रकार महिला तथाकथित पुरूष की विशेषताओं और पुरूष महिला की विशेषताएं विकसित कर सकते हैं। इसमें पुरूष समलैंगिक और महिला समलैंगिक संबंधों के प्रति पूरी सहनशीलता शामिल होगी, "जिससे कि यौन–क्रिया का पुरूषों और महिलाओं के बीच यादृच्छिक ध्रुवीकरण समाप्त हो जाएगा।" इस प्रकार जो जैविक दृष्टि से पुरूष और महिला हैं, सांस्कृतिक दृष्टि से परिभाषित पुरूष और स्त्री के लेबल के शिकंजे में जकड़ने और सीमा में रहने की अपेक्षा अपने लिए सबसे उपयुक्त रीति के अनुसार अपने व्यक्तित्व और आचरण का विकास कर सकते हैं।

## 12.9 सारांश

महिलाओं के लिए अंतर्राष्ट्रीय दशक (1976–1985) का मुख्य उद्देश्य विकास से महिलाओं को जोड़ना था। आर्थिक दृष्टि से विकासशील देशों में यह एक महत्वपूर्ण

नोट

अवधारणा है जिसमें महिलाएं सदैव ही असमान शर्तों पर विकास से जोड़ी गई है।

भारत भी अन्य अनेक देशों की ही भांति 'कन्वेन्शन ऑन द एलिमिनेशन आफ आल फार्म्स आफ डिस्क्रिमिनेशन अगेन्स्ट वुमेन' (सीईडीएडब्ल्यू) पर हस्ताक्षर करने वाले देशों में एक है, फिर भी इसे जो महिलाओं पर थोपे विभिन्न भेदभावों का वास्तव में उन्मूलन करने के लिए लम्बा सफर तय करना है। भारत जैसे विकासशील समाज में विकास की प्रक्रिया में पुरूषों और महिलाओं दोनों समान और महत्वपूर्ण भूमिका निभाना अनिवार्य है। यह स्वीकार किया जा रहा है कि एक ऐसे समाज के निर्माण की दिशा में समग्र प्रयास करने की आवश्यकता है जिसमें पुरूष और महिलाएं समान शर्तो पर रहें, जहां महिलाओं को एक मनुष्य के रूप में स्वयं का विकास करने के लिए समान सुविधाएं और समान अवसर मिले और उन्हें भी पुरूष के बराबर ही समान सामाजिक और आर्थिक प्रस्थिति प्राप्त हो। महिलाओं को अब विचार के दायरे से बाहर नहीं रहना चाहिए। स्वस्थ मानवीय विकास के लिए पुरूषों के साथ समान शर्तों पर महिलाओं को भी समुचित स्थान मिलना चाहिए। महिलाओं के अनुभवों को महत्व देना चाहिए और समाज को विभिन्न नीतियों तथा कानूनों के निर्धारण, निर्माण, प्रवृत्ति और प्रवर्तन में महिलाओं के अनुभवों और पीड़ा की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। यह सुझाव बार–बार दिया गया कि शिक्षा और नियोजन में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने केकिसी भी उपाय के साथ–साथ महिलाओं के प्रति पुरूष मनोवृत्ति एवं व्यवहार में भी परिवर्तन लाना चाहिए। लिंग विषयक न्यायपूर्ण समाज के सामाजिक पुर्नअभिमुखीकरण के लिए लिंग विषयक मुद्दों को सुग्राह्य बनाकर लिंग विषयक मुद्दों के प्रति जागरूकता के माध्यम से आमूलचूल परिवर्तन लाने की आवश्यकता है। महिलाओं की स्वयं की तुच्छता, दुर्बलता और निष्क्रियता के सहजबोध को भी बदलने की जरूरत है तथा एक सक्रिय मनःस्थिति और मनोवृत्ति पर पुनः बल दिए जाने की आवश्यकता है।

महिलाओं की अधिकारिता– लिंग विषयक समानता के लिए संसाधनों का समान रूप से सुलभ होना, समान अधिकार तथा निर्णय लेने की प्रक्रिया में बराबरी की भागीदारी अनिवार्य है। इसके लिए गृहस्थी, संस्थाओं और समाज के सभी स्तरों पर निर्णय लेने की प्रक्रिया में अधिकारों के पुनर्नियोजन की आवश्यकता है। इसके लिए जोरदार प्रयास करने और हर तरफ से– सरकार, गैर–सरकारी संगठनों, विद्वतजनों और व्यवसाय की दुनिया को, भारतीय और भूमंडलीय समाज को अधिक न्यायपूर्ण बनाने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाना है। यदि विभिन्न क्षेत्रों में असमानता और भेदभाव जारी रहता है तो न सिर्फ सभी महिलाएं हाशिए पर होंगी अपितु देश और भूमंडलीय समाज को भी घाटा होगा क्योंकि इसके संभावित महिला की आर्थिक क्षमता के बड़े हिस्से का अनुकूलन उपयाग नहीं होगा। प्रस्तुत इकाई में समाज में प्रकाश में आए महिलाओं के मुद्दों के उभार के आधार पर लिंग विषयक असमानता पर विचार किया गया है। मानवीय जीवन के सभी क्षेत्रों में लिंग विषयक असमानता की निरंतर उपस्थिति ने महिला सक्रियतावादियों और महिलावादियों को समग्र रूप से महिलाओं पर किये जा रहे अन्यायों पर प्रश्न उठाने को प्रेरित किया। इकाई के पहले भाग की चिन्ताएं ही महिलाओं के मुद्दों को सामने लाकर उभारने का आधार है। पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था समाज और परिवार में महिला को द्वितीयक स्थान देती है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था का विकास संस्थाकरण और वैधीकरण जैसे मुद्दे और किस प्रकार पितृसत्तात्मक प्रणाली पर प्रश्न उठे, यह इस इकाई में अध्ययन

किया गया। आखिरी खंड लिंग विषयक असमानता और विभेदों को लिंगों के बीच अधिक समान वितरण के पक्ष में ध्वस्त करने की आवश्यकता के विषय में है।

यह इकाई बताती है कि अनुकूल उपयोग, परस्पर ज्ञान, ऊर्जा, सृजनशीलता और कौशल तथा समान शर्तों की शक्ति पर निर्मित महिलाओं और पुरूषों के बीच समतुल्य साझेदारी ही अंतिम लक्ष्य होना चाहिए। इससे पूरे समाज को सकारात्मक लाभ होता है और यह विश्व की अधिकांश गंभीर समस्याओं के समाधान में योगदान करता है।

**नोट**

लिंग विषयक समानता उस समय वास्तविकता बनती है जब महिलाएं और पुरूष नकारात्मक लिंगीकृत मानदंडों को अस्वीकार कर दें तथा लिंग विषयक समानता, सामाजिक –न्याय और मानवाधिकारों को स्वीकार कर लें। पुरूष प्रबुद्धता एक अन्य महत्वपूर्ण आयाम है। ये सभी सार रूप में लिंग विषयक विकास के सूचक हैं और मानव के विकास के रूप में इनका प्रसार होता है।

## 12-10 vH;kl i'u

1. महिलाओं के मुद्दे और लिंग विषयक समानता को स्पष्ट करें।
2. पितृसत्ता क्या है और यह समाज में किस तरह कार्य करता है?
3. लिंग (जेंडर) विषयक भेद और असमानता को ध्वस्त करने हेतु आप क्या सुझाव देंगे?

# इकाई–13 कन्या भ्रूण हत्या

नोट

13.0 प्रस्तावना
13.1 कन्या भ्रूण हत्या का कारण
13.2 कन्या भ्रूण हत्या के प्रभाव
13.3 अपराध से जुड़े कानूनी प्रावधान
13.4 पीसी एंड पीएनडीटी एक्ट की प्रमुख विशेषताएं
13.5 पीसी एंड पीएनडीटी एक्ट के तहत प्रतिबंधित कृत्य
13.6 पीसी एंड पीएनडीटी एक्ट का क्रियान्वयन
13.7 कन्या भ्रूण हत्या के प्रतिरोध के लिए सुझाव
13.8 कन्या भ्रूण हत्या की घटनाएं रोकने के उपाय
13.9 सारांश
13.10 अभ्यास प्रश्न

## 13.0 प्रस्तावना

कन्या भ्रूण हत्या आमतौर पर मानवता और विशेष रूप से समूची स्त्री जाति के विरुद्ध सबसे जघन्य अपराध है। बेटे की इच्छा  परिवार नियोजन के छोटे परिवार की संकल्पना के साथ जुडती है और दहेज की प्रथा ने ऐसी स्थिति को जन्म दिया है जहाँ बेटी का जन्म किसी भी कीमत पर रोका जाता है। इसलिए समाज के अगुआ लोग माँ के गर्भ में ही कन्या की हत्या करने का सबसे गंभीर अपराध करते हैं। इस तरह के अनाचार ने मानवाधिकार, वैज्ञानिक तकनीक के उपयोग और दुरुपयोग की नैतिकता और लैंगिक भेदभाव के मुद्दों को जन्म दिया है।

गर्भ से लिंग परीक्षण जाँच के बाद बालिका शिशु को हटाना कन्या भ्रूण हत्या है। केवल पहले लड़का पाने की परिवार में बुजुर्ग सदस्यों की इच्छाओं को पूरा करने के लिये जन्म से पहले बालिका शिशु को गर्भ में ही मार दिया जाता है। ये सभी प्रक्रिया पारिवारिक दबाव खासतौर से पति और ससुराल पक्ष के लोगों के द्वारा की जाती है। गर्भपात कराने के पीछे सामान्य कारण अनियोजित गर्भ है जबकि कन्या भ्रूण हत्या परिवार द्वारा की जाती है। भारतीय समाज में अनचाहे रुप से पैदा हुई लड़कियों को मारने की प्रथा सदियों से है।

लोगों का मानना है कि लड़के परिवार के वंश को जारी रखते हैं जबकि वो ये बेहद आसान सी बात नहीं समझते कि दुनिया में लड़कियाँ ही शिशु को जन्म दे सकती हैं, लड़के नहीं।

## 13.1 कन्या भ्रूण हत्या का कारण

कुछ सांस्कृतिक और सामाजिक–आर्थिक नीतियों के कारण पुराने समय से किया जा रहा कन्या भ्रूण हत्या एक अनैतिक कार्य है। भारतीय समाज में कन्या भ्रूण हत्या के निम्न कारण हैं–

नोट

- कन्या भ्रूण हत्या की मुख्य वजह बालिका शिशु पर बालक शिशु की प्राथमिकता है क्योंकि पुत्र आय का मुख्य स्त्रोत होता है जबकि लड़कियां केवल उपभोक्ता के रुप में होती हैं। समाज में ये गलतफहमी है कि लड़के अपने अभिवावक की सेवा करते हैं जबकि लड़कियाँ पराया धन होती है।
- दहेज व्यवस्था की पुरानी प्रथा भारत में अभिवावकों के सामने एक बड़ी चुनौती है जो लड़कियां पैदा होने से बचने का मुख्य कारण है।
- पुरुषवादी भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति निम्न है।
- अभिवावक मानते हैं कि पुत्र समाज में उनके नाम को आगे बढ़ायेंगे जबकि लड़कियां केवल घर संभालने के लिये होती हैं।
- गैर–कानूनी लिंग परीक्षण और बालिका शिशु की समाप्ति के लिये भारत में दूसरा बड़ा कारण गर्भपात की कानूनी मान्यता है।
- तकनीकी उन्नति ने भी कन्या भ्रूण हत्या को बढ़ावा दिया है।

## dU;k Hkz.k gR;k dk vFkZ vkj ifjHkk"kk

कन्या भ्रूण हत्या का मतलब है माँ की कोख से मादा भ्रूण को निकल फेंकना। जन्म–पूर्व परीक्षण तकनीक (दुरुपयोग के नियमन और बचाव) अधिनियम 2002 की धारा 4 (1) (इ,ब )के तहत के अनुसार भ्रूण को परिभाषित किया गया है– "निषेचन या निर्माण के सत्तानवे दिन से शुरू होकर अपने जन्म के विकास की अवधि के दौरान एक मानवीय जीव।"

## 13-2 dU;k Hkz.k gR;k ds çHkko

कन्या भ्रूण हत्या ने बुराइयों की एक श्रृंखला को जन्म दिया है। पिछले तीन दशकों में बड़े पैमाने पर कन्या भ्रूण हत्या के कुप्रभाव गिरते लिंगानुपात और विवाह योग्य लड़कों के लिए वधुओं की कमी के रूप में सामने आये हैं। इसके अलावा जनसंख्या विज्ञानी आगाह करते हैं कि अगले बीस सालों में चूँकि विवाह योग्य महिलाओं की संख्या में कमी आएगी इसलिए पुरुष कम उम्र की महिलाओं से विवाह करेंगे जिससे जन्मदर में वृद्धि के कारण जनसंख्या वृद्धि के दर भी ऊँची हो जाएगी। लड़कियों को अगवा करना भी इसी से जुडी एक समस्या है। अविवाहित पुरुषों की अधिक तादाद वाले समाज के अपने खतरे हैं। यौनकर्मी के तौर पर अधिक महिलाओं का शोषण होने की सम्भावना है। यौन शोषण और बलात्कार इसके स्वाभाविक परिणाम हैं। पिछले कुछ सालों से यौन अपराधों का तेजी से बढता ग्राफ असमान लिंगानुपात के परिणामों से जुड़ा है।

## 13-3 vijk/k ls tqM+s dkuwuh çko/kku

भारतीय दंड संहिता, 1860 के तहत प्रावधान : भारतीय दंड संहिता की धारा 312 कहती हैः 'जो कोई भी जानबूझकर किसी महिला का गर्भपात करता है जब तक कि कोई इसे सदिच्छा से नहीं करता है और गर्भावस्था का जारी रहना महिला के जीवन के लिए खतरनाक न हो, उसे सात साल की कैद की सजा दी जाएगी'। इसके अतिरिक्त महिला की सहमति के बिना गर्भपात (धारा 313) और गर्भपात की कोशिश के कारण महिला की

नोट

मृत्यु (धारा 314) इसे एक दंडनीय अपराध बनाता है। धारा 315 के अनुसार मां के जीवन की रक्षा के प्रयास को छोड़कर अगर कोई बच्चे के जन्म से पहले ऐसा काम करता है जिससे जीवित बच्चे के जन्म को रोका जा सके या पैदा होने का बाद उसकी मृत्यु हो जाए, उसे दस साल की कैद होगी धारा 312 से 318 गर्भपात के अपराध पर सरलता से विचार करती है जिसमें गर्भपात करना, बच्चे के जन्म को रोकना, अजन्मे बच्चे की हत्या करना (धारा 316), नवजात शिशु को त्याग देना (धारा 317), बच्चे के मृत शरीर को छुपाना या इसे चुपचाप नष्ट करना (धारा 318)। हालाँकि भ्रूण हत्या या शिशु हत्या शब्दों का विशेष तौर पर इस्तेमाल नहीं किया गया है, फिर भी ये धाराएं दोनों अपराधों को समाहित करती हैं।

इन धाराओं में जेंडर के तटस्थ शब्द का प्रयोग किया गया है ताकि किसी भी लिंग के भ्रूण के सन्दर्भ में लागू किया जा सके। हालाँकि भारत में बाल भ्रूण हत्या या शिशु हत्या के बारे में कम ही सुना गया है। भारतीय समाज में जहाँ बेटे की चाह संरचनात्मक और सांस्कृतिक रूप से जुड़ी हुई है, वहीं महिलाओं को बेटे के जन्म के लिए अत्यधिक सामाजिक और मनोवैज्ञानिक दबाव झेलना पड़ता है। इन धाराओं ने कुछ और जरूरी मुद्दों पर विचार नहीं किया है जिनमें महिलाएं अत्यधिक सामाजिक दबावों की वजह से अनेक बार गर्भ धारण करती हैं और लगातार गर्भपातों को झेलती हैं।

1964 में स्वास्थ्य मंत्रालय ने एक समिति का गठन किया। शांतिलाल शाह नाम से गठित इस समिति को महिलाओं द्वारा की जा रही गर्भपात की कानूनी वैधता की मांग के मद्देनजर महिला के प्रजनन अधिकार के मानवाधिकार के मुद्दों पर विचार करने का काम सौंपा गया। 1971 में संसद में गर्भ की चिकित्सकीय समाप्ति अधिनियम, 1971 (एमटीपी एक्ट) पारित हुआ जो 1 अप्रैल 1972 को लागू हुआ और इसे उक्त अधिनियम के दुरुपयोग की संभावनाओं को को खत्म करने के उद्देश्य से गर्भ की चिकित्सकीय समाप्ति संशोधन अधिनियम (2002 का न।64) के द्वारा 1975 और 2002 में संशोधित किया गया। गर्भ की चिकित्सकीय समाप्ति अधिनियम केवल आठ धाराओं वाला छोटा अधिनियम है। यह अधिनियम महिला की निजता के अधिकार, उसके सीमित प्रजनन के अधिकार, उसके स्वस्थ बच्चे को जन्म देने के अधिकार, उसका अपने शरीर के सम्बन्ध में निर्णय लेने के अधिकार की स्वतंत्रता की बात करता है लेकिन कुछ बेईमान लोग केवल कन्या भ्रूण को गिराकर इसका बेजा फायदा उठा रहे हैं।

एमटीपी एक्ट में गर्भ को समाप्त करने की दशाएं (धारा 3), और ऐसा करने के लिए व्यक्ति (धारा 2 क) और स्थान (धारा 4) को निर्धारित किया गया है। इस अधिनियम के अनुसार निम्न दशाओं में गर्भावस्था को समाप्त करने की अनुमति दी जाती है–

1. जिसमें गर्भ को जारी रखने की सलाह नहीं दी गयी हो और गर्भ महिला के जीवन के लिए खतरा बन सकता है और यह बतौर गर्भवती उसे कुछ गंभीर रोगों से पीड़ित बना सकता है :
    - रक्तचाप में अत्यधिक वृद्धि
    - गर्भावस्था के दौरान अनियंत्रित उल्टियाँ
    - स्तन और गले का कैंसर

- आँखों में परेशानी के साथ (रेटिनोपैथी)
- मिर्गी
- मानसिक बीमारी

नोट

2. जहाँ पर गर्भावस्था के जारी रहने पर नवजात शिशु के लिए काफी जोखिम हो सकता है और इससे गंभीर तौर पर मानसिक, बौद्धिक विकलांगता उत्पन्न हो सकती है। जैसे :
   - गुणसूत्रीय विकृतियाँ
   - पहले तीन हफ्तों में माँ को खसरे का संक्रमण
   - अगर पहले से बच्चों में जन्मजात विकृतियाँ हों
   - आर एच विसंगति से जुड़े जोखिम
   - तय समयसीमा से अधिक भ्रूण को विकिरणों के सामने रखना
3. जहाँ पर बलात्कार के कारण गर्भ ठहरा हो (1 से धारा 3 में व्याख्यायित)
   - जहाँ माँ आर्थिक और सामाजिक दशाओं के मद्देनजर उसे स्वस्थ रूप से गर्भवती रहने और स्वस्थ शिशु को जन्म देने में कठिनाई हो और
   - उपाय अपनाने के बावजूद गर्भ निरोध उपकरणों की असफलता (2 से धारा 3 में व्याख्यायित)

किसी भी गर्भपात से पहले स्त्री रोग विशेषज्ञ की पूर्व सलाह लेना आवश्यक है। और अगर 12 हफ्तों से अधिक और 20 हफ्तों से कम दिनों का है तो दो डॉक्टरों की सलाह लेना जरूरी है (धारा 2(क) और (ख))। गर्भ गिराने के लिए निश्चित प्रपत्र पर महिला की लिखित सहमति लेना आवश्यक है। महिला की सहमति स्वतंत्र होनी चाहिए और उक्त दशाओं पर ही आधारित होनी चाहिए। पति की सहमति की आवश्यकता नहीं है। 18 साल से कम उम्र की लड़कियों, और मानसिक रूप से अस्थिर महिलाओं के सम्बन्ध में उनके अभिभावकों की सहमति लेना आवश्यक है (धारा 3)। इस सहमति में यह आश्वासन दिया जाता है कि चिकित्सक के द्वारा किये जाने वाले गर्भपात के लिए वह अपनी मर्जी से राजी है और उसे प्रक्रिया, उसमें निहित खतरे और उसके बाद बरती जाने वाली सावधानियों के बारे में जानकारी दे दी गयी है।

यह अधिनियम गर्भपात करने वाले चिकित्सकों की योग्यता का भी निर्धारण करता है और केवल सरकारी लाइसेंस प्राप्त केन्द्रों पर ही गर्भपात कराया जा सकता है। इन संस्थानों को सरकार द्वारा जारी प्रमाणपत्र को केंद्र में ऐसी जगह पर लगाना होगा जिससे कोई भी बाहरी व्यक्ति उसे देख सके।

इस अधिनियम के प्रावधानों का उद्देश्य अवैध गर्भपात के खतरों को कम करना है जो कि नीम–हकीमों के अप्रशिक्षित हाथों से गर्भपात करने पर किसी महिला के जीवन और सेहत के लिए खतरनाक बन सकता है। इसके साथ ही इस अधिनियम का मकसद महिलाओं को उनके शरीर पर अधिक नियंत्रण देने और समग्र भलाई के लिए गर्भपात को उदार बनाना है। लेकिन यह अधिनियम पुराना हो चुका है क्योंकि यह विवाद के उन मुद्दों को संबोधित करने में असमर्थ है जो कि विधिक अधिकारों की दृष्टि से अजन्मे बच्चे बनाम

नोट

आपराधिक और संपत्ति अधिकार के रूप में सामने आते हैं। आज गर्भ में बीमारी से पीड़ित होने के बावजूद लापरवाही बरतने के कारण विकृति के साथ पैदा हुए एक बच्चे की वजह से लॉ ऑफ टोर्ट्स के तहत मुकदमा दायर किया जा सकता है। 18 दिसम्बर 1979 में संयुक्त राष्ट्र संघ ने महिलाओं के विरुद्ध सभी प्रकार के भेदभावों के उन्मूलन की वियना घोषणा (सीडॉ) को मंजूर किया । 19 जून 1993 को भारतीय सरकार ने इसी घोषणा को यथावत मंजूर कर लिया। सीडॉ की प्रस्तावना में कहा गया है – महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव समानता के सिद्धांत और मानवीय गरिमा के आदर का घोर उल्लंघन है। यह सरकार की जिम्मेदारी है कि वह कानूनों में बदलाव या मौजूदा कानूनों, नियमों, परिपाटियों और प्रथाओं में से जेंडर आधारित भेदभाव को खत्म करने के लिए उचित कदम उठाए।

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 21 "जीवन के अधिकार" की घोषणा करता है। अनुच्छेद 51A (म) महिलाओं के प्रति अपमानजनक प्रथाओं के त्याग की व्यवस्था भी करता है। उपरोक्त दोनों घोषणाओं के आलोक में भारतीय संसद ने लिंग तय करने वाली तकनीक के दुरुपयोग और इस्तेमाल से कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए जन्म–पूर्व परीक्षण तकनीक (दुरुपयोग का नियमन और बचाव) अधिनियम, 1994 पारित किया। इस अधिनियम के प्रमुख लक्ष्य हैं :

- गर्भाधान पूर्व लिंग चयन तकनीक को प्रतिबंधित करना
- लिंग–चयन संबंधी गर्भपात के लिए जन्म–पूर्व परीक्षण तकनीकों के दुरूपयोग को रोकना
- जिस उद्देश्य से जन्म–पूर्व परीक्षण तकनीकों को विकसित किया है, उसी दिशा में उनके समुचित वैज्ञानिक उपयोग को नियमित करना
- सभी स्तरों पर अधिनियम के प्रभावी क्रियान्वयन को सुनिश्चित करना

इस अधिनियम को बड़े जोर–शोर से पारित किया गया लेकिन राज्य इसे समुचित तरीके से लागू करने के लिए माकूल व्यवस्था करने में नाकामयाब रहा। क्लीनिकों में अधूरे अभिलेखों अथवा अभिलेखों के देख–रेख के अभाव में यह पता करना मुश्किल हो जाता है कि कौन–से अल्ट्रा–साउंड का परीक्षण किया गया था। यहाँ तक कि पुलिस महकमा भी सामाजिक स्वीकृति के अभाव में इस अधिनियम के तहत कोई मामला दर्ज करने में असफल रहा है। डॉक्टरों द्वारा कानून का धड़ल्ले से उल्लंघन जारी है जो अपने फायदे के लिए लोगों का शोषण करते हैं। गर्भाधान के चरण के दौरान X और Y गुणसूत्रों को अलग करना, पीसीजी इत्यादि नयी तकनीकों के दुरुपयोगों ने इस अधिनियम को नयी स्थितियों में बेअसर बना दिया है।

इस अधिनियम के प्रभावी क्रियान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए और मौजूदा कानून में खामियों पर जीत हासिल करने के लिए स्वास्थ्य एवम परिवार कल्याण मंत्रालय ने संशोधनों की एक श्रृखंला प्रस्तावित की थी जिसे संसद में मंजूर कर लिया गया था। इससे पीएनडीटी अधिनियम 2002 दिसम्बर में अस्तित्व में आया।बाद में इस अधिनियम को गर्भाधान पूर्व–प्रसव पूर्व परीक्षण तकनीक (लिंग चयन प्रतिबन्ध) अधिनियम कहा गया। इसके बाद स्वास्थ्य एवम परिवार कल्याण मंत्रालय ने प्रसव–पूर्व परीक्षण (दुरुपयोग का नियम एवम बचाव) अधिनियम 2003 ने 14 फरवरी को 1996 के नियम को विस्थापित कर दिया।

नोट

इस अधिनियम ने सभी परीक्षण प्रयोगशालाओं के पंजीकरण को अनिवार्य बना दिया है। और अल्ट्रा साउंड के उपकरणों के निर्माता को अपने उपकरणों को पंजीकृत प्रयोगशालाओं को बेचने के निर्देश दिए हैं। इसके अनुसार कोई भी निजी संगठन समेत व्यक्ति, अल्ट्रा साउंड मशीन, इमेजिंग मशीन, स्कैनर या भ्रूण के लिंग के निर्धारण में सक्षम कोई भी उपकरण निर्माता, आयातक, वितरक या आपूर्तिकर्ता के लिए इन्हें बेचना, वितरित करना, आपूर्ति करना, किराये पर देना या भुगतान या अन्य आधार पर इस अधिनियम के तहत अपंजीकृत किसी आनुवंशिक परामर्श केंद्र, जेनेटिक प्रयोगशाला, जेनेटिक क्लिनिक, अल्ट्रा साउंड क्लिनिक, इमेजिंग स्क्रीन या अन्य किसी निकाय या व्यक्ति को ऐसे उपकरणों या मशीनों के प्रयोग की अनुमति नहीं दे सकता है। (पीसी एंड पीएनडीटी अधिनियम के नियम 3 A के साथ धारा 3 B)

- फॉर्म–बी में पंजीकरण प्रमाणपत्र को सार्वजनिक रूप से प्रदर्शित करना चाहिए यानि कि जहाँ से यह सबको दिखाई दे। ( पीएनडीटी नियमों के नियम 4 (i) (ii), नियम 6 (2), 6 (5) एवं 8 (2))।
- इस अधिनियम के अन्तर्गत ऐसी मशीनों और उपकरणों के पंजीकृत निर्माताओं को सम्बन्ध राज्य, केंद्र शासित प्रदेश और केंद्र सरकार के उपयुक्त प्राधिकारियों को तीन महीने में एक बार अपने उपकरणों के क्रेताओं की सूची देनी होगी और ऐसे व्यक्ति या संगठन से उसे हलफनामा लेना होगा कि वह इन उपकरणों का इस्तेमाल भ्रूण के लिंग चयन के लिए नहीं करेंगे।
- पीसी एंड पीएनडीटी अधिनियम की धारा 4 के तहत केवल निम्न परिस्थितियों में प्रसव–पूर्व परीक्षण तकनीकों का इस्तेमाल किया जा सकता है, जबः
- महिला की आयु 35 वर्ष से अधिक हो।
- गर्भवती 2 या 2 से अधिक गर्भपात या भ्रूण की हानि को झेल चुकी हो।
- गर्भवती संभावित रूप से हानिप्रद अभिकर्म्कों जैसे मादक पदार्थ, विकिरणों, संक्रमण या रसायनों के संपर्क में आ चुकी हो।
- गर्भवती या उसके पति के परिवार में किसी को मानसिक विकार या शारीरिक विकृति रही हो जैसे अन्य अनुवांशिक रोगय या
- मंडल द्वारा तय की गयी कोई अन्य दशा।

सभी परामर्श केन्द्रों, अनुवांशिक प्रयोगशालाओं, और अल्ट्रा साउंड क्लिनिक्स को जो किसी गर्भवती स्त्री पर स्कैन, टेस्ट या अन्य प्रक्रियाओं को संचालित कर रहे हैं, इन परीक्षणों का पूरा विवरण रखना होगा जिसमें कि नाम, पति का नाम, चिकित्सक का नाम–पता और परीक्षण, स्कैन या प्रक्रियाओं की आवश्यकता के कारण। इन जानकारियों को फॉर्म 'Q' में दर्ज होना चाहिए। (पीएनडीटी अधिनियम का नियम 9 (4))

जब भी कोई गर्भवती महिला अनुमति प्राप्त उद्देश्यों के अतिरिक्त प्रसव पूर्व परीक्षण तकनीक से जाँच कराती है तो यह माना जाएगा की उस पर उसके पति या अन्य

रिश्तेदारों ने परीक्षण करने का दबाव बनाया है और उन्हें इसके लिए जिम्मेदार ठहराया जाएगा। (पीसी एंड पीएनडीटी अधिनियम की धारा 24)।

नोट

## 13-5 ihlh ,M ih,uMhVh ,DV dh rgr çfrcf/kr —R;

(क) लिंग चयन या लिंग का पूर्व–निर्धारण की सेवा देने वाले विज्ञापनों का प्रकाशन।

(ख) गर्भाधान–पूर्व या जन्म–पूर्व परीक्षण तकनीकों वाले क्लीनिकों का पंजीकृत नहीं होना या क्लिनिक या संस्थान के भीतर सबको दिखाई देने वाले पंजीकरण प्रमाणपत्र को प्रदर्शित नहीं करना।

(ग) अजन्मे बच्चे के लिंग का निर्धारण करना।

(घ) गर्भवती को लिंग निर्धारण परीक्षण के लिए मजबूर करना।

(ङ) लिंग चयन की प्रक्रिया में सहयोग या सुविधा प्रदान करना।

(च) चिकित्सक द्वारा गर्भवती या अन्य व्यक्ति को अजन्मे बच्चे के लिंग के बारे में किसी भी तरह सूचित करना।

(छ) पीसी एंड पीएनडीटी एक्ट के अंतर्गत पंजीकृत क्लीनिकों द्वारा अभिलेखों को भली–भांति सहेज कर नहीं रखना।

## 13-6 ihlh ,M ih,uMhVh ,DV dk fØ;kUo;u

इस अधिनियम के क्रियान्वयन का निरीक्षण और पुनरीक्षण करने के लिए राज्यस्तरीय निरीक्षण निकाय को बनाने की सिफारिश की गयी थी। यह निकाय गर्भाधान पूर्व और जन्म–पूर्व भ्रूण के लिंग का निर्धारण करने की कुप्रथा के प्रति जनता को जागरूक करेगा। यह राज्य में इस क्षेत्र में कार्यरत संस्थाओं के कामकाज की निगरानी करेगा और अपनी जिम्मेदारियों को पूरा करने में विफल रहने पर उनके खिलाफ कार्रवाई भी करेगा। इस अधिनियम और इसके नियमों के तहत चलायी जा रही विभिन्न गतिविधियों का भी यह संज्ञान लेगा और केन्द्रीय निगरानी आयोग और केंद्र सरकार को इस सम्बन्ध में ठोस रिपोर्ट भेजेगा।

कोई भी शिकायतकर्ता अपनी शिकायत को राज्य स्तरीय प्राधिकरण में नियुक्त प्राधिकृत अधिकारी के सामने दर्ज करा सकता है। इस अधिकारी का दर्जा स्वास्थ्य विभाग में संयुक्त निदेशक, स्वास्थ्य एवम परिवार कल्याण विभाग के पद से ऊपर होगा। जिला स्तर पर सिविल सर्जन या मुख्य चिकित्सा अधिकारी और नगर में मुख्य स्वास्थ्य अधिकारी या वार्ड स्वास्थ्य अधिकारी या चिकित्सा अधीक्षक को प्राधिकृत किया जाएगा। शिकायत लिखित में दर्ज की जाएगी और उसके प्राधिकारी को भी पावती देनी होगी। अगर नियुक्त प्राधिकरण 15 दिन के अन्दर कार्रवाई करने में विफल रहता है तो शिकायतकर्ता उपयुक्त न्यायक्षेत्र वाली अदालत में पावती के साथ जा सकता है।

इस अधिनियम का उल्लंघन करने पर जिसमें बिना लाइसेंस के प्रयोगशालाओं को चलाना भी शामिल है, उपकरणों को सील कर दिया जाएगा। उपयुक्त प्राधिकरण

उपकरणों को सील करने के साथ साथ उनके उपयोग को प्रतिबन्धित कर सकता है। लिंग चयन में लिप्त पाए गए दोषियों की जुर्माना राशी पचास हजार से बढ़ाकर एक लाख की गयी है जिसमें चिकित्सक का पंजीकरण रद्द करने, निलंबन का अतिरिक्त प्रावधान है।

नोट

## 13-7 dU;k Hkw.k gR;k d çfrjk/k d fy, l>ko

केवल कानून बना देने से सामाजिक बुराई का अंत नहीं हो सकता। महिलाओं के प्रति भेदभाव आम बात है और खास तौर पर कन्या के प्रति उपेक्षा हमारे समाज में गहरे जड़ों तक धंसी है। तमाम कानूनों के बावजूद समाज में पुरुषों की श्रेष्ठता की गलत अवधारणा समाज के लिए खतरनाक है। आम जनता को महिलाओं के सम्मान के विरुद्ध भेदभाव रखने वाली प्रथाओं के उन्मूलन के लिए संवेदनशील बनाने की तत्काल आवश्यकता है।

गिरते लिंग अनुपात को सँभालने की जरुरत है और इसमें राज्य, मीडिया, पत्रकारों, गैर–सरकारी संगठनों, चिकित्सकों, महिला संगठनों और जनता को साथ खड़े होने की आवश्यकता है ताकि इस बात को सुनिश्चित किया जा सके कि कन्या भ्रूण हत्या विरोधी कानून पूरे तरीके से और कारगर ढंग से लागू हो पाएं। निगरानी, शैक्षिक अभियान और प्रभावी कानूनी क्रियान्वन, इन सबके संयोजन से लोगों के मन में गहरी बैठी महिला और कन्या विरोधी मानसिकता और कुप्रथाओं को दूर किया जा सकता है। इस संबंध में धार्मिक नेताओं को भी आगे आना चाहिए। उन्हें धर्मग्रंथों के सम्बन्ध में भ्रांतियों के बारे में स्पष्ट करना चाहिए और वैज्ञानिक, तार्किक और मानवीय दृष्टिकोण को बढ़ावा देना चाहिए। पारंपरिक रूप से पुत्र के जन्म तक सीमित धार्मिक कर्मकांडों को बेटी के सन्दर्भ में भी विस्तृत करना चाहिए।

कई राज्यों ने कन्याओं के लिए योजनाएं जारी की हैं जैसे कि कन्या के जन्म पर माता–पिता को नकदी देना, स्नातक स्तर तक मुफ्त शिक्षा, कुछ पॉलिसी में किश्तों में भुगतान किया जाता है जो कन्या के विवाह के समय परिपक्व होती हैं, इत्यादि। जमीनी स्तर पर स्थानीय पंचायतों को भी कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए कदम उठाने चाहिए। स्थानीय नेताओं को अपने इलाके के शिक्षित लोगों को जागरूक करने, जनता को शिक्षित करने के लिए नियुक्त करना चाहिए ताकि लोगों का सबलीकरण हो और कन्या भ्रूण हत्या विरोधी अभियानों में महिलाओं को अभियानों में सबसे आगे खड़ा करना चाहिए। सूचना देने वालों को पुरस्कार देना चाहिए। इस कुप्रथा की भयावहता और गंभीरता के बारे में मीडिया में व्यापक प्रचार होना चाहिए। गैर–सरकारी संगठनों को जनता को इस सम्बन्ध में शिक्षित करने की भूमिका निभानी चाहिए। राष्ट्रीय महिला आयोग, गैर–सरकारी संगठन, स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय को मौजदा कानूनों को समुचित ढंग से लागू करने के लिए बेहतर योजनायें बनानी चाहिए और अखबारों, रेडियो, दूरदर्शन और इन्टरनेट पर व्यापक स्तर पर जन अभियान चलाने चाहिए।

चिकित्सा व्यवसाय और इसके संगठनों जैसे भारतीय चिकित्सा संगठन, रेडियोलाजिस्ट एसोसिएशन, प्रसूति विशेषज्ञ तथा स्त्री रोग विशेषज्ञों के संगठन इत्यादि के साथ चिकित्सा जगत को मानवता के व्यापक हित में अपने तुच्छ स्वार्थों को छोड़ना चाहिए। चिकित्सकों

नोट

के लिए एक मजबूत आचार संहिता बनाने की आवश्यकता है। भारतीय चिकित्सा परिषद् अधिनियम, 1956, चिकित्सा परिषद् की नैतिक आचार संहिता, 1970 वर्तमान कानूनों के साथ सामंजस्य स्थापित करते हुए संशोधित किया जाना चाहिए और सबसे बड़ी बात महिलाएं जो जननी हैं उन्हें बेटा पैदा करने की थोपी हुई जिम्मेदारी से स्वयं को मुक्त करना चाहिए। चाहे लड़का हो या लड़की, एक बच्चे को स्वास्थ्य रूप से जन्म लेने का अधिकार है और यह माता–पिता की जिम्मेदारी है कि वह शिशु को उसके विकास के लिए सुरक्षित, देखभाल से भरा वातावरण प्रदान करें। सभी महिलायें, चाहे वो माँ हों या सास, सभी को अपने स्तर पर इस दुर्व्यवहार को रोकना चाहिए। हमें अपनी बेटियों को बेटों की तरह पालना चाहिए और उन्हें समान रूप से सफल बनाना चाहिए और इस पुरानी धारणा को खारिज करना चाहिए कि लड़कियों की शिक्षा केवल विवाह के लिए ही काम आती हैं दुनिया का सामना करने के लिए शिक्षा एक हथियार है। भारतीय समाज में कन्या भ्रूण हत्या की गंभीर चुनौती को रोकने के लिए हमें महिलाओं को सशक्त बनाना होगा। दहेज प्रथा जैसी कुरीतियों के खिलाफ अभियान चलाकर और मौजूदा कानूनों को सख्ती से लागू कर महिला अधिकारों को मजबूती देनी होगी।

## 13-8 dU;k Hkzw.k gR;k dh ?kVuk,a jksdus ds mik;

सरकार ने देश में कन्या भ्रूण हत्या रोकने के लिए बहुआयामी रणनीति अपनाई है। इसमें जागरुकता पैदा करने और विधायी उपाय करने के साथ–साथ महिलाओं को सामाजिक–आर्थिक रूप से अधिकार संपन्न बनाने के कार्यक्रम शामिल हैं। इनमें से कुछ उपाय नीचे दिए गए है :

- गर्भ धारण करने से पहले और बाद में लिंग चयन रोकने और प्रसवपूर्व निदान तकनीक को नियमित करने के लिए सरकार ने एक व्यापक कानून, गर्भधारण से पूर्व और प्रसवपूर्व निदान तकनीक (लिंग चयन पर रोक) कानून 1994 में लागू किया। इसमें 2003 में संशोधन किया गया।
- सरकार इस कानून को प्रभावकारी तरीके से लागू करने में तेजी लाई और उसने विभिन्न नियमों में संशोधन किए जिसमें गैर पंजीकृत मशीनों को सील करने और उन्हें जब्त करने तथा गैर–पंजीकृत क्लीनिकों को दंडित करने के प्रावधान शामिल है। पोर्टेबल अल्ट्रासाउंड उपकरण के इस्तेमाल का नियमन केवल पंजीकृत परिसर के भीतर अधिसूचित किया गया। कोई भी मेडिकल प्रैक्टिशनर एक जिले के भीतर अधिकतम दो अल्ट्रासाउंड केंद्रों पर ही अल्ट्रा सोनोग्राफी कर सकता है। पंजीकरण शुल्क बढ़ाया गया।
- स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्री ने सभी राज्य सरकारों से आग्रह किया कि वे अधिनियम को मजबूती से कार्यान्वित करें और गैर–कानूनी तरीके से लिंग का पता लगाने के तरीके रोकने के लिए कदम उठाएं।
- माननीय प्रधानमंत्री ने सभी राज्यों के मुख्यमंत्रियों से आग्रह किया कि वे लिंग अनुपात की प्रवृति को उलट दें और शिक्षा और अधिकारिता पर जोर देकर बालिकाओं की अनदेखी की प्रवृत्ति पर रोक लगाएं।

नोट

- स्वास्थ्य परिवार कल्याण मंत्रालय ने राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों से कहा है कि वे इस कानून को गंभीरता से लागू करने पर अधिकतम ध्यान दें।
- पीएनडीटी कानून के अंतर्गत केंद्रीय निगरानी बोर्ड का गठन किया गया और इसकी नियमित बैठकें कराई जा रही हैं।
- वेबसाइटों पर लिंग चयन के विज्ञापन रोकने के लिए यह मामला संचार एवं सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय के समक्ष उठाया गया।
- राष्ट्रीय निरीक्षण और निगरानी समिति का पुनर्गठन किया गया और अल्ट्रा साउंड निदान सुविधाएं के निरीक्षण में तेजी लाई गई। बिहार, छत्तीसगढ़, दिल्ली, हरियाणा, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, पंजाब, उत्तराखंड, राजस्थान, गुजरात और उत्तर प्रदेश में निगरानी का कार्य किया गया।
- राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के अंतर्गत कानून के कार्यान्वयन के लिए सरकार सूचना, शिक्षा और संचार अभियान के लिए राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों को वित्तीय सहायता दे रही है।
- राज्यों को सलाह दी गई है कि इसके कारणों का पता लगाने के लिए कम लिंग अनुपात वाले जिलों/ब्लाकों/गांवों पर विशेष ध्यान दें, उपयुक्त व्यवहार परिवर्तन संपर्क अभियान तैयार करे और पीसी और पीएनडीटी कानून के प्रावधानों को प्रभावकारी तरीके से लागू करे।
- धार्मिक नेता और महिलाएं लिंग अनुपात और लड़कियों के साथ भेदभाव के खिलाफ चलाए जा रहे अभियान में शामिल हैं।
- भारत सरकार और अनेक राज्य सरकारों ने समाज में लड़कियों और महिलाओं की स्थिति सुधारने के लिए विशेष योजनाएं लागू की गई हैं। इसमें धनलक्ष्मी जैसी योजना शामिल है।

राष्ट्रीय अपराध ब्यूरो से प्राप्त जानकारी के अनुसार 2011 के दौरान देश में कन्या भ्रूण हत्या के कुल 132 मामले दर्ज किए गए। इस सिलसिले में 70 लोगों को गिरफ्तार किया गया, 58 के खिलाफ आरोप–पत्र दायर किया गया और 11 को दोषी ठहराया गया।

## 13.9 lkjk'k

भारतीय चिकित्सा परिषद् अधिनियम, 1956, चिकित्सा परिषद् की नैतिक आचार संहिता, 1970 वर्तमान कानूनों के साथ सामंजस्य स्थापित करते हुए संशोधित किया जाना चाहिए और सबसे बड़ी बात महिलाएं जो जननी हैं उन्हें बेटा पैदा करने की थोपी हुई जिम्मेदारी से स्वयं को मुक्त करना चाहिए। चाहे लड़का हो या लड़की, एक बच्चे को स्वास्थ्य रूप से जन्म लेने का अधिकार है और यह माता–पिता की जिम्मेदारी है कि वह शिशु को उसके विकास के लिए सुरक्षित, देखभाल से भरा वातावरण प्रदान करें। सभी महिलायें, चाहे वो माँ हों या सास, सभी को अपने स्तर पर इस दुर्व्यवहार को रोकना चाहिए। हमें अपनी बेटियों को बेटों की तरह पालना चाहिए और उन्हें समान रूप से सफल बनाना चाहिए और इस पुरानी धारणा को खारिज करना चाहिए कि लड़कियों की

नोट

शिक्षा केवल विवाह के लिए ही काम आती हैं दुनिया का सामना करने के लिए शिक्षा एक हथियार है। भारतीय समाज में कन्या भ्रूण हत्या की गंभीर चुनौती को रोकने के लिए हमें महिलाओं को सशक्त बनाना होगा। दहेज प्रथा जैसी कुरीतियों के खिलाफ अभियान चलाकर और मौजूदा कानूनों को सख्ती से लागू कर महिला अधिकारों को मजबूती देनी होगी।

## 13-10 vH;kl i'u

1. कन्या भ्रूण हत्या का क्या कारण है? स्पष्ट करें।
2. कन्या भ्रूण हत्या अपराध से जुड़े कानूनी प्रावधानों को स्पष्ट करें।
3. पीसी एंड पीएनडीटी एक्ट की प्रमुख विशेषताएं क्या हैं?
4. कन्या भ्रूण हत्या की घटनाएं रोकने के उपाय सुझाएं।

# bdkbZ&14 ngst çFkk

**ikB&lajpuk**

14.0 प्रस्तावना

14.1 दहेज रोधी कानून

14.2 दहेज प्रथा रोकने हेतु सुझाव

14.3 सारांश

14.4 अभ्यास प्रश्न

नोट

## 14-0 izLrkouk

दहेज का अर्थ उस सम्पत्ति और धन से है जो विवाह के समय वधू के परिवार की तरफ से वर को दी जाती है। दहेज को उर्दू में जहेज भी कहा जाता है। यूरोप, भारत, अफ्रीका और दुनिया के अन्य भागों में दहेज प्रथा का लंबा इतिहास रहा है। भारत में इस प्रथा को दहेज, हुँडा या वर–दक्षिणा के नाम से भी जाना जाता है तथा वधू के परिवार इसे नकद या वस्तुओं के रूप में यह वर के परिवार को वधू के साथ देता है। आज के आधुनिक समय में भी दहेज प्रथा नाम की बुराई व्यापक है। पिछड़े भारतीय समाज में दहेज प्रथा का स्वरुप अभी भी विकराल है।

दहेज प्रथा के मामलों में दहेज न देने पर तो लड़की का उत्पीड़न किया ही जाता है, दहेज देने के बाद भी वर पक्ष इस बात को लगातार शिकायत करता है कि उसे अपेक्षा से कम दिया गया। इसके बाद से लड़की का उत्पीड़न शुरू हो जाता है और इसका प्रभाव वधू के मूल परिवार पर भी पड़ता है। अनेक मामलों में यह उत्पीड़न जलाकर या अन्य बर्बर कृत्यों द्वारा उसकी हत्या तक पहुँच जाता है। वधू को अक्सर जीवित जला कर मार दिया जाता है। दहेज हत्या के अनेक मामले ऐसे होते हैं, जिसमें लड़की यातना एवं उत्पीड़न सह नहीं पाती हैं और आत्महत्या कर लेती है। एक समय था, जब दहेज हत्या के मामले केवल हिन्दुओं में ही देखने को मिलते थे लेकिन आज ये मामले सिखों, मुसलमानों तथा ईसाइयों में भी देखने को मिलने लगे हैं। भारत में गरीब किसानों द्वारा दहेज की मांग को पूरा करने के लिए कर्ज लिए जाते हैं, इसका खामियाजा उन्हें कर्ज जाल में फँसकर अपनी जिंदगी गुजारने में चुकानी पड़ती है।

भारत में गरीब घर की महिलाओं से उनकी ससुराल में कमरतोड़ शारीरिक मेहनत कारवाई जाती है क्योंकि उनके माता–पिता मांग की गई दहेज की रकम नहीं दे पाते हैं। यदि महिला ससुराल जाकर अपनी पढ़ाई जारी रखना चाहती है तो इसका खर्च भी उसके माता–पिता से ही मांगा जाता है। दहेज की मांग को पूरा करवाने के लिए पति एवं उसके परिवार द्वारा महिलाओं को घरों में बंद कर दिया जाता है, उसके बाहर आने–जाने पर पाबंदी लगा दी जाती है। घरेलू हिंसा को बढ़ावा देने में दहेज आज एक प्रमुख कारण बन गया है। ऐसा उस स्थिति में भी होता है जब उच्च मध्यम वर्गीय महिलाएँ लाखों–करोड़ों के जेवरात एवं संपत्ति अपने साथ ससुराल ले जाती हैं। भारत में बालिका भ्रूण हत्या के पीछे एक मुख्य कारण दहेज की समस्या है।

नोट

1990 के दशक में जब भारतीय अर्थव्यवस्था में खुलापन आया, लोगों की आय में इजाफा हुआ, समृद्धि बढ़ी तब लोगों में और अधिक धन लालसा का विकास हुआ। इस लालच ने भी दहेज की समस्या को जटिल किया। कुछ लोग दहेज की मांग करके समृद्धि का रास्ता तलाश करने लगे, परिणामस्वरूप दहेज हत्या या लड़कियों के साथ अन्य प्रकार के अमानवीय दुर्व्यवहार के मामले बढ़ने लगे।

## 14-1 ngt jk/kh dkuu

दहेज निषेध अधिनियम, 1961 सम्पूर्ण भारत में लागू है। इसमें दहेज को निम्नलिखित तरीके से परिभाषित किया गया है–'ऐसी सम्पत्ति या मूल्यावान वस्तु जिसे शादी के दौरान या पहले, शादी से संबंधित पक्ष देते हैं या देने पर राजी होते हैं। यह लेन–देन वर–वधू के माता–पिता या शादी से जुड़े अन्य संबंधित पक्षों के बीच हो सकता है।

कानूनी तौर पर उपहार देने पर तो मनाही नहीं है लेकिन दहेज पर प्रतिबंध है। कानूनी तौर पर वर को किए जाने वाले उपहार अत्यधिक कीमती नहीं होने चाहिए।

कानून में 1983 एवं 1986 में दिए गए दो संशोधनों के बाद दहेज लेना एवं दहेज देना, दोनों को संज्ञेय अपराध की श्रेणी में रखा गया है। इससे न्यायालय को यह अधिकार मिल जाता है कि वह हत्या से संबंधित मामलों में पीड़ित पक्ष द्वारा रिपोर्ट नहीं कराए जाने की स्थिति में भी स्वयं संज्ञान लेकर या पुलिस द्वारा दिए गए सूचना को आधार बनाकर मामले की सुनवाई कर सके।

दहेज निषेध अधिनियम, 1961 के तहत ऐसे कृत्य के लिए कम से कम 5 वर्ष की सजा के साथ–साथ कम से कम 15000 रुपए या दहेज के मूल्य के बराबर, इनमें से जो भी ज्यादा हो, जुर्माना किया जा सकता है।

भारतीय दंड संहिता की धारा 304 (बी) दहेज हत्या से संबंधित है। इसे भारतीय दण्ड संहिता में 1986 में संशोधन के माध्यम से सम्मिलित किया गया है। इस कानून के अंतर्गत यह कहा गया है कि यदि शादी के 7 साल के अन्दर किसी महिला की जलने, शारीरिक दुर्घटना या अन्य कारणों से मृत्यु हो जाती है और यह मालूम हो जाता है कि मृत्यु से पहले उसे दहेज के लिए पति या पति का परिवार प्रताड़ित करता था तो ऐसी स्थिति में इसे दहेज हत्या का मामला माना जाएगा। इसके अतिरिक्त भारतीय दण्ड संहिता में संशोधन कर इस बात का भी प्रावधान किया गया कि यदि शादी के 7 वर्ष के अंदर किसी महिला की अप्राकृतिक कारणों (Unnatural Causes) से मृत्यु होती है तो इसे आपराधिक मामला मानकर इसकी जाँच–पड़ताल की जाएगी ।

भारतीय दण्ड संहिता की धारा 498 (ए) भारतीय दण्ड संहिता में 1983 में एक संशोधन के माध्यम से सम्मिलित की गई है। इसके तहत यह प्रावधान किया गया है कि किसी महिला के पति या परिवार वालों के द्वारा उस पर क्रूरता बरती जाती है तो उन्हें 3 वर्ष तक की कारावास की सजा दी जा सकती है और जुर्माना भी किया जा सकता है। इसमें क्रूरता को इस प्रकार परिभाषित किया गया है–जानबूझकर की गई कोई भी ऐसी कार्रवाई जिससे महिला आत्म–हत्या करती है, गंभीर रूप से घायल होती है या उसके जीवन को खतरा पहुंचता हो।

इसके अलावा घरेलू हिंसा अधिनियम में भी दहेज की मांग को शामिल किया गया है। इसमें प्रावधान है कि यदि गैर कानूनी दह्ठेज की मांग के लिए लड़की या उसके किसी रिश्तेदार को चोट, उत्पीड़न, हानि या उसे किसी तरह के खतरे में डाला जाता है तो उसे घरेलू हिंसा अधिनियम के तहत दंडित किया जाएगा।

नोट

सर्वोच्च न्यायालय ने 10 जून, 2012 को दिए अपने निर्णय में कहा है कि दहेज इत्या जैसे मामलों में आजीवन कारावास से कम दण्ड नहीं दिया जाना चाहिए विशेषकर बैसे मामलों में जिनमें लड़की की हत्या करने के लिए तरीके अपनाए गए हों।

## 14-2 ng t çFkk jkdu gr l >ko

- समाज में पितृसत्तात्मक व्यवस्था की बुराईयों को समाप्त करना चाहिए ।
- महिलाओं की गरिमा को बहाल करना और बढ़ाना चाहिए।
- महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त बनाना चाहिए।
- महिलाओं के खिलाफ होने वाली दहेज हत्या के मामलों की शीघ्रता से जाँच होनी चाहिए।
- दहेज हत्या से संबंधित मामलों की जाँच के लिए फास्ट ट्रैक कोर्ट की स्थापना करना चाहिए।
- विवाह का पंजीकरण एवं विवाह के अवसर पर दिए जाने वाले उपहारों की सूची तथा चल–अचल संपत्ति का ब्यौरा रखना अनिवार्य किया जाना चाहिए।
- दहेज एक घृणित सामाजिक समस्या है और इसके निराकरण के लिए सामाजिक जागरूकता लाने की जरूरत है।
- दहेज लेन–देन से युवक–युवतियों की प्रतिष्ठा में गिरावट आती है। ऐसी सोच लोगों के बीच विकसित करना चाहिए।
- गरीब घरों की लड़कियों/महिलाओं के बीच साक्षरता कार्यक्रम चलाने की जरूरत है जिससे कि वे अपने कानूनी अधिकारों के प्रति सजग हो सकें।
- पैतृक सम्पत्ति में लड़कियों/महिलाओं की हिस्सेदारी को सुनिश्चित किया जाना चाहिए।
- लड़कियों की मानसिकता में बदलाव आना चाहिए जिससे की वे अपने को लड़कों से कमतर न आँके और न ही विवाह मात्र को बनाए रखने के लिए शोषण, उत्पीड़न सहे।
- सामाजिक कार्यों एवं संस्कारों में लड़कियों को भी लड़कों के समान अधिकार प्रदान किए जाने चाहिए।
- पुलिस के साथ–साथ गैर सरकारी संगठनों, स्वयं सेवी समूहों को भी महिला मृत्यु से संबंधित मामलों के प्रति संवेदनशील होना चाहिए।
- विवाह समारोहों पर खर्च की सीमा निर्धारित की जानी चाहिए।

नोट

- वर्तमान कानून की खामियों को दूर किया जाना चाहिए और उन्हें कठोर बनाया जाना चाहिए।
- वर्तमान कानून में यह बदलाव करना चाहिए जिससे कि दहेज देने वाले को कम दण्ड दिया जा सके क्योंकि दहेज देने वाला उत्पीड़न का शिकार होता है।
- घरेलू हिंसा अधिनियम के तहत नियुक्त संरक्षक अधिकारियों को सशक्त करने की जरूरत है जिससे कि वे दहेज उत्पीड़न संबंधी मामले में शिकायत दर्ज कर सके।
- महिलाओं को वस्तु समझने की मानसिकता से बाहर निकलना होगा।

## 14-3 lkjka'k

भारतीय दंड संहिता की धारा 304 (बी) दहेज हत्या से संबंधित है। इसे भारतीय दण्ड संहिता में 1986 में संशोधन के माध्यम से सम्मिलित किया गया है। इस कानून के अंतर्गत यह कहा गया है कि यदि शादी के 7 साल के अन्दर किसी महिला की जलने, शारीरिक दुर्घटना या अन्य कारणों से मृत्यु हो जाती है और यह मालूम हो जाता है कि मृत्यु से पहले उसे दहेज के लिए पति या पति का परिवार प्रताड़ित करता था तो ऐसी स्थिति में इसे दहेज हत्या का मामला माना जाएगा। इसके अतिरिक्त भारतीय दण्ड संहिता में संशोधन कर इस बात का भी प्रावधान किया गया कि यदि शादी के 7 वर्ष के अंदर किसी महिला की अप्राकृतिक कारणों (Unnatural Causes) से मृत्यु होती है तो इसे आपराधिक मामला मानकर इसकी जाँच–पड़ताल की जाएगी।

## 14-4 vH;kl i'u

1. दहेज प्रथा से क्या अभिप्राय है? स्पष्ट करें।
2. दहेज रोधी कानून की धाराओं की व्याख्या कीजिए।
3. दहेज प्रथा रोकने हेतु आप क्या सुझाव देंगे?

# bdkb&15 ?kjy fglk

ikB&l jpuk

15.0 प्रस्तावना

15.1 घरेलू हिंसा की कानूनी परिभाषा

15.2 व्यथित व्यक्ति कौन है?

15.3 व्यथित व्यक्ति के अधिकार

15.4 प्रमुख कानूनी प्रावधान

15.5 कौन घरेलू हिंसा की शिकायत दर्ज करा सकता है?

15.6 घरेलू हादसों के रिपोर्ट

15.7 सारांश

15.8 अभ्यास प्रश्न

नोट

## 15-0 iLrkouk

घरेलू दायरे में हिंसा को घरेलू हिंसा कहा जाता है। किसी महिला का शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, मौखिक, मनोवैज्ञानिक या यौन शोषण किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा किया जाना जिसके साथ महिला के पारिवारिक सम्बन्ध हैं, घरेलू हिंसा में शामिल है।

## 15-1 ?kjy fglk dh dkuuh ifjHkk"kk

"घरेलू हिंसा के विरुद्ध महिला संरक्षण अधिनियम की धारा, 2005" घरेलू हिंसा को पारिभाषित किया गया है –"प्रतिवादी का कोई बर्ताव, भूल या किसी और को काम करने के लिए नियुक्त करना, घरेलू हिंसा में माना जाएगा ।

क्षति पहुँचाना या जख्मी करना या पीड़ित व्यक्ति को स्वास्थ्य, जीवन, अंगों या हित को मानसिक या शारीरिक तौर से खतरे में डालना या ऐसा करने की नीयत रखना और इसमें शारीरिक, यौनिक, मौखिक और भावनात्मक और आर्थिक शोषण शामिल है।

दहेज या अन्य संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति की अवैध मांग को पूरा करने के लिए महिला या उसके रिश्तेदारों को मजबूर करने के लिए यातना देना, नुक्सान पहुँचाना या जोखिम में डालना ।

पीड़ित या उसके निकट सम्बन्धियों पर उपरोक्त वाक्यांश (क) या (ख) में सम्मिलित किसी आचरण के द्वारा दी गयी धमकी का प्रभाव होनाय या

ihfMr dk 'kkjhfjd ;k ekufld rkj ij ?kk;y djuk ;k uDlku igpkukß

शिकायत किया गया कोई व्यव्हार या आचरण घरेलू हिंसा के दायरे में आता है या नहीं, इसका निर्णय प्रत्येक मामले के तथ्य विशेष के आधार पर किया जाता है।

नोट

## 15-2 0;fFkr 0;fä dku g\

इस कानून के पूरे लाभ को लेने के लिए यह समझना जरूरी है कि 'व्यथित व्यक्ति' अथवा पीड़ित कौन है। यदि आप एक महिला हैं और कोई व्यक्ति (जिसके साथ आप घरेलू नातेदारी में हैं) आपके प्रति दुर्व्यवहार करता है तो आप इस अधिनयम के तहत पीड़ित या 'व्यथित व्यक्ति' हैं। चूँकि इस कानून का उद्देश्य महिलाओं को घरेलू नातेदारी से उपजे दुर्व्यवहार से संरक्षित करना है, इसलिए यह समझना भी जरूरी है की घरेलू नातेदारी या सम्बंध क्या हैं और कैसे हो सकते हैं? 'घरेलू नातेदारी' का आशय किन्हीं दो व्यक्तियों के बीच के उन सम्बन्धों से है, जिसमें वे या तो साझी गृहस्थी में एक साथ रहते हैं या पहले कभी रह चुके हैं। इसमें निम्न सम्बंध शामिल हो सकते हैं :

1. रक्तजनित सम्बन्ध (जैसे माँ–बेटा, पिता–पुत्री, भाई–बहन, इत्यादि)
2. विवाहजनित सम्बन्ध (जैसे पति–पत्नी, सास–बहू, ससुर–बहू, देवर–भाभी, ननद परिवार, विधवाओं के सम्बन्ध या विधवा के परिवार के अन्य सदस्यों से सम्बन्ध)
3. दत्तक ग्रहण/गोद लेने से उपजे सम्बन्ध (जैसे गोद ली हुई बेटी और पिता)
4. शादी जैसे रिश्ते (जैसे लिव–इन सम्बन्ध, कानूनी तौर पर अमान्य विवाह (उदाहरण के लिए पति ने दूसरी बार शादी की है, अथवापति और पत्नी रक्त आदि से संबंधित हैं और विवाह इस कारण अवैध है))

(घरेलू नातेदारी के दायरे में आने के लिए जरूरी नहीं कि दो व्यक्ति वर्तमान में किसी साझा घर में रह रहे होंयमसलन यदि पति ने पत्नी को अपने घर से निकाल दिया तो यह भी एक घरेलू नातेदारी के दायरे में आएगा।)

## 15-3 0;fFkr 0;fä d vf/kdkj

इस अधिनियम को लागू करने की जिम्मेदारी जिन अधिकारियों पर है, उनके इस कानून के तहत कुछ कर्तव्य हैं जैसे– जब किसी पुलिस अधिकारी, संरक्षण अधिकारी, सेवा प्रदाता या मजिस्ट्रेट को घरेलू हिंसा की घटना के बारे में पता चलता है, तो उन्हें पीड़ित को निम्न अधिकारों के बारे में सूचित करना है :

1. पीड़ित इस कानून के तहत किसी भी राहत के लिए आवेदन कर सकती है जैसे कि – संरक्षण आदेश,आर्थिक राहत,बच्चों के अस्थाई संरक्षण (कस्टडी) का आदेश,निवास आदेश या मुआवजे का आदेश
2. पीड़ित आधिकारिक सेवा प्रदाताओं की सहायता ले सकती है
3. पीड़ित संरक्षण अधिकारी से संपर्क कर सकती है
4. पीड़ित निशुल्क कानूनी सहायता की मांग कर सकती है
5. पीड़ित भारतीय दंड संहिता (IPC) के तहत क्रिमिनल याचिका भी दाखिल कर सकती है, इसके तहत प्रतिवादी को तीन साल तक की जेल हो सकती है, इसके तहत पीड़ित को गंभीर शोषण सिद्ध करने की आवश्यकता है।

इसके अलावा,राज्य द्वारा निर्देशित आश्रय गृहों और अस्पतालों की जिम्मेदारी है कि उन सभी पीड़ितों को रहने के लिए एक सुरक्षित स्थान और चिकित्सा सहायता प्रदान करे जो उनके पास पहुंचते हैं। पीड़ित सेवा प्रदाता या संरक्षण अधिकारी के माध्यम से इन्हें संपर्क कर सकती है।

नोट

## 15-4 çe[k dkuuh çko/kku

/kkjk 4% घरेलू हिंसा किया जा चुका हो या किया जाने वाला है या किया जा रहा है, की सूचना कोई भी व्यक्ति संरक्षण अधिकरी को दे सकता है जिसके लिए सूचना देने वाले पर किसी प्रकार की जिम्मेदारी नहीं तय की जाएगी। पीड़ित के रूप में आप इस कानून के तहत 'संरक्षण अधिकारी' या 'सेवा प्रदाता' से संपर्क कर सकती हैं। पीड़ित के लिए एक 'संरक्षण अधिकारी' संपर्क का पहला बिंदु है। संरक्षण अधिकारी मजिस्ट्रेट के समक्ष कार्यवाही शुरू करने और एक सुरक्षित आश्रय या चिकित्सा सहायता उपलब्ध कराने में मदद कर सकते हैं। प्रत्येक राज्य सरकार अपने राज्य में 'संरक्षण अधिकारी' नियुक्त करती है। 'सेवा प्रदाता' एक ऐसा संगठन है जो महिलाओं की सहायता करने के लिए काम करता है और इस कानून के तहत पंजीकृत है। पीड़ित सेवा प्रदाता से, उसकी शिकायत दर्ज कराने अथवा चिकित्सा सहायता प्राप्त कराने अथवा रहने के लिए एक सुरक्षित स्थान प्राप्त कराने हेतु संपर्क कर सकती है। भारत में सभी पंजीकृत सुरक्षा अधिकारियों और सेवा प्रदाताओं का एक डेटाबेस यहाँ उपलब्ध है। सीधे पुलिस अधिकारी या मजिस्ट्रेट से भी संपर्क किया जा सकता है। आप मजिस्ट्रेट – फर्स्ट क्लास या मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट से भी संपर्क कर सकती हैं, किंतु किस क्षेत्र के मैजिस्ट्रेट से सम्पर्क करना है यह आपके और प्रतिवादी के निवास स्थान पर निर्भर करता है । 10 लाख से ज्यादा आबादी वाले शहरों में अमूमन मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट से संपर्क करने की आवश्यकता हो सकती है।

/kkjk 5% यदि धरेलू हिंसा की कोई सूचना किसी पुलिस अधिकारी या संरक्षण अधिकारी या मजिस्ट्रेट को दी गयी है तो उनके द्वारा पीड़िता को जानकारी देनी होगी कि :

(क) उसे संरक्षण आदेश पाने का

(ख) सेवा प्रदाता की सेवा उपलब्धता

(ग) संरक्षण अधिकारी की सेवा की उपलब्धता

(घ) मुफ्त विधिक सहायता प्राप्त करने का

(ङ) परिवाद–पत्र दाखिल करने का अधिकार प्राप्त है। पर संज्ञेय अपराध के लिए पुलिस को कार्रवाई करने से यह प्रावधान नहीं रोकता है।

/kkjk 10% सेवा प्रदाता, जो नियमतः निबंधित हो, वह भी मजिस्ट्रेट या संरक्षा अधिकारी को घरेलू हिंसा की सूचना दे सकता है।

/kkjk 12% पीड़िता या संरक्षण अधिकारी या अन्य कोई घरेलू हिंसा के बारे में या मुआवजा या नुकासान के लिए मजिस्ट्रेट को आवेदन दे सकता है। इसकी सुनवाई तिथि तीन दिनों के अन्दर की निर्धारित होगी एवं निष्पादन 60 दिनों के अन्दर होगा।

/kkjk 14% मजिस्ट्रेट पीड़िता को सेवा प्रदात्ता से परामर्श लेने का निदेश दे सकेगा।

नोट

/kkjk 16% पक्षकार ऐसी इच्छा करें तो कार्यवाही बंद कमरे में हो सकेगी।

/kkjk 17 rFkk 18% पीड़िता को साझी गृहस्थी में निवास करने का अधिकार होगा और कानूनी प्रक्रिया के अतिरिक्त उसका निष्कासन नहीं किया जा सकेगा। उसके पक्ष में संरक्षण आदेश पारित किया जा सकेगा।

/kkjk 19% पीड़िता को और उसके संतान को संरक्षण प्रदान करते हुए संरक्षण देने का स्थानीय थाना को निदेश देने के साथ निवास आदेश एवं किसी तरह के भुगतान के संबंध में भी आदेश पारित किया जा सकेगा और सम्पत्ति का कब्जा वापस करने का भी आदेश दिया जा सकेगा।

/kkjk 20 rFkk 22% वित्तीय असंतोष – पीड़िता या उसके संतान को घरेलू हिंसा के बाद किये गये खर्च एवं हानि की पूर्ति के लिए मजिस्ट्रेट निदेश दे सकेगा तथा भरण–पोषण का भी आदेश दे सकेगा एवं प्रतिकर आदेश भी दिया जा सकता है।

/kkjk 21% अभिरक्षा आदेश संतान के संबंध में दे सकेगा या संतान से भेंट करने का भी आदेश मैजिस्ट्रेट दे सकेगा।

/kkjk 24% पक्षकारों को आदेश की प्रति निःशुल्क न्यायालय द्वारा दिया जाएगा।

### ?kjsyw fgalk ls efgyk laj{k.k vf/kfu;e] 2006

fu;e 9% आपातकालीन मामलों में पुलिस की सेवा की मांग संरक्षण अधिकारी या सेवा प्रदाता द्वारा की जा सकती है।

fu;e 13% परामर्शदाताओं की नियुक्ति संरक्षण अधिकारी द्वारा उपलब्ध सूची में से की जायेगी।

## 15-5 dkSu ?kjsyw fgalk dh f'kdk;r ntZ djk ldrk gS\

इस अधिनियम के तहत यह जरूरी नहीं है की पीड़ित व्यक्ति ही शिकायत दर्ज कराये। कोई भी व्यक्ति चाहे वह पीड़ित से संबंधित हो या नहीं, घरेलू हिंसा की जानकारी इस अधिनियम के तहत नियुक्त सम्बद्ध अधिकारी को दे सकता है।

यह कोई जरूरी नहीं है कि घरेलू हिंसा वास्तव में ही घट रही हो, घटना होने की आशंका के सम्बन्ध में भी जानकारी दी जा सकती है। आरोपी व्यक्ति से घरेलू संबंध में रहने वाली महिला के द्वारा अथवा उसके प्रतिनिधि द्वारा इस सम्बन्ध में शिकायत दर्ज कराई जा सकती है। निम्न महिला संबंधी शिकायत कर सकते हैं:

1. पत्नियाँ/लिव इन पार्टनर्स
2. बहनें
3. माताएं
4. बेटियां

इस प्रकार इस अधिनियम का मकसद पारिवारिक ढांचे के अन्दर रह रही सभी स्त्रियों, चाहे वह आपस में सगी संबंधी, विवाह, दत्तक या वैसे भी साथ में रह रही हों, सभी को सुरक्षा देना है।

## 15-6 ?kjsy gknlk d fjikV



जब पीड़िता घरेलू हिंसा की शिकायत करना चाहती हो तो रिपोर्ट दर्ज की जानी चाहिए। घरेलू हिंसा के विरुद्ध संरक्षण नियम, 2006 के फॉर्म 1 में रिपोर्ट का स्वरूप दिया गया है।

पीड़िता की शिकायत में उसकी व्यक्तिगत जानकारियों जैसे नाम, आयु, पता, फोन नंबर, बच्चों की जानकारी, घरेलू हिंसा की घटना का पूरा ब्यौरा, और प्रतिवादी का भी विवरण दिये जाने की जरुरत होती है। जब जरुरत हो तो संबंधी दस्तावेज जैसे चिकित्सकीय विधिक दस्तावेज, डॉक्टर के निर्देश या स्त्रीधन की सूची को रिपोर्ट के साथ नत्थी करना चाहिए। शिकायत में पीड़िता को मिली राहत या सहायता का भी विशेष उल्लेख किया जाना चाहिए। इस रिपोर्ट पर पीड़िता के हस्ताक्षर के साथ–साथ सुरक्षा अधिकारी के भी दस्तखत होने चाहिए। इस रिपोर्ट की प्रति स्थानीय पुलिस थाने और मजिस्ट्रेट को उचित कार्रवाई के लिए दी जानी चाहिए। एक प्रति पीड़िता और एक कॉपी सुरक्षा अधिकारी या सेवा प्रदाता के पास रहनी चाहिए।

### ?kjsy fgalk vf/kfu;e] 2005 d rgr efgykvk dk lj{k.k

घरेलू हिंसा की शिकार महिला को निम्नलिखित सूची में से एक या एकाधिक सहायता उपलब्ध कराई जा सकती है :

1. उपरोक्त सभी बातों के अलावा पीड़िता भारतीय दंड संहिता, 1860 धारा 498–। के तहत आरोपी के विरुद्ध आपराधिक मामलों को दर्ज को कराने का भी अधिकार देती है।
2. इसके अलावा मजिस्ट्रेट प्रतिवादी को परामर्श के लिए भेज सकता है।
3. परिवार कल्याण में रत किसी सामाजिक कार्यकर्त्ता, विशेषकर किसी महिला को सहायता के लिए नियुक्त कर सकता है।
4. जहाँ आवश्यक हो कार्यवाही के दौरान कैमरे के प्रयोग का आदेश दिया जा सकता है।
5. मजिस्ट्रेट द्वारा पीड़िता या प्रतिवाद के लिए पारित आदेश के खिलाफ, आदेश जारी होने के 30 दिनों के भीतर सत्र न्यायालय में अपील की जा सकती है।
6. अधिनियम के तहत कार्यरत संस्थाएं

घरेलू हिंसा के शिकार किसी भी व्यक्ति को कानूनी सहायता, मदद, आश्रय या चिकित्सकीय सहायता देना राज्य की जिम्मेदाररी है। इस उद्देश्य के साथ राज्य सरकार को निम्न सस्थाओं को नियुक्त करने के लिए प्राधिकृत किया गया है जो कि पीड़िता को विधि के अंतर्गत सहायता पाने के उसके अधिकार के बारे में जानकारी के साथ सहायता पाने में मदद कर सके।

### iqfyl vf/kdkjh ¼/kkjk 5½

जब भी किसी पुलिस अधिकारी को घरेलू हिंसा की घटना की जानकारी मिलती है तो यह उसक दायित्व है कि आपराधिक दंड प्रक्रिया, 1973 के प्रावधानों के अनुसार

नोट

जाँच करे। इसके अतिरिक्त, घरेलू हिंसा अधिनियम पुलिस अधिकारी को दायित्व देता है कि वह पीड़िता को

(क) निःशुल्क विधि सेवाओं के बारे में जानकारी दे।

(ख) इस अधिनियम के तहत उसकी हानि और वेदनाओं के लिए मुआवजे और नुक्सान के एवज में आवास आदेश, सुरक्षा आदेश, संरक्षण आदेश और आर्थिक राहत जैसी सहायता मुहैय्या कराये।

(ग) सुरक्षा अधिकारियों और सेवा प्रदाताओं की सेवाएं उपलब्ध कराये और

(घ) अगर जरूरी हो तो आरोपी व्यक्ति के खिलाफ धारा 498 । के तहत आपराधिक मामला दर्ज करे। (केवल पत्नी ही अपने पति या उसके परिजनों के खिलाफ धारा 498 । के तहत शिकायत कर सकती है। यह अधिकार लिव इन पार्टनर्स को उपलब्ध नहीं है।)

### l\j{kk vf/kdkjh ¼/kkjk 9½

घरेलू हिंसा अधिनियम में सुरक्षा अधिकारी अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं। ये सरकारी और गैर–सरकारी संगठनों के साथ काम करते हैं। ये योग्य होते हैं और इनके पास सामाजिक क्षेत्र में काम करने का कम से कम तीन सालों का अनुभव होता है। राज्य सरकार ऐसे अधिकारियों को जो ज्यादातर महिलाएं होती हैं, हर जिले में न्यनतम तीन सालों के लिए तैनात करता है और उनके काम का संज्ञान लिया जाता है।

सुरक्षा अधिकारी का काम पीड़िता की हर कदम पर मदद करना है। वे पीड़िता की घरेलू हिंसा की रिपोर्ट को तयशुदा ढांचे में दर्ज करवाने में मदद करते हैं। वे पीड़ित को उनके अधिकारों की जानकारी देते हैं और इस अधिनियम के तहत सहायता को उपलब्ध करवाने के लिए पीड़िता को आवेदन लिखने में सहायता करते हैं। ये अधिकारी घरेलू हिंसा के मामले के निबटारे में मजिस्ट्रेट की भी सहायता करते हैं और यह सुनिश्चित करते हैं कि मजिस्ट्रेट द्वारा पारित किये गए आदेशों का अनुपालन पीड़िता के हित में हो।

स्थिति का जायजा लेने के और घरेलू हिंसा नियम, 2005 के फॉर्म V के अनुसार सुरक्षा योजना बनाने के लिए भी सुरक्षा अधिकारियों की आवश्यकता होती है। यह सब घरेलू हिंसा की आवृत्ति को रोकने के लिए उचित उपाय की सलाह देने और उन पर अमल करने के उद्देश्य से किया जाता है।

सुरक्षा अधिकारी पीड़िता को हर मुमकिन सहायता देने के लिए बाध्य हैं जिसमें उसके चिकित्सकीय परीक्षण से लेकर, उसके आवागमन और आश्रय स्थल में आवास की व्यवस्था करना शामिल है बशर्ते कि वह अपने घर पर सुरक्षित न हो। सबसे पहले सुरक्षा अधिकारी को कानूनी सहायता सेवाओं, परामर्श, चिकित्सा सहायता, या जरूरतमंद पीड़ित के आश्रय के लिए अपने क्षेत्राधिकार में शामिल सभी सेवा प्रदाताओं की सूची तैयार करनी होती है

### l\ok çnkrk ¼/kkjk 10½

सेवा प्रदाता महिलाओं के अधिकारों और हितों की सुरक्षा के लिए राज्य सरकार द्वारा पंजीकृत स्वैच्छिक संगठन हैं। ये संगठन निरोधात्मक, सुरक्षात्मक और पुनर्वास का

काम करते हैं। ये घरेलू हिंसा की शिकार औरतों की सहायता करने और उन्हें कानूनी, समाजिक, चिकित्सकीय और आर्थिक सहायता देने के लिए उत्तरदायी हैं। ये संस्थाएं निश्चित आवेदन के प्रारूप में शिकायत को दर्ज करा सकती हैं और उसे सीधे आवश्यक कार्रवाई के लिए सम्बद्ध और मजिस्ट्रेट और सुरक्षा अधिकारी को भेज सकती हैं। अगर पीड़िता चाहे तो ये संस्थाएं उसे चिकत्सकीय सहायता और शरणगृहों में आवास का प्रबंध कर सकती हैं।

**नोट**

राज्य सरकार सेवा प्रदाताओं की सूची बनाती है और उसे क्षेत्र विशेष के सुरक्षा अधिकारी के पास भेजती है ताकि वे आपसी तालमेल के साथ काम कर सकें। किसी क्षेत्र विशेष के सेवा प्रदाताओं की सूची को जानकारी और आवश्यक कार्रवाई के लिए अखबार में प्रकाशित करना होता है या राज्य सरकार की वेबसाइट पर उपलब्ध कराना होता है

### ijke'knkrk ¼/kkjk 14½

परामर्शदाता सेवा प्रदाताओं के ऐसे सदस्य हैं जो कि घरेलू हिंसा के मामलों से निबटने में योग्य एवम अनुभवी होते हैं इसलिए वे घरेलू हिंसा की पीड़िता या दोषी व्यक्ति को परामर्श सेवाएं देने में दक्ष होते हैं। इस अधिनियम के दौरान अगर मजिस्ट्रेट को ऐसा महसूस होता है कि पीड़िता या पीड़क व्यक्ति को परामर्श की आवश्यकता है तो वह उन्हें एकल या संयुक्त रूप से सेवा प्रदाताओं द्वारा उपलब्ध कराये गए परामर्शदाता के पास परामर्श सत्रों में भाग लेने का सीधे तौर पर निर्देश जारी कर सकता है। परामर्शदाता दोनों पक्षों के लिए सहज स्थान पर मुलाकात का आयोजन करता है और वह पीड़ित की शिकायत के निवारण के लिए उपाय सुझाता है और जहाँ पर पीड़ित राजी हो, वह वहाँ पर समझौते का भी प्रबंध करता है। इस प्रकार के परामर्श का उद्देश्य पीड़ित व्यक्ति के विरुद्ध घरेलू हिंसा के उन्मूलन के उपायों को खोजना और विकसित करना है,

### dY;k.k fo'ks"kK ¼/kkjk 15½

कल्याण विशेषज्ञ पारिवारिक मामलों को सुलझाने में दक्षता और विशेषज्ञता प्राप्त व्यक्ति होते हैं। इस अधिनियम के तहत आवश्यकता पड़ने पर मजिस्ट्रेट कल्याण विशेषज्ञों की सहायता ले सकते हैं। इस अधिनियम के तहत जहाँ तक संभव हो महिला विशेषज्ञों का ही चुनाव किया जाता है।

### vkJ; vkj fpfdRlk lqfo/kk çHkkjh

घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 6 और 7 के अनुसार आश्रय और चिकित्सा सुविधा प्रभारी का दायित्व है कि स्वयम पीड़िता या सुरक्षा अधिकारी या उसकी ओर से सेवा प्रदाता के अनुरोध के आधार पर पीड़िता को आश्रय और चिकित्सा सुविधा उपलब्ध कराये।

## 15-7 lkjk'k

भारतीय समाज में महिलाओं पर अत्याचार होना कोई नई बात नहीं है. यहां पुरुष वर्चस्व को बरकरार रखने के लिए हमेशा महिलाओं के स्वाभिमान और उनके जीवन की आहुति दी जाती रही है. सब कुछ सहती हुई वह कभी अपने साथ हो रहे दुर्व्यवहार और अत्याचार के विरोध में अपनी आवाज नहीं उठा पाई. क्योंकि कहीं ना कहीं वह यह जानती थी कि इस पुरुष प्रधान समाज में उसकी व्यथा कोई नहीं सुनेगा. इसीलिए अपने

नोट

इसी जीवन को अपनी नियति मानती हुई वह सब कुछ सहन करना ही अपने और अपने परिवार के लिए बेहतर समझती थी।

प्रायः देखा जाता है कि महिलाएं परिवार के भीतर ही कभी पिता तो कभी पति, किसी ना किसी रूप में पुरुष के दमन और शोषण का शिकार हो जाती हैं। जिसका सबसे बड़ा कारण यह है कि प्रकृति ने महिला को पुरुषों की अपेक्षा शारीरिक तौर पर कमजोर बनाया है, जिसकी वजह से वह जल्द ही पुरुषों के क्रोध और ईर्ष्या की शिकार बन जाती हैं। वहीं हमारे देश में यह माना जाता रहा है कि पति को पत्नी पर हाथ उठाने का अधिकार शादी के बाद ही मिल जाता है लेकिन अब परिस्थितियां इसके ठीक उलट हो चुकी हैं। हमारी संवैधानिक व्यवस्था महिलाओं के ऊपर होने वाली हिंसा और उनके शोषण के प्रति सचेत हो गई है। जिनकी सहायता से कभी अबला और असहाय समझे जाने वाली महिलाएं आज अपने अधिकारों के प्रति आवाज बुलंद करने लगी हैं। वर्ष 2006 में भारत सरकार द्वारा घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम 2005 लागू किया गया जिसके अनुसार महिला, वृद्ध अथवा बच्चों के साथ होने वाली किसी भी प्रकार की हिंसा अपराध की श्रेणी में आती है, और इसके दोषी पाए जाने पर कड़ी सजा का भी प्रावधान है। अर्थात कोई भी महिला यदि परिवार के पुरूष द्वारा की गई मारपीट अथवा अन्य प्रताड़ना से त्रस्त है तो वह घरेलू हिंसा की शिकार मानी जाएगी. घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम 2005 महिला को घरेलू हिंसा के विरूद्ध संरक्षण और सहायता का अधिकार प्रदान करता है। इस कानून का मुख्य बिंदु यह है कि इसके द्वारा सांझा घर जैसी योजना का निर्धारण किया है। इसके अंतर्गत किसी भी महिला, चाहे वह बहन, विधवा, माँ, बेटी, अकेली अविवाहित महिला आदि, को घरेलू संबंधों में सम्मिलित किया जाना जरूरी करार दिया गया है. उन्हें संपत्ति का अधिकार ना देते हुए भी, आवास संबंधी सभी सुविधाएं मुहैया कराना परिवार के मुखिया की जिम्मेदारी होगी।

## 15-8 vH;kl i'u

1. घरेलू हिंसा से क्या अभिप्राय है? स्पष्ट करो।
2. घरेलू हिंसा अधिनियम की मुख्य धाराओं का उल्लेख कीजिए।
3. घरेलू हिंसा रोकने के लिए आप क्या सुझाव देंगे?

# bdkb&16 rykd

## ikB&lajpuk

16.0 प्रस्तावना

16.1 तलाक क्या है?

16.2 भारत में तलाक की प्रक्रिया या तलाक लेने के नियम

16.3 तलाक में महिलाओं के अधिकार

16.4 भारत में धर्म के अनुसार तलाक की प्रक्रिया

16.5 तीन तलाक

16.6 सारांश

16.7 अभ्यास प्रश्न

नोट

## 16-0 iLrkouk

शादी एक ऐसा समय होता है जब दो लोग एक–दूसरे के करीब आते हैं और एक–दूसरे के जीवन का हिस्सा बन जाते हैं। वे जीवनसाथी बन जाते हैं। शादी में, एक कानूनी अनुबंध भी है। कभी–कभी, शादी कुछ जोड़ों के लिए काम नहीं करती है। हालांकि जीवन में हर दूसरी चीज की तरह, शादी में भी हमेशा सब कुछ पक्का नहीं होता और यहां तक कि जब एक व्यक्ति इससे बाहर निकलना चाहता है, तब भी कानूनी बाध्यताएं बनी रहती हैं।

## 16-1 rykd D;k g\

यह कानूनी कार्रवाई द्वारा विवाह की समाप्ति है जिसमें एक व्यक्ति द्वारा शिकायत की आवश्यकता होती है। इसका मतलब है कि आधिकारिक तौर पर आपकी शादी खत्म हो रही है। ऐसा इसलिए किया जाता है कि जब एक व्यक्ति दूसरे के जीवन से बाहर जाना चाहता है, तब भी उसके पास उनके साथी के जीवन की जिम्मेदारी बनी रहती है।

## 16-2 Hkkjr e rykd dh çfØ;k ;k rykd yu d fu;e

nk çfØ;k,  g ftue rykd dk etjh nh tk ldrh gA

- आपसी सहमति से तलाक (Mutual Consent)
- भारत में कंटेस्टेड तलाक (Contested Divorce)

**1- vkilh lgefr l rykd %** आपसी सहमति से तलाक तब दायर किया जा सकता है जब पति और पत्नी कम से कम एक साल से अलग रह रहे हों और उन्होंने अपनी शादी को खत्म करने का निर्णय किया हो। उन्हें दिखाना होगा कि एक साल के दौरान, वे पति–पत्नी के रूप में नहीं रह पाए। आपसी सहमति से तलाक तब होता है जब पति और पत्नी दोनों शांतिपूर्ण तरीके से विवाह को समाप्त करने के लिए सहमत होते हैं।

नोट

मुख्य दो पहलू हैं जिनमें पति और पत्नी को आम सहमति तक पहुंचना होता है। पहला एलिमनी या मेंटेनेंस मुद्दा है। कानून के अनुसार, मेनटेनेंस की कोई न्यूनतम या अधिकतम सीमा नहीं है। यह किसी भी आंकड़े का हो सकता है। दूसरा मुद्दा बच्चे की कस्टडी का है। यह संयुक्त या सिर्फ एक व्यक्ति का भी हो सकता है जो पति और पत्नी के निर्णय पर निर्भर करता है।

तलाक को एक पारिवारिक न्यायालय या एक जिला अदालत में दायर किया जाना चाहिए। हिंदू विवाह की धारा 13 बी के तहत आपसी सहमति से तलाक दायर किया जाता है। जब इसे अदालत में दायर किया जाता है तो आपसी रिश्ते को सुलझाने के लिए छह महीने की अवधि दी जाती है। अगर न्यायालय देखता है कि इसे हल करना मुश्किल है तो इस अवधि में छूट दी जा सकती है। इसके बाद दूसरा प्रस्ताव दायर किया जाता है और अदालत तलाक को पुष्टि देती है।

अदालत द्वारा लगभग 18 से 24 महीने में तलाक की अनुमति दी जाती है लेकिन पति–पत्नी इस 18 महीने की अवधि के दौरान तलाक की याचिका को वापस ले सकते हैं और फिर अदालत द्वारा कोई तलाक नहीं दिया जाएगा। तलाक की याचिका एक हलफनामे के रूप में होती है जिसे परिवार द्वारा अदालत में प्रस्तुत किया जाता है। याचिका दायर करने और दोनों व्यक्तियों के बयान दर्ज करने के बाद, अदालत उस मामले को 6 महीने के लिए देखती है।

इस छह महीने के बाद, दोनों खुद को अदालत में पेश करते हैं और दूसरी गति की पुष्टि करते हैं पूरी प्रक्रिया के लिए याचिका दाखिल करने की तारीख के बाद छह महीने से एक साल तक का समय अदालत में फैसला देने से लेकर आपसी सहमति याचिका दायर करने तक लगता है।

2- Hkkjr esa dVLVM rykd dh çfØ;k % जैसा कि नाम ही बताता है, आपको तलाक के लिए संघर्ष करना होगा। इसमें, पति–पत्नी एक समझौते पर या एक या अधिक महत्वपूर्ण मुद्दों पर अपनी शादी को समाप्त करने के लिए नहीं पहुंच पाते हैं। तलाक तब दायर किया जाता है जब पति या पत्नी में से कोई एक अपनी सहमति के बिना तलाक लेने का फैसला करता है। यह तलाक अदालत में वकील की मदद से दायर किया जाता है। अदालत दूसरे को तलाक का नोटिस भेजती है।

तलाक में पहला कदम तलाक के लिए एक वकील को नियुक्त करना है जो आपके पक्ष में है और अदालत के सामने आपकी रुचि का प्रतिनिधित्व करता है। भारत में तलाक की अर्जी दाखिल करने के लिए, वकील को तलाक की याचिका के साथ निम्नलिखित दस्तावेज जमा करने होंगे :

- आयकर विवरण
- जीवनसाथी का विवरण प्रमाण
- उनके व्यवसायों का विवरण
- संपत्ति का स्वामित्व

एक बार जब आपकी तलाक की याचिका अदालत में दायर की जाती है तो न्यायालय पति या पत्नी की याचिका पर सुनवाई करेंगे। तलाक का नोटिस आपके

जीवनसाथी को भेजा जायेगा। यदि आप अपने पति या पत्नी का पता लगाने में सक्षम नहीं हैं तो एक नोटिस स्थानीय समाचार पत्र में प्रकाशित किया जाएगा या आपको तलाक से आगे बढ़ने से पहले कुछ समय तक इंतजार करना होगा। यदि आपका पति इस समय में जवाब नहीं देता है तो वह डिफॉल्टर के रूप में दर्ज हो जाता है।

भारत में तलाक से संबंधित अन्य बातों को भी ध्यान में रखना आवश्यक है, जैसे कि :

**मेंटेनेंस :** पत्नी खुद के लिए और अपने बच्चे के लिए एक मेंटेनेंस याचिका दायर कर सकती है जब वह उसे आर्थिक रूप से समर्थन करने में सक्षम नहीं होती है। यह सीआरपीसी की धारा 125 के तहत दायर किया जा सकता है। अदालत पति के वेतन, उसके रहने के खर्च, उसके आश्रितों आदि जैसे मुद्दों पर विचार करने के बाद पत्नी का मेंटेनेंस तय करती है।

**चाइल्ड कस्टडी :** चाइल्ड कस्टडी की एक याचिका वकीलों में से किसी एक द्वारा दायर की जा सकती है। अदालत बच्चे की उम्र के अनुसार कस्टडी प्रदान करती है और जो बच्चे के पक्ष में है उसे ही माना जाता है।

**साथ में ली गयी प्रॉपर्टी का बंटवारा :** साथ में खरीदी गयी संपत्ति का बंटवारा वकील की मदद से किया जाता है।

**अन्य चीजें :** यदि घरेलू हिंसा के मामले में तलाक की याचिका दायर की जाती है तो पत्नी पति के खिलाफ आपराधिक मामला भी दर्ज कर सकती है। पति के खिलाफ एफआईआर दर्ज की जा सकती है और शिकायत के वास्तविक होने पर पति के खिलाफ अलग आपराधिक मुकदमा शुरू होगा।

## 16.3 तलाक में महिलाओं के अधिकार

हिंदू दत्तक और अनुरक्षण अधिनियम के तहत, 1856 की धारा 18 के अनुसार, एक हिंदू पत्नी अपने पति से मेंटेनेंस का दावा कर सकती है यदि वह क्रूरता, चालबाजी का दोषी है या उसे वेनेरेअल की बीमारी है।

मुस्लिम महिला अधिनियम, 1986, यह कानून तलाक के समय मुस्लिम महिलाओं के अधिकारों की रक्षा करता है। इस अधिनियम के सेक्शन 3 में मेहर (Mahr) प्रदान किया गया है और मुस्लिम महिला के अन्य प्रॉपर्टीज को तलाक के समय दिया जाना है। यह मुस्लिम महिलाओं को ये सुविधाएं देता है:

**इद्दत अवधि (Iddat period) के दौरान उचित मात्रा में मेंटेनेंस।**

जब वह खुद तलाक से पहले या उसके बाद पैदा हुए बच्चों का पालन–पोषण करती है तो ऐसे बच्चों के जन्म से 2 साल की अवधि के लिए उचित मेंटेनेंस पति को को देना पड़ता है ।

मेहर की राशि के बराबर राशि जो विवाह के समय पर तय की गई थी।

शादी के दौरान या बाद में सभी उपहार उसे दिए जाने चाहिए।

नोट

साथ ही इस अधिनियम की धारा (4 क) में यह साबित होता है कि अगर कोई तलाकशुदा महिला इद्दत मेंटेनेंस के बाद खुद की देखभाल रखने में असमर्थ है तो उसके रिश्तेदार जो कि मुस्लिम कानून के अनुसार उसकी मृत्यु पर उसकी संपत्ति के हकदार हैं, उसे बनाए रखने के लिए मजिस्ट्रेट द्वारा आदेश दिया जा सकता है तलाक से पहले उसके जीवन स्तर को ध्यान में रखते हुए।

## 16-4 Hkkjr e /ke d vuqlkj rykd dh çfØ;k

Hkkjr e] fofHkUu /kekd d fy, rykd d dkuu vyx g %

- हिंदू विवाह अधिनियम, 1955, जिसमें सिख, जैन, बौद्ध शामिल हैं।
- ईसाइयों के लिए, तलाक अधिनियम –1869 और भारतीय ईसाई विवाह अधिनियम, 1872 है
- मुस्लिमों के लिए, तलाक की प्रक्रिया डिवोर्स ऑफ डीविवर्स और द डिसॉल्विंग ऑफ मैरिज एक्ट (Personnel Laws of Divorce and The Dissolution of Marriage Act), 1939 और मुस्लिम महिला अधिनियम (Muslim Women Act), 1986 द्वारा नियंत्रित है। साथ ही अब कड़ा तीन तलाक कानून भी पारित किया जा चुका है।
- पारसियों के लिए, यह पारसी विवाह और तलाक अधिनियम –1936 है
- अन्य सभी धर्मों और सामान्य मुद्दों के लिए विशेष विवाह अधिनियम, 1954 का पालन किया जाता है।

ऐसे मजबूत कानूनों की आवश्यकता थी जिनमें तलाक के समय महिलाओं के अधिकारों पर मुख्य ध्यान दिया गया हो। हाल के संशोधन में निम्नलिखित बदलाव किए गए हैं :

- तलाक के मामले में महिला की पुरुष की आवासीय संपत्ति में 50% हिस्सेदारी होगी।
- पत्नी को ऐसे मामलों में अपना हिस्सा लेने के लिए पहला कदम उठाना होगा।
- महिलाओं और बच्चों के पास पति की अन्य संपत्ति में अधिकार होंगे, यह अदालत द्वारा तय किया गया है।
- इससे कोई अंतर नहीं पड़ता कि संपत्ति शादी से पहले या बाद में व्यक्ति द्वारा खरीदी गई थी।

Hkkjr e rykd nt djus e fdruk [kp gkrk g\

यह उस जगह के आधार पर 10,000 से 80,000 रुपयों के बीच हो सकता है जहां आप रह रहे हैं और तलाक के लिए आप किस प्रकार के वकील को रख रहे हैं।

तलाक अभी भी हमारे समाज में अच्छा नहीं माना जाता है, इसलिए कोई भी रिश्ते को समाप्त नहीं करना चाहता है। लेकिन अगर यह दो लोगों की खुशी का कारण बनता है जो रिश्ते में नहीं रहना चाहते हैं तो निश्चित रूप से उन्हें तलाक के लिए जाना चाहिए।

उन्हें एक मौका दिया जाना चाहिए कि अपनी मर्जी के अनुसार प्यार कर सके और अपना जीवन जी सके।

## 16-5 rhu rykd

नोट

तीन तलाक (Teen Talaq) मुस्लिम समाज में तलाक का ऐसा जरिया है, जिससे कोई भी मुस्लिम शख्स अपनी बीवी को सिर्फ तीन बार तलाक कहकर अपनी शादी को तोड़ सकता है। इस्लाम में तलाक की एक प्रकिया बताई गई है और इस प्रकिया से होने वाले तलाक स्थिर होते हैं, जिसके बाद शादी का रिश्ता टूट जाता है। तीन तलाक को तलाक–उल–बिद्दत भी कहते हैं। 1 इस्लाम में क्या है तीन तलाक ? इस्लाम में तलाक देने का एक तरीका बताया गया है, जिसके तहत एक बार में पति एक ही तलाक दे सकता है। अगर कोई एक बार में एक से ज्यादा बार भी तलाक बोल दे तो उससे तलाक नहीं होगा। इस्लाम में बताया गया कि तलाक एक–एक करके दी जानी चाहिए। जिसके बीच कुछ समय का अंतर होगा और इस प्रक्रिया को अपनाकर ही इस्लाम के अनुसार तलाक हो सकता है।

### dku l vU; n'kk e rhu rykd g cu \

भारत एक ऐसा देश है जहां शौहर वीबी को एक साथ तीन तलाक बोलकर अपना रिश्ता खत्म कर सकता है लेकिन अन्य देशों में ऐसा नहीं है। भारत के अलावा दुनिया के ऐसे 22 देश हैं, जहां तीन तलाक पूरी तरह से बैन है। सबसे पहले मिस्त्र में तीन तलाक को बैन किया गया था। हमारे पड़ोसी देश पाकिस्तान में भी तीन तलाक 1956 से ही बैन है। इसी फेहरिस्त में सूडान, साइप्रस, जार्डन, अल्जीरिया, ईरान, ब्रुनेई, मोरक्को, कतर और यूएई में भी तीन तलाक बैन है। तीन तलाक पर संसद में बिल पेश किया जाना मुस्लिम महिलाओं के इतिहास में एक स्वर्णिम दिन के रूप में अंकित या शरीयत व्यवस्था में तीन तलाक मुस्लिम महिलाओं के लिए एक जीवनभर सताने वाला डर था। यह काले कानून से कम नहीं था।

एक बार में तीन बार–तलाक..तलाक..तलाक बोल कर वैवाहिक संबंध खत्म करने की 1400 साल पुरानी प्रथा–तलाक ए–बिद्दत को देश की सर्वोच्च अदालत सुप्रीम कोर्ट ने शून्य, असंवैधानिक और गैरकानूनी करार दिया था। शीर्ष अदालत ने सरकार से छह महीने में फौरी तीन तलाक प्रथा के खिलाफ कानून बनाने को कहा था। उच्चतम न्यायालय के निर्देश का पालन करते हुए ही केंद्र सरकार ने मुस्लिम महिला (विवाह अधिकार संरक्षण) विधेयक, 2017 (द मुस्लिम वूमन प्रोटेक्शन ऑफ राइट्स ऑन मैरिज बिल) संसद में पेश किया है। शरीयत में तलाक–ए–अहसन और तलाक–ए–हसन नाम से विवाह विच्छेद के दो और प्रावधान हैं, जिसमें एक निश्चित समय के अंतराल के बाद तलाक कहने का प्रावधान है और सुलह की गुंजाइश रखी गई है।

तलाक–ए–बिद्दत की सबसे अमर्यादित व्यवस्था हलाला है, जिसमें तीन तलाक के बाद पति–पत्नी फिर से साथ रहना चाहे तो पुनर्विवाह से पहले महिला को कम से कम एक दिन के लिए दूसरे पुरुष की पत्नी बननी पड़ती है। हलाला के दौरान मुस्लिम महिलाओं को गंभीर मानसिक वेदना से गुजरना पड़ता है। अब सरकार तीन तलाक के खिलाफ विधेयक लाकर इसे कानून का अमलीजामा पहनाने की कोशिश कर रही है, जिसमें एक

बार में तीन तलाक कहना क्रिमिनल अपराध होगा और इस अपराध के दोषियों को तीन साल कारावास की सजा होगी।

नोट

### D;k g rhu rykd ij dkuu \

बिल के मुताबिक, जुबानी, लिखित या किसी इलेक्ट्रॉनिक (वॉट्सएप, ईमेल, एसएमएस) तरीके से एकसाथ तीन तलाक (तलाक–ए–बिद्दत) देना गैरकानूनी और गैर जमानती होगा। इसमें महिला अपने नाबालिग बच्चों की कस्टडी और गुजारा भत्ते का दावा भी कर सकेगी। निश्चित रूप से यह बिल सायरा बानो, जकिया हसन जैसे सैकड़ों मुस्लिम महिलाओं के अथक संघर्ष की जीत है। 5 क्या है तीन तलाक पर मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड की राय ? मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड अगर समय के साथ तीन तलाक को खत्म करने की कोशिश करता तो आज अदालत को दखल नहीं देना पड़ता और सरकार को बिल नहीं लाना पड़ता। इस्लामिक देश बांग्लादेश, मिस्र, मोरक्को, इंडोनेशिया, मलेशिया और पाकिस्तान समेत 22 मुस्लिम देशों में पहले से ही तीन तलाक की प्रथा अंत की जा चुकी है।

### D;k g rhu rykd fcy vkj dkuu \

लेकिन भारत जैसे धर्मनिरपेक्ष व लोकतंत्रिक गणतंत्र में तीन तलाक का जारी रहना चिंतनीय था। तीन तलाक के खिलाफ आए बिल जब कानून बन जाएगा, तो इससे मुस्लिम महिलाओं की गरिमा की हिफाजत होगी, उन्हें कानूनी सुरक्षा मिलेगी और उन्हें सम्मान से जीने की हक मिलेगा। उनके पास तीन तलाक के खिलाफ एक कानूनी हथियार होगा। 7 तीन तलाक पर धर्म–मुस्लिम समाज की राय ? कहीं से भी यह विधेयक सरकार का शरीयत में दखल नहीं माना जाना चाहिए। तीन तलाक बिल पर राजनीति भी दुर्भाग्यपूर्ण है। राजनीतिक दल एतिहासिक कुरीतियों को उलीचकर आने वाली पीढ़ियों के लिए बंदिशों से मुक्त खुला आकाश बनाने का मार्ग प्रशस्त करेंगे, तो यह उनकी बड़ी देश सेवा होगा। धर्म के नाम पर तीन तलाक की जड़ता को तोड़ने में अहम भूमिका निभाने वाली प्रगतिशील मुस्लिम बेटियों की जिजीविषा सलाम व स्वागत योग्य है। तीन तलाक के खिलाफ कठोर कानून जरूरी है।

### rhu rykd dkuu d ,d lky

देश में तीन तलाक के खिलाफ कानून बने एक साल हो चुके हैं. इस कानून के तहत तीन तलाक देना अब गैर कानूनी है. इसके लिए सजा और मुआवजे का प्रावधान भी किया गया है. क्या तीन तलाक के खिलाफ कानून बनने के बाद इसमें कमी आई है? आंकड़े देखकर पता चलता है कि नहीं आई है. उत्तर प्रदेश की बात करें तो तीन तलाक के खिलाफ कानून बनने के बाद राज्य में 2 अगस्त 2019 से 15 अगस्त 2020 के बीच रोजाना 4 मामले दर्ज हुए हैं।

### ;ih e ,d lky e n t g, 1]434 dl

तीन तलाक के खिलाफ कानून बनने के बाद यूपी में कुल 1,434 एफआईआर हुई हैं, 265 गिरफ्तारियां हुई हैं. राज्य में तीन तलाक कानून के तहत सबसे ज्यादा केस मेरठ पुलिस ने दर्ज किए हैं. यहां एक साल में 376 मामले दर्ज हुए हैं। वहीं तीन तलाक कानून के तहत दर्ज मामलों में सबसे ज्यादा चार्जशीट फाइल करने के मामले में आगरा पुलिस

अव्वल है. आगरा पुलिस ने इस कानून के तहत पिछले एक वर्ष के दौरान 310 मामले दर्ज किए हैं, जिनमें 132 केस में आरोप पत्र दायर हो चुका है।

## 30 tqykbZ] 2019 dk vfLrRo esa vk;k dkuwu

नोट

भारतीय संसद के दोनों सदनों ने मुस्लिम महिला (विवाह पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 2019 पारित किया था। पिछले साल 30 जुलाई को राष्ट्रपति के हस्ताक्षर के बाद तीन तलाक कानून अस्तित्व में आया, तीन तलाक कानून के तहत उत्तर प्रदेश में पहली एफआईआर 2 अगस्त, 2019 को मथुरा में दर्ज की गई थी।

## rhu rykd dkuwu esa fuEu çko/kku fd, x, gSa

मुस्लिम महिला (विवाह पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 2019 के तहत तीन बार तालक, तलाक, तलाक बोलना अपराध माना गया है : लिखित, मेल, एसएमएस, वॉट्सऐप या किसी अन्य इलेक्ट्रॉनिक चौट के माध्यम से तीन तालक देना अब गैरकानूनी है। इस कानून के तहत दर्ज मामलों में दोषी पाए जाने पर तीन साल तक सजा का प्रावधान है, साथ ही पीड़ित महिला और अपने और आश्रित बच्चों के लिए पति से मेन्टीनेंस (भरण–पोषण) लेने की भी हकदार हैं।

## 16-6 lkjk'k

तलाक अभी भी हमारे समाज में अच्छा नहीं माना जाता है, इसलिए कोई भी रिश्ते को समाप्त नहीं करना चाहता है। लेकिन अगर यह दो लोगों की खुशी का कारण बनता है जो रिश्ते में नहीं रहना चाहते हैं तो निश्चित रूप से उन्हें तलाक के लिए जाना चाहिए। उन्हें एक मौका दिया जाना चाहिए कि अपनी मर्जी के अनुसार प्यार कर सके और अपना जीवन जी सके।

## 16-7 vH;kl iz'u

1. तलाक क्या है? स्पष्ट करें।
2. भारत में तलाक की प्रक्रिया या तलाक लेने के नियम क्या हैं? व्याख्या करें।
3. तीन तलाक अधिनियम की धाराओं का विश्लेषण करें।

नोट

## ikB& lpjuk

17.0 प्रस्तावना
17.1 संविधानिक प्रावधान एवं अधिनियम
17.2 महिला एवं बाल विकास मंत्रालय
17.3 महिलाओं और बच्चों से संबंधित कानून
17.4 सारांश
17.5 अभ्यास प्रश्न

## 17-0 iLrkouk

पिछले दशकों में स्त्रियों का उत्पीड़न रोकने और उन्हें उनके हक दिलाने के बारे में बड़ी संख्या में कानून पारित हुए हैं। अगर इतने कानूनों का सचमुच पालन होता तो भारत में स्त्रियों के साथ भेदभाव और अत्याचार अब तक खत्म हो जाना था। लेकिन पुरुष प्रधान मानसिकता के चलते यह संभव नहीं हो सका है। आज हालात ये हैं कि किसी भी कानून का पूरी तरह से पालन होने के स्थान पर ढेर सारे कानूनों का थोड़ा–सा पालन हो रहा है, लेकिन भारत में महिलाओं की रक्षा हेतु कानूनों की कमी नहीं है। भारतीय संविधान के कई प्रावधान विशेषकर महिलाओं के लिए बनाए गए हैं। इस बात की जानकारी महिलाओं को अवश्य होना चाहिए।

## 17-1 lfo/kkfud iko/kku ,o vf/kfu;e

संविधान के अनुच्छेद 14 में कानूनी समानता, अनुच्छेद 15 (3) में जाति, धर्म, लिंग एवं जन्म स्थान आदि के आधार पर भेदभाव न करना, अनुच्छेद 16 (1) में लोक सेवाओं में बिना भेदभाव के अवसर की समानता, अनुच्छेद 19 (1) में समान रूप से अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, अनुच्छेद 21 में स्त्री एवं पुरुष दोनों को प्राण एवं दैहिक स्वाधीनता से वंचित न करना, अनुच्छेद 23–24 में शोषण के विरुद्ध अधिकार समान रूप से प्राप्त, अनुच्छेद 25–28 में धार्मिक स्वतंत्रता दोनों को समान रूप से प्रदत्त, अनुच्छेद 29–30 में शिक्षा एवं संस्कृति का अधिकार, अनुच्छेद 32 में संवैधानिक उपचारों का अधिकार, अनुच्छेद 39 (घ) में पुरुषों एवं स्त्रियों दोनों को समान कार्य के लिए समान वेतन का अधिकार, अनुच्छेद 40 में पंचायती राज्य संस्थाओं में 73वें और 74वें संविधान संशोधन के माध्यम से आरक्षण की व्यवस्था, अनुच्छेद 41 में बेकारी, बुढ़ापा, बीमारी और अन्य अनर्ह अभाव की दशाओं में सहायता पाने का अधिकार, अनुच्छेद 42 में महिलाओं हेतु प्रसूति सहायता प्राप्ति की व्यवस्था, अनुच्छेद 47 में पोषाहार, जीवन स्तर एवं लोक स्वास्थ्य में सुधार करना सरकार का दायित्व है, अनुच्छेद 51 (क) (ड) में भारत के सभी लोग ऐसी प्रथाओं का त्याग करें जो स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध हों, अनुच्छेद 33 (क) में प्रस्तावित 84वें संविधान संशोधन के जरिए लोकसभा में महिलाओं के लिए आरक्षण की व्यवस्था, अनुच्छेद 332 (क) में प्रस्तावित 84वें संविधान संशोधन के जरिए राज्यों की विधानसभाओं में महिलाओं के लिए आरक्षण की व्यवस्था है।

**नोट**

गर्भावस्था में ही मादा भ्रूण को नष्ट करने के उद्देश्य से लिंग परीक्षण को रोकने हेतु प्रसव पूर्व निदान तकनीक अधिनियम 1994 निर्मित कर क्रियान्वित किया गया। इसका उल्लंघन करने वालों को 10–15 हजार रुपए का जुर्माना तथा 3–5 साल तक की सजा का प्रावधान किया गया है। दहेज जैसे सामाजिक अभिशाप से महिला को बचाने के उद्देश्य से 1961 में "दहेज निषेध अधिनियम" बनाकर क्रियान्वित किया गया। वर्ष 1986 में इसे भी संशोधित कर समयानुकूल बनाया गया।

विभिन्न संस्थाओं में कार्यरत महिलाओं के स्वास्थ्य लाभ के लिए प्रसूति अवकाश की विशेष व्यवस्था, संविधान के अनुच्छेद 42 के अनुकूल करने के लिए 1961 में प्रसूति प्रसुविधा अधिनियम पारित किया गया। इसके तहत पूर्व में 90 दिनों का प्रसूति अवकाश मिलता था। अब 135 दिनों का अवकाश मिलने लगा है।

महिलाओं को पुरुषों के समतुल्य समान कार्य के लिए समान वेतन देने के लिए श्समान पारिश्रमिक अधिनियमश 1976 पारित किया गया, लेकिन दुर्भाग्यवश आज भी अनेक महिलाओं को समान कार्य के लिए समान वेतन नहीं मिलता।

शासन ने "अंतरराज्यिक प्रवासी कर्मकार अधिनियम" 1979 पारित करके विशेष नियोजनों में महिला कर्मचारियों के लिए पृथक शौचालय एवं स्नानगृहों की व्यवस्था करना अनिवार्य किया है। इसी प्रकार "ठेका श्रम अधिनियम" 1970 द्वारा यह प्रावधान रखा गया है कि महिलाओं से एक दिन में मात्र 9 घंटे में ही कार्य लिया जाए।

भारतीय दंड संहिता कानून महिलाओं को एक सुरक्षात्मक आवरण प्रदान करता है ताकि समाज में घटित होने वाले विभिन्न अपराधों से वे सुरक्षित रह सकें। भारतीय दंड संहिता में महिलाओं के प्रति होने वाले अपराधों अर्थात हत्या, आत्महत्या हेतु प्रेरण, दहेज मृत्यु, बलात्कार, अपहरण एवं व्यपहरण आदि को रोकने का प्रावधान है। उल्लंघन की स्थिति में गिरफ्तारी एवं न्यायिक दंड व्यवस्था का उल्लेख इसमें किया गया है। इसके प्रमुख प्रावधान निम्नानुसार हैं–

भारतीय दंड संहिता की धारा 294 के अंतर्गत सार्वजनिक स्थान पर बुरी–बुरी गालियाँ देना एवं अश्लील गाने आदि गाना जो कि सुनने पर बुरे लगें, धारा 304 बी के अंतर्गत किसी महिला की मृत्यु उसका विवाह होने की दिनांक से 7 वर्ष की अवधि के अंदर उसके पति या पति के संबंधियों द्वारा दहेज संबंधी माँग के कारण क्रूरता या प्रताड़ना के फलस्वरूप सामान्य परिस्थितियों के अलावा हुई हो, धारा 306 के अंतर्गत किसी व्यक्ति द्वारा किए गए कार्य (दुष्प्रेरण) के फलस्वरूप की गई आत्महत्या, धारा 313 के अंतर्गत महिला की इच्छा के विरुद्ध गर्भपात करवाना, धारा 314 के अंतर्गत गर्भपात करने के उद्देश्य से किए गए कृत्य द्वारा महिला की मृत्यु हो जाना, धारा 315 के अंतर्गत शिशु जन्म को रोकना या जन्म के पश्चात उसकी मृत्यु के उद्देश्य से किया गया ऐसा कार्य जिससे मृत्यु संभव हो, धारा 316 के अंतर्गत सजीव, नवजात बच्चे को मारना, धारा 318 के अंतर्गत किसी नवजात शिशु के जन्म को छुपाने के उद्देश्य से उसके मृत शरीर को गाड़ना अथवा किसी अन्य प्रकार से निराकरण, धारा 354 के अंतर्गत महिला की लज्जाशीलता भंग करने के लिए उसके साथ बल का प्रयोग करना, धारा 363 के अंतर्गत विधिपूर्ण संरक्षण से महिला का अपहरण करना, धारा 364 के अंतर्गत हत्या करने के उद्देश्य से महिला का अपहरण करना, धारा 366 के अंतर्गत किसी महिला को विवाह करने के लिए विवश करना या उसे

भ्रष्ट करने के लिए अपहरण करना, धारा 371 के अंतर्गत किसी महिला के साथ दास के समान व्यवहार, धारा 372 के अंतर्गत वैश्यावृत्ति के लिए 18 वर्ष से कम आयु की बालिका को बेचना या भाड़े पर देना।

**नोट**

धारा 373 के अंतर्गत वैश्यावृत्ति आदि के लिए 18 वर्ष से कम आयु की बालिका को खरीदना, धारा 376 के अंतर्गत किसी महिला से कोई अन्य पुरुष उसकी इच्छा एवं सहमति के बिना या भयभीत कर सहमति प्राप्त कर अथवा उसका पति बनकर या उसकी मानसिक स्थिति का लाभ उठाकर या 16 वर्ष से कम उम्र की बालिका के साथ उसकी सहमति से दैहिक संबंध करना या 15 वर्ष से कम आयु की लड़की के साथ उसके पति द्वारा संभोग, कोई पुलिस अधिकारी, सिविल अधिकारी, प्रबंधन अधिकारी, अस्पताल के स्टाफ का कोई व्यक्ति गर्भवती महिला, 12 वर्ष से कम आयु की लड़की जो उनके अभिरक्षण में हो, अकेले या सामूहिक रूप से बलात्कार करता है, इसे विशिष्ट श्रेणी का अपराध माना जाकर विधान में इस धारा के अंतर्गत कम से कम 10 वर्ष की सजा का प्रावधान है।

ऐसे प्रकरणों का विचारण न्यायालय द्वारा बंद कमरे में धारा 372 (2) द.प्र.सं. के अंतर्गत किया जाएगा। उल्लेखनीय है कि श्बलात्कार करने के आशय से किए गए हमले से बचाव हेतु हमलावर की मृत्यु तक कर देने का अधिकार महिला को है, (धारा 100 भा. द.वि. के अनुसार), दूसरी बात साक्ष्य अधिनियम की धारा 114 (ए) के अनुसार बलात्कार के प्रकरण में न्यायालय के समक्ष पीड़ित महिला यदि यह कथन देती है कि संभोग के लिए उसने सहमति नहीं दी थी, तब न्यायालय यह मानेगा कि उसने सहमति नहीं दी थी। इस तथ्य को नकारने का भार आरोपी पर होगा।

दहेज, महिलाओं का स्त्री धन होता है। यदि दहेज का सामान ससुराल पक्ष के लोग दुर्भावनावश अपने कब्जे में रखते हैं तो धारा 405–406 भा.द.वि. का अपराध होगा। विवाह के पूर्व या बाद में दबाव या धमकी देकर दहेज प्राप्त करने का प्रयास धारा 3/4 दहेज प्रतिषेध अधिनियम के अतिरिक्त धारा 506 भा.द.वि. का भी अपराध होगा। यदि धमकी लिखित में दी गई हो तो धारा 507 भा.द.वि. का अपराध बनता है। दहेज लेना तथा देना दोनों अपराध हैं।

दंड प्रक्रिया संहिता 1973 में महिलाओं को संरक्षण प्रदान करने की व्यवस्था है। अतः महिलाओं को गवाही के लिए थाने बुलाना, अपराध घटित होने पर उन्हें गिरफ्तार करना, महिला की तलाशी लेना और उसके घर की तलाशी लेना आदि पुलिस प्रक्रियाओं को इस संहिता में वर्णित किया गया है। इन्हीं वर्णित प्रावधानों के तहत न्यायालय भी महिलाओं से संबंधित अपराधों का विचारण करता है।

भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 के कई प्रावधान भी उत्पीड़ित महिलाओं के हितार्थ हैं। दहेज हत्या, आत्महत्या या अन्य प्रकार के अपराधों में महिला के "मरणासन्न कथन" दर्ज किए जाते हैं। यह प्रावधान महिला को उत्पीड़ित करने वाले को दंडित करने हेतु अत्यधिक उपयोगी है। स्त्री धन में वैधानिक तौर पर विवाह से पूर्व दिए गए उपहार, विवाह में प्राप्त उपहार, प्रेमोपहार चाहे वे वर पक्ष से मिले हों या वधू पक्ष से तथा पिता, माता, भ्राता, अन्य रिश्तेदार और मित्र द्वारा दिए गए उपहार स्वीकृत किए गए हैं।

**नोट**

विवाहित हिन्दू स्त्री अपने धन की निरंकुश मालिक होती है। वह अपने धन को खर्च कर सकती है। सौदा कर सकती है या किसी को दे सकती है। इसके लिए उसे अपने पति, सास, ससुर या अन्य किसी से पूछने की आवश्यकता नहीं है। बीमारी या कोई प्राकृतिक आपदा को छोड़कर स्त्री का पति भी उसके धन को खर्च करने का कोई अधिकार नहीं रखता। इन परिस्थितियों में खर्च किए गए स्त्री धन को वापस करना ससुराल पक्ष की नैतिक जिम्मेदारी होगी। परिवार का अन्य सदस्य किसी भी स्थिति में स्त्री धन खर्च नहीं कर सकता। उच्चतम न्यायालय ने एक प्रकरण में कहा है कि स्त्री द्वारा माँग किए जाने पर इस प्रकार के न्यासधारी उसे लौटाने के लिए बाध्य होंगे। अन्यथा धारा 405/406 भा.द.वि के अपराध के दोषी होंगे।

धारा 363 में व्यपहरण के अपराध के लिए दंड देने पर 7 साल का कारावास और धारा 363 क में भीख माँगने के प्रयोजन से किसी महिला का अपहरण या विकलांगीकरण करने पर 10 साल का कारावास और जुर्माना, धारा 365 में किसी व्यक्ति (स्त्री) का गुप्त रूप से अपहरण या व्यपहरण करने पर 7 वर्ष का कारावास अथवा जुर्माना अथवा दोनों, धारा 366 में किसी स्त्री को विवाह आदि के लिए विवश करने के लिए अपहृत करने अथवा उत्प्रेरित करने पर 10 वर्ष का कारावास, जुर्माने के प्रावधान हैं। धारा 372 में वैश्यावृत्ति के लिए किसी स्त्री को खरीदने पर 10 वर्ष का कारावास, जुर्माना, धारा 373 में वैश्यावृत्ति आदि के प्रयोजन के लिए महिला को खरीदने पर 10 वर्ष का कारावास, जुर्माना एवं बलात्कार से संबंधित दंड आजीवन कारावास या दस वर्ष का कारावास और जुर्माना, धारा 376 क में पुरुष द्वारा अपनी पत्नी के साथ पृथक्करण के दौरान संभोग करने पर 2 वर्ष का कारावास अथवा सजा या दोनों।

धारा 376 ख में लोक सेवक द्वारा उसकी अभिरक्षा में स्थित स्त्री से संभोग करने पर 5 वर्ष तक की सजा या जुर्माना अथवा दोनों, धारा 376 ग में कारागार या सुधार गृह के अधीक्षक द्वारा संभोग करने पर 5 वर्ष तक की सजा या जुर्माना अथवा दोनों का प्रावधान, धारा 32 (1) में मरे हुए व्यक्ति (स्त्री) के मरणासन्न कथनों को न्यायालय सुसंगत रूप से स्वीकार करता है बशर्ते ऐसे कथन मृत व्यक्ति (स्त्री) द्वारा अपनी मृत्यु के बारे में या उस संव्यवहार अथवा उसकी किसी परिस्थिति के बारे में किए गए हों, जिसके कारण उसकी मृत्यु हुई हो। धारा 113 ए में यदि किसी स्त्री का पति अथवा उसके रिश्तेदार के द्वारा स्त्री के प्रति किए गए उत्पीड़न, अत्याचार जो कि मौलिक तथा परिस्थितिजन्य साक्ष्यों द्वारा प्रमाणित हो जाते हैं, तो स्त्री द्वारा की गई आत्महत्या को न्यायालय दुष्प्रेरित की गई आत्महत्या की उपधारणा कर सकेगा। धारा 113बी में यदि भौतिक एवं परिस्थिति जन्य साक्ष्यों द्वारा यह प्रमाणित हो जाता है कि स्त्री की अस्वाभाविक मृत्यु के पूर्व मृत स्त्री के पति या उसके रिश्तेदार दहेज प्राप्त करने के लिए मृत स्त्री को प्रताड़ित करते, उत्पीड़ित करते, सताते या अत्याचार करते थे तो न्यायालय स्त्री की अस्वाभाविक मृत्यु की उपधारणा कर सकेगा अर्थात दहेज मृत्यु मान सकेगा।

पिछले दशक से महिलाओं की सुरक्षा के लिए जो कानूनी कवच दिया गया है, वह नई चुनौतियों के आगे अपने को लाचार पा रहा है। ये कानून ठीक तरह से लागू हों, इसके लिए सजग रहना होगा। लेकिन आने वाली सदी में महिलाओं की जगह क्या हो, इस बारे में एक समग्र दृष्टि विकसित करनी होगी। आज आवश्यकता जरूरत से ज्यादा कानूनों के थोड़े से पालन की नहीं, बल्कि थोड़े से कानून के अच्छी तरह पालन करने की है।

नोट

कानून कहता है कि–

- पुरुष व स्त्री को समान कार्य के लिए समान वेतन मिले
- महिला कर्मचारियों के लिए पृथक शौचालय व स्नानगृहों की व्यवस्था हो
- किसी महिला के साथ दास के समान व्यवहार नहीं किया जा सकता
- बलात्कार के आशय से किए गए हमले से बचाव हेतु हत्या तक का अधिकार महिला को है
- विवाहित हिन्दू स्त्री अपने धन की निरंकुश मालिक है, वह उसे जैसे चाहे खर्च कर सकती है
- दहेज लेना व देना दोनों ही अपराध है

भारतीय दंड संहिता की धारा 41 (सी) के अंतर्गत संज्ञेय अपराध, वे अपराध हैं जिनमें पुलिस को प्रत्यक्ष रूप से बयान देने व बिना वारंट के गिरफ्तार करने का अधिकार है। इसके विपरीत जिन प्रकरणों में प्रत्यक्ष रूप से पुलिस को संज्ञान लेने व बिना वारंट गिरफ्तार करने का अधिकार नहीं है, असंज्ञेय अपराध कहलाते हैं। धारा 47 (ए) के अंतर्गत गिरफ्तारी से बचने के लिए यदि कोई व्यक्ति किसी मकान में छिपता है या प्रवेश करता है तो गिरफ्तार करने वाला व्यक्ति या पुलिस अधिकारी विहित नियमों के अनुसार मकान में प्रवेश कर सकता है और उस मकानकी तलाशी भी ले सकता है, परंतु धारा 47 (बी) के अंतर्गत यदि उस मकान में या उसके किसी भाग में ऐसी महिला का निवास है जिसकी गिरफ्तारी नहीं की जानी हो तो गिरफ्तार करने वाला अधिकारी, उस महिला से, उस मकान या स्थान से हट जाने के लिए आग्रह करेगा या उसे जाने देगा।

धारा 51 (1) (2) के अंतर्गत गिरफ्तार किए गए व्यक्ति की तलाशी विहित नियमों द्वारा ली जा सकेगी किंतु यदि गिरफ्तार व्यक्ति महिला है तो पूरी शिष्टता के साथ किसी अन्य महिला द्वारा ही तलाशी ली जा सकेगी, धारा 53 (2) के अंतर्गत पुलिस अधिकारी की प्रार्थना पर किसी स्त्री अभियुक्त का शारीरिक परीक्षण किसी महिला चिकित्सा व्यवसायी द्वारा किया जा सकेगा। धारा 98 के अंतर्गत किसी स्त्री या 18 वर्ष से कम आयु की बालिका को विधि विरुद्ध प्रयोजन के लिए रखे जाने या निरुद्ध रखे जाने पर और शपथ पर ऐसा परिवाद किए जाने पर, जिला मजिस्ट्रेट, उपखंड मजिस्ट्रेट या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट विधि विहित नियमों में उसे स्वतंत्र करने का आदेश दे सकता है। धारा 100 (3) के अंतर्गत यदि कोई महिला अपने पास कोई चीज छिपाती है तथा उसकी जामा तलाशी करना है तो उसकी तलाशी पूरी शिष्टता के साथ अन्य कोई महिला द्वारा ही की जाना चाहिए।

## 17-2 efgyk ,o cky fodkl e=ky;

महिलाओं और बच्चों का विकास सर्वाधिक महत्व रखता है और इसी से संपूर्ण विकास की गति निर्धारित होती है। महिला एवं बाल विकास मंत्रालय 2006 से एक पृथक मंत्रालय के रूप में अस्तित्व में आया। इसका प्रमुख उद्देश्य महिलाओं और बच्चों के मामले में सरकारी कार्यों की खामियों को दूर करने, महिलाओं और पुरूषों के बीच समानता लाने और बच्चों पर केंद्रित कानून, नीतियों एवं कार्यक्रम बनाने के लिए विभिन्न मंत्रालयों और

क्षेत्रों को एक तरफ ले जाने के लिए बढ़ावा देना है। मंत्रालय का प्रमुख उत्तरदायित्व महिलाओं और बच्चों के अधिकारों और सरोकारों से संबंधित कार्यों को आगे बढ़ाना तथा उनके जीवित रहने, सुरक्षा, विकास एवं भागीदारी को समग्र रूप से प्रोत्साहित करना है। मंत्रालय की परिकल्पना के अनुसार हिंसा व भेदभाव से मुक्त वातावरण में सशक्त महिलाएं सम्मान से रहें और विकास में पुरूषों के समान भागीदारी निभा सकें तथा अच्छी परवरिश के साथ बच्चों को सुरक्षित वातावरण में विकास करने और बढ़ने के सभी अवसर मिलें। बच्चों के लिए इसका मिशन विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित नीतियों एवं कार्यक्रमों के माध्यम से उनके अधिकारों के बारे में जागरूकता फैलाकर, शिक्षा, पोषण, संस्थागत सुविधाएं एवं कानूनी सहायता उपलब्ध करवा कर उनके समग्र विकास और उन्नति के लिए पूर्ण रूप से बच्चों का विकास, देख–रेख और सुरक्षा सुनिश्चित करना है।

## 17-3 efgykvk vkj cPpk l l cf/kr dkuu

मंत्रालय पर बच्चों और महिलाओं से संबंधित निम्नलिखित अधिनियमों को लागू करने की जिम्मेदारी है :

1. अनैतिक व्यापार (निरोधक) कानून, 1956 (1986 में संशोधित),
2. महिलाओं का अश्लील प्रस्तुततीकरण निरोधक कानून, 1986 (1986 का 60,)
3. दहेज निरोधक कानून, 1961 (1986 में संशोधित),
4. सती प्रथा (निरोधक) कानून, 1987 (1988 का 3),
5. बाल विवाह निषेध कानून, 2006 (जनवरी, 2007 में अधिसूचित),
6. घरेलू हिंसा से महिलाओं की रक्षा कानून, 2005
7. राष्ट्रीय महिला आयोग कानून, 1990
8. शिशु दुग्ध विकल्प, फीडिंग बोतल और शिशु आहार (उत्पादन, आपूर्ति और वितरण पर नियंत्रण) कानून, 1992 (1992 का 41),
9. बाल अधिकार संरक्षण आयोग कानून, 2005 और
10. किशोर न्याय (बच्चो की देखरेख और संरक्षण) कानून, 2000
11. बच्चों का यौन अपराधों से संरक्षण (पीओसीएसओ) कानून और पीओसीएसओ नियम 2012 तथा
12. कार्यस्थलों पर महिलाओं का यौन उत्पीड़न (रोकथाम, निषेध एवं निवारण) 2012 संसद ने किशोर न्याय (बच्चों की देखरेख और संरक्षण) संशोधन विधेयक अगस्त 2011 में पारित कर दिया।

मंत्रालय के कार्य क्षेत्र में मुख्यतः महिलाओं और बच्चों के लिए योजनाएं, नीतियों और कार्यक्रम बनाना, उनसे संबंधित कानून बनाना और उनमें संशोधन करना तथा महिला और बाल विकास के क्षेत्र में कार्यरत सरकारी और गैर सरकारी संगठनों का मार्गदर्शन और उनमें समन्वयन स्थापित करना शामिल है। मंत्रालय की योजनाएं और कार्यक्रम, उसके विकासात्मक कार्यक्रमों में पूरक और सहायक की भूमिका निभाते हैं।

नोट

## cVh cpkvk cVh i<kvk

बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ के परिणामस्वरूप सार्वजनिक तौर पर घटते सीएसआर के मुद्दे पर जागरूकता, संवेदनशीलता बढ़ी है और लोग सचेत हुए हैं। जन्म, संस्थागत डिलीवरी में लिंग अनुपात में बेहतर प्रवृत्ति, चुने हुए जिलों में से अधिकांश में एएनसी पंजीकरण, सेकेंडरी स्तर पर स्कूलों में लड़कियों के दाखिले सहित उत्साहवर्धक परिणाम देखने को मिल रहे हैं।

इस योजना के विशेष उद्देश्यों में लिंग का पता लगाकर गर्भपात पर रोक; लड़की का बचाव और उसकी सुरक्षा सुनिश्चित करना तथा लड़की की शिक्षा और उसकी भागीदारी सुनिश्चित करना, जिलों में बहु क्षेत्रीय कार्य में विशेष ध्यान पीसी और पीएनडीटी कानून के प्रभावी कार्यान्वयन और उसकी निगरानी, गर्भधारण करने के बारे में जल्द पंजीकरण को बढ़ावा, स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय द्वारा संस्थाग डिलीवरी और जन्म का पंजीकरण, मानव संसाधन मंत्रालय द्वारा स्कूलों की लड़कियों के अनुकूल बनाना : स्कूल में लड़कियों का नाम लिखवाना, सेकेंडरी स्कूलों में लड़कियों को रोकने का कार्य, चालू शौचालयों की उपलब्धता, महिला और बाल विकास मंत्रालय द्वारा जागरूकता पैदा करना, हिमायत, सामुदायिक लामबंदी और साझेदारों का प्रशिक्षण, स्थानीय चैम्पियन, संस्थानों और आगे बढ़कर कार्य करने वाले कार्यकर्ताओं को पुरस्कार शामिल है।

इस योजना की परिकल्पना अल्प अवधि में जन्म के समय लिंग अनुपात में सुधार करना है जबकि बाल लिंग अनुपात (सीएसआर) बेहतर स्वास्थ्य, पोषण, शिक्षा में लिंग समानता, बेहतर स्वच्छता, अवसरों के रूप में संपूर्ण विकास को दर्शाता है और लिंग के बीच विषमताओं को समाप्त करने का दीर्घकाल में प्रयोग होगा। थोड़े से समय में बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ की गूंज देशभर में सुनाई पड़ रही है। यह कार्यक्रम राष्ट्रीय एजेंडा के रूप में सीएसआर में सुधार करने में सफल रहा है। इसने राष्ट्रीय नेतृत्व और सरकार के अंतर्विवेक को जगाया है, केंद्रीय और राज्य/संघ शासित प्रदेश स्तर पर दोनों ने पहल की है।

इसके परिणामस्वरूप सार्वजनिक तौर पर घटते सीएसआर के मुद्दे पर जागरूकता, संवेदनशीलता बढ़ी है और लोग सचेत हुए हैं। जन्म, संस्थागत डिलीवरी में लिंग अनुपात में बेहतर प्रवृत्ति, चुने हुए जिलों में से अधिकांशमें एएनसी पंजीकरण, सेकेंडरी स्तर पर स्कूलों में लड़कियों के दाखिले सहित उत्साहवर्धक परिणाम देखने को मिल रहे हैं।

## i/kku e=h ekr` onuk ;kt uk

सरकार ने पात्र गर्भवती और स्तनपान कराने वाली माताओं के लिए मातृत्व लाभ कार्यक्रम के कार्यान्वयन की देशभर में घोषणा की। इस कार्यक्रम का नाम प्रधानमंत्री मातृ वंदना योजना (पीएमएमवीवाईजे) रखा गया। पीएमएमवीवाईजे एक केंद्र प्रायोजित योजना हैं जिसके अंतर्गत राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों को अनुदान सहायता जारी की जाती है जिसे केंद्र और राज्य तथा विधानमंडल वाले केंद्रशासित प्रदेश 60:40 के अनुपात में बांटते हैं। पूर्वात्तर राज्यों और हिमालयी राज्यों के लिए यह 90:10 है जबकि विधानमंडल के बिना केंद्रशासित प्रदेशों के लिए यह सौ प्रतिशत है।

इस योजना में कुछ विशेष शर्तों को पूरा करने वाली महिलाओं को गर्भावस्था और स्तनपान के दौरान उनके बैंक/डाक घर डीबीटी मोड में पीडब्ल्यू और एलएम खाते में सीधे 5,000 रूपये की नकद राशि डाल दी जाती है।

नोट

## ik"k.k vfHk;ku

पोषण अभियान महिला और बाल विकास मंत्रालय का प्रमुख कार्यक्रम है जो विभिन्न कार्यक्रमों जैसे आंगनबाड़ी सेवाओं, प्रधानमंत्री मातृवंदना योजना (पीएमएमवीवाई), एमडब्ल्यूसीडी की किशोर लड़कियों के लिए योजना (एसएजी), जननी सुरक्षा योजना (जेएसवाई), राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन (एनएचएम), स्वच्छ भारत मिशन, सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) के साथ मिलना सुनिश्चित करता है। यह शिशु के शुरूआती 1000 दिन पर विशेष ध्यान केंद्रित करता है, जिसमें नौ माह की गर्भावस्था, छह महीन तक केवल स्तनपान और 6 महीने से लेकर 2 वर्ष की अवधि जिसमें अल्प पोषण जैसी समस्याओं को दूर किया जा सके। जन्म के बाद वजन बढ़ाने के अलावा, यह शिशु मृत्युदर (आईएमआर) और मातृ मृत्यु दर (एमएमआर) दोनों को कम करने में मदद कर रहा है। निरंर अतिरिक्त एक वर्ष के हस्तक्षेप (3 वर्ष की उम्र तक) से सुनिश्चित होगा कि शुरूआती 1000 दिनों का ठोस लाभ हुआ है। 3–6 वर्ष की आयु वर्ग के बच्चों के संपूर्ण विकास की तरफ भी आंगनबाड़ी सेवाओं के जरिए ध्यान दिया जा रहा है।

## ou LVki lsVj

जो महिलाएं हिंसा का सामना करती हैं उन्हें न्याय हासिल करने में भारी समस्या का सामना करना पड़ता है क्योंकि उन्हें एफआईआर दर्ज करानी पड़ी है और कोर्ट केस लड़ने के लिए वकील की सहायता लेनी पड़ती है। अनेक मामलों में जानकारी नहीं होने अथवा अपराधियों से दबाव के कारण चिकित्सा संबंधी सबूतों को नष्ट कर दिया जाता है। परिणामस्वरूप महिलाएं अक्सर हिंसा का सामना करती है लेकिन शिकायत नहीं करती। ऐसी महिलाओं की सहायता के लिए, एक नई पहल करते हुए वन स्टॉप सेंटर (ओएससी) की कल्पना की गई और अप्रैल 2015 से इसे देशभर में स्थापित किया गया। एक महिला जिसने हिंसा का सामना किया है उसे चिकित्सा, पुलिस, कानूनी और मनोवैज्ञानिक काउंसलिंग सहायता इन केंद्रों में मिल सकी है। इन स्थानों पर महिलाएं अस्थाई तौर पर रह भी सकती हैं यदि उनकी स्थिति इसकी मांग करती है। ओएससी, जिसका लोकप्रिय नाम 'सखी' है, इसे अन्य मौजूदा 181 हेल्पलाइनों से जोड़ा जाएगा। पहले केंद्र का उद्घाटन रायपुर, छत्तीसगढ़ में 2015 में किया गया। अब तक 31 राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों में ऐसे 138 केंद्र काम कर रहे हैं। इन केंद्रों में 4,000 से अधिक महिलाओं को सहायता दी गई है जो अंतिम एसबीसी महीनों में आईं।कम से कम ऐसा एक केंद्र प्रत्येक जिले में 2018–19 की समाप्ति तक स्थापित किया जाएगा। योजना को राज्य/केंद्रशासित सरकार के जरिए लागू किया गया है। जिला कलेक्टर के नेतृत्व में प्रबंधन समिति ओएससी के रोजमर्रा के कार्यों के लिए जिम्मेदार है।

## efgyk gsYiykbu dk lkoZHkkSfedj.k

महिला हेल्पलाइन के सार्वभौमिकरण की योजना अप्रैल 2015 में लागू की गई थीं। इसका उद्देश्य हिंसा से प्रभावित महिला को सिंगल यूनीफॉर्म नंबर (181) के जरिए देशभर के महिला संबंधी सरकारी कार्यक्रमों के बारे में सूचना और नाम लेने के जरिए (उपयुक्त प्राधिकार जैसे– पुलिस, वन स्टॉप सेंटर, अस्पताल से जोड़कर) आपात स्थिति और गैर–आपात स्थिति में 24 घंटे सेवा प्रदान करना है। महिला हेल्पलाइन को वन स्टॉप सेंटर

से जोड़ दिया जाएगा और सुधार सेवाओं की जरूरत में पड़ी महिला को यहां भेज दिया जाएगा। योजना में व्यवस्था है कि राज्य/केंद्रशासित प्रदेश एक समर्पित सिंगल राष्ट्रीय नंबर के जरिए अपनी वर्तमान महिला हेल्पलाइन का इस्तेमाल करेंगे अथवा उसे आगे बढ़ाएंगे। दूरसंचार विभाग, जीओएल ने सभी राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों को लघु कोड 181 आवंटित किया है। अब तक महिला हेल्पलाइन 22 राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों यानी आंध्र प्रदेश, अरूणाचल प्रदेश, छत्तीसगढ़, चंडीगढ़ (यूटी), दिल्ली, मध्य प्रदेश, गुजरात, केरल, उत्तराखंड, मिजोरम, झारखंड, बिहार, पंजाब, महाराष्ट्र, ओडिशा, उत्तर प्रदेश, मेघालय, हरियाणा, नागालैंड, पश्चिम बंगाल, सिक्किम और मेघालय में काम कर रही है।

## ekckby Qku ij ifud cVu

परेशानी में पड़ी महिला को मदद प्रदान करने के लिए महिला और बाल विकास मंत्रालय ने मोबाइल फोनों पर पैनिक बटन लगाने का काम किया। मंत्रालय की पहल से बड़ी संख्या में साझेदारों के साथ विचार–विमर्श के आधार पर पैनिक बटन और मोबाइल फोन में ग्लोबल पोजीशनिंग सिस्टम हैंडसेट नियम 2016, दूरसंचार विभाग ने अधिसूचित किया। इस नियम के अंतर्गत सभी नये फीचर वाले फोनों में पैनिक बटन की सुविधा होगी जो न्यूमेरिक 5 अथवा 9 से काम करेगा और सभी स्मार्ट फोन ऑन–ऑफ बटन को तीन बार दबाने पर कनफिगर हो जाएंगे। सभी नये मोबाइल फोनों में सेटेलाइट आधारित ओपीएस के जरिए स्थान की पहचान करने की सुविधा होनी चाहिए। गृह मंत्रालय के सहयोग से निर्भया कोष के अंतर्गत एक इमरजेंसी रिस्पॉन्स सपोर्ट सिस्टम (ईआरएसएस) भी स्थापित किया गया है जो आधुनिक टेक्नोलॉजी के जरिए सभी आपात नंबरों को 112 से जोड़ देगा। यह पैनिक बटन से भेजे गए पेरशानी के सिगनल का जवाब देगा।

## efgyk ifyl Lo;lloh

महिला पुलिस स्वयंसेवी का प्रमुख कार्य महिलाओं के खिलाफ हिंसा जैसे– घरेलू हिंसा, बाल विवाह, दहेज के लिए उत्पीड़न और सार्वजनिक स्थलों में महिलाओं के साथ होने वाली हिंसा की जानकारी अधिकारियों/पुलिस को देना है। गृह मंत्रालय ने इस योजना को लागू करने के लिए अप्रैल 2016 में अपनी सहमति दी।

हरियाणा पहला राज्य है जिसने महिला पुलिस स्वयंसेवी योजना को चालू किया। इसे महिला और बाल विकास मंत्रालय और हरियाणा सरकार ने 14 दिसंबर, 2016 में संयुक्त रूप से करनाल और महेंद्रगढ़ जिलों में शुरू किया। अन्य राज्यों द्वारा भी जल्द ही इसे शुरू करने की उम्मीद है। आंध्र प्रदेश में अनंतपुर और कडप्पा जिलों में महिला पुलिस स्वयंसेवियों की शुरूआत के लिए आंध्र प्रदेश सरकार के एक प्रस्ताव को मंजूरी दी जा चुकी है। गुजरात सरकार से भी प्रस्ताव प्राप्त हुए हैं।

## ifyl cy e efgykvk d fy, vkj{k.k

महिला और बाल विकास मंत्रालय गृह मंत्रालय के साथ पुलिस को लिंग की दृष्टि से और अधिक उत्तरदायी बनाने तथा बल में और अधिक महिलाओं को लाने तथा पुलिस बल में लिंग संवेदनशीलता को मजबूत बनाने के लिए मिलकर कार्य कर रहा है। सभी राज्य सरकारों को एक परामर्श जारी किया है कि वे पुलिस में महिलाओं का प्रतिनिधित्व बढ़ाकर कुल क्षमता का 33 प्रतिशत तक करें। इसके परिणामस्वरूप 14 राज्यों/केंद्रशासित

**नोट**

प्रदेशों में आरक्षण बढ़ाया गया है। अब तक 8 राज्य बिहार, गुजरात, ओडिशा, नागालैंड, राजस्थान, झारखंड, मध्य प्रदेश, तेलंगाना और 6 केंद्रशासित प्रदेश–चंडीगढ़, दमन और दीव, लक्षद्वीप और दादर और नगर हवेली, राष्ट्रीय राजनधानी क्षेत्र दिल्ली, पुदुदचेरी पुलिस बल में महिलाओं के लिए इस तरह के आरक्षण को बढ़ाकर 33 प्रतिशत कर चुके हैं।

### ,flM gey dk fn0;kxrk d :i e 'kkfey djuk

एसिड हमले का शिकार किसी व्यक्ति के स्थायी नुकसान अथवा उसके बदसूरत होने तथा लगातार इलाज को ध्यान में रखते हुए, महिला और बाल विकास मंत्रालय ने सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय से आग्रह किया कि नुकसान अथवा बदसूरत होने को विशिष्ट दिव्यांगता की सूची में डाला जाए। हाल ही में बनाए गए दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार कानून, 2016 में एसिड हमले को दिव्यांगता के रूप में शामिल किया गया है। एसिड हमले का शिकार व्यकि अब दिव्यांग व्यक्तियों को मिलने वाले लाभ ले सकता है।

### eVhekfu;y oclkbV d fy, fn'kkfun'k

मेट्रीमोनियल वेबसाइट पर दी जाने वाली सूचना के आधार पर महिलाओं के खिलाफ अपराधों की बढ़ती संख्या को ध्यान में रखते हुए इस मुद्दे पर गौर करने और इस दुरूपयों पर अंकुश लगाने के लिए एक नियामक ढांचा बनाने का फैसला किया गया। मंत्रालय मेट्रीमोनियल वेबसाइट के लिए तत्परता से उपयुक्त दिशानिर्देश तैयार करने के लिए पहले ही विस्तृत कार्य कर चुका है और उसने समस्या की सीमा, वर्तमान सुरक्षा व्यवस्था, वर्तमान कानूनी उपायों आदि के बारे में विस्तार से एक अवधारणा–पत्र तैयार कर लिया है जो संबंद्ध साझेदारों के बीच बांटा जाएगा। बड़े पैमाने पर साझेदारों के आधार पर महिला और बाल विकास मंत्रालय द्वारा विचार–विमर्श शुरू किया गया, मेट्रीमोनियमल वेबसाइट के कामकाज के बारे में 6 जून, 2016 को इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचनास प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा परामर्श जारी किया गया।

### fyx lapkh ctV cukus dh igy

लिंग संबंधी बजट बनाना (जेंडर बजटिंग पहल) लिंग को मुख्यधारा में लाने का एक शक्तिशाली औजार है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि विकास के लाभ जितने पुरूषों तक पहुंचते हैं उतने महिलाओं तक भी पहुंचे। यह कोई लेखा विधि प्रयोग नहीं है बल्कि बजट तैयार करते समय, उसके आवंटन, कार्यान्वयन, प्रभाव/परिणाम आकलन, समीक्षा और लेखा परीक्षा जैसे विभिन्न कदमों पर लिंग दृष्टिकोण को ध्यान में रखने की निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। देश में लिंग संबंधी बजट बनाने को संस्थागत बनाने के लिए 2007 में वित्त मंत्रालय द्वारा सभी मंत्रालयों/विभागों में जेंडर बजटिंग सेल्स (जीबीसी 5) स्थापित करने का आदेश दिया गया। महिला और बाल विकास मंत्रालय जेंडर बजटिंग के लिए प्रमुख एजेंसी है जिसने इसे राष्ट्रीय और राज्य स्तरों पर आगे ले जाने के लिए अनेक पहल की है। अब तक 57 केंद्रीय मंत्रालयों और विभागों ने जीबीसी की स्थापना कर ली है। उम्मीद है कि यह जेंडर बजटिंग पहलों के साथ समन्वय के लिए अंतः और अंतर मंत्रालय स्तर पर केंद्र बिंदु के रूप में कार्य करेंगे। 21 राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों ने जेंडर बजटिंग नोडल केंद्र निर्दिष्ट कर दिए है।

नोट

## tMj pfi;u

जेंडर चैम्पियन्स पहल शैक्षणिक संस्थानों के जरिए लागू की जा रही है जिससे युवा छात्रों को संवेदनशील बनाया जा सके और कानून, विधि निर्माण, कानूनी अधिकारों और जीवन कौशल शिक्षा के बारे में जागरुकता पैदा की जा सके। जेंडर चैंपियन दिशानिर्देश महिला और बाल विकास मंत्रालय ने विकसित किए हैं और इसे मानव संसाधन विकास मंत्रालय के सहयोग से अमल में लाया जा रहा है।

जेंडर चैंपियन को शैक्षणिक संस्थानों द्वारा अपनाए जाने के लिए एक प्रशिक्षण मॉडयूल विकसित किया गया है। यूजीसी की रिपोर्ट के अनुसार, 150 विश्वविद्यालयों और 230 कॉलेजों ने जेंडर चैंपियन के कार्यान्वयन की शुरूआत की है।

## eR;q iek.k&i= ij fo/kok dk uke vfuok;Z

यह सुनिश्चित करने के लिए कि पति की मृत्यु के बाद पत्नी को उसके सभी अधिकार मिलें, महिला और बाल विकास मंत्रालय भारत के महा पंजीयक और राज्य सरकारों के साथ काम कर रहा है ताकि पति के मृत्यु प्रमाण–पत्र में महिला का नाम लिखना अनिवार्य किया जाए।

## fo/kokvks ds fy, vkJ;

यह अब तक की सबसे बड़ी सुविधा है जिसे सरकार द्वारा स्थापित किया गया है और जिसके लिए सरकार धनराशि दे रही है। इस आश्रय में 1,000 महिलाओं को रखने की क्षमता है जिसे वृंदावन में करीब 5.7 करोड़ रूपये (भूमि की कीमत सहित) की लागत से 1.424 हेक्टेयर भूमि पर बनाया जा रहा है। इस आश्रय का डिजाइन 'हेल्पएज इंडिया' के साथ विचार–विमर्श कर तैयार किया गया है और यह बुजुर्गों के अनुकूल है।

## iapk;rks esa efgyk iapks dk izf'k{k.k

हालांकि ग्राम पंचायतों में 33 प्रतिशत पद महिलाओं के लिए आरक्षित हैं, लेकिन इसके बावजूद प्रशिक्षण के अभाव में और पति के लगातार शासन/हस्तक्षेप के कारण ये पंच गांव की बेहतरी के लिए वास्तविक अधिकार का उपयोग नहीं कर पाती हैं। इन महिलाओं को जमीनी स्तर पर शक्तिशाली बनाने के लिए महिला और बाल विकास मंत्रालय ने 2 लाख महिला पंचों को प्रशिक्षित करने के लिए विस्तृत कार्यक्रम की पहल की है। ग्रामीण विकास मंत्रालय की भागीदारी से मई 2016 से इनका प्रशिक्षण शुरू हो चुका है। इस पहल के देश में महिलाओं के लिए एक बहुत बड़े परिवर्तन के रूप में सामने आने की उम्मीद है क्योंकि प्रशिक्षित औरअधिकार संपन्न महिला सरपंच सच्चे मायनों में राजनैकि बदलाव लाने में सक्षम होंगी।

प्रशिक्षण में हर स्तर के प्रबंधन के सभी पहलू शामिल हैं जिनमें सरकारी योजनाओं की बुनियादी जानकारी, सामाजिक मुद्दे और उनका समाधान, पंचायत का वित्तीय प्रबंधन, गांव का बुनियादी ढांचा आदि शामिल है। यह योजना पंचायती राज मंत्रालय के सहयोग से लागू की जा रही है। अनेक राज्यों में अब 50 प्रतिश से अधिक पंचायतों में महिला प्रमुख जबकि कानून द्वारा पंचायतों में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण अनिवार्य कर दिया गया है। महिला सरपंचों के पहल बैच के प्रशिक्षण का आयोजन अप्रैल 2017 में झारखंड में किया गया और धीरे–धीरे इसमें सभी राज्यों को शामिल कर लिया जाएगा।

## ekrRo vodk'k dh vof/k esa foLrkj

कामकाजी महिलाओं के लिए मातृत्व अवकाश की अवधि बढ़ाकर सात महिने करने के लिए महिला और बाल विकास मंत्रालय कार्य कर रहा था ताकि शिशु को जन्मे के बाद छह महीने तक स्तनपान कराया जा सके और इसके बाद पूरक भोजन दिया जाए ताकि कुपोषण के मामले कम हो सकें। श्रम और रोजगार मंत्रालय ने इस पर विचार किया और कानून में उचित संशोधन किया जो इस प्रकार हैः

1. मातृत्व लाभ कानून 1961 के अंतर्गत मातृत्व अवकाश वर्तमान 12 सप्ताह से बढ़ाकर 26 सप्ताह
2. शिशु को गोद लेने वाली और सरोगेट मां के लिए मातृत्व लाभ में बढ़ोतरी
3. कार्यालय/फैक्टरी परिसर में क्रेच की सुविधा स्थापित करना। यह कानून अब मातृत्व लाभ (संशोधन) कानून, 2017 कहलाता है।

इस विधेयक को राज्य सभा और लोक सभा द्वारा पारित किया जा चुका है। अब इसे मातृत्व लाभ (संशोधन) कानून, 2017 के नाम से जाना जाता है।

## dk;LFky ij efgykvksa dh ;kSu mRihM+u dk dkuwu ykxw djuk

कार्यस्थल पर महिलाओं की हिफाजत और सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए महिला और बाल विकास मंत्रालय कार्यस्थल पर महिलाओं के यौन उत्पीड़न (रोकथाम, निषेध और निवारण) कानून, 2013 को प्रभावी ढंग से लागू करने की दिशा में कार्य कर रहा है। इस संबंध में राज्य सरकारों/केंद्रीय मंत्रालयों/विभागों को परामर्श और निगरानी रूपरेखा जारी की चुकी है ताकि यौन उत्पीड़न कानून को प्रभावी ढंग से लागू किया जा सके, शिकायत पर तेजी से जांच हो सके और शिकायतकर्ता का भविष्य में उत्पीड़न रोका जा सके।

साथ ही महिला और बाल विकास मंत्रालय ने एक यौन उत्पीड़न कानून पर एक पुस्तिका तैयार की है और उसे जारी किया है जिसमें आसान शब्दों में कानून के प्रावधान बताए गए हैं। सचिवालय प्रशिक्षण और प्रबंध संस्थान (आईएसटीएम), नई दिल्ली ने महिला और बाल विकास मंत्रालय के साथ विचार–विमर्श करने के बाद कार्यस्थल पर महिलाओं के यौन उत्पीड़न (रोकथाम, निषेध और निवारण) कनून, 2013 के अंतर्गत गठित आतंरिक शिकायत समितियों के प्रशिक्षण के लिए एक प्रशिक्षण मानंदड तैया किया है। इस मानदंड को अपने सेवा नियमों और शर्तों के अनुसार निजी संगठनों द्वारा विशिष्ट रूप से तैयार किया जा सकता है। उपरोक्त के अलावा, मंत्रालय ने कार्य स्थल पर महिलाओं के यौन उत्पीड़न (रोकथाम, निषेध और निवारण) कानून, 2013 के अंतर्गत देश के विभिन्न भागों में प्रशिक्षण कार्यक्रम/कार्यशालाएं आयोजित करने के लिए संस्थानों/संगठनों को सूची में शामिल किया है।

## xzke lekfHk:irk vkSj lqfo/kk lsok ¼oh,lhbZ,l½

ग्राम समाभिरूपता और सुविधा सेवा 2015 में शुरू की गई एक पहल है जिसका उद्देश्य सामुदायिक कार्य के जरिए जागरूकता पैदा करना है। महिलाओं के मुद्दों पर झुकाव करके उन मुद्दों को सरल बनाने और ग्राम पंचायत और उसकी उप समितियों के साथ

नोट

निकट सहयोग कायम कार्य करने के लिए समर्पित ग्राम संयोजकों का चयन किया जाता है। इस प्रकार महिलाओं की शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण, कानूनी अधिकार, हिफाजत और सुरक्षा जैसे मुद्दों का समाधान निकाला गया है और सरकार द्वारा लागू योजनाओं/कार्यक्रमों जैसे बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ, जन धन योजना क पहुंच प्रदान की गई है एक स्थान पर सभी सुविधाएं और महिला हेल्पलाइन आदि दी गई है। यह सेवा देशभर के लिंग की दृष्टि से नाजुक 100 जिलों से बढ़ाकर 303 जिलों में दी गई है।

### jk"Vªh; efgyk dk"k

राष्ट्रीय महिला कोष (रामको) एक सोसाइटी है जिसका पंजीकरण सोसाइटीज रजिस्ट्रेशन एक्ट, 1860 के अंतर्गत किया गया था और इस शीर्ष सूक्ष्म–वित्त संगठन की स्थापना 1993 में की गई।

रामको मध्यस्थ संगठन (आईएमओ) के जरिए गरीब महिलाओं को सूक्ष्म ऋण प्रदान करता है, जिनमें अन्य के अलावा सेक्शन 25 कंपनियों, एनजीओ शामिल हैं। ये इन महिलाओं के सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए ग्राहक अनुकूल प्रक्रिया अपनाकर रियायती शर्तों पर आजीविका संबंधी विभिन्न सहायता और कमाई में मदद करते हैं।

राष्ट्रीय महिला कोष ने 1500 से अधिक एनओओ/आईएमओ के नेटवर्क के जरिए 7.35 लाख से अधिक गरीब महिला लाभान्वितों के लिए 360.00 करोड़ रूपये से अधिक की संचयी मंजूरी दी है और 302.00 करोड़ रूपये का वितरण किया है।

लक्षित लाभार्थियों में विभिन्न आर्थिक क्रियाकलापों जैसे– परंपरागत और आधुनिक हस्तशिल्प से लेकर लघु व्यवसाय जैसे पैटीज की दुकान आदि के उद्यमी हैं। ऋण रामको की विभिन्न योजनाओं के जरिए मंजूर किए जो हैं जैसे मुख्य ऋण योजना, ऋण प्रोत्साहन योजना आदि।

### Hkkjr dh efgyk in'kqh@egkRlo

इस पहल की शुरूआत नवंबर 2014 में की गई ताकि आर्गेनिक महिला कृषक और उद्यमी सीधे बाजार से जुड़ सकें। ये प्रदर्शनियां/महोत्सव दिल्ली में हो चुकी हैं, ऐसी अनेक प्रदर्शनियों/महोत्सवों का आयोजन दिल्ली से बाहर भी अनेक स्थानों पर किया जा रहा है। ऐसी प्रदर्शनियां खासतौर से गांवों की महिला उद्यमियों और किसानों को अपने उत्पाद प्रदर्शित करने और उन्हें बेचने के लिए मंच प्रदान करती हैं। ऐसी प्रदर्शनियों/महोत्सवों के माध्यम से महिलाओं को एक–दूसरे से जानकारियां मिलती हैं और वित्तीय समावेशन के जरिए सामाजिक संतुलन बनाने के लिए उद्यम संबंधी अवसर मिलते हैं।

### fd'kksj yMfd;ksa ds fy, ;kstuk

किशोर लड़कियों के लिए योजना (एसएजी) 2010–11 में शुरू की गई और यह देशभर के 205 चुने हुए जिलों में काम कर रही है। इसका उद्देश्य प्रारंभिक आधार पर 11–18 वर्ष की किशोर लड़कियों का चौतरफा विकास करना है। यह योजना राज्य सरकारों/केंद्रशासित प्रदेशों के जरिए लागू की जा रही है। जिसका व्यय केंद्र और राज्य के बीच (कानून के साथ) 50:50 के अनुपात में पोषण के लिए है और शेष घटकों के लिए यह अनुपात 60:40 है। आठ पूर्वोत्तर राज्यों (अरूणाचल प्रदेश, असम, मणिपुर, मेघालय,

नोट

मिजोरम,नगालैंड, त्रिपुरा और सिक्किम) तथा विशेष श्रेणी वाले तीन हिमालयी राज्यों (हिमाचल प्रदेश, जम्मू कश्मीर और उत्तराखंड) के लिए केंद्र और राज्य की हिस्सेदारी 90:10 होगी। केंद्रशासित प्रदेशों (बिना विधान वाले) को शत–प्रतिशत धनराशि अथवा वास्तविक खर्च दिया जाता है जो भी कम हो। आंगनबाड़ी केंद्र (एडब्ल्यूसी) सेवाओं की डिलीवरी का प्रमुख बिंदु है। इस योजना के दो प्रमुख घटक हैं– पोषण प्रदान करने वाले और पोषण नहीं प्रदान करने वाले। पोषण प्रदान करने वाले घटक में,स्कूल से निकली किशोर लड़कियां (11–16 वर्ष) जो एडब्ल्यूसी जा रही हैं और सभी लड़कियों (14–18 वर्ष) को घर ले जाने के लिए राशन/गर्म पके हुए भोजन के रूप में पूरक पोषण प्रदान किया जाता है। प्रत्येक किशोर लड़की को एक वर्ष में 300 दिन रोजाना 600 कैलरी और 18–20 ग्राम प्रोटीन और माइक्रोन्यूटीएन्टस (जो आहार संबंधी अनुशंसित अंश का करीब एक तिहाई है) प्रदान किए जाते हैं। पोषण गर्भवती और स्तनपान कराने वाली माता (पी और एल) के लिए नियमों के अनुसार प्रदान किया जाता है। पोषण प्रदान करने वाले घटक का उद्देश्य किशोर लड़कियों के स्वास्थ्य और पोषण अवस्था में सुधार लाना है जबकि पोषण नहीं प्रदान करने वाला घटक वृद्धि की जरूरतों को पूरा करता है। पोषण नहीं प्रदान करने वाले घटक में, 11–18 वर्ष की स्कूल छोड़ चूकी लड़कियों को आईएफए सप्लीमेंटेशन, स्वास्थ्य जांच और रैफरल सेवा, पोषण और स्वास्थ्य शिक्षा, किशोरी को प्रजनन संबंधी यौन स्वास्थ्य (एआरएसएच) काउंसलिंग/परिवार कल्याण के बारे में दिशानिर्देश, जीवन कौशल शिक्षा, सार्वजनिक सेवाओं तक पहुंचने के बारे में दिशानिर्देश और व्यावसायिक प्रशिक्षण (केवल 16–18 वर्ष की किशोर लड़कियों के लिए) प्रदान किया जाता है। इस योजना का एक और उद्देश्य स्कूल छोड़ चुकी लड़कियों को मुख्यधारा में लाकर स्कूल व्यवस्था में शामिल करना है।

## 17-4 lkjk'k

हरियाणा पहला राज्य है जिसने महिला पुलिस स्वयंसेवी योजना को चालू किया। इसे महिला और बाल विकास मंत्रालय और हरियाणा सरकार ने 14 दिसंबर, 2016 में संयुक्त रूप से करनाल और महेंद्रगढ़ जिलों में शुरू किया। अन्य राज्यों द्वारा भी जल्द ही इसे शुरू करने की उम्मीद है। आंध्र प्रदेश में अनंतपुर और कडप्पा जिलों में महिला पुलिस स्वयंसेवियों की शुरूआत के लिए आंध्र प्रदेश सरकार के एक प्रस्ताव को मंजूरी दी जा चुकी है। गुजरात सरकार से भी प्रस्ताव प्राप्त हुए हैं।

## 17-5 vH;kl i'u

1. महिलाओं के सुरक्षा हेतु सरकार द्वारा उठाए कदमों की समीक्षा कीजिए।
2. महिला एवं बाल विकास मंत्रालय के कार्यों का वर्णन करें।
3. महिलाओं के कल्याण हेतु भारत सरकार ने कौन से कार्यक्रम चलाएं हैं? उनका उल्लेख कीजिए।

## bdkbZ&18 cjkstxkjh

नोट

ikB&lajpuk

18.0 उद्देश्य

18.1 प्रस्तावना

18.2 बेरोजगारी की अवधारणा, अर्थ एवं विशेषताएँ

18.3 बेरोजगारी के प्रमुख तत्त्व

18.4 बेरोजगारी के स्वरूप

18.5 बेरोजगारी के प्रमुख कारण

18.6 बेरोजगारी के दुष्प्रभाव

18.7 बेरोजगारी दूर करने हेतु विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के प्रयास

18.8 बेरोजगारी दूर करने के दीर्घकालिक एवं अल्पकालिक उपाय

18.9 शारीरिक एवं मानसिक कमियों के निराकरण के उपाय

18.10 भगवती समिति के सुझाव

18.11 राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारन्टी योजना

18.12 राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगर गारण्टी अधिनियम, 2005

18.13 सारांश

18.14 अभ्यास प्रश्न

## 18-0 mís';

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :

- बेरोजगारी की अवधारणा एवं इसका अर्थ समझ सकेंगे।
- बेरोजगारी के विभिन्न स्वरूपों की जानकारियाँ भी पढ़ने को मिलेंगी।
- बेरोजगारी के व्यक्ति एवं समाज पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों का विश्लेषण।
- सरकार द्वारा बेरोजगारी के निराकरण हेतु प्रमुख उपायों की चर्चा प्रस्तुत अध्याय में पढ़ने को मिलेगी।
- राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगर गारंटी अधिनियम, 2005 के प्रमुख प्रावधानों की चर्चा इस अध्याय में की गई है।

## 18-1 iLrkouk

हम 21वीं सदी में प्रवेश कर चुके हैं। 21वीं शताब्दी में प्रवेश करने से पूर्व हमने इसके लिए वृहत् तैयारी की थी। इन तैयारियों में एक नया दृष्टिकोण एवं दृढ़ इच्छा

नोट

शक्ति समाहित है। सामाजिक विचारकों एवं नियोजनकर्ताओं ने समानता, स्वतंत्रता, बन्धुत्व, न्यायपरकता के आधार पर समाज को एक नई दिशा एवं दशा प्रदान करने का संकल्प लिया है। भारतीय समाज को इन विचारों के आधार पर ऊँचा उठाने के लिए अनेक चुनौतियों का सामना भी करना पड़ रहा है। भारत की जनसंख्या एक अरब से भी अधिक हो चुकी है, जो कि चीन के बाद दूसरे स्थान की दर बढ़ती पर है। भारत में जनसंख्या विस्फोटक स्थिति में पहुँच रही है। यह राष्ट्र निर्माताओं के लिए प्रमुख चुनौती, चिन्ता एवं चिन्तन का विषय है। भारत की 105 प्रतिशत से अधिक आबादी ग्रामीण अंचल से सम्बद्ध होने के कारण प्रमुख रूप से कृषि क्षेत्र में कार्यरत है। ग्रामीण जनसंख्या मुख्य रूप से गरीबी, बेरोजगारी एवं अशिक्षा से त्रस्त है। शिक्षा के अभाव में वह आधुनिकीकरण की प्रक्रिया के साथ ताल–मेल बिठाने में असमर्थ एवं असहाय महसूस करती है। जिस राष्ट्र की आधी जनसंख्या अशिक्षित हो, उसे आधुनिक विकास की दौड़ में परमावश्यक चुनौतियों का सामना किस प्रकार करना पड़ रहा है, यह सहज ही समझा जा सकता है। भारत में लगभग 5.2 करोड़ श्रम शक्ति उपलब्ध है, जिसमें से 3 करोड़ लोगें को रोजगार की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त मानवीय एवं क्षेत्रीय विषमताएँ, स्थायी समस्या के रूप में विद्यमान हैं जो कि हमारे राष्ट्र की एकता एवं विकास के लिए खतरा उत्पन्न कर रही हैं।

नोबल पुरस्कार प्राप्त प्रमुख अर्थशास्त्री अमृत्य सेन ने अर्थव्यवस्था एवं सामाजिक उत्तरदायित्व के मध्य समुचित सामंजस्य स्थापित करने वाली नीतियों को अपनाने पर बल दिया है। भारतीय अर्थव्यवस्था के समक्ष गरीबी एवं बेरोजगारी सर्वोच्च प्राथमिकता से निराकरण करने वाली चुनौती है, जिसका त्वरित गति से समाधान करना होग अन्यथा ये भारतीय समाज को छिन्न.भिन्न कर सकती है। मूलतः गरीबी और बेरोजगारी एक सिक्के के दो पहलू हैं। इसे हम इस तरह समझ सकते हैं : एक व्यक्ति गरीब है क्योंकि वह बेरोजगार है और वह बेरोजगार है इसलिए गरीब है भारतीय समाज के ग्रामीण एवं नगरीय परिवेश में बेरोजगारी की समस्या का समाधान करना एक महत्वपूर्ण चुनौती के साथ.साथ नैतिकता के उत्तरदायित्व को भी रेखांकित करता है। बेरोजगारी की भयावहता को दर्शाते हुए प्रमुख समाज विज्ञानी एवं अर्थशास्त्री 'जनसंख्या विस्फोट' की भाँति ''बेरोजगारी विस्फोट'' की अवधारणा पर चिन्तन कर रहे हैं। आजादी के पश्चात् भारत ने इस ओर समुचित प्रयास किए हैं। हमारे नीति निर्माताओं ने गरीबी उन्मूलन को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान की है। लाखों लोगें को रोजगार देने की व्यवस्था की है आरै तीव्र गति से बढ़ रही श्रम शक्ति के लिए रोजगार के अवसर जुटाने के प्रयास भी किए जा रहे हैं।

वर्तमान में बेरोजगारी एक गंभीर सामाजिक एवं आर्थिक समस्या है बेरोजगारी ने विकसित, अद्ध–.विकसित एवं विकासशील राष्ट्रों को किसी न किसी रूप में प्रभावित किया है। बेरोजगारी का स्वरूप अनेक प्रकार की अर्थव्यवस्थाओं में अलग–अलग रूपों में देखा जा सकता है। पूँजीवादी अर्थव्यवस्थाओं में इसकी प्रकृति साम्यवादी अर्थव्यवस्थाओं से भिन्न हो सकती है। इसी प्रकार अफ्रीका के अति पिछड़े राष्ट्रों में इसके कारण, अविकसित राष्ट्रों में व्याप्त बेरोजगारी से भिन्न हो सकते हैं। बेरोजगरी स्वयं में तो एक समस्या है ही परन्तु यह अनेक समस्याओं का कारण भी है। गरीबी, भिक्षावृत्ति, बाल.अपराध, वेश्यावृत्ति, छात्र.असंतोष, युवा आंदोलन एवं अपराध इत्यादि समस्याओं की पृष्ठभूमि में बेरोजगारी एक प्रमुख कारण है। वर्तमान में वैश्वीकरण की विचारधारा के अभ्युदय के फलस्वरूप,

विश्व के सभी राष्ट्र मिलजुलकर इस समस्या के निदान के लिए प्रयासरत हैं। प्रजातांत्रिक लोक कल्याणकारी शासन व्यवस्था बेरोजगारी को दूर करने के लिए अनेक कार्यक्रमों का नियोजन एवं क्रियान्वयन करती है।

**नोट**

स्वतंत्रता के पश्चात् से ही भारत में बेरोजगारी एक प्रमुख चुनौती के रूप में सदैव विद्यमान रही है। भारत में प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में पूर्व सिंचित (एकत्रित) बेरोजगारी का खज़ाना अत्यधिक होने के साथ.साथ निरन्तर तीव्र गति से बढ़ रहा है। सन् 1951 से 1981 की अवधि के बीच में औसतन वार्षिक रोजगार वृद्धि दर 2.1 प्रतिशत रही है और इसी अवधि के दौरान वार्षिक श्रम शक्ति की वृद्धि दर 2.5 प्रतिशत थी। बड़ी संख्या में ग्रामीण एवं नगरीय, स्त्री एवं पुरूष इस समूह में सम्मिलित हो रहे हैं। निम्न तालिका संख्या 1 विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में बेरोजगारों की संख्या में वृद्धि को प्रदर्शित करते हैं।

Rkkfydk 1

fofHkUu ipo"khZ; ;kstukvksa esa cjkstxkjh ¼fefy;u - nl yk[k½

| क्र. सं. | पंचवर्षीय योजना | योजना के प्रारंभ में बेरोजगारी | योजना के अंत तक अतिरिक्त श्रम शक्ति | योग (I+II) | नये रोजगार के अवसर | कुल रोजगार |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 1. | प्रथम योजना 1951–56 | 3.3 | 9.0 | 12.3 | 7.0 | 5.3 |
| 2. | द्वितीय योजना 1956–61 | 5.3 | 11.8 | 17.1 | 10.0 | 7.1 |
| 3. | तृतीय योजना 1962–67 | 7.1 | 17.0 | 24.1 | 14.5 | 9.10 |
| 4. | चर्तुथ योजना 1969–74 | 12.6 | 20.4 | 33.0 | 19.0 | 14.0 |
| 5. | पांचवी योजना 1974–79 | 14.0 | 22.0 | 36.0 | 15.4 | 20.10 |
| 6. | छठी योजना 1980–85 | 20.6 | 35.4 | 56.0 | 46.8 | 9.2 |
| 7. | सातवीं योजना 1986–91 | 9.2 | 39.4 | 46.6 | 40.0 | 8.10 |
| 8. | आठवीं योजना 1992–97 | 23.0 | 35.0 | 58.0 | 50.0 | 8.0 |
| 9. | नवीं योजना 1997–2002 | 8.0 | 41.0 | 49.0 | | |

Ref : Indian Economy in the Twenty First Centruy, B.N. Singh, M.P. Shrivastava - N. Prasad, 2000

## 18-2 cjkstxkjh dh vo/kkj.kk] vFkZ ,oa fo'ks"krk,¡

नोट

बेरोजगारी की अवधारणा को स्पष्ट करने से पूर्व 'रोजगार' शब्द के अर्थ को समझना उपयुक्त होग। मूलतः रोजगार शब्द से अभिप्राय किसी भी व्यवसाय से संबंधित कार्य को इस प्रकार करना है जिससे कि कार्य के प्रतिफल (परिणाम) के रूप में या तो धन (रुपये) मिल जाये अथवा उक्त कार्य के बदले न्याय सम्मत वस्तएँ, मिल जाए। इस प्रकार से अर्जित धन उन वस्तुओं तथा सेवाओं के उत्पादन से होता है जिनको बाजार में खरीदा या बेचा जा सकता हो। बेरोजगारी की अवधारणा को समझने के लिए हम प्रमुख विद्वानों द्वारा प्रस्तुत की गई विभिन्न परिभाषाओं का अवलोकन करेंगे :

- काल प्रिब्राम (Kall Pribram) us Encyclopedia of Social Sciences में लिखा है कि ''बेरोजगारी श्रम बाजार की वह ''दशा'' है जिसके अन्तर्गत श्रमशक्ति की पूर्ति कार्य करने के स्थानों की सख्ंया से अधिक होती है।''
- जी. आर. मदान का मत है कि ''जब स्वस्थ शरीर वाले से व्यक्तियों को मजदूरी के सामान्य स्तर पर कार्य नहीं मिल पाता है तो वह स्थिति बेरोजगारी की स्थिति मानी जा सकती है।''
- फेयर चाइल्ड के अनुसार : ''बेरोजगारी वह स्थिति है जिसमें सामान्य दशाओं तथा सामान्य वेतन–दर पर किसी व्यक्ति को बलपूर्वक एवं अनैच्छिक रूप से वेतन के कार्य से अलग कर दिया जाता है।''
- ए.सी. पीगू का दृष्टिकोण है कि : ''बेकारी का तात्पर्य वेतन अर्जित वर्ग में विद्यमान बेरोजगारी से है और इसका सम्बन्ध केवल मजदूरी कार्य से ही होता है।
- बैंक ऑफ बड़ौदा द्वारा सम्पादित ''वीकली रिव्यू नामक पत्रिका में बेरोजगारी को श्रम शक्ति की पूर्ति तथा श्रम शक्ति की मांग के मध्य पाए जाने वाले अन्तर को माना है।

इंटरनेट पर उपलब्ध बेरोजगारी को निम्नांकित रूप से परिभाषित किया है :

- जब पूर्व में कार्यरत श्रमिक को कार्य से हटा दिया जाता है अथवा स्वैच्छिक रूप से आर्थिक लाभप्रद रोजगर में संलग्न नहीं रहता।
- श्रमिकों का वह माप जिसमें ये (श्रमिक) कार्य तो करना चाहते हैं परन्तु इनके पास कार्य उपलब्ध नहीं है।
- बेरोजगारी उस वक्त उत्पन्न होती है जब उत्पादन के किसी भी एक साधन श्रम, भूमि, पूँजी एवं उद्यमशीलता, को वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन में नियोजित नहीं किया जाता। बेरोजगारी उस परिस्थिति में उत्पन्न होती है जब श्रम (उत्पादन के साधन के रूप में) को उपयुक्त कार्य के अभाव में पूर्ण रूप से इस्तेमाल नहीं किया जाता।
- वे लोग जो किसी कार्य में संलगन नहीं हैं परन्तु क्रियाशील रूप से कार्य करना चाहते हैं तथा इसके लिए सतत् प्रयासरत रहते हैं।
- एक ऐसी स्थिति जिसमें किसी व्यक्ति के पास उपयुक्त कार्य उपलब्ध नहीं है,

**नोट**

- बेरोजगारी किसी व्यक्ति की वह दशा होती है जिसमें वह प्रतिफल के रूप में आय प्रदान करने वाले कार्य की तलाश में रहता है परन्तु उसे उपयुक्त कार्य नहीं मिलता। बेरोजगारी के अंतर्गत पूर्णकालिक छात्र, सेवानिवृत, बच्चे अथवा वे लोग जो आय प्रदान करने वाले कार्य की तलाश नहीं करते, को सम्मिलित नहीं किया जा सकता।

## 18-3 cjkstxkjh d ie[k rÙo

उपर्युक्त वर्णित समस्त परिभाषाओं के सार रूप में बेरोजगारी के पाँच प्रमुख तत्वों की पहचान की जा सकती है। ये हैं :

(1) इच्छाशक्ति : किसी व्यक्ति की कार्य करने की चाहत।

(2) शारीरिक.मानसिक योग्यता : किसी दिए हुए कार्य को सम्पादित करने के शारी. रिक एवं मानसिक गुण। इन गुणों के अभाव में व्यक्ति कार्य नहीं कर सकता। अतः किसी व्यक्ति की कार्य करने की पूर्ण इच्छा है परन्तु योग्यता नहीं है तब हम उसे बेरोजगार नहीं कह सकते। उदाहरण के लिए शारीरिक.मानसिक रूप से पूर्ण विकलांग, दीर्घवधि की असाध्य बीमारी, अति वृद्ध तथा मानसिक रूप से स्थाई विक्षिप्त भी बेरोजगारों की श्रेणी में सम्मिलित नहीं किये जा सकते हैं।

(3) वांछित प्रयास : केवल मात्र इच्छा शक्ति तथा शारीरिक एवं मानसिक योग्यता को धारण करने के बावजूद वांछित कार्य का नहीं मिलना बेरोजगारी के अन्तर्गत सम्मिलित नहीं किया जा सकता है। शारीरिक एवं मानसिक क्षमता के अनुकूल प्रयास करने के उपरान्त भी जब किसी व्यक्ति को कार्य नहीं मिले तभी उसे बेरोजगार कहा जा सकता है, अन्यथा वह बेरोजगारी की श्रेणी में शामिल नहीं किया जा सकता है।

(4) आर्थिक ध्येय : किसी भी व्यक्ति का कार्य करने का उद्देश्य धन अर्जन करना होना चाहिए। अगर किसी व्यक्ति को अन्यत्र कहीं काम नहीं मिलता है और वह स्वयं के अथवा अपने परिवार के सदस्यों के उस कार्य को करता है जिसके करने से वह बाजार में धन अर्जित कर सकता है, ऐसी स्थिति भी बेरोजगारी की स्थिति कहलाएगी।

(5) योग्यतानुसार कार्य : किसी व्यक्ति ने इच्छा शक्ति, शारीरिक–मानसिक योग्यता के साथ–साथ वांछित प्रयास भी किए हों और उसका उद्देश्य भी धन कमाना हो, परन्तु इन समस्त गुणों के उपरान्त भी वह व्यक्ति अपनी योग्यता से निम्न श्रेणी के पद पर, कम आय में कार्य करता है तो उस व्यक्ति को आंशिक रोजगार प्राप्त व्यक्ति ही कहा जायेगा। उदाहरण के लिए किसी व्यक्ति ने व्याख्याता पद के लिए वांछित योग्यताएँ – NET (UGC), SLET (RPSC) की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली हैं तथा वह M.Phil. अथवा Ph.D. की उपाधि धारक भी है और उसे व्याख्याता की नौकरी नहीं मिल रही है तथा वह व्यक्ति स्कूल में शिक्षण का कार्य कर रहा है, तब ऐसी स्थिति को आंशिक बेरोजगारी की स्थिति के नाम से अभिहित किया जा सकता है।

नोट

प्रो. राजकृष्ण ने बेरोजगारी के चार प्रमुख आधारों की चर्चा की है। ये हैं :.1. समय, 2. आय, 3. कार्य करने की इच्छा शक्ति तथा 4. उत्पादनशीलता। इनका मत है कि एक व्यक्ति बेरोजगार अथवा आंशिक बेरोजगार तब कहा जाएगा जब वह पूर्ण रोजगार अवधि द्वारा परिभाषित अवधि से कम समय के लिए, एक साल में कम से कम वांछित आय से भी कम कमाता हो तथा वह वर्तमान में जितना कार्य कर रहा है उससे अधिक कार्य करने की इच्छा रखता हो, तब वह व्यक्ति पूर्ण रोजगार प्राप्त व्यक्ति नहीं माना जा सकता है। जिस कार्य में व्यक्ति वर्तमान में संलग्न है, यदि उसे उस कार्य से हटा दिया जाता है और इसका प्रभाव सामान्य उत्पादन पर नहीं पड़ता है तो इसका अर्थ यह है कि उस व्यक्ति की सीमान्त उत्पादकता कुछ भी नहीं है।

यहाँ पर यह उल्लिखित करना उपयुक्त होगा कि थोमस माल्थस ऐसे पहले विद्वान हैं जिन्होंने स्पष्ट रूप से बेरोजगारी को श्रम बाजार की समस्याओं से विभेदीकृत किया है और बेरोजगारी के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है।

## 18-4 cjkt xkjh dk Lo:i

1- lØe.kdkyhu@f='kd cjkt Xkkjh % बेरोजगारी की वह अवस्था जब कोई व्यक्ति एक स्थान पर किसी दिए हुए समय में किसी कार्य को पूर्ण करने के पश्चात् उसे कार्य का अभाव रहता है तथा वह अन्य स्थान पर कार्य की तलाश में क्रियाशील रहता है। बेरोजगारी की इस अवस्था को दो कार्यों के बीच की उस समय अवधि के सन्दर्भ में परिभाषित कर सकते हैं जिसमें व्यक्ति कार्य की तलाश तो करता है परन्तु कार्य उपलब्ध नहीं होता है। उदाहरण के लिये, माना कि एक व्यक्ति ने किसी कार्य स्थान से स्वेच्छा से काम करना छोड़ दिया अथवा उसे नौकरी से निकाल दिया गया हो अथवा कार्य पूर्ण हो गया हो ओर वह अन्य काम की तलाश कर रहा हो, तब हम उक्त अवधि, जिसमें उसे कार्य नहीं मिल रहा है, को संक्रमणकालीन बेरोजगारी कहेंगे। उदाहरण के लिए भवन निर्माण श्रमिक, नल–बिजली फिटिंग कारीगर।

सामान्य रूप से किसी व्यक्ति को एक काम पूरा करने के पश्चात् दूसरा काम खोजने में समय लग जाता है। इस प्रकार वह व्यक्ति दो कार्यों के मध्य त्रिशंकू की भाँति रहता है। इसे ही संक्रमणकालीन बेरोजगारी या तलाश बेरोजगरी से अभिहित किया जा सकता है। वैश्वीकरण के प्रतिस्पर्धा–युक्त वर्तमान समय में पुराने उद्योग/व्यवसाय बन्द हो जाते हैं अथवा इनमें आधुनिक तकनीकी के अनुकूल श्रमिकों की आवश्यकता होती है। पुराने व्यवसाय में संलग्न श्रमिक नए व्यवसायों को सीखने की अवधि में बेरोजगार रह सकते हैं।

2- pØh; cjkt Xkkjh % चक्रीय बेरोजगारी का सम्बन्ध व्यापारिक उतार–चढ़ाव से होता है। मंदी के दौरान श्रम शक्ति की आवश्यकता कम हो जाती है। इस प्रकार, अल्प अवधि के दौरान, श्रम शक्ति की मांग में कमी बेरोजगारी की स्थिति उत्पन्न करती है। इस प्रकार की बेरोजगारी को चक्रीय बेरोजगारी कहा जाता है। चक्रीय बेरोजगारी की अवधारणा में श्रम शक्ति की अतिरिक्त उपलब्धता का बोध निहित है।

3- lajpukRed cjkt Xkkjh % बेरोजगारी का यह स्वरूव वृहद स्थिति में देखने को मिलता है। जब नियोक्ता की आवश्यकताओं और श्रम शक्ति के मध्य अनुकूलन की स्थिति

नहीं होती। इस प्रकार की बेरोजगारी उन परिस्थितियों में भी देखने को मिलती है जब कुशल श्रमिक कार्य की खोज में संलग्न होते हैं परन्तु वांछित पद रिक्त नहीं होते। इस प्रकार की स्थिति किसी भी राज्य की तीव्र गति से रूपांतरित अर्थव्यवस्था की संरचना में वांछित रिक्तियाँ और कुशल श्रमिकों के बीच बेमेलता को प्रदर्शित करती है। संरचनात्मक बेरोजगारी पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में हो रहे आमूल–चूल परिवर्तनों का परिणाम होती है।

उदाहरण के लिए, वर्तमान संदर्भ में, जब आधुनिक पूंजीवादी व्यवस्था में तीव्र गति से तकनीकी परिवर्तन हो रहे होते हैं और उनके अनुकूल श्रम बाजार में गतिशीलता का अभाव होता है, तब बेरोजगारी का जो स्वरूप देखने को मिलता है उसे सरंचनात्मक बेरोजगारी की अवधारणा से अभिहित किया जाता है। 'तकनीकी बेरोजगारी' जो कि मानव श्रम की अपेक्षा रोबोट पर आधारित होती है, को संरचनात्मक बेरोजगारी में सम्मिलित किया जा सकता है। इसी प्रकार ''मौसमी बेरोजगारी'' भी संरचनात्मक बेरोजगारी का ही एक स्वरूप है, क्योंकि यह बेरोजगारी भी विशिष्ट प्रकार के कार्यों से सम्बद्ध होती है। उदाहरण के लिए, निर्माण कार्य, खेतों में कार्य करने वाले प्रवासी श्रमिक इत्यादि।

**4- vko`r@iPNUu@fNih cjkstXkkjh %** आवृत अथवा प्रच्छन्न बेरोजगारी उन सम्भावित श्रमिकों को दर्शाती है जिन्हें शासकीय (Official) बेरोजगारों को प्रदर्शित करने वाले साख्यंकीय आकंड़ों में दर्शाया नहीं जा सकता। अनेक देशों में वे व्यक्ति जिनके पास करने के लिए कोई कार्य नहीं है परन्तु सक्रिय रूप से किसी कार्य की खोज में जुटे हुए हैं, को बेरोजगारों की सूची में सम्मिलित किया जाता है परन्तु जिन्होंने काम खोजने की तलाश को बंद कर दिया है, को भी शासकीय (Officials) रूप से बेरोजगारों की श्रेणी में नहीं रखा जाता।

इस प्रकार की बेरोजगारी का स्वरूप उन लोगें में भी देखने को मिलता है जो समय से पहले रिटार्यमेंट (सेवा मुक्ति) इस कारण से ले लेते हैं कि उनके नियोक्ता उन्हें कार्य छोड़ने के लिए कह सकते हैं या बाध्य कर सकते हैं, परन्तु ये लोग कार्य करना पसदं करते हैं। इसी प्रकार हम देखते हैं कि साख्यंकीय आकंड़े अल्प बेरोजगारी (Under employment) की भी गणना नहीं करते हैं। अल्प बेरोजगारी से तात्पर्य मौसमी कार्य (Seasonal job) अथवा आंशिक समय कार्य (Part time job) करने से है। अल्प रोजगारी में व्यक्ति कछु समय की अवधि में ही कार्य करता है।

**5- rduhdh cjkstXkkjh %** समाज में तकनीकी बेरोजगारी उस स्थिति में होती है जब नवीन खोजों एवं आविष्कारों के फलस्वरूप मानव श्रम का उपयोग घट जाता है। उत्पादन से संबंधित अनेक कार्य स्वचालित मशीनों एवं रोबोट के द्वारा किए जाते हैं तथा इसमें संलग्न श्रमिकों की संख्या कम हो जाती है। आधुनिक वैश्वीकरण के दौर में श्रमिकों को इस स्थिति का सामना करना पड़ रहा है जिसके परिणाम स्वरूप बेरोजगारी की समस्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। नए आविष्कार पुराने उद्योगें एवं व्यवसायों को बन्द करके बेरोजगारी की समस्या को जटिल बना देते हैं तथा नए बाजारों के क्षेत्रों को समाप्ति के कगार पर पहुँचा देते हैं। तथापि नवीन प्रौद्योगिक क्रान्तियाँ एवं खोजें एक नए व्यवसाय एवं रोजगार का सृजन तो अवश्य करते हैं, परन्तु इस प्रकार की मशीनीकृत क्रान्तियाँ, रोजगारी एवं बेरोजगारी दोनों को जन्म देती है। बड़े एवं आधुनिक उद्योगों की स्थापना कुटीर एवं हाथकरघा उद्योगों में कार्यरत श्रमिकों के सामने बेरोजगारी की समस्या

को जन्म देते हैं। उद्योगें में नवीन तकनीकी का अभिनव प्रयोग गला–काट प्रतिस्पर्धा एवं समयत्र पर उद्योग जगत में आर्थिक मन्दी के कारण भी बेरोजगारी की समस्या विकराल रूप धारण कर लेती है।

नोट

6- vLFkk;h cjkstXkkjh % अस्थायी बेरोजगारी का सामना उन शिक्षित एवं प्रशिक्षित व्यक्तियों को करना पड़ता है जिन्हें अपनी शिक्षा एवं प्रशिक्षण समाप्त करने के तत्काल बाद रोजगार उपलब्ध नहीं होता। रोजगार प्राप्त होने तक ये लोग अस्थायी रूप से बेरोजगारी का सामना करते हैं। उदाहरण के लिए B.Ed. की डिग्री मिलने के पश्चात् शिक्षक की नौकरी नहीं मिलने के कारण इस डिग्री के धारकों को अस्थायी बेरोजगारी की स्थिति से गुजरना पड़ता है। नौकरी मिलने के पश्चात् यह बेरोजगारी स्वतः ही समाप्त हो जाती है।

7- ,fPNd cjkstXkkjh % ऐच्छिक बेरोजगारी की स्थिति तब उत्पन्न होती है जब कोई व्यक्ति वांछित क्षमताओं एवं गुणों के होने के उपरान्त भी आलस्यवश कम वेतन या वेतन में कटौती इत्यादि कारणों से कार्य करना नहीं चाहता है तो उसे ऐच्छिक बेरोजगार माना जाएगा।

8- f'kf{kr cjkstXkkjh % शिक्षा एवं वांछित प्रशिक्षण प्राप्त करने के पश्चात् भी जब व्यक्ति बेरोजगार होता है तब इस प्रकार की बेरोजगारी को शिक्षित बेरोजगारी की अवधारणा से रेखांकित किया जाता है। उदाहरण के लिए B.A., M.A., B.Ed., NET, SLET, MBBS या B.E. करने के पश्चात् किसी व्यक्ति का बेरोजगार होना शिक्षित बेरोजगारी के अन्तर्गत समाहित किया जायेगा। शिक्षित बेरोजगारी की अवधारणा अस्थाई बेरोजगारी की अवधारणा के बोध से सामिप्य रखती है।

## 18-5 cjkstXkkjh dk izeq[k dkj.k

इलियट एवं मेरिल ने अपनी पुस्तक 'Social Disorganization' में बेरोजगारी के कारणों को दो प्रमुख भागों में विभाजित किया है .

1. व्यक्तिगत कारण
2. अवैयक्तिक कारण

1- 0;fDrxkr dkj.k % इलियट एवं मेरिल ने बेरोजगारी के व्यक्तिग्त कारणों में किसी व्यक्ति की शारीरिक व मानसिक अक्षमता को उत्तरदायी माना है। व्यक्तिग्त कारणों में आयु, व्यावसायिक उपयुक्तता तथा बीमारी एवं शारीरिक अक्षमता को सम्मिलित किया जाता है।

प्रस्तुत अध्याय में हम बेरोजगारी के अवैयक्तिक कारणों पर विस्तार से चर्चा करेंगे।

2- vo;fDrd dkj.k %

1. tula[;k of) % भारत में बेरोजगारी का सबसे महत्वपूर्ण कारण जनसंख्या का विस्फोटक गति से बढ़ना है। जिस अनुपात में भारत में जनसंख्या की वृद्धि होती है उसी अनुपात में रोजगार के अवसर नहीं बढ़ते क्योंकि रोजगार के अवसरों, यथा– नये उद्योग, व्यवसाय, नौकरियाँ इत्यादि की स्थापना में कुछ समय लगता है। इस प्रकार जनसंख्या वृद्धि ओर रोजगार के अवसरों के मध्य एक अंतर स्थापित हो जाता है, जिसकी भरपाई करना लगभग असंभव सा है।

नोट

2. tyok;q ,oa ikdfrd vkinkvksa % भारत कृषि प्रधान देश है। भारतीय कृषि मानसून की वर्षा पर निर्भर करती है तथा मानसून की अनिश्चित एवं अनियमितता के फलस्वरूप फसल नष्ट हो जाती है। प्राकृतिक रूप से अतिवृष्टि, अनावृष्टि, चक्रवात, ओले पड़ना, शीत लहर, टिड्डियों का हमला, विषाणुओं का आक्रमण इत्यादि कारण कृषि–उत्पादन को गभींर रूप से प्रभावित करते हैं जिसके कारण किसानों को गरीबी एवं बेरोजगारी का सामना करना पड़ता है।

3. Hkwfe dk lhfer vkdkj % जनसंख्या वृद्धि के फलस्वरूप प्रति व्यक्ति कृषि योग्य भूमि में निश्चित रूप से कमी हो जाती है। बटवारे के कारण भी कृषि–जोत में कमी आती है, जिसके परिणामस्वरूप भूमि का सीमित भाग अपनी क्षमता के अनुरूप उत्पादन नहीं दे पाता। भूमि पर परिवार के सभी सदस्य कार्य करते हैं जो कि प्रच्छन्न बेरोजगारी को प्रश्रय प्रदान करते हैं।

4. df"k dk fiNMkiu % भूमि का सीमित आकार एवं परम्पराग्त सांस्कृतिक मूल्यों एवं आर्थिक सीमाओं (गरीबी) के कारण खेतों पर कृषि परम्पराग्त औजारों एवं यन्त्रों की सहायता से की जाती है। गरीबी और अशिक्षा के कारण भारतीय किसान उन्नत किस्म की तकनीकों एवं वैज्ञानिक विधियों से अपरिचित रहता है, जिससे कृषि उत्पादन में वांछित वृद्धि नहीं हो पाती। कृषि का पिछड़ापन बेरोजगारी को उत्पन्न करता है।

5. nks"k;qDr Hkwfe 0;oLFkk % सैकड़ों वर्षों से भारत में दोषयुक्त भूमि व्यवस्था चली आ रही है। वर्तमान समय में समाज के अल्पसंख्यक लोगें के पास उपजाऊ युक्त अधिक भूमि है तथा अधिसंख्यक कृषक मजदूर भूमि विहिन हैं। बड़े.बड़े भू–स्वामी वैज्ञानिक पद्धतियों का सहारा लेकर कृषि उत्पादन करते हैं जिसके कारण कृषि मजदूर बेरोजगारी की समस्या से पीड़ित हो जाते हैं।

6. vfodfl r m|kXk tXkr % भारत तीव्र गति से औद्योगिक विकास के लिए दृढ़ संकल्प है परन्तु विस्फोटक गति से बढ़ती जनसंख्या के अनुपात में उद्योग जगत की प्रगति नहीं हो रही, जिससे कि बढ़ती जनसंख्या के लिए रोजगार के पर्याप्त अवसर सृजित नहीं हो पा रहे। वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास ने बेरोजगारी के संदर्भ में कोढ़ में खाज का काम किया है। बड़ी–बड़ी फेक्ट्रियाँ एवं उद्योग धन्धे नग्रों तक सीमित हो गये हैं। काम करने की इच्छा से ग्रामीण समुदाय शहरों में पलायन करता है जो कि श्रम की पूर्ति बढ़ा देता है। श्रमिकों की बेतहाशा वृद्धि के कारण सभी इच्छुक श्रमिकों को रोजगार उपलब्ध नहीं हो पाता।

7. Jfedksa esa n{krk dk vHkko % वर्तमान समय में जिस तीव्र गति से आविष्कार, खोजें एवं तकनीकी विकास हो रहा है, उसी के अनुरूप वांछित प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना नहीं हो पा रही, जिससे कि उद्योगें में दक्ष एवं कुशल कारीगरों का अभाव रहता है, इसी कारण अकुशल श्रमिकों को उद्योगें एवं तकनीकी के क्षेत्र में रोजगार नहीं मिल पाता और बेरोजगारी का सामना करना पड़ता है।

8. ikjEifjd eY; ,oa Xfr'khyrk dk vHkko % भारतीय संस्कृति प्रधानतः स्थानीयता, पारम्पारिकता, नातेदारी, प्रान्तीयवाद, भाषा एवं धर्म के मूल्यों से गूंथे हुए संरचित तानेबाने के जैसी है। इस तानेबाने को तोड़कर बाहर निकलना,

भारतीय जनमानस के लिए एक गंभीर चुनौती है। भारतीय लोग अर्थ अभाव की मानसिकता में जीवनयापन करना पसन्द करते हैं तथा धनोपार्जन के लिए दूरस्थ क्षेत्रों में कार्य करने की उपेक्षा करते हैं। इस कारण परम्पराग्त सांस्कृतिक मूल्य बेरोजगारी को प्रश्रय प्रदान करते हैं।

**नोट**

9. ओद्यौगिक जगत में अभिनव प्रयोग एवं आधुनिक क्रान्तिकारी तकनीकी की स्था. पना।
10. हाथकरघा एवं कुटीर उद्योगें का पतन एवं सार्वभौमिक शिक्षा का अभाव।
11. गैर व्यावसायिक शिक्षा दोषयुक्त शिक्षा प्रणाली।
12. उद्योग जगत् की अस्थिरता के कारण श्रम की माँग व पूर्ति में असन्तुलन।
13. व्यवसाय एवं उद्योग धन्धों में मौसम का प्रभाव।
14. उत्थान एवं पतन युक्त व्यापारिक चक्र।
15. व्यापारिक जगत् एवं औद्योगिक जगत् में अनकुलूनशीलता एवं सामजंस्य का अभाव।
16. विभिन्न उद्योग एवं व्यापारों के मध्य पारस्परिक निर्भरता।
17. उद्योग एवं व्यापारिक जगत् के उन्नयन के लिए वांछित पूंजी का अभाव।
18. वस्तुओं की माँग एवं पूर्ति का समय एवं स्थान सापेक्षिक होना।
19. दोषयुक्त कर प्रणाली।
20. भिन्न–भिन्न राजनीतिक दलों की सरकारों की अलग.अलग औद्योगिक नीतियाँ।
21. औद्योगिक जगत् में तनाव, हड़ताल एवं तालाबन्दी।

योजना आयोग ने बेरोजगारी के प्रमुख रूप से निम्नांकित कारण बताये हैं :

1. जनसंख्या में तीव्र गति से वृद्धि होना।
2. हाथकरधा, ग्रामीण एवं कुटीर व्यवसायों का पतन।
3. शरणार्थियों की समस्या।
4. कृषि के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों का अनुपयुक्त विकास।
5. कृषि क्षेत्र में पारम्परिक एवं गैर–वैज्ञानिक पद्धतियों का प्रचलन।

## 18-6 cjkstXkkjh dk nq"iHkko

बेरोजगारी एक ऐसा अभिशाप है जो अन्य सामाजिक एवं आर्थिक बुराइयों को जन्म देती है। समस्त सामाजिक दुष्परिणामों का कारण गरीबी है और इस गरीबी का मूल कारण बेरोजगारी है। बेरोजगार व्यक्ति मानसिक हीनता की भावना का शिकार होता है तथा उसकी समाज में प्रतिष्ठा धूमिल हो जाती है, रिश्तेदार, आस–पड़ौस तथा परिवार के सदस्य बेरोजगर व्यक्ति को उचित सम्मान नहीं प्रदान करते। बेरोजगारी पराश्रितता एवं गरीबी को बढ़ावा देती है तथा व्यक्ति में आक्रामक प्रवृत्ति एवं तनावयुक्त प्रकृति को जन्म देती है। वैयक्तिक असंतोष एवं दुशचिन्तायें पारिवारिक तनाव को पैदा करती हैं और दीर्घ

नोट

अवधि में ये स्थितियाँ राजनैतिक उथल–पुथल एवं क्रान्तिकारी स्थितियों को जन्म देती है। प्रधानतः बेरोजगारी के निम्नांकित दुष्प्रभाव समाज में देखने को मिलते हैं :

1- cjkstXkkjh ,o o;fDrd fo?kVu % बेरोजगारी की अवस्था में बेरोजगार व्यक्ति को समाज में उपयुक्त सम्मान नहीं मिलता तथा उसके व्यक्तित्व में चिड़चिड़ापन तनाव समाहित हो जाता है। औद्योगिक जगत् में मन्दी के दौरान सम्पत्ति सम्बन्धी अपराधों की वृद्धि हो जाती है तथाा बेरोजगारी की अवस्था में भिक्षावृत्ति, गुण्डागिर्दी, आवारागिर्दी को बढ़ावा मिलता है। विवाहों की दर घट जाती है एवं अनैतिक सम्बन्धों का समाज में प्रचलन होने लग्ता है तथा मानसिक रोगियों की संख्या भी बढ़ जाती है। बेरोजगारी से व्यक्ति के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। उसके मस्तिष्क में विकृत दृष्टिकोण पनपने लग्ता है एवं कार्यक्षमताओं में कमी होने लग्ती है। व्यक्ति अपनी असफलता एवं बेरोजगारी का जिम्मेदार समाज को मानता है। बेरोजगारी की अवस्था में व्यक्ति ऋणग्रस्तता का शिकार भी हो जाता है।

वैयक्तिक विघटन के दृष्टिकोण से बेरोजगार व्यक्तियों को चार भागें में विभाजित किया जा सकता है :

(अ) शिक्षण एवं प्रशिक्षण समाप्त करने वाले नवयुवक, जिन्हें वांछित योग्यता एवं उपाधि प्राप्त करने के बाद तत्काल कार्य नहीं मिलता, जिसके कारण उनमें निराशा की भावना का प्रादुर्भाव होने लग्ता है। अगर सही समय पर इन नवयुवकों को कार्य नहीं मिलता तो ये गैर.सामाजिक गतिविधियों में संलग्न हो जाते हैं।

(ब) किन्हीं कारणवश जब कोई व्यक्ति बेरोजगार हो जाता है तब उसे एवं उसके परिवार को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। ये व्यक्ति बीमारी एवं मानसिक विकार से ग्रसित हो जाते हैं तथा अपने परिवार के लालन.पालन के लिए ऋण एवं उधारी से अपना घर चलाते हैं तथा सामाजिक एवं नैतिक दृष्टि से अवांछित एवं अनुचित कार्य करने लगते हैं।

(स) पाश्चात्य देशों में वृद्धावस्था में व्यक्ति को भोजन एवं रूगणता की स्थिति में दवाओं की व्यवस्था की चिन्ता सताने लगती है, जिसके परिणाम घातक होते हैं। वृद्धा व्यक्ति मानसिक रूगणता के कारण आत्म.हत्या तक कर लेते हैं। इस प्रकार शारीरिक अक्षमता के कारण ये बेरोजगारी की अवस्था का सामना करते हैं तथा इनका वैयक्तिक विघटन तीव्र गति से होता है।

(द) मन्दीकाल के दौरान जब किसी व्यक्ति को अपनी योग्यता के अनुसार कार्य नहीं मिलता, तब वह अनेक मानसिक विकृतियों का शिकार हो जाता है जो कि उसके व्यक्तित्व में विघटन की प्रवृत्तियों को जन्म देता है। आर्थिक मन्दी के दौरान श्रमिकों को कम वेतन मिलता है जिससे उनका एवं उनके परिवार का उचित लालन–पालन, शिक्षा एवं चिकित्सा का प्रबन्ध नहीं हो पाता, जो कि कर्ता पर अतिरिक्त मानसिक दबाव डालता है। इसके कारण परिवार का रोजगार युक्त मुखिया मानसिक विघटन का शिकार हो जाता है।

2- ikfjokfjd fo?kVu ,o cjkstXkkjh % बेरोजगारी एक सामाजिक तथ्य है जिसका विघटनकारी प्रभाव परिवार पर पड़ता है। बेरोजगारी की स्थिति में पारिवारिक

नोट

जमा पूँजी समाप्त हो जाती है, जमीन–गहने इत्यादि गिरवी रख दिये जाते हैं या बेच दिये जाते हैं तथा परिवार ऋणग्रस्तता का शिकार हो जाता है। परिवार के भरण–पोषण की समस्या उत्पन्न होने लगती है तथा परिवार के बीमार सदस्यों की उचित चिकित्सकीय सेवायें नहीं हो पाती हैं। बच्चों की शिक्षा–दीक्षा में प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है तथा उन्हें भी आय–अर्जन करने के लिए किसी न किसी कार्य में संलग्न होना पड़ता है। परिवार के सफल संचालन के लिए माता.पिता दोनों को ही अर्थोपार्जन हेतु घर से बाहर जाना पड़ता है, ऐसी स्थिति में बच्चे आवारा हो जाते हैं। वे अनैतिक कार्य करने लग्ते हैं तथा समाज विरोधी गतिविधियों में संलग्न हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त परिवार की स्त्रियाँ भरण–पोषण के लिए वैश्यावृत्ति का सहारा भी ले लेती हैं। पारिवारिक सदस्यों में तनाव एवं संघर्ष की स्थिति पैदा हो जाती है। कई बार परिवार के समस्त सदस्य आत्महत्या तक कर लेते हैं।

3 lkekftd fo?kVu ,oa cjkstxkjh % बेरोजगारी के परिणामस्वरूप सामाजिक संरचना में अव्यवस्था पनपने लग्ती है जो अन्ततोगत्वा समाज के विघटन के लिए उत्तरदायी होता है। परिवार एवं समुदाय के लोगें के सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों में धीरे–धीरे पतन होने लगता है तथा समाज में अनेक सामाजिक समस्याओं का प्रचलन भी बढ़ जाता है। उदाहरण के लिए बेरोजगारी की दशा में भ्रष्टाचार, बेईमानी, रिश्वतखोरी, व्यभिचार, वैश्यावृत्ति, भिक्षावृत्ति इत्यादि सामाजिक समस्याओं का प्रचलन बढ़ जाता है।

4 cjkstxkjh ,oa tuLokLF; % बेरोजगारी की अवस्था में व्यक्ति के स्वास्थ्य में गिरावट आने लगती है। आमजन में सामान्य रूप से विद्यमान बेरोजगारी की स्थिति के कारण इनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

अर्थाभाव के कारण स्वास्थ्यप्रद आवासीय व्यवस्था नहीं हो पाती एवं व्यक्ति सीलनयुक्त गन्दी बस्तियों में निवास करते हैं जिसके कारण उनके व उनके परिवार के सदस्यों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। ये लोग रूग्ण अवस्था में वांछित दवाओं एवं अन्य सुविधाओं को जुटाने में असमर्थ हो जाते हैं तथा शीघ्र ही मृत्यु दर में इजाफा करवाने में सहायक सिद्ध होते हैं।

बेरोजगारी जनित अन्य सामाजिक समस्याएँ निम्नांकित हैं :

1. नैतिक एवं चारित्रिक पतन एवं बेरोजगारी
2. आर्थिक दुष्प्रभाव (गरीबी, ऋणग्रस्तता, उद्योगों का पतन आदि) एवं बेरोजगारी
3. राजनैतिक विद्रोह एवं क्रान्तियों का जन्म एवं बेरोजगारी
4. सांस्कृतिक परम्पराओं एवं मूल्यों का पतन एवं बेरोजगारी

## 18-7 cjkstxkjh nj djus gsrq fofHkUu ipo"kh; ;kstukvksa dk iz;kl

प्रथम पंचवर्षीय योजना में भारत में बेरोजगारी की समस्या के निराकरण हेतु वांछित प्रयास नहीं किया गया। सन् 1953 में योजना आयोग ने बेरोजगारी की समस्या की गंभीरता को समझते हुए इसके निराकरण हेतु 300 करोड़ रुपये से ऊपर खर्च करने के प्रावधान रखे। योजना आयोग ने रोजगार प्रदान करने के लिए 11 सूत्रीय कार्यक्रम रखा, जिसके अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षा देने की सुविधाए लघु उद्योगों एवं व्यवसायों के लिए आर्थिक सुविधा आदि कार्य सम्मिलित किये गये। इस योजना में 75 लाख लोगें को कार्य

नोट

देने का लक्ष्य रखा गया, परन्तु लगभग 54 लाख लोगें को ही काम दिया जा सकता। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में नये बेरोजगार समूह को रोजगार देने का लक्ष्य रखा गया और पुराने बेरोजगारों के लिए अलग से योजना बनाने हेतु कहा गया। तृतीय पंचवर्षीय योजना में जनसंख्या वृद्धि के कारण बेरोजगारी की समस्या ने गंभीर रूप ले लिया। इस योजना के अन्तर्ग्त रोजगर की सुविधा प्रदान करने के लिए औद्योगिकीकरण के लिए व्यापका कार्यक्रम चलाये गये लेकिन अथक् प्रयासों के बावजूद 2 करोड़ 30 लाख लोगें को ही रोजगार दिया जा सका।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में गैर कृषि कार्य में वृद्धि करने, कृषि का तीव्र विकास करने, ग्रामीण विद्युतीकरण, शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवार–नियोजन, खनिज एवं निर्माण उद्योग आदि क्षेत्रों में विस्तार करने का प्रावधान रखा गया। सन् 1971 में क्रेश योजना के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगर प्रदान करने की योजना प्रारम्भ की गई। इस योजना में प्रत्येक जिले के 1000 लोगें को प्रतिवर्ष 10 महीने तक कार्य देने का प्रावधान किया ग्या। इस योजना के अन्तर्ग्त बेरोजगारों को मुख्यतः सड़क निर्माण, नालियाँ बनाना, लघु सिंचाई योजना इत्यादि योजनाओं में लगाया गया।

पाँचवी पंचवर्षीय योजना में निर्धनता एवं बेरोजगारी की समस्या का निराकरण करने हेतु बड़े पैमाने पर रोजगार उपलब्ध करवाने का प्रावधान रखा ग्या। पाँचवी पंचवर्षीय योजना में निम्नलिखित सेवा क्षेत्रों के विस्तार की व्यवस्था की गई :

(1) भू–संरक्षण

(2) दुग्ध शालाओं का विकास

(3) पशुपालन

(4) वन विकास

(5) मछली पालन

(6) कृषि एवं लघु उद्योग विस्तार

(7) सड़क निर्माण आदि।

इसी योजना के अन्तर्ग्त शिक्षित बेरोजगार, इंजीनियर एवं कृषि विशेषज्ञों को ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में रोजगार प्रदान करने के वांछित संसाधन उपलब्ध कराने की व्यवस्था की ग्ई।

**TRYSEM (Training of Rural Youth Self-Employment) :** इस योजना का शुभारम्भ 15 अग्स्त 1979 को किया ग्या। इसके अन्तर्ग्त ग्रामीण युवकों को रोजगार प्रदान करने के लिए तकनीकी प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की ग्ई। इस योजना के द्वारा प्रत्येक वर्ष में प्रत्येक ब्लॉक से 40 युवकों को प्रशिक्षण देकर कुल मिलाकर 2 लाख युवकों को प्रशिक्षण देने का लक्ष्य रखा गया।

jk"Vªh; Xkkeh.k jkstxkj dk;ZØe % 'काम के बदले अनाज योजना' को 1981 में इस नाम से रूपान्तरित किया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य खाली समय में ग्रामीण श्रमिकों को अतिरिक्त रोजगार प्रदान करना है। इसमें केन्द्र एवं राज्य सरकारें बराबरी का खर्चा वहन करती हैं।

## 18-8 cjkstXkkjh nj djus ds nh?kZdkfyd ,oa vYidkfyd mik;

नोट

### 1- nh?kZdkfyd mik; %

1. विस्फोटक रूप से बढ़ती हुई जनसंख्या का प्रभावशाली ढंग से नियन्त्रण किया जाना चाहिये। इसके लिए परिवार नियोजन के कार्यक्रमों को प्रभावशाली तरीकों से लागू किया जाना चाहिए।
2. देश में आर्थिक विकास की गति को तीव्र किया जाना चाहिए। इसके अन्तर्गत औद्योगिकीकरण की रफ्तार को तीव्र करना, शिक्षित बेरोजगारों को काम में लगाना तथा कृषि उत्पादन में वृद्धि पर जोर दिया जाना चाहिए।
3. निर्माण कार्य में वृद्धि किया जाना चाहिए। शिक्षा प्रणाली में वांछित सुधार कार्यक्रम लागू किया जाना चाहिए।
4. शिक्षा तथा रोजगार के मध्य रोजगार परक समन्वय स्थापित किया जाना चाहिए।
5. युवा एवं बेकार जनशक्ति को तकनीकी के अनुकूल प्रशिक्षण दिया जाना चाहिये।
6. भारतीय सामाजिक संरचना में निहित उन बुराइयों को समाप्त करने के प्रयास किये जाने चाहिये, जिनके कारण बेरोजगारी जन्म लेती है। श्रमिकों में गतिशीलता उत्पन्न करने के लिए जाति प्रथा एवं छुआछूत सम्बन्धी नियमों का कठोरता से पालन किया जाना चाहिए। उपयुक्त औद्योगिक तकनीकी एवं कम्प्यूटरीकृत शिक्षा से श्रमिकों को अवगत कराना चाहिए।

### 2- vYidkyhu mik; %

1- **gLrf'kYi ,oa dqVhj m|ksxksa dks leqfpr izksRlkgu ,oa mudk fodkl %** भारत एक कृषि प्रधान देश है तथा बहुसंख्यक आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है जहाँ बेरोजगारी की समस्या भयावह रूप से पाई जाती है। अतरू ग्रामीण क्षेत्रों में मिट्टी, चमड़ा, कताई, बुनाई से सम्बन्धित हाथ करधा उद्योग में को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त उन उद्योगें को भी प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए, जो कृषि व्यवस्था के अन्तर्गत सहज रूप से लगाये जा सकते हों, जैसे – मुर्गी पालन, मत्स्य पालन, पशु पालन, गैशाला की स्थापना, मधुमक्खी पालन, सूअर एवं बकरा–बकरी पालन इत्यादि।

2- **l?ku [ksrh dks izksRlkgu %** उन्नत खाद–बीज एवं फसल रघक दवाओं का सदुपयोग कर अत्यधिक मात्रा में फसल उगई जा सकती है। फल सब्जी एवं बागवानी को भी प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

## 18-9 'kkjhfjd ,oa ekufld dfe;ksa ds fujkdj.k ds mik;

व्यक्तिगत शारीरिक एवं मानसिक कमियों को समाप्त करने के लिए निम्नांकित प्रयास किये जा सकते हैं :.

**(i)** समुचित वेतन व्यवस्था का प्रबन्ध।

**(ii)** व्यावसायिक शिक्षा एवं रोजगरोन्मुख कार्यक्रमों की स्थापना।

**नोट**

**(iii)** शारीरिक रूप से विकलांग लोगों के लिए पुनर्वास की सुविधाएं।

**(iv)** चिकित्सकीय सुविधाओं की आमजन को उपलब्धता।

**(v)** श्रमिकों को मुआवजा एवं क्षतिपूर्ति की समुचित व्यवस्था।

**(vi)** वृद्ध लोगों को उनकी योग्यता एवं क्षमता के अनुरूप रोजगार प्रदान करना।

**(vii)** नवयुवकों को अध्ययन के दौरान व्यावसायिक प्रशिक्षण की व्यवस्था करना तथा रोजगार के अवसरों की जानकारी उपलब्ध कराना।

**(viii)** सामाजिक सुरक्षा के कार्यक्रमों का सफल रूप से संचालन, इसमें पेंशन व्यवस्था, बेरोजगारी भत्ता, रूगणता में निःशुल्क चिकित्सा सुविधा, सार्वजनिक बीमा आदि।

**(ix)** भूमि सुधार से सम्बन्धित कानूनों को लागू करवाना।

**(x)** भूदान कार्यक्रमों को प्रोत्साहन देना।

## 18-10 Hkxorh lfefr d l|>ko

भारत में व्याप्त बेरोजगारी की समस्या के समाधान हेतु 'भगवती समिति' की स्थापना 1970 में की गई थी, जिसने इस समस्या के समाधान हेतु निम्नलिखित अल्पअवधि के सुझाव प्रस्तुत किये थे :

1. कृषि सेवा केन्द्रों की स्थापना करना।
2. ग्रामीण विद्युतीकरण को द्रुतगति से क्रियान्वयन करवाना।
3. ग्रामीण क्षेत्रों में सड़क निर्माण के लिए अधिक से अधिक धनराशि की व्यवस्था करवाना।
4. ग्रामीण क्षेत्रों में आवास एवं वित्त निगम की स्थापना करवाना।
5. लघु सिंचाई योजनाओं का विस्तार करना।
6. प्राथमिक शिक्षा के कार्यक्रमों का विस्तार करना।
7. ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल की समुचित व्यवस्था करना।
8. लघु एवं सीमान्त कृषकों को हाथकरघा एवं कुटीर उद्योगें की स्थापना हेतु न्यूनतम ब्याज दर पर आर्थिक सहायता उत्पन्न कराना।
9. ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में नवयुवकों को उद्योग एवं व्यवसायों की स्थापना हेतु सरकार द्वारा कम ब्याज दर पर ऋण की समुचित व्यवस्था करवाना।
10. निरक्षरों को साक्षर करने के लिए ग्रामीण स्तर पर व्यावहारिक योजनाओं का क्रियान्वयन करना।

## 18-11 jk"Vh; Xkkeh.k jktXkkj XkkjUVh ;ktuk

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारन्टी अधिनियम, 2005 भारत सरकार द्वारा दिनांक 2 फरवरी 20010 से देश के 200 व राजस्थान के छह जिलों में क्रियान्यवन किया जा रहा है। 1 अप्रेल 2008 से सम्पूर्ण भारत में इसे लागू किया गया है। इस अधिनियम का उद्‌देश्य

प्रत्येक वित्तीय वर्ष में प्रत्येक ग्रामीण परिवार, जिसके वयस्क सदस्य अकुशल शारीरिक कार्य करने के इच्छुक हों, को कम से कम 100 कार्य दिवसों का मजदूरी रोजगार प्रदान करके ग्रामीण क्षेत्रों के परिवारों को आजीविका की सुरक्षा प्रदान करना है। इस अधिनियम के उद्देश्य हैं :

नोट

1. ग्रामीण परिवारों को अकुशल शारीरिक श्रम वाले कार्यों में गारंटीशुदा मजदूरी योजना मुहैया कराकर उनके जीवनयापन को सुरक्षा प्राप्त होगी।
2. गांवों में स्थायी सामुदायिक परिसम्पत्तियों का सृजन हो पाएगा, जो ग्रामीण गरीबों के आजीविका संसाधन आधार को सुदृढ़ बनाएगी।
3. पंचायती राज संस्थाओं को वित्तीय एवं प्रशासनिक रूप से अधिकार सम्पन्न बनाया जाएगा।

## 18-12 jk"Vªh; Xkkeh.k jkstxkj XkkjaVh vf/kfu;e] 2005

1 प्रत्येक ग्रामीण परिवार को एक वित्तीय वर्ष में अपने ही स्थान पर 100 दिनों के गारंटीशुदा रोजगार के माध्यम से अपनी आजीविका का अधिकार होगा।

2 प्रत्येक ग्रामीण परिवार को सरकार से 100 दिनों का रोजगर मांगने का अधिकार होगा।

3 यदि राज्य सरकार किसी परिवार की मांग पर उसे 100 दिनों का रोजगार उपलबध करा पाने में असफल रहती है तो वह बेरोजगारी भत्ते के संबंध में निर्धारित दरों के अनुसार परिवार की हकदारी के हिसाब से पात्र आवेदकों को मुआवजे का भुगतान करेगी।

4 इस योजना में महिलाओं को रोजगार के आवंटन में प्राथमिकता दी जायेगी और एक तिहाई रोजगार उन्हें ही उपलब्ध कराए जायेंगे।

5 सभी स्तरों पर पंचायतें योजना के नियोजन एवं कार्यान्वयन में निर्णायक भूमिका निभाएगी।

6 योजना के अन्तर्गत कार्य स्थल पर अनेक सुविधायें प्रदान की जाएगी।

इसके अलावा कार्य स्थल पर घायल होने के मामले में निःशुल्क चिकित्सा का और श्रमिकों की मृत्यु या स्थायी रूप से विकलांग होने के मामले में मुआवजे का प्रावधान है। इस योजना का महत्वपूर्ण उद्देश्य टिकाऊ परिसम्पत्तियों का सृजन करना है और ग्रामीण गरीबों के जीविकोपार्जन के संसाधन आधार को सुदृढ़ करना है ताकि ग्रामीण गरीब के पास भविष्य में भी जीवन निर्वाह के साधन उपलब्ध हो सकें।

इस योजना के अन्तर्गत प्राथमिकता के क्रम में निम्नलिखित कार्य लिए जा सकते हैं :

(क) जल संरक्षण एवं जल संग्रहण

(ख) सूखा रोधन जिसमें वनरोपण एवं वृक्षारोपण कार्य शामिल हैं।

(ग) सिंचाई नहरें जिसमें सूक्ष्म एवं लघु सिंचाई कार्य शामिल हैं।

नोट

(घ) अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के परिवारों के स्वामित्व की भूमि अथवा भूमि सुधार के लाभार्थियों अथवा इंदिरा आवास योजना के लाभार्थियों की भूमि के लिए सिंचाई सुविधाएँ।

(ड़) पारम्परिक जल स्रोतों का नवीनीकरण, जिसमें तालाबों से गाद निकालना शामिल है।

(च) भूमि विकास।

(छ) बाढ़ नियन्त्रण व बचाव के कार्य व जल–अवरूद्ध क्षेत्रों में जल निकास कार्य।

(ज) बारहमासी सड़क सम्पर्क प्रदान करने के लिए ग्रामीण सड़कें।

(झ) कोई अन्य ऐसा कार्य जिसे केन्द्र सरकार राज्य सरकारों के परामर्श से अधिसूचित करें।

सूचीबद्ध कार्यों के अन्तर्गत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को अपनी भूमि की सिंचाई के लिए पर्याप्त अवसरों का सृजन किया जायेग।

## 18-13 lkjk'k

उपर्युक्त वर्णित संपूर्ण इकाई में बेरोजगारी की अवधारणा पर प्रकाश डाला गया है। बेरोजगारी क्या है? इसके कौन.कौन से स्वरूप हैं? एवं इसके दुष्प्रभावों को समझने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुत अध्याय में बेरोजगारी के भिन्न–भिन्न स्वरूपों को समझाने का प्रयास भी किया गया है। बेरोजगारी किसी भी समाज एवं राष्ट्र के लिए भयावह समस्या है जिसका निराकरण करना अपरिहार्य है, अन्यथा यह संपूर्ण समाज की संरचना को छिन्न–भिन्न कर विघटन की स्थिति उत्पन्न कर देती है। अतः इसके निराकरण हेतु सभी राष्ट्र सदैव प्रयत्नशील रहते हैं। भारत सरकार विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से बेरोजगारी के निराकरण हेतु नाना प्रकार के कार्यक्रम ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में क्रियान्वयन करती है। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2005 के अंतर्गत राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना एक मील का पत्थर साबित होगी।

## 18-14 vH;kl i'u

1. बेरोजगारी को परिभाषित कीजिये।
2. बेरोजगारी के स्वरूपों पर प्रकाश डालिये।
3. बेरोजगारी निराकरण के उपाय बताइये।
4. बेरोजगारी के प्रमुख कारणों को समझाइये।

# bdkbZ&19 vijk/k

## ikB& lajpuk

नोट

19.0 उद्देश्य

19.1 प्रस्तावना

19.2 अपराध का अर्थ एवं परिभाषा

19.3 अपराध की सामाजिक दृष्टि से व्याख्या

19.4 अपराध, अपराधी और अपराधशास्त्र के मध्य सम्बन्ध

19.5 भारत में अपराध की प्रमुख विशेषताएँ

19.6 अपराधी किसे कहते है ?

19.7 अपराधियो का वर्गीकरण

19.8 सारांश

19.9 अभ्यास प्रश्न

## 19-0 mís';

इस इकाई को पढ़कर आप :

- इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप अपराध का अर्थ, परिभाषा तथा अपराध की अवधारणा समझ सकेंगे।
- भारतीय समाज के परिप्रेक्ष्य में अपराध के प्रमुख लक्षणों एवं विशेषताओं को समझ सकते है।
- अपराधी किसे कहते हैं तथा विभिन्न विद्वानों द्वारा दिया गया अपराधियों का वर्गीकरण समझ सकते है।
- वर्तमान समय में सामाजिक ढाँचा चरमरा रहा है। वैश्वीकरण तथा सूचना प्रौद्योगिकी के प्रभाव के फलस्वरूप सामाजिक मूल्यों मे तीव्र गति से परिवर्तन हो रहे हैं। हमारा समाज संक्रमण के दौर से गुजर रहा है। यदा–कदा किशोरों के आचरण एवं व्यवहार में आक्रामकता एवं हिंसा की झलक दिखाई दे रही है। समाज में बड़े पैमाने पर सामाजिक प्रतिमानों का विचलन हो रहा है। अपराध की उठती हुई तरंगे जनता मे भय पैदा कर सकती हैं। प्रस्तुत इकाई में अपराध का अवधारणात्मक विवेचन करने का प्रयास किया गया है। विद्वानों द्वारा विभिन्न आधारों को ध्यान में रखकर अपराधियों का वर्गीकरण किया है। अपराधी की आयु,उद्देश्य, अपराध की प्रवृत्ति व परिस्थितयाँ आदि वर्गीकरण के प्रमुख आधार हैं। अपराधियो ं का उचित वर्गीकरण हमें उनकी प्रवृत्तियो, उद्देश्यों, प्रकृति आदि को समझने में मदद कर सकता है। अपराध के सिद्धान्तों के निर्माण में भी अपराधियों का वर्गीकरण एक महत्वपूर्ण पहलू है।

## 19-1 iLrkouk

नोट

प्रत्येक समाज में हर काल में से लोग मौजूद रहे हैं, जो समाज द्वारा स्वीकृत नियमों और आदर्शो के विपरीत व्यवहार करते रहे हैं। किसी भी समाज से पूर्णतया अपराध का उन्मूलन नहीं किया जा सकता। अपराध का समाज से चोली दामन का सम्बन्ध रहा है। समाज के उदय के साथ अपराध का भी जन्म हुआ। अतः जब तक समाज रहेगा, अपराध भी रहेगा। अपराध की मात्रा कम या अधिक हो सकती है।

समाज के विकास एवं उसकी जटिलता में वृद्धि के साथ–साथ अपराध की दर भी बढ़ी है। भारत जैसे विकासशील देश की बजाय अमेरिका जैसे विकसित देश में अपराध की दर अधिक देखने को मिलती है। प्रत्येक समाज अपनी सामाजिक संरचना और व्यवस्था को बनाये रखने तथा सुचारू रूप से चलाने के लिए कुछ नियमों, प्रथाओं, रूढ़ियों, जनरीतियों एवं सामाजिक मानदण्डो को विकसित करता है। इनमें से कुछ के विपरीत आचरण करने पर समाज के लोंगो द्वारा निन्दा की जाती है। कुछ नियमों का उल्लंघन अनैतिक माना जाता है, वहीं व्यवहार के कुछ प्रतिमानों का उल्लंघन करने पर समाज द्वारा कठोर दण्ड दिया जाता है। यद्यपि अपराध एक सार्वभौमिक तथ्य है, किन्तु फिर भी समय स्थान, और परिस्थिति के अनुसार इसकी अवधारणा बदलती रहती है। एक ही कार्य एक स्थान पर अपराध माना जाता है, किन्तु दूसरे स्थान पर उसी कार्य के लिए पुरस्कार दिया जाता है। साधारण परिस्थितियों में यदि कोई व्यक्ति किसी व्यक्ति की हत्या कर देता है, तो उसे आजीवन कारावास या मृत्यु दण्ड की सजा दी जाती है। जबकि युद्ध में ज्यादा से ज्यादा संख्या में दुश्मनों को मारने वाले व्यक्ति को वीरता के पुरस्कारों से सम्मानित किया जाता है। अपनी जाति के बाहर विवाह करना कभी अपराध माना जाता था, आज नहीं। प्राचीन समय में सती प्रथा, बाल–विवाह, दहेज प्रथा किसी समय उचित एवं सम्मानीय व्यवहार माने जाते थे, किन्तु आज इस प्रकार के व्यवहार कानूनी रूप से दण्डनीय है। हिन्दुओं में किसी समय एक से अधिक पत्नी रखना सामाजिक प्रतिष्ठा का सूचक था, किन्तु वर्तमान में यह कानूनी रूप से अपराध की श्रेणी में आता है। राज्य के विकास के साथ–साथ अपराध की अवधारणा स्पष्ट होती चली गई। अति प्राचीन समय में और आज भी ग्रामीण लोगों एवं आदिम समाज मे यह विश्वास प्रचलित है कि अपराध ईश्वरीय नियमो का उल्लघंन है। यदि कोई व्यक्ति समाज के लोगों की नजर से बच भी जाये, तो भी वह इस लोक या परलोक में ईश्वर से अवश्य दण्ड पायेगा। धर्म एवं नैतिकता से भी अपराध का घनिष्ठ सम्न्ध रहा है। नैतिक दृष्टि से अपराध को ऐसा कार्य समझा गया, जिसे नीतिशास्त्र अनैतिक मानता है। सामाजिक दृष्टि से अपराध में समाज के नियमो का उल्लंघन होता है और उससे समाज को हानि होती है। 20वीं शताब्दी में अपराध के प्रति तार्किक एवं सामजिक दृष्टिकोण विकसित हुआ, जिससे अपराध को समाज विरोधी कार्य माना गया। राज्य के हाथ में शक्ति आने के साथ–साथ व्यक्ति के व्यवहारों को राज्य के नियमों से जोड़ दिया गया तथा ऐसे सभी कार्य जिनसे राज्य के नियमों का उल्लंघन होता है, अपराध माने जाने लगे। इस प्रकार समयत्र पर अपराध का सम्बन्ध धर्म, नैतिकता, समाज और राज्य से जोड़ा जाता रहा है। यही कारण है, कि अपराध की व्याख्या समय स्थान और परिस्थिति के अनुसार अलग–अलग प्रकार से की जाती रही है।

## 19-2 vijk/k dk vFk ,o ifjHkk"kk

नोट

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से वे सभी व्यवहार जो समाज विरोधी हैं, अपराध कहलाते हैं। समाजशास्त्रीय दृष्टि से अपराध की परिस्थितियों पर ज्यादा बल दिया जाता है। जिसमें यह जानने का प्रयास किया जाता है, कि वे कौन सी परिस्थितियाँ है जो व्यक्ति को अपराध के लिए प्रेरित करती है। यह व्याख्या अपराध के परिणामों पर बल नहीं देती है, इसीलिये इसका सम्बन्ध दण्ड के बजाय सुधार से ज्यादा है। अपराध की कानूनी व्याख्या अपराध के परिणाम और दण्ड से घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई है।

ikWy VIiu ने अपराध की परिभाषा करते हुए कहा कि यह एक कार्य या अनाचरण है, जो दण्ड कानून का उल्लंघन करता है और जो बिना किसी सफाई और औचित्य के किया जाता है। इस परिभाषा में निम्न पांच बिन्दुओं पर बल दिया गया है –

1. अपराध मे किस क्रिया को किया जाये या किस क्रिया को करने में चूक होनी चाहिये, अर्थात् किसी व्यक्ति को उसके विचारो के लिए दण्डित नहीं किया जा सकता।
2. क्रिया स्वयं की इच्छा से होनी चाहिये और उस समय की जानी चाहिये, जबकि कर्ता का अपने कार्यो पर नियन्त्रण हो।
3. क्रिया साभिप्राय होनी चाहिए, चाहे अभिप्राय सामान्य हो अथवा विशेष। एक व्यक्ति का विशेष अभिप्राय चाहे दूसरे व्यक्ति को गोली मारना व उसे जान से मारना न हो परन्तु उससे इस जानकारी की आशा की जाती है कि उसकी क्रिया से दूसरे को चोट लग सकती है या उनकी मृत्यु हो सकती है।
4. यह क्रिया फौजदारी कानून का उल्लंघन होनी चाहिए, जिससे कि सरकार अभियुक्त के विरूद्ध कार्यवाही कर सकें।
5. वह क्रिया बिना किसी सफाई या औचित्य के की जानी चाहिए। इस प्रकार यदि सिद्ध हो जाता है कि क्रिया आत्मसुरक्षा के लिए या पागलपन में की गई थी तो उसे अपराध नहीं माना जायेगा चाहे उससे दूसरों को हानि हुई हो या चोट लगी हो। कानून की अनभिज्ञता को ज्यादातर बचाव या सफाई नहीं माना जाता है।

हालजिरोम का कहना है, कि ''अपराध कानूरी तौर पर वर्जित और साभिप्राय कार्य है। जिसका सामाजिक हितों पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। जिसका अपराधिक उद्देश्य है ओर जिसके लिए कानूनी तौर से दण्ड निर्धारित है।'' इस प्रकर आपकी दृष्टि से किसी कार्य को अपराध नहीं माना जा सकता, जब तक उसमें निम्न पाँच विशेषताएँ नहीं हो :

1. वह कानून द्वारा वर्जित हो,
2. वह साभिप्राय हो,
3. वह समाज के लिए हानिकारक हो,
4. उसका अपराधिक उद्देश्य हो
5. उसके लिए कोई दंड निर्धारित हो।

अपराध की परिभाषा गैर कानूनी और सामाजिक शब्दों मे भी की गई। माउरेर ने अपराध को एक 'असमाजिक कार्य' कहा है काल्डेवल का कहना है कि ''वे कार्य या उन

नोट

कार्यों को करने में चूक जो समाज में प्रचलित मानदण्डों की दृष्टि से समाज के कल्याण के लिये इतने हानिकारक हैं, कि उनके संबध में कार्यवाही किसी निजी पहल शक्ति या अव्यवस्थिति प्रणालियों को नहीं सौंपी जा सकती। परन्तु वह कार्यवाही संगठित समाज द्वारा परीक्षित प्रक्रियाओं के अनुसार की जानी चाहिए।'' थार्सटन सेलिन (1970:6) ने इसे मानकीय समूहों के व्यवहार के आदर्श प्रतिमान का उल्लघंन माना है। मार्शल क्लिनार्ड (1957:22) का मानना है, कि मानदंडो के सभी विचलन अपराध नहीं होते। आपने तीन प्रकार के विचलन बताये है :

1. सहन किये जाने वाले विचलन
2. विचलन जिसकी नरमी से निंदा की जाती है और
3. विचलन जिसकी कड़ी निन्दा की जाती है। आप तीसरे प्रकार के विचलन को अपराध मानते है। इसे एक उदाहरण द्वारा भंली प्रकार समझा जा सकता है। गाँधीजी ने न केवल स्वंय जाति व्यवस्था के प्रतिमानों का उल्लघँन किया, बल्कि उन्होंने दूसरों को भी इन्हें नहीं मानने के लिए प्रेरित किया। इसके बावजदू भी गाँधीजी को 'विचलित व्यक्ति' नहीं माना गया, क्योंकि उनका विचलन समाज के हित में था, जो विचलन समाज को हानि पहुचाँता है, उसका ही कड़ा विरोध होता है।

## 19-3 vijk/k dh lkekftd n`f"V ls 0;k[;k

किसी व्यवहार को सामाजिक दृष्टि से अपराध ठहराने के लिए सदरलैण्ड ने तीन बातों पर बल दिया है :

(अ) एक मूल्य जिसे एक समूह या उसके किसी भाग द्वारा महत्वपूर्ण माना जाता हो।

(ब) इस समहू में एक दूसरे भाग का होना जो कि उस मूल्य के अधिक या कम विरोध में हो और इस कारण उसके लिए घातक सिद्ध हो,

(स) एक सुस्पष्ट या उचित दण्ड व्यवस्था का होना जिसे कि उस मूल्य आ आदर करने वाले मूल्यों का अनादर करने वालों पर लागू करें।

टाफ्ट ने सामाजिक दृष्टि से अपराध में दो बातों को सम्मिलित किया है :

(अ) सामाजिक दृष्टि से वे कार्य अपराध है, जिन्हें करने की समाज द्वारा मनाही है। ऐसे कार्य समाज द्वारा पाप, अनैतिक दुराचार एवं परम्पराओं को तोड़ने वाले समझते जाते हैं। समाज द्वारा निषेध (कार्यों को करने वाले को समाज अनौपचारिक रूप से दण्ड देता है, जैसा–उसका अपमान करना, मजाक उडाना, समाजिक बहिष्कार करना आदि। ऐसे कार्य करने वाले व्यक्ति की सामाजिक प्रतिष्ठा भी गिर जाती है। अपराध की गंभीरता का मूल्याँकन अपराधी क्रिया के समाज पर पड़ने वाले प्रभाव के आधार पर किया जाता है।

(ब) सामाजिक दृष्टि से अपराध व्यक्ति के भतू काल के कार्यों की अपेक्षा भविष्य के कार्यो से अधिक सम्बन्धित है। कानूनी व्यक्ति को उसकी भूतकाल की अपराधी क्रियाओं के लिए अधिक दण्ड देता है। उसमे बदले की भावना दिखाई देती है, जबकि सामाजिक दृष्टिकोण से अपराध एक ऐसी क्रिया है जो भविष्य समाज के लिए हानिप्रद हो सकती है।

टाफ्ट के शब्दों मे ''सामाजिक दृष्टिकोण से दण्ड को उद्देश्य हिसाब को बराबर करना नहीं है और न ही अपराधी से बदला लेना है, अपितु इस सम्बन्ध में निश्चित होना है, कि वह अपने अपराधों को दोहरायेगा नहीं। दण्ड को तभी व्यवहार मे लाया जायेगा, जबकि पुनरावृत्ति को रोकने का वही एकमात्र रास्ता हो या जब यह आशा हो कि दण्ड दूसरे को अपराध करने से रोकेगा।

नोट

यहाँ इस इकाई में अपराध की सामाजिक और कानूनी अवधारणा का उल्लेख किया है। कई बार सामाजिक एवं कानूनी दृष्टिकोण से किसी एक ही कार्य को अपराध माना जाता है, किन्तु कई बार इन दृष्टिकोणों से टकराव पाया जाता है। मृत्युभोज सामाजिक दृष्टि से अपराध नहीं है, किन्तु कानूनन अपराध है। अन्तर्जातीय विवाह कानूनी दृष्टि से अपराध नहीं है, किन्तु सामाजिक दृष्टि अर्थात जातीय नियमों के अनुसार अपराध है। चोरी सामाजिक एवं कानूनी दोनों ही दृष्टि से अपराध है।

## 19-4 vijk/k] vijk/kh vkj vijk/k'kkL= dk e/; lEcU/k

आजकल अपराधणास्त्र में छः प्रश्न महत्वपूर्ण है : जॉक यंग (1974) के अनुसार छः प्रश्न निम्न प्रकार से है :

1. एक व्यक्ति के अपराधी व्यवहार की किस प्रकार व्याख्या की जी जाती है ? क्या अपराध करते समय अपराधी को स्वयं की इच्छा से कार्य करता हुआ समझा जाता है या यह माना जाता है, कि वह ऐसी शक्तियों से बाध्य हो जाता है जो उसके नियंत्रण से बाहर हैं।
2. सामाजिक व्यवस्था की कार्य प्रणली को कैसा समझा जाता है ? क्या समाज में व्यवस्था को विशाल बहुमत की स्वीकृति पर आधारित माना जाता है या वह अधिकांश जबरदस्ती से थोपा हुआ है।
3. अपराध की परिभाषा कैसी की जाती है ? क्या अपराध को कानूनी संहिता का उल्लंघन माना जाता है या उसे ऐसा व्यवहार माना जाता है, जो एक विशेष समुदाय की सामाजिक संहिता का उल्लंघन करता है।
4. अपराध के विस्तार ओर वितरण को कैसे देखा जाता है ? क्या अपराध को एक सीमित तथ्य के रूप में लिया जाता है जो कि कुछ ही व्यक्ति करते हैं या विस्तृत तथ्य माना जाता है, जिसे जनसंख्या का एक बड़ा अंश करता है।
5. अपराध के कारणों की व्याख्या कैसे की जाती है ? क्या अपराध के कारण प्रमुखतया व्यक्ति के व्यक्तित्व में स्थित होते हैं या अपराध को अधिक विस्तृत समाज, जिसमें वह व्यक्ति रहता है, की उपज समझा जाता है।
6. अपराधियों के बारे में क्या नीति है ? क्या अपराधी को दण्डित करने की नीति उपयुक्त है या अपरधी के उपचार की नीति को स्वीकार किया जाता है।

## 19-5 Hkkjr esa vijk/k dh izeq[k fo'ks"krk,¡

1. भारत में पिछले चार वर्षो में (1995–1998) औसतन प्रतिवर्ष हुए कुल अपराधों में से भारतीय दडं सहिता के अन्तर्गत लगभग 17.26 लाख संज्ञेय अपराध होते

नोट

हैं, जैसे– चोरी, लूट या डकैती, हत्या, दंगा, अपहरण, धोखाधड़ी, विश्वास भंग आदि शामिल हैं तथा लगभग 44.94 लाख अपराध स्थानीय ओर विशेष कानूनों के तहत होते है। जैसे मोटर व्हीकल एक्ट, प्रोहिबिशन एक्ट, गैम्बलिंग एक्ट, एक्साइज एक्ट, आर्म्स एक्ट, स्प्रेशन ऑफ इम्मोरल ट्रेफि एक्ट, ओपियम एक्ट, रेलवे एक्ट आदि क्राइम इन इन्डिया (1998:5)। इस प्रकार हमारे देश में अपराध की दर ज्यादा ऊँची नहीं है। औद्योगिक समाजों में अमरीका में अपराध की दर सबसे ज्यादा है। यह एक वर्ष में संपूर्ण जनसंख्या की 4 प्रतिशत या 5 प्रतिशत हावर्ड बेकर, भारत में यह दर कुल जनंसख्या की केवल 0.67 प्रति'ात है।

2. प्रतिवर्ष पुलिस द्वारा छानबीन किये हुए लगभग 74 लाख आई.पी.सी. और 51 लाख विशिष्ट काननू मामलों में से लगभग 27 प्रतिशत मामले संज्ञेय अपराधों के है। और लगभग 73 प्रतिशत अपराधों के मामले स्थानीय ओर विशेष कानूनों के तहत होते हैं।
3. 1998 (129 एवं 140) प्रति एक लाख जनसंख्या में संज्ञेय अपराध की दर लगभग 180 है।
4. कुल सज्ञं ये अपराधों में से लगभग एक चौथाई 23 प्रतिशत आथिर्क अपराध हैं, जिनमें 16.2 प्रतिशत चोर, 6.7 प्रतिशत सेंध लगाकर चोरी, 1.3 प्रतिशत लूट मार, 0'5 प्रतिशत डकैती से सबंधित हैं 1998 (15 एवं 30) सपंत्ति से जुड़े हुए अपराध व्यक्तियों के विरूद्ध अपराधों 14.5 प्रतिशत हत्या, अपहरण से ज्यादा हैं।
5. स्थानीय और विशेष कारणों के अन्तर्गत अपराधों के लिए गिरफ्तार किये गये कुल व्यक्तियों में से 69 प्रतिशत तीन कानूनों के अन्तर्गत पकड़े जाते हैं, प्रोहिबिशन एक्ट 55.6 प्रतिशत, गेम्बलिंग एक्ट 1.9 प्रतिशत, और एक्साइज एक्ट 11.5 प्रतिशत। बचे हुए 31 प्रतिशत आर्म्स एक्ट, रेलवेज एक्ट, एस.आई.ट. एक्ट, ओपियम एक्ट आदि के तहत गिरफ्तार किये जाते है।
6. कुल संज्ञेय अपराधों मे से लगभग 38 प्रतिशत चार हिन्दी भाषीय उत्तरी राज्यों : उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, बिहार आरै राजस्थान मे होते हैं आरे लगभग 27 प्रतिशत चार दक्षिणी राज्यों : तमिलनाडू, कर्नाटक, आधंप्रदेश और केरल में होते है।
7. प्रतिवर्ष लगभग 17.8 लाक्ष संज्ञेय अपराधों के लिए लगभग 26.6 लाख व्यक्ति गिरफ्तार किये जाते हैं यानि प्रत्येक 10 किये गये अपराधों के लिए औसत 15 व्यक्ति गिरफ्तार किये जाते है। दूसरी और स्थानीय और विशेष कानूनी के अन्तगर्त किये गये प्रत्येक नौ अपराधों के लिए 10 व्यक्ति गिरफ्तार किये जाते है।
8. लगभग 85 प्रतिशत अपराधी ऐसे संज्ञेय अपराध करते हैं। जिनके लिए उन्हें छः महीने से कम का करावास होता है।
9. महिलाओं की बजाय पुरूषों में अपराध की दर ज्यादा है 95 प्रतिशत अपराधी पुरूष और 5 प्रतिशत महिला है।
10. शहरी अपराधियों का अनुपात ग्रामीण अपराधियों से कम है।
11. अपराध की दर निम्नतम सामाजिक आर्थिक समूहों में सबसे ज्यादा है।

12. अपराध की दर सबसे अधिक 51.2 प्रतिशत 18–30 वर्षो के आयु समूह में है।

13. अपराधिक गतिविधियों के लिए बड़े पैमाने पर संगठनों का विकास हो रहा है। अवैध चीजों और सेवाओं के नियन्त्रण और वितरण को अधिक संगठित किया जा रहा है – जैसे मादक पदार्थ की तस्करी, भारत व अरब देशो में वेश्यावृति के लिए लड़कियाँ भेजना, सोने की तस्करी आदि। इसके अलावा माफिया गिरोहों के विभिन्न वैध व्यापार की गतिविधियों जैसे–कोयले की खानों, उद्योग संघो के नियंत्रण के लिए संगठित प्रयास होते हैं।

नोट

इस प्रकार इन विशेषताओं व आँकड़ों को बताने के पीछे हमारा यह उद्देश्य था, कि वर्तमान समय में समाज में सामाजिक मानदण्डों के अनुरूप व्यवहार होने की प्रेरणाएँ कमजोर हो रही है। सामाजिक सबंधो ओर सामाजिक बंधनों में शिथिलता आ रही है। हमारे समाज के प्रायः सभी वर्गो में अशान्ति बढ़ रही है। युवाओं, किसानों, औद्योगिक श्रमिकों, छात्रों, सरकारी कर्मचारियों और अल्पसंख्यकों में अशांति पैदा हो रही है। यह अशान्ति कुंठाओं और तनावों को बढ़ाती है। जिससे सामाजिक व वैधानिक मानदण्डों का उल्लघंन होता है। इस प्रकार हमारे समाज में विद्यमान उप व्यवस्थाओं और संरचनाओं का संगठन और कार्यप्रणाली अपराध में वृद्धि के लिए उत्तरदायी है।

## 19-6 vijk/kh fdl dgrs g\

सामान्य रूप से अपराधी उसे माना जाता है जो समाज के नियमों की अवहेलना करता है, अनैतिक और धर्म के विरूद्ध कार्य करता है, तथा राज्य के नियमों के विरूद्ध आचरण करता है। इलियट और मैरिल का कहना है, कि ''तकनीकी तौर पर अपराधी वह हैं जो दण्डनीय दुर्व्यवहार करें।'' टाफ्ट भी ऐसे व्यक्ति को अपराधी मानते हैं जिसने कानून निविह व्यवहार किया है कुछ लोगों का मानना है कि अपराधी मानसिक रूप से अयोग्य और भावात्मक रूप से अस्थिर व्यक्ति है, उसका परिस्थतियों के साथ सामँजस्य नहीं हो पाता है, उसमें नैतिक एवं सांस्कृतिक शिक्षा का अभाव होता है। कानूनी रूप से उस व्यक्ति को अपराधी माना जाता है, जिसको न्यायालय ने दोषी ठहराया है तथा दण्ड की आज्ञा दी है।

अपराधियों के अध्ययन में अपराधी की कानूनी परिभाषा को ही स्वीकार किया गया है। कोई भी काननू यह नहीं बताता, कि कोई व्यक्ति कितने समय तक अपराधी कहलायेगा। अपराध करने के दौरान, दण्ड पाने की अवधि तक या आजीवन।

टाफ्ट ने एक व्यक्ति को अपराधी स्वीकार करने के लिए निम्नलिखित आधार बताये है :

1- mi;qDr vk;q % किसी भी व्यक्ति को अपराधी शोषित करने से पूर्व उसकी आयु का भी ध्यान रखा जाता है। सामान्यतया किसी भी देश में 6–7 वर्ष से कम आयु के बालकों द्वारा किया गया समाज विरोधी कार्य अपराध नहीं माना जाता, क्योंकि यह माना जाता है कि इस आयु तक बच्चें में अपराध भावना उदय नहीं हो पाता, वह अच्छाई और बुराई में अन्तर नहीं कर पाता। अतः व्यक्ति को तभी अपराधी माना जा सकता है जब उसमें उचित अनुचित की भावना का विकास हो जाये।

नोट

2- LoSfPNd fØ;k % किसी भी व्यक्ति को उसक समय अपराधी माना जा सकता है, जब उसने अपनी इच्छा से कानून विरोधी कार्य किया जो, न कि किसी दबाव के कारण। एक व्यक्ति रात्रि में ताला खोलने वाले को घर से उठा ले जाता है और उसे किसी के यहाँ तिजोरी खोलने के लिए कहता है, ऐसा नहीं करने पर उसे गोली से उड़ाने की धमकी देता है, ऐसी स्थिति में यदि वह तिजोरी का ताला खोलता है, तो उसका यह कार्य अपराध नहीं माना जावेगा, क्योंकि यहाँ उसे अपराध के लिए बाध्य किया गया है। दबाव का निर्णय न्यायालय ही करता है।

3- vijk/kh bjknk % अपराधी कार्य व्यक्ति द्वारा जान बूझकर अपराधी इरादे से किया गया हो, यद्यपि लापरवाही और कानूनन के प्रति अनभिज्ञता क्षमा योग्य नहीं है।

4- vijk/k oKkfud :i ls jkT; ds fy, gkfuiHk gkuk vko';d gS % कोई भी व्यक्ति तभी अपराधी कहा जा सकता है, जब उसके द्वारा किया गया कार्य कानून की दृष्टि से राज्य के लिये हानिकारक हो। व्यक्ति के विरूद्ध किया गया कार्य अपराध की श्रेणी में नही आता है। उसे दुष्कृति कहा जाता है।

इस प्रकार उपर्युक्त विश्लेषण के बाद हम यह समझ सकते हैं कि, कानूनी दृष्टि से अपराधी वह हे जिसने इच्छापूर्वक बुरी नीयत से ऐसा कार्य किया हो जो दण्डनीय है।

## 19-7 vijkf/k;ksa dk oxhZdj.k

अपराध की ही भाँति अपराधाशास्त्रियों ने अपराधियों का भी विभिन्न प्रकार से वर्गीकरण किया है। कुछ वर्गीकरण निम्नलिखित है :

1- lnjySaM dk oxhZdj.k %

ई.,च.सदरलैण्ड ने अपराधियों को दो भागों में बाँटा है :

¼v½ fuEuoxhZ; vijk/kh % ये वे व्यक्ति होते हैं जिनकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं होती, दरिद्र या गरीब है, मजदूरी करते हैं और धन के अभाव मे न्याय प्राप्त करने में असमर्थ हैं अतः वे जल्दी ही पुलिस की निगाह में आ जाते है।

¼c½ lQsn iks'k vijk/kh % सफदे पोश अपराधी प्रतिष्ठित एवं उच्च वर्ग के होते हैं, आर्थिक लाभ के लिए अपराध करते हैं, तथा साधन सम्पन्न होने के कारण पकड़ में नहीं आते एवं दण्ड से बच जाते है।

सदरलैण्ड का कहना है कि '''वेतवसन अपराध प्रतिष्ठित एवं उच्च सामाजिक प्रस्थिति धारण करने वाले व्यक्ति द्वारा उसके व्यवसाय के दौरान किया जाता है। सदरलेण्ड की इस परिभाषा में दो बातों पर बल दिया गया है :

(अ) सफेद पोश अपराधी समाज में प्रतिष्ठित व्यक्ति होते हैं,

(ब) ये व्यक्ति अपने व्यवसाय के दौरान ही अपराधी कार्य करते है। जैसे डॉक्टर भ्रूण के लिंए की जाँच में मदद करे या प्राध्यापक पैसा लेकर प्रायोगिक परीक्षा में ज्यादा अंक देने का कार्य करें तो वह सफेद पोश अपराध कहलायेगा।

क्लीनार्ड (1952) का कहना है कि ''कानून का वह उल्लंघन जो मुख्यतः व्यापारियों, पेशेवर व्यक्तियों एवं राजनीतिज्ञों जैसे समूहो में उनके व्यवसाय के सम्बन्ध में पाया जाता है।''

सदरलेण्ड ने सफेद पोश अपराध की निम्नलिखित विशेषताएँ बताई है :

1. सफेद पोश अपराध समाज के उच्च सामाजिक आर्थिक वर्ग के सदस्यों द्वारा किया जाता है।
2. इस प्रकार का अपराध व्यक्ति अपने व्यवसाय के दौरान ही कानून को तोड़कर करता है।
3. इस प्रकार के अपराधी सामर्थ्यवान होते है। अतः कानून तोड़ने पर भी इनकी सामाजिक प्रतिष्ठा पर कोई आँच नहीं आती है।
4. इस प्रकार के अपराधी इस प्रकार के अपराधी अपने उच्च पद के कारण अपने फायदे के कानून बनवाने के लिये संसद सदस्यों एवं कानून निर्माताओं पर दबाव डालते हैं और ऐसे कानूनों के पारित होने का विरोध करते है जो उनके हितों के अनुकूल न हों।
5. सफेद पोश अपराधी इस प्रकार का दिखावा करता है, कि उन्हें समाज सेवा और समाज कल्याण में विशेष रूचि है। इसके लिये वे सार्वजनिक संस्थाओं से अपना संपर्क रखते हैं, उन्हें चन्दा देते हैं जिससे कि ये संस्थायें उनका गुणगान करें और उनके विरूद्ध प्रचार न करे।
6. सफेद पोश अपराधी अपने धन व पद के कारण न्यायाधीशो को अपने पक्ष में कर लेते हैं उनसे सपंर्क रखते हैं। उन्हें भेंट देते रहते हैं ताकि अवसर आने पर उनसे अपने पक्ष में निर्णय करा सकें।
7. सफेद पोश अपराधियों पर कोइ कानूनी कार्यवाही इसलिए नहीं हो पाती, क्योंकि उनके विरूद्ध कोई संगठित कदम नहीं उठाये जाते तथा उनके द्वारा पहुँचाई गई हानि कई भागों में बँट जाती है।
8. सफेद पोश अपराध प्रकृति के होते हैं। जिनका उद्देश्य ज्यादा से ज्यादा से धन कमाना और भौतिक सुख सुविधाएँ प्राप्त करना होता है।
9. सफेद पोश अपराध विश्वासघात पर आधारित है। साहूकार लोग गाँवो में अशिक्षित लोगों के कम पैसा देकर अधिक पर हस्ताक्षर करा लेते हैं। अनपढ़, गरीब एवं किसान लोगों के विश्वास का साहूकार नाजायज फायदा उठाते हैं।
10. सफेद पोश अपराध काननू को लागू करने में भेदभाव पर आधारित है। देश में सभी लोगों के लिए समान रूप से कानून बने होने के बावजूद भी धनी, प्रतिष्ठित एवं अधिकारियो से संपर्क रखने वाले व्यक्ति कानून का उल्लंघन करने पर भी साफ बच जाते है।
11. इस प्रकार के अपराध प्रमुखतया चिकित्सको, कानून वेत्ताओं, शिक्षा अधिकारियो, व्यापारियों, ससंद सदस्यों, राजनेताओं, इंजीनियरों व उद्योगपतियों आदि के द्व ारा किये जाते है।

2- vyDt.Mj vkj LVkd u vijkf/k;k dk nk Hkkxk e ckVk g % ¼v½ vkdfLed vijk/kh % वे अपराधी जो आकस्मिक रूप से एक या एक से अधि ाक अपराध करते हैं।

**नोट**

नोट

¼c½ nh?kdkfyd vijk/kh % जो व्यक्ति बार–बार वे पेशे के रूप में अपराध को अपनाते हैं, दीर्घकालिक अपराधी कहलाते हैं। इनके तीन प्रकार है :

lkekU; vijk/kh % ये सामाजिक परिस्थितियों के कारण अपराधी बनते हैं तथा इनका सामान्यीकरण भी त्रुटिपूर्ण होता है।

euLrkih vijk/kh % ये मनौवैज्ञानिक कारणों से अपराधी बनते हैं। इड प्रवृत्तियों का दमन न होने के कार.ा इनका समाजीकरण नहीं हो पाता है। इनका व्यक्तित्व संघर्षमय हो जाता है और ये अपराध करते हैं।

'kjhj fod'r vijk/kh % इस कोटि के अपराधी शारीरिक विकलांगता के कारण बनते हैं। ये शारीरिक दोषों से युक्त होते हैं, जिससे इनमें मानसिक हीनता आ जाती है। इसी कारण ये अपराधी कार्य करते है।

3- ykEckslks dk oxhdj.k %

लोम्ब्रोसो ने अपराधियों को प्रमुखतया चार भागों में बाँटा है :

¼v½ tUetkr vijk/kh % ऐसे अपराधियों मे जन्म से ही कुछ शारीरिक लक्षण ऐसे होते हैं, जिनके आधार पर उन्हें पहचाना जा सकता है। अपने 15 विभिन्न शारीरिक लक्षणों का उल्लेख किया है तथा कहा कि यदि इनमें से पाँच लक्षण भी किसी व्यक्ति में पाये जाते है तो वह अवश्य अपराध करेगा। आपका मानना था कि अपराधी विशेषताएँ व्यक्ति को आनुवांशिक रूप से प्राप्त होती है।

¼c½ ikxy vijk/kh % इस श्रेणी में वे अपराधी आते हैं जो किसी न किसी बीमारी से ग्रस्त होते हैं, उनका मस्तिष्क दुर्बल हो जाता है। वे मानसिक असन्तुलन के कारण अपराध करते हैं।

¼l½ vkox ;Dr vijk/kh % इस श्रेणी मे वे व्यक्ति आते हैं जो शीघ्र ही आवेग के वशीभूत हो जाते हैं, जिनमें मामूली बात पर मानसिक तनाव पैदा हो जाता है तथा जो शीघ्र ही घातक हमला कर बैठते हैं। ऐसे व्यक्ति यौन तृप्ति की लालसा के कारण भी अपराध करते हैं।

¼n½ vkdfLed vijk/kh % इस श्रेणी में वे व्यक्ति आते है जो शारीरिक व मानसिक दोशों से ग्रसित नहीं होते वरन् परिस्थितिवश अपराध करते हैं। इन अपराधियों की लोम्ब्रोसो ने तीन उपभागों में बाँटा है।

¼;½ vlyh ;k udyh vijk/kh % ऐसे व्यक्ति खतरनाक नहीं होते वरन् ये आत्मसम्मान की रक्षा के लिए अनापेक्षित परिस्थितियों के कारण ही अपराध करते है।

¼j½ vknru vijk/kh % ये व्यक्ति जन्मजात अपराधी तो नहीं होते, किन्तु प्रतिकूल वातावरण के कारण अपराध करते है।

¼y½ vijk/khle % इस श्रेणी में वे व्यक्ति आते हैं जो जन्ममात अपराधी और ईमानदार व्यक्ति के बीच के होते है। परीक्षण करने पर ऐसे व्यक्ति आत्मसत पाये गये।

4- gst dk oxhdj.k %

हेज ने अपराधियों को चार भागों में बाँटा हैं :

(अ) iFke vijk/kh % जो पहली बार अपराध करता है।

(ब) vkdfLed vijk/kh % जो कभी–कभी परिस्थितियों के दबाव में आकर अपराध करता है।

(स) vknru vijk/kh % जो आदत के वशीभूत होकर अपराध करते हैं, चाहे उन्हे लाभ हो या न हो।

(द) i'koj vijk/kh % जो आजीविका के साधन के रूप में अपराध करते हैं, और अपराध ही जिनका व्यवसाय बन जाता है। वे या तो अपने लिए या किसी सगंठन के लिए अपराध करते हैं। एक गिरोह के रूप में अपराध करने वाले पेशेवर अपराधियों की सख्ंया वर्तमान मे तेजी से बढ़ती जा रही है।

इस प्रकार अपराधियों के उपर्युक्त वर्गीकरण से स्पष्ट होता है कि विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न आधारों को ध्यान मे रखकर अपराधियों का वर्गीकरण किया है। किन्तु किसी ने भी अपराधियों का सर्वमान्य वर्गीकरण प्रस्ततु नहीं किया। अपराधियों के वर्गीकरण के प्रमुख आधारों से अपराधी की आयु, उद्देश्य, अपराध की प्रवृत्ति एवं परिस्थितियाँ आदि मुख्य हैं। अपराधियों को उचित वर्गीकरण हमें उनकी प्रवृतियो, उद्देश्यों, प्रकृति आदि को समझने मे मदद करता है। अपराध में सिद्धान्तों के निर्माण में भी अपराधियों का वर्गीकरण एक महत्वपूर्ण पहलू हैं।

## 19-8 lkjka'k

इस प्रकार इस संपूर्ण इकाई में आपने यह जाना कि अपराध क्या है तथा अपराधियों के प्रकार कौन कौन से हैं। आपने यह भी समझ लिया होगा कि अति प्राचीन काल से अपराध के लिए प्रेत–आत्माओं के प्रभाव तथा दैवीय कारणों को उत्तरदायी माना जाता था। अवधारणाओं की दृष्टि से अपराध एक जटिल प्रघटना है। प्रत्येक समाज के कुछ मूल्य, आदर्श, नियम व परम्पराएँ होती है। जिनका उल्लंघन करना अपराध होता है और उल्लंघन करने वाला व्यक्ति अपराधी कहलाता है। इसका अर्थ हैं, कि अपराध व्यक्ति के विचलनकारी एवं अनैतिक व्यवहार होते हैं, जिनका निर्धारण समाज द्वारा किया जाता है। चूंकि प्रत्येक समाज के अलग–अलग सिद्धान्त व मान्यताएँ होती हैं। जो समय स्थान व परिस्थिति के अनुसार परिवर्तित होती रहती हैं। अतः अपराध की अवधारणा भी भिन्न–भिन्न समाजों के अनुरूप भिन्न–भिन्न होती है। विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न आधारों को ध्यान में रखकर अपराधियों का वर्गीकरण किया है किन्तु किसी ने भी अपराधियों का सर्वमान्य वर्गीकरण प्रस्तुत नहीं किया है। वर्गीकरण के प्रमुख आधारों में अपराधी की आयु, उद्देश्य अपराध की प्रवृत्ति एवं परिस्थितियाँ आदि प्रमुख हैं। अपराधियों का उचित वर्गीकरण हमें उनकी प्रवृत्तियो, उद्देश्यो, प्रकृति आदि को समझने में योग देता है।

## 19-9 vH;kl iz'u

1. अपराध से आप क्या समझते हैं ?
2. अपराध की कानूनी एवं सामाजिक अवधारणा मे क्या अन्तर हैं ?
3. भारतीय समाज के परिप्रेक्ष्य में अपराध की प्रमुख विशेषताएँ बताइये।
4. अपराधी किसे कहा जाता है ? अपराधियों का वर्गीकरण किस प्रकार किया गया है ?

# bdkbZ&20 cky vijk/k

नोट

## ikB& lajpuk


20.0 उद्देश्य

20.1 प्रस्तावना

20.2 बाल अपराध की अवधारणा

20.3 बाल अपराध के प्रकार

20.4 बाल अपराध के कारण

20.5 बाल अपराध के सिद्धान्त

20.6 बाल अपराध के उपचार की विधियाँ

20.7 बाल अपराध को रोकने के उपाय

20.8 सारांश

20.9 अभ्यास प्रश्न


## 20-0 mís';

इस इकाई को पढ़कर आप :

- बाल अपराध की अवधारणा को समझ सकेंगे।
- बाल अपराध के प्रकारों से अवगत हो सकेंगे।
- बाल अपराध के कारणों से अवगत हो सकेंगे।
- बाल अपराध को रोकने के उपायो की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

## 20-1 iLrkouk

वर्तमान समय में अपराधी व्यवहार के क्षेत्र में जिन समस्याओं को सर्वाधिक महत्व प्रदान किया जा रहा है, उनमें से बाल अपराध की समस्या प्रमुख है। यह एक ऐसी समस्या है जो मूलतः पारिवारिक एवं सामुदायिक विघटन की देन है। विश्व के लगभग सभी देशों के बाल अपराधियों की संख्या मे निरंतर वृद्धि चिन्ता का एक विषय है क्योंकि जिन बालको पर देश या राष्ट्र का भविष्य निर्भर करता है, अगर वही असामान्य बालक हो जायेंगे, तो देश के भविष्य की कल्पना तक नहीं की जा सकती। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप यह जान सकेंगे कि बाल अपराध की संख्या में निरन्तर वृद्धि के कारण क्या है तथा इस समस्या को रोकने के कौन से उपाय कारगार सिद्ध हो सकते है।

## 20-2 cky vijk/k dh vo/kkj.kk

जब किसी बच्चें द्वारा कोई काननू–विरोधी या समाज विरोधी कार्य किया जाता है तो उसे बाल अपराध कहते हैं। कानूनी दृष्टिकोण से बाल अपराध 8 वर्ष से अधिक तथा 16 वर्ष से कम आयु के बालक द्वारा किया गया कानूनी विरोधी कार्य है जिसे कानूनी

नोट

कार्यवाही के लिये बाल न्यायालय के समक्ष उपस्थित किया जाता है। भारत में बाल न्याय अधिनियम 1986 (संशोधित 2000) के अनुसार 16 वर्ष तक की आयु के लड़कों एवं 18 वर्ष तक की आयु की लड़कियों के अपराध करने पर बाल अपराधी की श्रेणी में सम्मिलित किया गया है। बाल अपराध की अधिकतम आयु सीमा अलग–अलग राज्यों मे अलग–अलग है। इस आधार पर किसी भी राज्य द्वारा निर्धारित आयु सीमा के अन्तर्गत बालक द्वारा किया गया काननी विरोधी कार्य बाल अपराध है।

केवल आयु ही बाल अपराध को निर्धारित नहीं करती वरन् इसमें अपराध की गंभीरता भी महत्वपूर्ण पक्ष है। 7 से 16 वर्ष का लड़का तथा 7 से 18 वर्ष की लड़की द्वारा कोई भी ऐसा अपराध न किया गया हो जिसके लिए राज्य मृत्यु दण्ड अथवा आजीवन कारावास देता है जैसे हत्या, देंशद्रोह, घातक आक्रमण आदि तो वह बाल अपराधी मानी जायेगा।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से बाल अपराध के लिये आयु को अधिक महत्व नहीं दिया जाता क्योंकि व्यक्ति की मानसिक एवं सामाजिक परिपक्वता सदा ही आयु से प्रभावित नहीं होती, अतः कुछ विद्वान, बालक द्वारा प्रकट व्यवहार प्रवृति को बाल अपराध के लिए आधार मानते हैं, जैसे आवारागर्दी करना, स्कूल से अनुपस्थित रहना, माता–पिता एवं संरक्षकों की आज्ञा न मानना, अश्लील भाषा का प्रयोग करना, चरित्रहीन व्यक्तियों से संपर्क रखना आदि। किन्तु जब तक कोई वैध तरीका सर्वसम्मिति से स्वीकार नहीं कर लिया जाता तब तक आयु को ही बाल अपराध का निर्धारक आधार माना जायेगा। गिलिन एवं गिलिन के अनुसार समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से एक बाल अपराधी वह व्यक्ति है जिसके व्यवहार को समाज अपने लिए हानिकारक समझता है और इसलिए वह उसके द्वारा निषिद्ध होता है।

इस प्रकार बाल अपराध में बालको के असामाजिक व्यवहारों को लिया जाता है अथवा बालकों के ऐसे व्यवहारा का जो लोक कल्याण की दृष्टि से अहितकर होते हैं, ऐसे कार्यों को करने वाला बाल अपराधी कहलाता है। रॉबिन्सन के अनुसार आवारागर्दी, भीख माँगना, निरूद्देश्य इधर–उदर घूमना, उदण्डता बाल अपराधी के लक्षण है।

उपयुर्क्त परिभाषाओ के आधार पर कानून की अवज्ञा करने वाला एवं समाज विरोधी आचरण करने वाला बालक बाल अपराधी होता है जैसा कि न्यूमेयर का कहना है कि बाल अपराधी एक निश्चित आयु से कम वह व्यक्ति है जिसने समाज विराधी कार्य किया है तथा जिसका दुर्व्यवहार कानून को तोड़ने वाला है।

## cky vijk/k dh nj ,oa izdfr

भारतीय समाज में बाल अपराध की दर दिनोदिन बढ़ती जा रही है, साथ ही इसकी प्रकृति भी जटिल होती जा रही है। इसका कारण है कि वर्तमान समय में नगरीकरण तथा औद्योगिकरण की प्रक्रिया ने एक ऐसे वातावरण का सृजन किया है जिसमें अधिकांश परिवार बच्चों पर नियंत्रण रखने में असफल सिद्ध हो रहे हैं। वैयक्तिक स्वतंत्रता में वृद्धि के कारण नैतिक मूल्य बिखरने लगे हैं, इसके साथ ही अत्यधिक प्रतिस्पर्धा ने बालकों में विचलन को पैदा किया है। कम्प्युटर आरै इटंरनेट की उपलब्धता ने इन्हें समाज से अलग कर दिया है। फलस्वरूप वे अवसाद के शिकार होकर अपराधों में लिप्त हो रहे हैं।

सन् 2000 के आँकड़ों के अनुसार भारतीय दंड संहिता के अन्तर्गत कुल 9,267 मामले पंजीकृत किये गये तथा स्थानीय एवं विशेष कानून के अन्तर्गत 5,154 मामले

पंजीकृत किये गये। बाल अपराध की दर में विभिन्न वर्षो में उतार–चढ़ाव देखने को मिलता है। 1997 में बालकों में अपराध की दर 0.8 प्रतिशत थी, वही बढ़कर सन् 1998 में 1,0 प्रतिशत था इसके पश्चात् सन 1999–200 मे 0.9 प्रतिशत रही।

**नोट**

बालकों द्वारा किये गये अपराधों मे से भारतीय दडं संहिता के अन्तर्गत सबसे अधिक सम्पत्ति सम्बन्धी थे। सन् 2000 में दण्ड संहिता के अन्तर्गत कुल संज्ञेय अपराधों में से चोरी (2,385), लूट मार (1,497) तथा सेंधमारी (1,241) के मामले पाये गये, इसके अलावा लैंगिक उत्पीड़न के (51.9), डकैती के (32प्रतिशत), हत्या के (28.6 प्रतिशत), बलात्कार के (24.5 प्रतिशत) मामले पाये गये।

भारतीय दंड संहिता के अन्तर्गत बाल अपराध की सर्वाधिक दर मध्यप्रदेश में 2,681) और महाराष्ट्र में (1,641) पायी गयी। इसी प्रकार महानगरों जैसे बम्बई, दिल्ली में भी बाल अपराध की उच्च दर पायी गयी।

## 20-3 cky vijk/k ds izdkj

बाल अपराध व्यवहार की शैली और समय में विविधता प्रदर्शित करता है। प्रत्येक प्रकार का अपना सामाजिक सन्दर्भ होता है। कारण होते है तथा विरोध और उपचार के अलग स्वरूप होते हैं जो कि उपयुक्त समझे जाते हैं। हावर्ड बेकर (1966) ने चार प्रकार के बाल अपराध बताएँ है।

(अ) वैयक्तिक बाल अपराध

(ब) समूह समर्थित बाल अपराध

(स) संगठित बाल अपराध

(द) स्थितिजन्य बाल अपराध

**¼v½ O;fDrd cky vijk/k %** यह वह बाल अपराध है जिसमें एक व्यक्ति ही अपराधिक कार्य करने में संलग्न होता है। और इसका कारण भी अपराधी व्यक्ति में ही खोजा जाता है। इस अपराधी व्यवहार की अधिकतर व्याख्याएँ मनोचिक्त्सिक समझाते हैं, उनका तर्क है कि बाल अपराध दोषपूर्ण पारिवारिक अन्तक्रिया प्रतिमानों से उपजी मनोवैज्ञानिक समस्याओं के कारण किये जाते हैं। हीले और ब्रोनर (1936) ने अपराधी युवकों की तुलना उन्हीं के अनपराधी सहोदारो से ही आरै उनके बीच अन्तरों का विश्लेषण किया। उनकी सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि यह थी कि 13.0 प्रतिशत अनपराधी सहोदारों की तुलना मे 90.0 प्रतिशत अपराधी किशारों का घरेलू जीवन दु:ख भरा था और वे अपने जीवन की परिस्थितियों से असन्तुष्ट थे, उनकी अप्रसन्नता की प्रकृति भिन्न थी। कुछ तो माँ–बाप द्वारा उपेक्षित मानते थे तथा अन्य या तो हीनता का अनुभव करते थे या अपने सहोदरों से ईर्ष्या करते थे या फिर मानसिक तनाव से पीडित़ थे, इन समस्याओं के समाधान के लिए वे अपराध में लिप्त हो गये थे, क्योकि इससे (अपराध) या तो उनके माता–पिता का ध्यान उनकी और आकर्षित होता था या उनके साथियों का समर्थन उन्हें मिलता था या उनकी अपराध भावना को कम करता था। बन्दूरा और वाल्टर्म ने श्वेत बाल अपराधियों के कृत्यों की तुलना अनपराधी लडक़ो से ही जिनमें आथिर्क कठिनाईयों के स्पष्ट सकंते नहीं थे, उन्हें पता चला की अपराधी अनपराधीयों से उनकी माताओं के साथ सम्बन्धों

नोट

की दृष्टि से थोड़ा सा भिन्न ही है, लेकिन उनके पिताओं के साथ अपने सम्बन्धों में कुछ अधिक भिन्न थे, इस प्रकार अपराध में पिता पुत्र सम्बन्ध, माता पुत्र सम्बन्ध की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण दिखाई दिए क्योंकि अपने पिता में आदर्श भूमिका की अनुपस्थिति के कारण अपराधी लड़के नैतिक मूल्यों का अतंरीकरण नहीं कर सके, इसके साथ ही उनका अनुशासन अधिक कठोर था।

¼c½ leg lefFkr cky vijk/k % इस प्रकार के अपराध में बाल अपराध अन्य बालकों के साथ में घटित होता है और इसका कारण व्यक्ति के व्यक्तित्व या परिवार में नही मिलता, बल्कि उस व्यक्ति के परिवार व पड़ोस की सस्कृति में होता है। थ्रेशर शॉ आरै मैके के अध्ययन भी इसी प्रकार के बाल अपराध की बात करते हैं, मुख्य रूप से यह पाया गया कि युवक अपराधी इसलिए बना क्योंकि वह पहले से ही अपराधी व्यक्तियों की संगति में रहता था, बाद में सदरलैंड ने इस तथ्य को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किये। जिसने विभिन्न संपर्क के सिद्धान्त का विकास किया।

¼l½ lxfBr cky vijk/k % इसमें वे अपराध सम्मिलित हैं जो औपचारिक रूप से संगठित गिरोहों द्वारा किये जाते हैं, इस प्रकार के अपराधों का विश्लेषण सन् 1950 के दशक में अमरीका में किया गया था तथा अपराधी उपसस्कृति की अवधारणा का विकास किया गया था। यह अवधारणा उन मूल्यों और मानदण्डों की ओर संकेत करती है जो समूह के सदस्यों के व्यवहार को निर्देशित करते हैं, अपराध करने के लिए इन्हें प्रोत्साहित करते हैं, इस प्रकार के कृत्यों पर उन्हें प्रस्थिति प्रदान करते हैं और उन व्यक्तियों के साथ उनके संबधो को स्पष्ट करते है जो समूह मानदण्डों से बाहर के समूह होते हैं।

¼n½ fLFkfrtU; vijk/k % स्थितिजन्य अपराध की मान्यता यह है कि अपराध गहरी जड़े नहीं रखता और अपराध के प्रकार और इसको नियंत्रित करने के साधन अपेक्षाकृत बहुत सरल होते हैं, एक युवक की अपराध के प्रति गहरी निष्ठा के बिना अपराधी कृत्य में संलग्न हो जाता है, यह या तो कम विकसित, अन्तः नियंत्रण के कारण होता है या परिवार नियंत्रण में कमजोरी के कारण या इस विचार के कारण कि यदि वह पकड़ा भी जाता है तो भी उसकी अधिक हानि नहीं होगी। डेविड माटजा ने इसी प्रकार के अपराध का सदर्भ दिया है।

## cky vijkf/k;ksa dk oxhZdj.k

विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न आधारों पर बाल–अपराधियों का वर्गीकरण किया गया है। उदाहरणार्थ इन्हें 6 श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है।

1. अशाध्यिता उदाहरणार्थ : देर रात तक बाहर रहना,
2. स्कूल से भागना,
3. चोरी,
4. सम्पत्ति की क्षति,
5. हिंसा एवं
6. यौन–अपराध

**नोट**

ईनर और पॉक ने अपराधों के प्रकार के आधार पर पाँच प्रकारों मे वर्गीकरण किया हैं

1. छोटे–छोटे उल्लंघन : यातायात संबधी नियमों का उल्लंघन
2. वृहत उल्लघन : वाहन चोरी संबधी
3. सम्पत्ति सम्बन्धी
4. मादक व्यसन
5. शारीरिक हानि

राबर्ट ट्रोजानोविज (1973) ने अपराधियों को आकस्मिक, असामाजिकतापूर्ण, आक्रामक, कदाचनिक और गिरोह संगठित में वर्गीकत किया है।

मनोवैज्ञानिकों ने बाल अपराधियों को उनके वैयक्ति गुणों या व्यक्तित्व की मनोवैज्ञानिक गत्यात्मकता के आधार पर चारा भागों में बाँटा है, मानसिक रूप से दोषपूर्ण मनस्तापी, तणिकामय पीड़ित और स्थितिजन्य।

## 20-4 cky vijk/k ds dkj.k

बाल अपराध एक सामाजिक समस्या है, अतः इसके अधिकांश कारण भी समाज में ही विद्यमान हैं, इसके कारणों को निम्नलिखित श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है।

### ¼1½ ikfjokfjd dkj.k

परिवार बच्चों की प्रथम पाठशाला है, जहाँ वह अपने माता–पिता एवं भाई–बहनों के व्यवहारों से प्रभावित होता है। जब माता–पिता बच्चों के प्रति अपने दायित्वो का निर्वाह करने में असमर्थ रहते हैं, तो बच्चों से भी श्रेष्ठ नागरिक बनने की अपेक्षा नहीं की जा सकती है। परिवार से संबधित कई कारण बालक को अपराधी बनाने में उत्तरदायी है।

**Hkkfrd o'kkuqØe.k %** बच्चों के शरीर और स्वास्थ्य का संबध उसके वंशानुक्रमण से भी है जो कि उसकी शारीरिक आरै सामाजिक भूमिकाओं को प्रभावित करता है, इटली के अपराधाशासी़ लोम्ब्रोसो ने तो अपराधी प्रवृति को व्यक्ति की शारीरिक विशेषताओं से जनित ही माना था। गोडाई, रिचार्ड डुग्डले एवं इस्टा बुक ने कालिकाक आरै ज्यूक परिवारों का अध्ययन करके पाया कि ये परिवार शारीरिक दृष्टि से क्षत थे तथा इन परिवारों की सभी पीढ़ियां अपराधी थी। भारत में भूतपूर्व अपराधी जनजातियों को भी वशांनुक्रमण के आधार पर अपराधी घोषित किया गया था, अपराधी को वंशानुक्रमण की देन मानने वाले विद्वान मे.डल के वंशानुक्रमण के सिद्धान्त से प्रभावित थे।

किन्तु वर्तमान में अपराध शास्त्र में इस अवधारणा का बहिष्कार किया गया। बर्ट ओर गिलिन ने अपने अध्ययनों मे बाल अपराध को वंशानुक्रमण से संबधित नहीं पाया।

### HkXu ifjokj fuEu nks izdkj ls VwV ldrs gS

**Hkkfrd :i ls rFkk ekufld :i ls %**

**Hkkfrd :i ls ifjokj ds VwVus dk vFkZ gS %** परिवार के सदस्य की मृत्यु हो जाना, लम्बे समय तक अस्पताल, जेल, सेना आदि में रहने के कारण अथवा तलाक और पृथक्करण के कारण सदस्यों का परिवार में साथ–साथ नहीं रहना है।

मानसिक रूप से परिवार के टूटने का अर्थ हैं – सदस्य एक साथ तो रहते हैं किन्तु उनमें मनमुटाव, मानसिक संघर्ष एवं तनाव पाया जाता है। हंसा सेठ, कार, बर्ट, बेजहोट, सुलेन्जर व गलूक आदि अनेक विद्वानों ने अपने अध्ययनों में पाया कि भग्न परिवार बाल अपराध के जनक है।

नोट

vijk/kh Hkkb&cgu % बच्चे अनुकरणप्रिय होते हैं, वे हर अच्छे बुरे काम को बड़ो से अनुकरण के आधार पर सीखते हैं, यदि परिवार में बड़े भाई–बहिन अपराधी हैं और उनके साथ बुरा व्यवहार करते हैं तो बच्चों का व्यक्तित्व विकृत हो जाता है, उनमें विद्रोही भावना के स्वर मुखरित हो जाते हैं, वे दुषित वातावरण से बाहर रहने लगते हैं और गलत संस्कार प्राप्त कर अपराधी बन जाते हैं, अथवा माता पिता बच्चें को समान रूप से स्नेह नहीं देते, तो ऐसी स्थिति में भी बच्चे अपने को परिवार से अलग कर लेते हैं और उनके मन मे अपराध की भावना जागृत हो जाती हैं।

ekrk&firk }kjk frjLdkj % माता–पिता द्वारा बच्चे के विकास और अन्तः करण पर सीधा प्रभाव डालते हैं। अंतविवेक की कमी होने के कारण शत्रुता की भावना के साथ मिलकर आक्रामकता को जन्म देती है, ऐण्ड्री (1960) ने भी माना है कि बाल अपराधी अपराधियों की अपेक्षा माता–पिता का प्यार कम पाते हैं।

इसी प्रकार दोषपूर्ण अनुशासन भी बाल अपराध के लिए जिम्मेदार कारक है, अनुशासन का प्रभुत्वपूर्ण दृष्टिकोण बच्चे के मित्र समूह सम्बन्धों को भी प्रभावित करता है क्योकि बच्चा अपने साथियों के साथ स्वतंत्रता से व्यवहार नहीं कर पायेगा दूसरी और नम्र अनुशासन बच्चे के व्यवहार को निर्देशित करने के लिए आवश्यक नियंत्रण प्रदान नहीं करेगा, अनुचित या पक्षपातपूर्ण अनुशासन बच्चे में यथेष्ट अन्तः भावना का विकास करने में असफल रहता है।

ifjokj dh vkfFkd n'kk % बच्चों की आवश्यकताओं को जुटा पाने में असमर्थ परिवार भी बच्चे में असुरक्षा पैदा कर सकता है ओर उस नियंत्रण की मात्रा को प्रभावित कर सकता है जो परिवार बच्चे पर डाल सकता है क्योंकि वह भौतिक समर्थन तथा सुरक्षा परिवार के बाहर खेाजता है। पीटरसन और बेकर ने बताया कि अपराधियों के परिवार प्रायः भौतिक रूप से कमजोर होते हैं, जो कि बाल अपराधी के स्वंय के प्रत्यक्षण को प्रभावित कर सकते हैं और उसको घर से भागने में सहायक हो सकते है।

HkhM&HkkM ;qDr ifjokj % आधुनिक समाज में नगरीकरण के परिणामस्वरूप व्यक्ति को रहने का पर्याप्त स्थान नहीं मिल पता, बड़े परिवार को भी बहुत छोटे स्थान में रहना पड़ता है। इसके कारण माता–पिता न तो बच्चों पर पूर्ण ध्यान दे पाते हैं, न ही कोई आन्तरिक सुरक्षा उन्हें मिल पाती है, मनोरंजन के साधन भी उपलब्ध नहीं होते हैं, अतः बच्चे अपराध की ओर प्रवृत हो जाते हैं, माता–पिता स्वंय ही उन्हें बाहर भेजना पंसद करते है, जहाँ बच्चे अपराधी बालकों की संगति प्राप्त करते हैं और स्वयं भी अपराधी बन जाते हैं।

½2½ 0;fDrxr dkj.k

पारिवारिक कारणों के अतिरिक्त स्वयं व्यक्ति में ही ऐसी कमियां हो सकती है जिनसे कि वह अपराधी व्यवहार को प्रकट करें।

नोट

**'kkjhfjd dkjd %** जब बालक किसी प्रकार की शारीरिक अक्षमता का शिकार होता है तो उसमें हीनता की भावना विकसित हो जाती है वे अपराध की ओर प्रवृत हो जाते है, सिरिल, बर्ट, हीले तथा ब्रोनर एवं ग्लूक आदि ने बाल अपराधियों के अध्ययन मे ऐसा पाया, हट्टन ने अनेक प्रकार के शारीरिक दोषों जैस बहरापन, स्थाई रोग, शारीरिक अपगंता, बुद्धि की कमी को बाल अपराध का कारण माना है।

### ¼3½ eukoSKkfud dkj.k

मनौवैज्ञानिकों ने मानसिक असमानताओं को भी बाल अपराध के लिए उत्तरदायी माना हैं, मानसिक कारणों में दो कारक महत्वपूर्ण हैं।

**ekufld v;kX;rk %** गोडार्ड, हीले एवं ब्रोनर आदि ने अध्ययनो द्वारा यह पाया कि बाल अपराधी मानसिक रूप से पिछडे होते है, क्लेश एवं चासो ने कोलम्बिया विश्वविद्यालय में सन् 1935 में अपना एक लेख ''दी रिलेशन बिटविन मोरलिटी एण्ड इण्टलेक्ट प्रकाशित किया जिसमें दर्शाया कि कमजोर मस्तिष्क वाले परिवारों का झुकाव अपराध की ओर अधिक था, मानसिक पिछड़ेपन के कारण उनमें तर्क शक्ति का अभाव होता है।

**HkkokRed vfLFkjrk vkSj ekufld l?k"kZ %** भावात्मक अस्थिरता के कारण भी बच्चे अपराधी हो जाते है, सिरिल बर्ट, हीले एवं ब्रोनर ने अध्ययनों में पाया कि प्रायः बाल अपराधी स्वयं को असुरक्षित अनुभव करते है एवं मानसिक सघंर्ष से ग्रसित रहते हें, इसी कारण वे अपराधों की ओर प्रवतृ होते हैं।

### ¼4½ lkeqnkf;d dkj.k

जिस समुदाय में बच्चा रहता है यदि उसका वातावरण अनुपयुक्त है तो वह बालक को अपराधी बना सकता है, सामुदायिक कारकों में सेु कुछ प्रमुख का हम यहाँ उल्लेख करेंगे।

**iM+kl %** पड़ोस का प्रभाव नगरीय क्षेत्रों में अधिक दिखाई देता है, परिवार के अलावा बच्चा अपना अधिकतर समय पड़ोस के बच्चों के साथ व्यतीत करता है, पड़ोस अपराध में व्यक्तित्व सम्बन्धी आवश्यकताओं में व्यवधान बनकर, संस्कृतिक–संघर्ष करके तथा असामाजिक मूल्यों को पोषित करने में सहायक हो सकता है, भीड़–भाड़ वाले तथा अपर्याप्त मनोरंजन की सुविधाओं वाले पडो़स बच्चों की खेल की प्राकृतिक प्रेरणाओं की उपेक्षा करता है और अपराधी समूहों के निर्माण को प्रोत्साहित करता है, पड़ोस में गृह सस्ते होटल, आदि भी अपराधिक गतिविधियाँ के जन्म स्थल होते हैं।

**Ldwy %** विद्यालय के वातावरण का प्रभाव बच्चों पर अत्यधिक पड़ता है। अध्यापकों का व्यवहार, स्कूल के साथी छात्रों व अध्यापकों के साथ सम्बन्ध, पाठ्यक्रमों की कठोरता, मनोरंजन का अभाव, अयोग्य छात्रों की पदोन्नति आदि कुछ ऐसे कारण है जो बच्चों के कोमल मस्तिष्क को प्रभावित करे उसे अपराधी बना देते हैं। कम अंक प्राप्त करने या फेल होने पर बच्चों को स्कुल छुड़वा दिया जाता है या अध्यापकों द्वारा उनका उत्पीड़न किया जाता है या छात्रों द्वारा मजाक उड़ाया जाता है इससे वे हीनता की भावना से ग्रसित होते हैं और अपराध की ओर प्रवृत हो जाते है।

नोट

### pyfp= vkj v'yhy lkfgR;

अनैतिकता, मद्यपान, धूम्रपान से भरे चलचित्र और कामुक पुस्तकें बच्चों के मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव छोड़ते हैं। कई बार वे अपराध के तरीके भी सीखते हैं, हमारे देश के कई भागें मे चोरी, सेंधमारी और अपहरण आदि सिनेमा के तरीकों का प्रयोग करने के जुर्म में अनेक बालक पकड़े जाते हैं। वे दावा करते हैं कि उन्होंने सिनेमा से अपराध के तरीके सीखे थे। चलचित्र सरलता से धन प्राप्त करने की इच्छा जागृत करके, इन उपलब्धियों के लिय विधियाँ सुझाकर, और साहस की भावना भरकर, यौन भावनाँ, भड़का कर और दिवास्वप्न दिखाकर भी बच्चों में अपराधी व्यवहार की अभिरूचि का विकास करते हैं।

### vijk/kh {k=

अपराधी क्षेत्र में निवास का भी अपराधी प्रवृति से घनिष्ठ संबध है, वेश्याओं के अड्डे, जुआरियों, शराबियों के पास निवास स्थान होने पर बच्चों के अपराधी होने के अवसर अधिक रहते हैं क्योंकि बच्चों मे अनुकरण एवं सुझाव –ग्रहरणशीलता अधिक होने के कारण अपराधी प्रवृतियों के सीखने की सभांवना रहती है, शॉ आरै मैनें ने यह बताया कि कई स्थान बच्चों को रखने की दृष्टि से सुरक्षित नहीं हैं, शहर केन्द्र एवं व्यापारी क्षेत्र में अपराध अधिक होते हैं, ज्यों–ज्यों शहर के केन्द्र से परिधि की ओर जाते हैं अपराध की दर घटती जाती है, हीले एवं ब्रोनर की मान्यता है कि अपराध के प्रचलित प्रतिमानों से प्रभावित होकर गंदी बस्तियों के बच्चे अपराध करते हैं।

उपयुर्क्त कारकों के अतिक्तिक बाल अपराध के लिए कुछ अन्य कारक भी उत्तरदायी है जैसे मूल्यो के भ्रम, सांस्कारिक भिन्नता एवं संघर्ष, नैतिक पतन, स्वंतत्रता में वृद्धि, आर्थिक मन्दी आदि। स्पष्ट है कि बालक को अपराधी बनाने मे किसी एक कारक का ही हाथ नहीं होता वरन् अनेक कारकों की सह–उपस्थितियों ही बालक को अपराधी बनाने में योग देती है।

## 20-5 cky vijk/k ds fl)kUr

मर्टन थ्रेशर, शॉ एवं मैके, भीड कोहेन, क्लोवर्ड और ओहलिन आदि समाशास्त्रीय सिद्धान्तवादियो ने बाल अपराध के अपराधशास्त्रीय ज्ञान में प्रमुख योग्दान दिया है जैसे मर्टन का मानक शून्यता सिद्धान्त, यह है कि जब पर्यावरण के भीतर उपलब्ध संस्थाात्मक सांधनो ओर उन लक्ष्यों के, जिन्हें व्यक्तियो ने अपने परिवेश मे चाहा था, क बीच कोई विसंगति रह जाती है, तब तनाव या कुण्ठा पैदा होती है ओर प्रतिमान टूटते हैं परिणास्वरूप विचलित व्यवहार का जन्म होता है।

Fkz'kj dk fXkjkg fl)kUr : यह सिद्धान्त समूह अपराध पर केन्द्रीत है थ्रेशर का कहना है कि गिरोह बाल अपराध में सहयोग करता है, गिरोह किशोरावस्था की अवधि में निरन्तर खेल –समूहों और अन्य समूहों के बीच सघंर्ष से उत्पन्न होता है, और फिर अपने सदस्यों के अधिकारों की रक्षा तथा उन आवश्यकताओं की सतुंष्टि के लिये उस गिरोह में परिवर्तित हो जाता है, जो उनका पर्यावरण और उनका परिवार उन्हें प्रदान नहीं करता है।

धीरे–धीरे गिराहे विशिष्ठ गुणों का विकास करता है, जैसे कार्य करने की विधि, अपराधी तकनीकों को प्रचारित करता है, पारस्परिक हितों और अभिरूचियो को उकसाता है, और अपने सदस्यों को सुरक्षा प्रदान करता है।

नोट

'kkl vkj ekd dk lkLdfrd lØe.k dk fl)kUr % इस सिद्धान्त के अनुसार अपराधी क्षेत्र बाल अपराध की ऊँची दर में सहायक हैंः अपराधी क्षेत्र निम्न आय तथा भौतिक रूप से अवांछित क्षेत्र होते हैं, जिनके सदस्य आर्थिक उपेक्षाओं का शिकार होते हैं, इन क्षेत्रों में मौजूद अपराधी परम्पराओं का प्रभाव ही उन्हें अपराधी बनाता है।

tkt gjcVl HkhM dk ^^Lo** dk fl)kUr vkj Hkfedk fl)kUr % इस सिद्ध ान्त के अनुसार कुछ सीमित संख्या में ही व्यक्ति अपराधी पहचान धारण करते हैं जबकि अधिक संख्या में लोग कानून पालक ही रहते हैं, अपराधी बनने तथा अपराधी पहचान धारण करने में कानून उल्लघंन करने वालों की केवल संगति करने से भी कुछ अधिक सम्मिलित होता है। इस प्रकार के संपर्क व्यक्ति के लिए सार्थक होने चाहिए और ''स्व'' तथा ''भूमिका'' की उप अवधारणाओं के समर्थक होने चाहिये जिनके प्रति वह समर्पित होना चाहता है।

एलबर्ट कोहेन का श्रमिक वर्ग के लड़के तथा मध्यमवर्गीय मानदण्ड मानता है कि अपराध मुख्य रूप से श्रमिक वर्ग की घटना है, श्रमिक वर्ग का लड़का जब कभी मध्यमवर्गीय जगत में जाता है तो वह स्वंय को स्थिति में सबसे नीचे जाता है वह मध्यमवर्गीय मूल्यों को एक स्तर तक मानता है और कुछ सीमा तक वह स्वंय को मध्यमवर्गीय मानकों में कर लेता है। इसलिये उसके समक्ष समायोजन की समस्या आती है। अपराधी उपसंस्कृति इन बालकों को स्थिति का आकार प्रदान करके समायोजन की समस्या हल करती है। अपनी सफलता के लिये प्रतिस्पर्धात्मक संघर्ष का सामना करने के लिये व्यवहार कुशन न होने के कारण श्रमिक वर्ग के लड़के कुण्ठा का अनुभव करते हैं, मध्यमवर्गीय मूल्यों तथा मानकों के विरूद्ध प्रतिक्रिया करते हैं और उनके अनुपयोगी मूल्यों को अपनाते हैं, समूह या गिरोह की अपराधी क्रिया मध्यमवर्गीय संस्थाओं के विरूद्ध वैधता और समर्थन प्रदान करती है।

क्लोवार्ड और ओहलिन का सफल लक्ष्यों और अवसर संरचना सिद्धान्त के अनुसार जब कभी बाल अपने लक्ष्यों को वैद्य तरीकों से प्राप्त करने मे बाधाओं और अपनी आंकाक्षाओं को निम्न स्तर तक लाने में असमर्थता के कारण, निम्नवर्गीय युवक गहन कुण्ठाओं का अनुभव करते हैं जो उन्हें अवैध विकल्पों और अवज्ञा की खाजे में व्यस्त कर देता है।

okYVj feyj dk fuEuoXkhl; ljpu fl)kUr % निम्नवर्गीय संस्कृति की बात करता है जो प्रवाव, प्रवजन, और गतिशीलता के परिणामस्वरूप उभरती है वे व्यक्ति जो इन प्रक्रियाओ के फलस्वरूप पिछड़ जाते हैं वे निम्न वर्ग के सदस्य होते हें वे एक अलग प्रकार के व्यवहार को विकसित कर लेते हैं जो विशिष्ट रूप से कठोरता, चुस्ती, उत्तेजना, भाग्य और स्वायतत्ता जैस गुणों पर आधारित होता है।

MfoM ekV tk dk cgko fl)kUr % माटजा का मानना है कि व्यक्ति न तो पूर्णरूपेण स्वंतत्र है न ही व पूर्णरूपेण निंयत्रित है बल्कि बहवा स्वंतत्रता और नियंत्रण के कहीं बीच में है, इसलिये युवक अपराधी तथा परम्परात्मक क्रिया के बीच बहाव रहता है, यद्यपि युवक की अधिकांश क्रियों, कानून के अनुसार होती हैं, फिर भी यदा–कदा वह अपराध की ओर बह जाता है क्योंकि सामन्य परम्परात्मक नियंत्रण जो अपराधी व्यवहार में मौजूद होते हैं बहाव की प्रक्रिया के परिणामस्वरूप निष्प्रभावी हो जाते है। जब वह अपराध में लिप्त हो जाता है तो फिर वह परम्परात्मकता की ओर वापस बहकता है। इस प्रकार मात्ज़ा ने ''अपराध'' की इच्छाओं पर जोर दिया है।

यदि हम बाल अपराध से सम्बन्धित सभी समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों पर विचार करें तो यह कहा जा सकता है कि सभी समाजशास्त्रियों ने पर्यावरण, सामजिक संरचना और सीखने की प्रक्रिया पर बल दिया है।

नोट

## 20-6 cky vijk/k d mipkj dh fof/k;k

### eukfpfdRlk

यह मनौवैज्ञानिक साधनों से संवेगात्मक और व्यक्तित्व संबंधी समस्याओं का निदान करती है, यह बाल अपराधी के विगत जीवन में कुछ महत्वपूर्ण व्यक्तियों के विषय में भावनाओं ओर अभिधारणाओं को बदलकर उपचार करती हैं। जब बच्चें के संबध प्रारम्भिक अवस्था में अपने माँ–बाप से अच्छे नही होते, तो उसका संवेगात्मक विकास अवरूद्ध हो जाता है, परिणामस्वरूप अपने परिवार के भीतर ही सामन्य तरीकों से संतुष्ट न होकर वह अपनी बाल आकांक्षाओं को संतुष्ट करने के प्रयत्न में अक्सर आवेगी हो जाता है। इन आकांक्षाओं एवं आवेगों की सतुंष्टि असामाजिक व्यवहार का रूप धारण कर सकती है। मनोचिकित्सा के माध्यम से अपराधी को चिकित्सक द्वारा स्नहे और स्वीकृति के वातावरण में विचरण करने दिया जाता है।

### ;FkkFkZ fpfdRlk

यथार्थ चिकित्सा इस विचार पर आधारित है कि अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति न कर पाने वाले व्यक्ति अनुत्तरदायित्वपूर्ण व्यवहार करते हैं, यथार्थ चिकित्सा का उद्देश्य अपराधी बालक को जिम्मेदारी से काम करने में सहायता प्रदान करना अर्थात् असामाहिक क्रियाओं से बचाना है। यह विधि व्यक्ति के वर्तमान व्यवहार का अध्ययन करती है।

### 0;ogkj fpfdRlk

इसमें नवीन सीखने की प्रक्रियाओं के विकास द्वारा बाल अपराधी के सीखे हुए व्यवहार में सुधार लाया जाता है। व्यवहार को पुरस्कार या दण्ड द्वारा बदला जाता है,नकारातमक प्रबलन निषंधात्मक व्यवहार (अपराधी क्रियाओं) को कम करेगा जबकि सकरात्मक प्रबलन (जैसे पुरस्कार) सकरात्मक व्यवहार को बनाए रखेगा। व्यवहार को बदलने में दोनों ही प्रकार के कारकों का प्रयोग किया जा सकता है।

### fØ;k fpfdRlk

कई बच्चों में समूह स्थितियो मे प्रभावी ढंग से मौखिक संवाद करने की क्षमता नहीं होती, क्रिया चिकित्सा विधि में बच्चों को उनमुक्त वातावरण में कुछ न कुछ कार्य करवाये जाते हैं। जहाँ वह अपनी आक्रामकता की भावना को रचनात्मक कार्यों में, खेल या शैतानी में अभिव्यक्त कर सकता है।

### ifjo'k fpfdRlk fof/k

यह ऐसा वातावरण पैदा करती है जो सुविधाजनक अर्थपूर्ण परिवर्तन तथा संजोषजनक समायोजन प्रदान करता है, यह उन लोगें के लिये प्रयोग किया जाता है, जिनका विचलित व्यवहार जीवन की विषम स्थितियों के प्रतिक्रियास्वरूप होता है।

नोट

उपर्युक्त विधियों के अतिरिक्ति बाल अपराधियों को उपचार में तीन और विधियों का प्रयोग भी किया जाता है :

1. व्यक्तिग्त समाज कार्य अर्थात् कुसमायोजित बच्चे को उसकी समस्याओं से निपटने में सहायता करता है। व्यक्तिग्त समाजिक कार्यकर्ता परिवीक्षा अधिकारी कारगर सलाहकार हो सकता है।
2. व्यक्तिगत सलाह अथार्त् अपराधी बालक को उसकी तुरन्त स्थिति को समझना और अपनी समस्या का समाधान करने के लिये पुनर्शिक्षित करना
3. व्यवसायिक सलाह अर्थात् बाल अपराधी को उसके भावी जीवन के चुनाव में सहायता करना है।

## 20-7 cky vijk/k dk jksdus ds mik;

बाल अपराधों को रोकने के लिये वर्तमान में दो प्रकार के उपाय किये गए हैं प्रथम उनके लिए नए कानूनों का निर्माण किया गया है ओर द्वितीय सुधार संस्थाओं एव स्कूलों का निर्माण किया गया है जैसे उन्हें रखने की सुविधाएँ हैं, यहाँ हम दोनों प्रकार के उपायों का उल्लेख करेंगे।

### dkuwuh mik;

बाल अपराधियों को विशेष सुविधा देने ओर न्याय की उचित प्रणाली अपनाने के लिये बाल–अधिनियम और सुधारालय अधिनियम बनाए गए है। भारत मे बच्चों की सुरक्षा के लिए 20वीं सदी की दूसरी दशाब्दी में कई कानून बनें सन् 1860 में भारतीय दण्ड संहिता के भाग 399 व 562 में बाल अपराधियों को जेल के स्थान पर रिफोमेट्रीज में भेजने का प्रावधान किया गया। दण्ड विधान के इतिहास में पहली बार यह स्वीकार किया कि बच्चों को दण्ड देने के बजाय उनमें सुधार किया जाए एवं उन्हें युवा अपराधियों से पृथक रखा जाए।

संपूर्ण भारत के लिए सन् 1876 में सुधारालय स्कूल अधिनियम बना जिसमें 1897 में संशोधन किया गया, यह अधिनियम भारत के अन्य स्थानों पर 15 एवं बम्बई में 16 वर्ष के बच्चों पर लागू होता था, इस कानून में बाल–अपराधियों को औद्योग्कि प्रशिक्षण देने की बात भी कही गयी थी, अखिल भारतीय स्तर के स्थान पर अलग–अलग प्रान्तों मे बाल अधिनियम बने, सन् 1920 में मद्रास, बंगाल, बम्बई, दिल्ली, पंजाब में एवं 1949 में उत्तरप्रदेश मै और 1970 में राजस्थान मे बाल अधिनियम बने, बाल अधिनियमों में समाज विरोधी व्यवहार व्यक्त करने वाले बालकों को प्रशिक्षण देने तथा कुप्रभाव से बचाने के प्रयास किये गए, उनके लिये दण्ड के स्थान पर सुधार को स्वीकार किया गया। 1986 में बाल न्याय अधिनियम पारित किया गया जिसमें सारे देश में एक समान बाल अधिनियम लागू कर दिया गया । इस अधिनियम के अनुसार 16 वर्ष की आयु से कम के लड़के व 18 वर्ष की आयु से कम की लड़की द्वारा किए गए कानूनी विरोधी कार्यो को बाल अपराध की श्रेणी में रखा गया। इस अधिनियम में उपेक्षित बालकों तथा बाल अपराधियों को दूसरे अपराधियो के साथ जेल मे रखने पर रोक लगा दी गई, उपेक्षित बालकों को बाल गृहों का अवलोकन गृहों में रखा जाएगा। उन्हें बाल कल्याण बोर्ड के समक्ष लाया जाएगा जबकि बाल अपराधियों को बाल न्यायलाय के समक्ष। इस अधिनियम में राज्यों को कहा गया कि वे बाल अपराधियों के कल्याण और पुनर्वास की व्यवस्था करेंगे।

## cky U;k;ky;

भारत में 1960 के बाल अधिनियम के तहत बाल न्यायालय स्थापित किये गये है। सन् 1960 के बाल अधिनियम का स्थान बाल न्याया अधिनियम 1986 ने ले लिया है। इस समय भारत के सभी राज्यों मे बाल न्यायालय है। बाल न्यायालय मे एक प्रथम श्रेणी का मजिस्ट्रेट, अपराधी बालक, माता–पिता, प्रोबेशन अधिकारी, साधारण पोशक मे पुलिस, कभी–कभी वकील भी उपस्थित रहते हैं, बाल न्यायालय का वातावरण इस प्रकार का होता है कि बच्चे के मष्तिष्क में कोर्ट का आंतक दूर हो जाए, ज्यों ही कोई बालक अपराध करता है तो पहले उसे रिमाण्ड क्षेत्र में भेजा जाता है और 24 घंटे के भीतर उसे बाल न्यायालय के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है, उसकी सनुवाई के समय उस व्यक्ति को भी बुलाया जाता है जिसके प्रति बालक ने अपराध किया। सुनवाई के बाद अपराधी बालकों को चेतवनी देकर, जुर्माना करके या माता–पिता से बॉण्ड भरवा कर उन्हें सौंप दिया जाता है अथवा उन्हें परिवीक्षा पर छोड़ दिया जाता है या किसी सुधार सस्था, मान्यता प्राप्त विद्यालय परिवीक्षा हॉस्टल में रख दिया जाता है।

**नोट**

## l/kkjkRed lLFkk,¡

बाल अपराधियों को रोकने का दूसरा प्रयास सुधारात्मक संस्थाओं एवं सुधरालयों की स्थापना करने किया गया है जिनमें कुछ समय तक बाल अपराधियों को रखकर प्रशिक्षण दिया जाता है, हम यहाँ कुछ ऐसी संस्थाओं का उल्लेख करेंगें –

### fjek.M {k= ;k voyksdu

जब बाल अपराधी पुलिस द्वारा पकड़ लिया जाता है तो उसे सुधारात्मक रखा जाता है। जब तक उस पर अदालती कार्यवाही चलती है, अपराधी इन्हीं सुधरालयों में रहता है। यहाँ पर परिवीक्षा अधिकारी बच्चे की शारीरिक व मानसिक स्थितियों का अध्ययन करता हैं उन्हें मनोरंजन, शिक्षा एवं प्रशिक्षण आदि दिया जाता है ऐसे गृहों में बच्चें से सही सूचनाएँ प्राप्त की जाती हैं जो वे न्यायाधीश के सम्मुख देने से घबराते है। भारत में दिल्ली एवं अन्य 11 राज्यों में रिमाण्ड होना है। अब इनका स्थान सम्प्रेक्षण गृहों ने ले लिया है।

### izekf.kr ;k l/kkjRed fo|ky; %

प्रमाणित विद्यालय में बाल अपराधियों को सुधार हेतु रखा जाता है। इन विद्यालयों को सरकार से अनुदान प्राप्त ऐच्छिक संस्थाओं चलाती है। इन स्कूलों में बाल अपराधियों को कम से कम तीन वर्ष और अधिकतम सात वर्ष की अवधि के लिये रखे जाते है। 18 वर्ष की आयु के बाल अपराधी के बोस्टले स्कूल के स्थानान्तरित कर दिये जाते हैं। इन स्कूलों में सिलाई, खिलौने बनाने, चमड़े की वस्तुएँ बनाने और प्रशिक्षण दिया जाता है। प्रत्येक प्रशिक्षण कार्यक्रम दो वर्ष के लिए होता है, बच्चों को स्कूल से ही कच्चा माल प्राप्त होता है और उसके द्वारा निर्मित वस्तुओं को बाजार में बेच दिया जाता है और लाभ उसके खाते में जमा कर दिया जाता है। जमा की गई धनराशि एक निश्चित मात्रा तक पहुँचने के बाद स्कूल के बच्चें के केवल राज्य के उपयोग के लिए ही वस्तुओं का उत्पादन करना होता है। बच्चों के 5वें दर्जे तक की बुनियादी शिक्षा भी दी जाती है वर्ष के अन्त में उसको विद्यालय निरीक्षक द्वारा संचालित परीक्षा में भी भाग लेना होता हैं। यदि कोई बाल पाँचवी कक्षा के बाद भी पढ़ना चाहता है तो उसे बाहर के किसी विद्यालय में प्रवेश दिला दिया जाता है।

बोस्टल स्कूल इस प्रणाली के जन्मदाता एल्विन रेग्लिस ब्रादूस थे, यहाँ उन्हीं बालको को रखा जाता है जिसकी आयु 15 से 21 वर्ष तक की होती है। उन्हें यहाँ प्रशिक्षण एवं निर्देशन दिये जाते हैं तथा अनुशासन में रखकर उसका सुधार किया जाता है। अवधि समाप्त होने, अच्छे आाचरण का आश्वासन देने एवं भविष्य में अपराध न करने का वचन देने पर अपराधी को इस विद्यालय से मुक्त किया जाता है। ये स्कूल अपराधी का समाज से पुनः सांमजस्य कराने में योग देते है।

### ifjohk{kk gkLVy

यह बाल अपराधियों के परिवीक्षा अधिनिमय के अन्तर्गत् स्थापित उन बाल अपराधियों के आवासीय व्यवस्था एवं उपचार के लिए होते है जिन्हें परिवीक्षा अधिकारी की देखरेख में परिवीक्षा पर रिहा किया जाता है। परिवीक्षा हॉस्टल निवासियों को बाजार जाने की तथा अपनी इच्छा का काम चुनने की पूर्ण स्वंतत्रता होती है।

विभिन्न देशों की भाँति भारत में भी बाल अपराधियों को सुधारने के लिये प्रयास किये गये हैं, और बाल अपराध की पुनरावृति में कमी आयी है फिर भी इन उपायों में अभी कुछ कमियाँ हैं जिन्हें दूर करना आवश्यक है। बालक अपराध की ओर प्रवेश नहीं हो, इसके लिए आवश्यक है कि बालकों को स्वस्थ मनोरंजन के साधन उपलब्ध कराये जाँए, अश्लील साहित्य एवं दोषपूर्ण चलचित्रों पर रोक लगयी जाए, बिगड़े हुए बच्चें को सुधारने में माता–पिता की मदद करने हेतु बाल सलाकार केन्द्र गठित किये जायें तथा सम्बन्धित कार्मिकों को उचित प्रशिक्षण दिया जाए, संक्षेप मे बाल अपराध की रोकथाम के लिए सरकारी एजेन्सियों (जैसे समाज कल्याण विभाग) शैक्षिक संस्थाओं, पुलिस, न्यायपालिका, सामाजिक कार्यकताओं तथा स्वैच्छिक संग्ठनों के बीच तालमेल की आवश्यकता है।

## 20-8 lkjka'k

इस सम्पूर्ण इकाई में आपने यह जाना कि बाल अपराध क्या है, किन कारणों से बाल अपराध की दर में दिनोदिन वृद्धि होती जा रही है। आपने यह भी समझा लिया होगा कि परिवार का अनुपयुक्त वातावरण, बुरी संगति, मानसिक अस्थिरता तथा कुण्ठाएँ बालकों के विचलित व्यवहार के लिए जिम्मेदार हैं। यद्यपि बाल अपराध की रोकथाम के लिए अनेक उपाय किये गये हैं फिर भी उन उपायों को प्रभावी ढंग से क्रियानवित करने में अभी भी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। इसके लिए पुलिस, शैक्षिक संस्थाओं तथा स्वैच्छिक संगठनों में तालमेल की आवश्यकता है।

## 20-9 vH;kl iz'u

1. बाल अपराध क्या हैं ? भारत में बाल अपराध के उत्तरादायी कारणों की विवेचना कीजिए।
2. बाल अपराध के प्रकारों को स्पष्ट कीजिए।
3. बाल अपराध संबंधी प्रमुख सिद्धान्तों की विवेचना कीजिए
4. भारत में बाल अपराध की समस्या को नियंत्रित करने के लिए कानै से उपाय अपनाए गये हैं ?

# bdkbl&21 ,pvkboh vkj ,Ml

नोट

## ikB&lajpuk

21.0 प्रस्तावना

21.1 एड्स क्या है?

21.2 एचआईवी और एड्स के बीच क्या अंतर है?

21.3 मुझे कैसे पता चलेगा कि मुझे एचआईवी है?

21.4 क्या मुझे एचआईवी का जाँच कराना जरूरी है?

21.5 मुझे जाँच क्यों कराना चाहिए?

21.6 एचआईवी कैसे फैलता है?

21.7 क्या एचआईवी के लिए कोई टीका या इलाज है?

21.8 सारांश

21.9 अभ्याय प्रश्न

## 21-0 iLrkouk

एचआईवी का मतलब है ह्यूमन इम्यूनोडिफिशिएंसी वायरस (Human Immuno-deficiency Virus)। यह वायरस एड्स (AIDS) का कारण बनता है।

मानव शरीर की रक्षा प्रणाली को प्रतिरक्षा प्रणाली या इम्यून सिस्टम कहा जाता है। यह प्रतिरक्षा प्रणाली कई वायरस और बैक्टीरिया से मानव शरीर को लड़ने कि क्षमता प्रदान करती है । HIV इसी प्रतिरक्षा प्रणाली कि कोशिकाओं पर हामला कर इसे कमजोर करता है। यह कोशिकाएं एक प्रकार कि श्वेत रक्त कोशिकाएं होती है जिन्हे सी डी 4 (CD4) सेल्स भी कहा जाता है

अगर वायरस को नियंत्रित करने के लिए दवा का उपयोग न किया गया तो, HIV के जीवाणु CD4 कोशिकाओं पर कब्जा कर उन्हें लाखो वायरस कि प्रतियां बनाने वाली फैक्ट्री में रूपांतरित कर देते है। इस प्रक्रिया में CD4 कोशिकाएं नष्ट हो जाती है जिससे प्रतिरक्षा प्रणाली कमजोर होती जाती है। अंततः यह एड्स का रूप ले लेती है।

एचआईवी के कई अलग अलग प्रकार है। इन्हे दो मुख्य प्रकारों में वर्गीकृत किया जाता है :

- एचआईवी–1 : यह प्रकार दुनिया भर में पाया जाता है और सबसे आम है।
- एचआईवी–2 : ज्यादातर पश्चिम अफ्रीका, एशिया और यूरोप में पाया जाता है।

एच आई वी से प्रभावित किसी भी व्यक्ति के शरीर में एक समय पर एच आय वी के कई अलग प्रकार मौजूद हो सकते हैं ।

नोट

## 21-1 ,Ml D;k g\

एड्स (AIDS) का मतलब अक्वायर्ड इम्यूनोडिफिशिएंसी सिंड्रोम (Acquired Immunodeficiency Syndrome) है। यह एचआईवी संक्रमण कि सबसे अंत में होनी वाली अवस्था है।

एचआईवी, प्रतिरक्षा प्रणाली में काम आने वाली CD4 कोशिकाओं पर हमला कर, शरीर को एड्स कि स्थिति तक पहुंचा देता है। जब शरीर बहुत सी CD4 कोशिकाएं खो देता है तब कई गंभीर एवं घातक संक्रमणों का शिकार हो जाता है। इनको अवसरवादी संक्रमण (opportunistic infections) कहते हैं। जब किसी कि मृत्यु एड्स से होती है तब अक्सर मृत्यु का कारन अवसरवादी संक्रमण और HIV के दीर्घकालिक प्रभाव ही होते हैं। एड्स शरीर कि कमजोर प्रतिरक्षा प्रणाली को दर्शाता है, जो अब अवसरवादी संक्रमण को रोक नहीं सकती।

## 21-2 ,pvkbloh vkj ,Ml d chp D;k vrj g\

एचआईवी के केवल शरीर में प्रवेश से आपको एड्स नहीं हो जाता। आप एचआईवी के साथ (HIV + होना) बिना किसी लक्षण के, या केवल थोड़े बहुत लक्षणों के साथ कई सालों तक जीवन यापन कर सकते है। एचआईवी के साथ जीने वाले लोग अगर परामर्श के अनुरूप दवाएं ले तो उन्हें एड्स होने कि सम्भावना बहुत कम होती है। किन्तु बिना इलाज के एचआईवी अंततः CD4 कोशिकाओं कि संख्या इतनी कम कर देता है कि प्रतिरक्षा प्रणाली बहुत कमजोर हो जाती है। इन लोगो को अवसरवादी संक्रमण होने की गहरी संभावना होती है।

एचआईवी के लिए प्रभावी उपचार उपलब्ध होने से पहले ही एड्स की परिभाषा स्थापित की गई थी। उस समय यह परिभाषा यह संकेत देती थी की वह एड्स ग्रसित व्यक्ति बीमारी या मृत्यु की उच्च जोखिम श्रेणी में शामिल है। उन देशों में जहा एचआईवी उपचार आसानी से उपलब्ध है, एड्स अब इतना प्रासंगिक नहीं रहा। एचआईवी के प्रभावी उपचार के उपलब्ध होने पर, लोग कम CD4 संख्या होते हुए भी स्वस्थ रह सकते हैं। वर्षों पूर्व अगर किसी व्यक्ति को एड्स होने की पुष्टि हुई थी, तब से उसकी प्रतिरक्षा प्रणाली सामान्य स्तर तक वापस आ सकती है। ऐसा होने पर वे एड्स ग्रसित कहे जा सकते है किन्तु उनकी CD4 संख्या सामान्य हो सकती है।

यूएस सेंटर फॉर डिसीज कंट्रोल एंड प्रिवेंशन (सीडीसी) ऐसे लोगों की पहचान करता है जो एड्स या एचआईवी के साथ जी रहें हैं या निम्न में से एक या दोनों स्थितियां में हो :

- कम से कम एड्स में आवश्यक (एड्स की स्थिति को परिभाषित करने वाले) एक लक्षण हो
- सीडी 4 की संख्या 200 कोशिकाएं या उससे कम हो (सामान्य सीडी 4 की संख्या लगभग 500 से 1,500 होती है)

एड्स पीड़ित लोग एचआईवी दवाओं की मदद से अपनी प्रतिरक्षा प्रणाली का पुनर्निर्माण कर सकते हैं, और एक लंबा, स्वस्थ जीवन जी सकते हैं। अगर एड्स होने

के बाद भी आपकी सीडी 4 की संख्या 200 से ऊपर हो जाती है या अवसरवादी संक्रमण (OI) का सफलता पूर्वक इलाज हो जाता है, तो भी आप एड्स के मरीज कहलाएंगे। यहाँ यह जरूरी नहीं है कि आप बीमार ही हों, या भविष्य में बीमार हो सकते हैं। यह बस एक तरीका है जिससे सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली एचआईवी से प्रभावित लोगों की संख्या की गिनती करती है।

**नोट**

## 21-3 e> dl irk pyxk fd e> ,pvkboh g\

अधिकांश लोग यह नहीं बता सकते हैं कि वे एचआईवी के संपर्क में आ चुके हैं या उससे प्रभावित हो चुके हैं। एचआईवी के प्रारंभिक सूक्ष्म लक्षण, एचआईवी संपर्क में आने के दो से चार सप्ताह के भीतर दिखाई दे सकते हैं। यह लक्षण इस प्रकार हो सकते हैं :

- बुखार
- ग्रंथियों में सूजन
- गले में खराश
- रात में अधिक पसीना आना
- मांसपेशी में दर्द
- सर दर्द
- अत्यधिक थकान
- चकत्ते

कुछ लोग इन लक्षणों पर ध्यान नहीं देते क्योंकि ये दिखने में साधारण लगते हैं, या उन्हें लगता है कि उन्हें सर्दी या फ्लू है। इन "फ्लू–जैसे" लक्षणों के गायब होने के बाद भी, एचआईवी से प्रभावित व्यक्ति किसी भी लक्षण के बिना वर्षों तक जी सकता हैं। यदि आप एचआईवी से प्रभावित हैं तो इसे जानने का एक मात्र तरीका एचआईवी जाँच करवाना ही है।

यदि आपको एचआईवी के कुछ शुरुआती या थोड़े लक्षण दिखाई पड़ते हैं, तो यह महत्वपूर्ण है कि आप एचआईवी एंटीजन (न केवल एचआईवी एंटीबॉडी) की जाँच कराएं। एचआईवी एंटीजन यह एचआईवी वायरस, या संक्रमित कणों के अंश होते हैं। यदि एचआईवी एंटीजन आपके रक्त में है, तो ऐसी जाँचें उपलब्ध हैं जो आपके वायरस के संपर्क में आने से दो सप्ताह बाद ही एचआईवी संक्रमण की पहचान कर सकते हैं।

शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली, एचआईवी को चिह्नित कर उनका विनाश करने के लिए एंटीबॉडीज नमक प्रोटीन बनाता है। यह एंटीबॉडीज बनाने में शरीर को एक से तीन महीने या कभी–कभी छह महीने तक का समय लगता है। एचआईवी से प्रभावित होने और एंटीबॉडी के उत्पादन के बीच के तीन से छह महीने की अवधि को "विंडो अवधि" कहा जाता है। इसलिए, एंटीबॉडी का पता लगाने वाली जाँच, एचआईवी के संपर्क में आने के एक से तीन महीने बाद ही विश्वसनीय होती हैं।

## 21-4 D;k e|>s ,pvkbZoh dk tkp djkuk t:jh g\

सीडीसी का अनुमान है कि लगभग 15 प्रतिशत अमेरिकी लोग जो एचआईवी से संक्रमित है, नहीं जानते कि वे एचआईवी से प्रभावित हैं। इनमें से बहुत से लोग स्वस्थ दिखते है, अच्छा महसूस करते हैं और यह नहीं सोचते कि उन्हें इस प्रकार की कोई जोखिम है। लेकिन सच्चाई यह है कि किसी भी उम्र, लिंग, नस्ल, जातीयता, सामाजिक समूह या आर्थिक वर्ग का व्यक्ति एचआईवी से संक्रमित हो सकता है। मनुष्य इन कारकों के आधार पर भेदभाव कर सकता है, लेकिन वायरस नहीं करता है।

यह देखने के लिए कि क्या आपको एचआईवी कि जाँच करवाना चाहिए, निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें :

- क्या आपने कभी लिंग को योनि में (वजाइनल इंटरकोर्स) या लिंग को गुदा में (ऐनल इंटरकोर्स) सम्भोग, या बिना कंडोम या अन्य बेरियर (जैसे, डेंटल डैम) के बिना मौखिक सम्भोग (ओरल सेक्स) किया है? नोटः मुख सम्भोग (ओरल सेक्स) एक कम जोखिम वाली गतिविधि है। योनि और गुदा सेक्स (वजाइनल और ऐनल सेक्स)– में बहुत अधिक खतरा होता है।
- क्या आप अपने साथी के एचआईवी स्थिति को जानते हैं या आपका साथी एचआईवी संक्रमित है?
- क्या आप गर्भवती हैं या गर्भवती बनने का विचार कर रही हैं?
- क्या आपको कभी यौन संक्रमण या यौन रोग (एसटीआई या एसटीडी) हुई है?
- क्या आपको हेपेटाइटिस सी (एचसीवी) है?
- क्या आपने कभी दवाओं को इंजेक्ट करने के लिए सुई, सीरिंज या अन्य उप. करण साझा किए हैं (स्टेरॉयड या हार्मोन के लिए भी)?

यदि आपका इनमें से किसी भी प्रश्न का उत्तर हाँ है, तो आपको निश्चित रूप से एचआईवी जाँच कराना चाहिए। अमेरिका में, 13–64 वर्ष के बीच के सभी लोगों का एचआईवी जाँच कम से कम एक बार होती है।

## 21-5 e|>s tkp D;ksa djkuk pkfg,\

यदि आप चिंतित हैं कि आप एचआईवी के संपर्क में आ गए हैं, तो जांच करवाएं। यदि जांच के बाद आप जान जाते है की आपको हिव संक्रमण नहीं है यानि आप एचआईवी नेगेटिव (एचआईवी – टम) तो आप चिंता न करे। आप प्री–एक्सपोजर प्रोफिलैक्सिस (पीआरईपी/ PrEP) या पोस्ट–एक्सपोजर प्रोफिलैक्सिस (पीईपी/ PEP) कराने पर भी विचार कर सकते हैं। PrEP का मतलब है, एचआईवी के संपर्क में आने से पहले एचआईवी की दवा लेना, ताकि खुद को बचाया जा सके। पीईपी का मतलब है एचआईवी के संभावित जोखिम के तुरंत बाद लगभग एक महीने के लिए एचआईवी दवाओं को लेना, ताकि एचआईवी संक्रमण को रोका जा सके।

यदि आप एचआईवी. +/एचआईवी पॉजिटिव पाए जाते है, तो आपको स्वस्थ रहने में मदद करने के लिए प्रभावी दवाएं हैं। ये दवाएं एचआईवी के संक्रमण को रोकने का

भी काम करती हैं। जब एचआईवी से प्रभावित व्यक्ति एचआईवी दवा लेता रहता है और उसका संक्रमण लोड (उसके रक्त में एचआईवी की मात्रा) बहुत कम स्तर तक पहुंच जाता है (जाँच में मापने के लिए उसके रक्त प्रवाह में पर्याप्त एचआईवी नहीं होते है). ऐसी स्थिति में वह अपने साथी को एचआईवी संक्रमण से बचा सकता है।

नोट

लेकिन यदि आप अपनी एचआईवी स्थिति (चाहे आप एचआईवी से प्रभावित हो या एचआईवी नेगेटिव हो) नहीं जानते हैं, तो आपको सही उपचार नहीं मिल पाएगा। यदि आपको अपनी स्थिति का पता नहीं है, तो आप जाने बिना दूसरों को भी एचआईवी संक्रमित कर सकते हैं।

गर्भवती होने जा रही महिलाओं के लिए, जाँच विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। यदि महिला एचआईवी से संक्रमित है, तो गर्भावस्था के दौरान ली गई कुछ एचआईवी दवाएं और देखभाल उसके बच्चे को एचआईवी पॉजिटिव होने की संभावना को कम कर सकते हैं।

## 21-6 ,pvkboh dls Qyrk g\

एचआईवी संक्रमण को रोका जा सकता है ! शरीर के तरल पदार्थों के साथ संपर्क में आने से जो एचआईवी फैलाता हैं, उसे रोकने के या कम करने के कई तरीके हैं। यह फैक्ट शीट इस विषय में आपको जानकारी देगा।

बहुत से लोग अभी भी यह नहीं समझते हैं कि एचआईवी कैसे फैलता है, या एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में कैसे प्रसारित होता है। कुछ बुनियादी बातें जानने से आपको एचआईवी से बचने में मदद मिलती है। यदि आप एचआईवी के साथ जी रहे हैं, तो ये बातें आपको किसी और को एचआईवी प्रसारित होने से बचाने में मदद करती हैं।

एचआईवी निम्नलिखित शरीर के तरल पदार्थों के संपर्क में आने से फैलता है :

- रक्त (मासिक धर्म के एवं लार या मल–मूत्र में पाए जाने वाला रक्त भी)
- वीर्य और अन्य पुरुष यौन उत्सर्जन
- योनि के तरल पदार्थ
- माँ के दूध से

जब एचआईवी के साथ जीने वाला व्यक्ति एचआईवी दवाएं लेता है तब उनका वायरल लोड बहुत ही कम स्तर तक पहुंच जाता है (परीक्षण में मापने के लिए उनके रक्तप्रवाह में पर्याप्त एचआईवी नहीं है)। तब वह व्यक्ति अपने साथी को एचआईवी संक्रमित नहीं कर सकता है। इसे उपचार के रूप में रोकथाम कहा जाता है । अक्सर एचआईवी समुदाय में सरल वाक्यांश "Undetectable equals untransmittable" या "U=U" द्वारा प्रतिनिधित्व किया जाता है।

इसके बारे में और अधिक जानकारी के लिए, हमारी फैक्ट शीट को देखें अनडीटेक्टेबल इक्वल्स अनट्रांसमिटेबल : बिल्डिंग होप एंड एंडिंग एचआईवी स्टिग्मा।

एचआईवी, शरीर के निम्न तरल पदार्थों के संपर्क में आने से भी फैलता है। हालांकि, आमतौर पर केवल स्वास्थ्यकर्मी ही इन तरल पदार्थों के संपर्क में आते हैं। यह पदार्थ हैं :

**नोट**

- मस्तिष्क और रीढ़ की हड्डी के आसपास मस्तिष्क मे : द्रव (स्पाइनल फ्लूइड)
- जोड़ों के आसपास श्लेष द्रव (सायनोवियल फ्लूइड)
- गर्भ में बच्चे के आसपास एमनियोटिक फ्लूइड

शरीर के इन तरल पदार्थों के संपर्क में आने से एचआईवी नहीं फैलता हैः

- पसीना
- अश्रु
- लार (थूक)
- मल
- मूत्र

दूसरे शब्दों में, आपको किसी एचआईवी पॉजिटिव व्यक्ति को छूने या गले लगाने से एचआईवी नहीं हो सकता। एचआईवी पॉजिटिव व्यक्ति के साथ रहने से, साथ खाने से, बर्तन साँझा करने से, एक शौचालय का उपयोग करने से या चूमने से एचआईवी नहीं फैलता।

### lØe.k d rjhd

वर्तमान समय में एचआईवी फैलने के सबसे आम कारन निम्नानुसार है :

- दवाओं अथवा नशीले पदार्थों के इंजेक्शन (स्टेरॉयड या हार्मोन सहित) के लिए सुइयों का साँझा करना या पुनः उपयोग करना
- असुरक्षित यौन सम्बन्ध , यानि निम्न अवरोधों के बिना प्रस्थापित किये गए यौन संबंधों में, जैसे :
    1. बिना कंडोम के सेक्स
    2. अन्य अवरोधक जैसे डेंटल डैम के बिना सेक्स करना
    3. एचआईवी पॉजिटिव साथी का अत्यंत कम वायरल लोड स्थिति में न होना (उपचार के रूप में रोकथाम)
    4. एचआईवी नेगेटिव साथी का बिना PreP (प्रीएक्सपोजर प्रोफीलेक्सिस) का इस्तेमाल किये सेक्स करना
- माँ –से–बच्चे में (गर्भावस्था, जन्म या स्तनपान के दौरान)

### lb;k dk fQj l mi;kx vkj lk>k djuk %

- nokvk d btD'ku d fy, % हेरोइन, मेथामफेटामाइन, स्टेरॉयड, हार्मोन, या अन्य दवाओं को इंजेक्ट करने के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले उपकरणों को साझा करने पर कई लोगों को एचआईवी हो जाता है। सीरिंज, सुई, पानी, चम्मच, "कुकर," या "कॉटन" का साँझा या पुनः उपयोग करने से एचआईवी फैल सकता है। सुई वितरण कार्यक्रम या फार्मेसि जैसे विश्वसनीय स्रोतों से प्राप्त नई सीरिंज और सुई का उपयोग करना सुनिश्चित करें। कई शहर मुफ्त सुई और सिरिंज वितरण कार्यक्रम संचालित करते हैं। अधिक जानकारी के लिए, हमारी फैक्ट शीट ड्रग्स इंजेक्ट करने के लिए सफाई उपकरण में देखें।

नोट

- **VV ;k c,Mh fi;flx %** टैटू या बॉडी पियर्सिंग हमेशा एक लाइसेंस प्राप्त पेशेवर द्वारा ही किया जाना चाहिए जिसके उपकरण, स्याही सहित जंतुरहित हो। यूएस सेंटर फॉर डिसीज कंट्रोल एंड प्रिवेंशन (सीडीसी) ने सलाह दी है की एक बार प्रयुक्त हो चुके उपकरणों का पुनः उपयोग न करे। उपकरणों को एक इस्तेमाल के बाद फेंक दे। जब भी कोई उपकरण का उपयोग करें यह सुनिश्चित करें की वे पूरी तरह जंतु रहित हैं। इसके लिए उपकरणों को केवल अल्कोहल से पोछना पर्याप्त नहीं है। पूरी तरह से जंतु रहित करने के लिए उपकरणों को भाप, या ऑटोक्लेव में रखना चाहिए।

## vljf{kr ;ku lc/k

असुरक्षित यौन संबंध बिना कंडोम या एचआईवी उपचार–रोकथाम के तरीकों के बिना किया हुआ सेक्स होता है। असुरक्षित सेक्स आपको और/या आपके साथी को एचआईवी या अन्य एसटीआई या एसटीडी के खतरे में डाल सकता है। सुरक्षित सेक्स (कंडोम के साथ ,उपचार के रूप रोकथाम के तरीकों का लगातार और सही उपयोग) आपकी एवं आपके साथी की सुरक्षा के लिए सबसे प्रभावी तरीका है।

एचआईवी ड्रग्स लेना सुरक्षित सेक्स का एक हिस्सा हो सकता है। एचआईवी ड्रग्स लेने से एचआईवी के साथ जीने वाले लोगों से दूसरों को एचआईवी संक्रमण का खतरा कम हो जाता है। एचआईवी ड्रग्स उनके वायरल लोड को कम करके बहुत कम स्तर तक ले जा सकते हैं। यह उनके रक्त, योनि द्रव और वीर्य को दूसरों में एचआईवी फैलाने की संभावना को बहुत कम कर देते है।

प्री–एक्सपोजर प्रोफिलैक्सिस (PrEP) के रूप में एचआईवी दवाएं ले रहे एचआईवी नेगेटिव लोग अगर वायरस के संपर्क में आते हैं तो उन्हें एचआईवी होने की संभावना बहुत कम है। अधिक जानकारी के लिए, कृपया हमारे महिलाओं के लिए PrEP फैक्ट शीट देखें।

इन तरीकों को एचआईवी उपचार के रूप में रोकथाम (Treatment as prevention TasP) के नाम से जाना जाता है। TasP अन्य यौन संक्रमणों या बीमारियों (STI या STDs) से बचाव नहीं कर सकता। अधिक जानकारी के लिए कृपया TasP पर हमारी फैक्ट शीट को देखें।

निरोध/कंडोम (पुरुष और महिला), डेंटल डैम (लेटेक्स का एक पतला आवरण), और लेटेक्स या नाइट्राइल की दस्ताने भी सेक्स (मौखिक, गुदा या योनि) के माध्यम से एचआईवी के जोखिम को बहुत कम करते हैं।

कौन सी ऐसी सामान्य यौन गतिविधियां हैं जिनमे असुरक्षित यौन सम्बन्ध होने पर एचआईवी के संक्रमण की सम्भावना सबसे अधिक होती हैं? उच्च से निम्न जोखिमवाली गतिविधियों को सूचीबद्ध किया गया है :

1. **xnk eFku ¼Þuhp dh vkj lÞ½%** असुरक्षित तरीके से गुदा के माध्यम से लिंग को अंदर लेना एचआईवी संक्रमण के लिए सबसे ज्यादा जोखिम भरा माना जाता है। गुदा/मलाशय में मौजूद छोटे जख्म जब वीर्य के संपर्क में आते हैं तब कोई भी संक्रमण रक्तप्रवाह के सीधे संपर्क में आ जाता है।

नोट

2. **;kfu lEHkksx %** असुरक्षित तरीके से लिंग को योनि में ले जाने से एचआईवी संक्रमण हो सकता है। महिलाओं से पुरुषों की तुलना में पुरुषों से महिलाओं को एचआईवी बहुत आसानी से फैलता है।
3. **bUlfVo ,uy lSDl %** असुरक्षित तरीके से अपने लिंग को किसी की गुदा/मलाशय में डालने से आप एचआईवी के शिकार हो सकते हैं।
4. **;kfu lEHkksx %** अपने लिंग को योनि में डालना, विशेष रूप से जब महिला मासिक धर्म से हो, तो आप एचआईवी के शिकार हो सकते हैं।
5. **eq[k eSFkqu nsuk %** किसी अन्य व्यक्ति के जननांगों (लिंग, योनि, या गुदा) को चाटने, चूसने या काटने के लिए अपने मुंह का उपयोग करने से आप एचआ. ईवी के शिकार हो सकते हैं। वीर्य को निगलने, मासिक धर्म के खून को मुँह के संपर्क में लाना, मसूड़ों से खून आना, मुंह के छाले या मसूड़ों की बीमारी से आपमें एचआईवी होने का खतरा बढ़ जाएगा।
6. **eq[k eSFkqu djokuk %** जननांगों को चाटना, चूसना, या काटना कम जोखिम भरा है। हालाँकि, आपको अपने साथी से एचआईवी हो सकता है, खासकर यदि आपके साथी को मसूड़ों से खून आना, मुंह के छाले या मसूड़ों की बीमारी है।
7. **lSDl V‚;t dk fcuk tkap fjgr mfd;s ;k fcuk u;k dUMke igus lk>k djuk %** सेक्स टॉयज का उपयोग करने वाले साथियों में यह HIV संक्रमण को फैला सकता है।
8. **vkilh gLreSFkqu ¼gkFkksa ls ;kSufØ;k djuk½] Nwr yxkuk vkSj fQfLVax ¼xqnk ;k ;kfu esa ço'k djus ds fy, gkFk dk mi;ksx djuk½ %** इनमें बहुत कम खतरा रहता है, जब तक कि आपके हाथ में कोई खुला कट या घाव नहीं है

बलात्कार के परिणामस्वरूप संक्रमण तब हो सकता है यदि हमलावर एचआईवी पॉजिटिव हो। जब बलात्कार में गुदा प्रवेश, बल या हमले शामिल होते हैं तो संक्रमण का जोखिम बढ़ जाता है। कुछ यौनक्रिया जिनमे बलप्रयोग के कारन घाव बनते हैं, पीड़ित को बहुत अधिक जोखिम में डाल सकते हैं।

यौन उत्पीड़न या बलात्कार पीड़ित व्यक्ति जो एच आई वी पॉजिटिव नहीं हैं उन्हें इमरजेंसी रूम में जाकर पी इ पी (पोस्ट–एक्सपोजर प्रोफिलैक्सिसय गैर–व्यावसायिक पीईपी या एनपीईपी) अवश्य लेना चाहिए। एचआईवी दवाओं की इस 28–दिवसीय उपचार पद्धति से एचआईवी होने की संभावना बहुत कम हो जाती है। PEP, TasP का दूसरा रूप है।

प्रभावी रोकथाम के लिए, पीईपी को जोखिम के पहले 72 घंटों के भीतर शुरू किया जाना चाहिए। इलाज जितना पहले शुरू किया जाता है, वह उतना ही प्रभावी होता है। यदि बलात्कार या यौन हमले के बाद आपातकालीन कक्ष या क्लिनिक में पीईपी की पेशकश नहीं की जाती है, तो इसके लिए पूछने से न डरें।

## çlodkyhu lapj.k

नोट

एचआईवी पॉजिटिव गर्भवती महिलाएं प्रसव के दौरान, या स्तनपान द्वारा अपने बच्चे को HIV संक्रमण दे सकती हैं। इसे पेरिनेटल या वर्टिकल ट्रांसमिशन कहा जाता है। इसे मदर–टू–चाइल्ड ट्रांसमिशन के रूप में भी जाना जाता है। गर्भावस्था के दौरान दी जाने वाली चिकित्सा देखभाल और एचआईवी ड्रग्स वास्तव में बच्चे को इसकी माँ से एचआईवी होने के खतरे को समाप्त कर सकते हैं। अधिक जानकारी के लिए, हमारी फैक्ट शीट गर्भावस्था और एच.आई.वी..देखें।

अमेरिका जैसे विकसित देशों में, विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) की सिफारिश है कि एचआईवी से पीड़ित माताएं अपने बच्चों को स्तनपान न करायें। अन्य देशों में, जहां फॉर्मूला दूध उपलब्ध नहीं है या स्वच्छ जल के स्रोत अविश्वसनीय हैं, यह अनुशंसा की जाती है कि माताएं अपने बच्चों को पूर्ण रूप से स्तनपान करायें (कोई मिश्रित स्तनपान नहीं, जैसे कि थोड़ा बहुत स्तन का दूध और थोड़ा ग्राइप या चीनी का पानी)। यह भी जरूरी है कि अपने बच्चे को वह भोजन न खिलाएं जो किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा चबाया गया है जो एचआईवी पॉजिटिव हो। यह आपके बच्चे में एचआईवी को प्रसारित कर सकता है।

अधिक जानकारी के लिए, हमारी फैक्ट शीट क्या मैं एचआईवी पॉजिटिव होने के बावजूद स्तनपान करा सकती हूं? देखें शिशु आहार विकल्पों का अवलोकन।

## lØe.k dh vU; çdkj

पूर्व में, रक्त या रक्त उत्पादों (पूर्ण रक्त या हीमोफिलिया पेशेंट्स द्वारा उपयोग किए जाने वाले फैक्टर्स) से एच आई वी संक्रमण फैलता था। कई लोगों में इसी तरह एचआईवी हुआ। अधिकांश देशों में रक्त की आपूर्ति अब बहुत अधिक सख्ती से जांची और नियंत्रित की जाती है। अमेरिका, ब्रिटेन और कनाडा जैसे देशों में रक्त या फैक्टर्स के प्राप्त होने से एचआईवी होने की संभावनाएं बहुत कम होती हैं। उदाहरण के लिए, यूएस के आंकड़े बताते हैं कि एक व्यक्ति के बिजली गिरने से मारे जाने की संभावना रक्ताधान से एचआईवी होने की सम्भावना से ज्यादा है। दो मिलियन रक्तदान में एक एचआईवी पाया जा सकता है। हालांकि, अभी भी कई देश हैं जो एचआईवी के लिए सभी रक्तदानों की जांच नहीं करते हैं।

एचआईवी के साथ रहने वाले लोगों से त्वचा के ग्राफ्ट या प्रत्यारोपित अंगों से एचआईवी प्राप्त करना भी संभव है। इन प्रक्रियाओं में भी जोखिम बहुत कम माना जाता है, क्योंकि इन "शरीर उत्पादों" का रक्त उत्पादों के समान कड़ाई से परीक्षण किया जाता है। कृत्रिम गर्भाधान के लिए शुक्राणु बैंकों द्वारा एकत्र किए गए वीर्य को "शारीरिक उत्पाद" माना जाता है और विकसित देशों में इसका कड़ाई से परीक्षण किया जाता है। निजी तौर पर दान किये गए वीर्य के नमूने जो शुक्राणु बैंकों के माध्यम से नहीं लिए जाते, उनका संभवतः परिक्षण नहीं किया गया होता । कृत्रिम गर्भाधान के लिए निजी दाता/ डोनर से शुक्राणु प्राप्त करने वाले किसी भी व्यक्ति को डोनर का एचआईवी परीक्षण करना जरूरी है।

कुछ लोग, जैसे स्वास्थय कार्यकर्ता, आकस्मिक संक्रमित सुई के चुभने से या संक्रमित रक्त के साथ किसी चिकित्सा दुर्घटनाओं से एचआईवी संक्रमण पा सकते हैं। यह

हादसे संपूर्ण सेरोकन्वेर्जन का बहुत कम प्रतिशत है। यूएस सेंटर ऑफ डिजीज कंट्रोल एंड प्रिवेंशन (सीडीसी) के अनुसार, काम पर एचआईवी संक्रमित रक्त के संपर्क में आने पर हर 1,000 जोखिमों में से केवल तीन कार्यकर्ता एचआईवी प्राप्त करेंगे अगर उनको समय पर उपचार न मिल पाए। कार्य स्थल पर रहते हुए अगर संक्रमित रक्त के संपर्क में आने से अगर कर्मचारी संक्रमित हो जाते हैं, तो उन्हें तत्काल ओक्कुपेशनल पोस्ट एक्सपोजर प्रोफिलैक्सिस (oPEP) देना चाहिए।

यदि आप किसी दूध बैंक से माँ का दूध प्राप्त कर रहे हैं, तो यह पूछना महत्वपूर्ण है कि क्या बैंक एचआईवी के लिए दूध का परीक्षण करता है। इसके अलावा, यदि आपके बच्चे को दूध पिलाने वाली नर्स से दूध मिल रहा है, तो यह सुनिश्चित करना महत्वपूर्ण है कि वह आपके बच्चे को दूध देने से पहले अपने एचआईवी नेगेटिव होने का परीक्षण करे।

## lØe.k l cpuk

जब शरीर के कुछ तरल पदार्थों का आदान–प्रदान होता है, तब ही एचआईवी संक्रमण की जोखिम होती है। आप संक्रमण के जोखिम को बहुत कम कर सकते हैं :

- यदि आप एचआईवी के साथ जी रहे हैं तो अपनी एचआईवी स्थिति को जानना जरूरी है ताकि आप किसीको एचआईवी संक्रमित न करें, अधिक जानकारी के लिए, हमारी फैक्ट शीट एचआईवी परीक्षण देखें।
- यदि आप एचआईवी पॉजिटिव हैं तो अपने एचआईवी ड्रग एवं आहार पर बने रहें। अगर आपका वायरल लोड बहुत काम हो जाता है तो आपके द्वारा किसी और को संक्रमित करने की सम्भावना बहुत कम हो जाती है,
- PrEP लेते हुए सुरक्षित सेक्स करना,
- सेक्स से परहेज
- नशीली दवाओं से दूर रहना
- किसी भी इंजेक्शन के लिए नई या जंतुरहित सुइयों और अन्य उपकरणों का उपयोग करना

याद रखें, किसी भी सामान्य संपर्क से आपको एचआईवी होने का डर पालना आवश्यक नहीं है. एचआईवी निम्न कारणों से नहीं फैलता है :

- गले मिलने से
- नृत्य से
- भोजन या पेय पदार्थ बांटने से
- शौचालय, शावर, स्नान या बिस्तर का उपयोग करने से
- चुंबन से
- व्यायाम उपकरण साझा करने से
- कीड़ों के काटने से

## 21-7 D;k ,pvkbZoh d: fy, dkbZ Vhdk ;k bykt g\

नोट

एचआईवी के लिए न तो कोई टीका है और नही कोई इलाज है। एचआईवी को रोकने के लिए सबसे अच्छा तरीका है कि आप हर बार रोकथाम के तरीकों को अपनाएँ, जिसमें सुरक्षित यौन सम्बन्ध शामिल है (कम या बिना जोखिम वाली गतिविधियों को चुनना, कंडोम का उपयोग करना, यदि आप एचआईवी से प्रभावित हैं तो एचआईवी दवाओं को लें या यदि आप एचआईवी नेगेटिव हैं तो PrEP ले) जीवाणुरहित (स्टरलाइज्ड) सुई का उपयोग करें (दवाओं, हार्मोन या टैटू के लिए)।

## lkekftd leL;k Hkh g\ ,M~l

भारत में एड्स पीड़ितों की स्थिति में सुधार हुआ है लेकिन किशोरों में हालत चिंताजनक है। शिवप्रसाद जोशी का कहना है कि एड्स सिर्फ बीमारी ही नहीं है बल्कि एक सामाजिक समस्या है जिसके आर्थिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक आयाम हैं।

1986 में चेन्नई में डॉ सुनीति सोलोमन ने एक महिला यौनकर्मी में एड्स के वायरस की पहचान की थी। इसे भारत में एड्स का पहला मामला माना जाता है लेकिन उसके बाद से एड्स का संकट एक महामारी के तौर पर लगातार बढ़ता जा रहा है। एड्स से ग्रस्त होने वाले व्यक्ति और उसके परिवार पर क्या गुजरती है इसका अंदाजा ही लगाया जा सकता है। एड्स के लिये संयुक्त राष्ट्र के कार्यक्रम यूएनएड्स के मुताबिक भारत में करीब 21 लाख लोग एड्स से पीड़ित हैं जो दुनिया में नाइजीरिया और दक्षिण अफ्रीका के बाद तीसरी सबसे बड़ी संख्या है। नेशनल एड्स कंट्रोल ऑरगेनाइजेशन के अनुसार एड्स के मामले महिलाओं से अधिक पुरूषों में देखे जाते हैं। सबसे ज्यादा चिंताजनक बात ये है कि एड्स के 80% से ज्यादा मामले 15–39 आयु वर्ग के लोगों के बीच में हैं यानी कि समाज का सबसे अधिक क्रियाशील और कामगार तबका इसकी चपेट में है।

यूएनएड्स के मुताबिक भारत में सिर्फ 36% लोगों को ही एड्स का उपचार मिल पाता है। बाकी 64% लोगों को इसका उपचार मिल ही नहीं पाता है। कुछ हद तक संतोष की बात ये है कि यूएनएड्स की रिपोर्ट के अनुसार 2005 से 2013 के बीच एड्स से हुई मौतों की संख्या में करीब 38% की गिरावट आई है। इसकी वजह उपचार के साधनों का विस्तार माना जाता है। एड्स के ज्यादातर मामले पूर्वोत्तर के राज्यों और दक्षिण के राज्यों में हैं। इस बीच बिहार और मध्य प्रदेश में भी एड्स पीड़ितों की संख्या में बढ़ोत्तरी देखी गई है। यौन कर्मियों में भी एड्स के मामले बढ़ते जा रहे हैं। यौन कर्मियों की संख्या करीब 868000 बताई जाती है जिसमें से लगभग 2.8% एड्स से पीड़ित हैं।

भारत में एड्स की प्रमुख वजह है प्रवासी श्रमिक और दूसरे देशों में जाने वाले नौकरीपेशा लोग, असुरक्षित यौन संबंध और असुरक्षित रक्तदान. हांलाकि भारतीय सेना इसे आधिकारिक तौर पर नहीं स्वीकारती है लेकिन कुछ गैरसरकारी संगठनों और स्वैच्छिक संस्थाओं के अनुसार सेना में भी एड्स के मामले बढ़ते जा रहे हैं। खास तौर पर ऐसे सैनिक जो दूरदराज के इलाकों में तैनात हैं उनमें और उनसे एड्स के फैलने की आशंका रहती है। भारत जैसे देश में जहां कैंसर और डायबिटीज जैसी बीमारियां भी बड़ी चुनौती हैं वहां एड्स के निदान से ज्यादा जरूरी इसकी रोकथाम है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य बजट का करीब पांच प्रतिशत स्वास्थ्य सेवाओं पर खर्च किया जाता है। अगर नैको के आंकड़े देखें

नोट

तो प्राथमिक उपचार से लेकर सेकेंड लाइन ट्रीटमेंट तक एक मरीज के उपचार में करीब 6500 से लेकर 28500 का खर्च आता है। लिहाजा एड्स का इलाज काफी मंहगा है। हांलाकि हाल के वर्षों में भारत में स्थानीय स्तर पर जेनेरिक दवाओं के उत्पादन से भी एड्स की रोकथाम में व्यापक सफलता मिली है।

## 21-8 lkjk'k

एड्स की बीमारी और उसके रोकथाम के अलावा इसका सबसे दर्दनाक पक्ष है एड्स से पीड़ित व्यक्ति को जिस तरह से अछूत समझा जाता है और सामाजिक भेदभाव का शिकार होना होता है। स्कूल–कॉलेज से बेदखल होना होता है, नौकरी से निकाल दिया जाता है और यहां तक कि कई बार कैद कर देने और प्रताड़ित भी करने के मामले सामने आए हैं। इसके लिये उपचार और रोकथाम के साथ–साथ एड्स पीड़ित के मानवाधिकार की रक्षा करना भी जरूरी है। इसके लिये समाज को अपना नजरिया बदलना ही होगा।

## 21-9 vH;k; i'u

1. एड्स क्या है? व्याख्या करें।
2. एचआईवी और एड्स के बीच क्या अंतर है? स्पष्ट करें।
3. एचआईवी कैसे फैलता है? इसके रोकथाम के उपाय सुझाएं।

# bdkbZ&22 vkRe gR;k

## ikB&lajpuk


22.0 उद्देश्य

22.1 प्रस्तावना

22.2 आत्म हत्या का अर्थ एवं विशेषतायें

22.3 आत्म हत्या के कारण

22.4 आत्म हत्या के प्रकार

22.5 सारांश

22.6 अभ्यास प्रश्न


नोट

## 22-0 mís';

प्रस्तुत इकाई में आत्म हत्या से सम्बन्धित अवधारणा, अर्थ एवं विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है। जिसमें बताया गया है कि आत्म हत्या क्या है? तथा इसकी विशेषतायें कौन–कौन सी है? इसी इकाई में आत्म हत्या के कारणों पर भी विशेष चर्चा प्रस्तुत की गई है। जिसमें तीन प्रकार की आत्म हत्याओं जैसे : परार्थवादी आत्म हत्या, अहम वादी आत्म हत्या तथा आस्वाभाविक आत्म हत्या का वर्णन किया गया है।

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप :

1. आत्म हत्या के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेगें।
2. आत्म हत्या का अर्थ एवं विशेषताओं को जान सकेगें।
3. आत्म हत्या के कारणों के बारे में लिख सकेगें।
4. आत्म हत्या की मनोवैज्ञानिक दशाओं, जैविकीय दशाओं तथा भौगोलिक दशाओं पर टिप्पणी लिख सकेगें।
5. आत्म हत्या के प्रकारों पर गहन चिन्तन कर सकेगें।

## 22-1 izLrkouk

सन् 1897 में दुर्खीम की तीसरी महत्वपूर्ण पुस्तक 'आत्महत्या' फ्रैंच भाषा में 'Le Suicide' के नाम से प्रकाशित हुई। अब्राहम तथा मॉर्गन के शब्दों में, ''यह पुस्तक सामूहिक चेतना से सम्बन्धित सामाजिक दबाव के एक ऐसे सिद्धान्त को प्रस्तुत करती है जिसमें अवधारणात्मक सिद्धान्त तथा आनुभाविक शोध के बीच एक विलक्षण समन्वय किया गया है।'' साधारणतया आत्महत्या को एक साधारण सी घटना समझा जाता है जो कुछ वैयक्तिक कठिनाइयों का परिणाम होती है। दुर्खीम ने इस सामान्य धारणा का खण्डन करते हुए आत्महत्या को एक वैयक्तिक घटना न मानकर इसे एक सामाजिक तथ्य के रूप में स्पष्ट किया। उन्होंने संसार के विभिन्न देशों से आत्महत्या सम्बन्धी व्यापक आँकड़ें एकत्रित करके यह बताया कि आत्महत्या की घटनाएँ भी एक तरह का सामाजिक प्रवाह है जो अधिक संवेदनशील लोगों को अपने साथ बहा ले जाता है। दूसरे शब्दों में, अन्य सामाजिक

नोट

तथ्यों की तरह आत्महत्या भी सामूहिक चेतना तथा सामूहिक दबाव की ही उपज होती है। अपने इन विचारों के द्वारा एक ओर दुर्खीम मनोविज्ञान, जीव विज्ञान, वंशानुक्रम तथा भौगोलिक कारकों पर आधारित आत्महत्या सम्बन्धी विचारों का खण्डन करना चाहते थे तो दूसरी ओर, उनका उद्देश्य सांख्यिकीय प्रमाणों के आधार पर आत्महत्या के बारे में एक समाजशास्त्रीय विवेचना प्रस्तुत करना था। अपनी पैनी दृष्टि और विश्लेषण की क्षमता की सहायता से उन्होंने यह स्पष्ट किया कि समाज ही व्यक्ति के जीवन को सामाजिक और नैतिक आधार पर नियन्त्रित करने वाला सबसे प्रमुख आधार है। जब कभी भी व्यक्ति पर समाज का नियन्त्रण शिथिल पड़ने लगता है, तब आत्महत्या की घटनाएँ भी बढ़ने लगती है। इस आधार पर भी आत्महत्या जैसे तथ्य को सामाजिक जीवन तथा सामाजिक घटनाओं से पृथक् करके नहीं समझा जा सकता। इस पुस्तक में दुर्खीम के विचारों का सार यह है कि विभिन्न समाजों में आत्महत्या की दर एक सामाजिक वास्तविकता है; आत्महत्या का सम्बन्ध सामाजिक व्यवस्था तथा सामाजिक संरचना से है; जब तक समाज के अस्तित्व की दशाओं में कोई मौलिक परिवर्तन नहीं हो जाता, प्रत्येक समाज में आत्महत्या की घटनाएँ लगभग समान दर से घटित होती रहती है।

## 22-2 vkRe gR;k dk vFk ,o fo'k"krk;a

'आत्महत्या' एक ऐसा सामान्य शब्द है जिसका अर्थ सभी लोग जानने का दावा कर सकते हैं। इस कारण साधारणतया इसे परिभाषित करने की आवश्यकता महसूस नहीं की जाती। इसके विपरीत, दुर्खीम यह मानते हैं कि आत्महत्या ऐसी सामान्य अवधारणा नहीं है जैसी कि साधारणतया समझ ली जाती है। दूसरे, सामाजिक तथ्यों की तरह आत्महत्या भी एक ऐसी सामाजिक घटना है जिसमे बाह्यता और बाध्यता का गुण होता है। इस दशा में यह आवश्यक है कि आत्महत्या से सम्बन्धित विभिन्न पक्षों को समझकर इसे भी समुचित रूप से परिभाषित किया जाये। वास्तविकता यह है कि 'सामान्य मृत्यु' तथा 'आत्महत्या' दो भिन्न दशाएँ है। इस दृष्टिकोण से यदि आत्महत्या से सम्बन्धित उन तत्वों को ज्ञात कर लिया जाये जिनका सामान्य मृत्यु में अभाव होता है तो आत्महत्या के अर्थ को भली–भाँति समझा जा सकता है। इसे स्पष्ट करते हुए दुर्खीम ने लिखा है, ''आत्महत्या शब्द का प्रयोग किसी भी ऐसी मृत्यु के लिए किया जाता है जो मृत व्यक्ति द्वारा किये जाने वाले किसी सकारात्मक या नकारात्मक कार्य का प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष परिणाम होती है।'' इस कथन में स्पष्ट होता है कि आत्महत्या प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से मृतक द्वारा की गयी क्रिया का ही परिणाम होती है। दुर्खीम यह मानते हैं कि जब कोई व्यक्ति स्वयं अपने जीवन को समाप्त करता है तो इस क्रिया के कारण उस व्यक्ति के बाहर स्थित होते हैं। इस अर्थ में आत्महत्या कुछ बाहरी दशाओं के दबाव से उत्पन्न होने वाला एक ऐसा परिणाम है जिसे समझने के बाद भी व्यक्ति उससे बच नहीं पाता। इसके बाद भी यह ध्यान रखना आवश्यक है कि 'आत्महत्या' अपने जीवन को समाप्त करने के लिए मृतक द्वारा किये जाने वाले प्रयत्न का प्रत्यक्ष परिणाम है, अप्रत्यक्ष नहीं। उदाहरण के लिए, यदि कोई व्यक्ति किसी ऊँचे स्थान से जमीन पर यह समझकर नीचे कूद पड़े कि जमीन उससे केवल 10 फुट नीचे है लेकिन वास्तव में अधिक ऊँचाई पर होने के कारण कूदने से उसकी मृत्यु हो जाये तो यह उसकी क्रिया का प्रत्यक्ष परिणाम नहीं होगा। इस दशा में इसे एक दुर्घटना कहा जायेगा, आत्महत्या नहीं।

नोट

वास्तव में, कुछ बाहरी दशाओं के प्रभाव से आत्महत्या मृतक द्वारा किया जाने वाला एक ऐसा विचारपूर्वक कार्य है जिसके परिणाम के प्रति व्यक्ति पहले से ही चेतन होता है। इस आधार पर दुर्खीम ने आत्महत्या को परिभाषित करते हुए लिखा है, 'आत्महत्या, शब्द का प्रयोग मृत्यु की उन सभी घटनाओं के लिए किया जाता है। जो स्वयं मृतक के किसी सकारात्मक या नकारात्मक कार्य का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष परिणाम होती है तथा जिसके भावी परिणाम को वह स्वयं भी जानता है।' इस कथन के द्वारा दुर्खीम ने यह स्पष्ट किया कि आत्महत्या सदैव किसी सकारात्मक क्रिया का ही परिणाम नहीं होती बल्कि किसी नकारात्मक क्रिया के द्वारा भी आत्महत्या की जा सकती है। उदाहरण के लिए जहर खाकर या स्वयं को गोली मारकर की जाने वाली आत्महत्या एक सकारात्मक क्रिया का परिणाम है, जबकि घातक बीमारी के बाद भी दवा लेने से इन्कार करना अथवा भोजन न करके जीवन का त्याग कर देना आत्महत्या के लिए की जाने वली नकारात्मक क्रिया है। आत्महत्या से सम्बन्धित किया जाने वाला कार्य चाहे सकारात्मक हो या नकारात्मक, पारिभाषिक रूप से जब तक उसके घातक परिणाम के बारे में कर्ता निश्चित रूप से चेतन न हो, तब तक उसे आत्महत्या नहीं कहा जा सकता। दुर्खीम के शब्दों में, ''आत्महत्या केवल उसी अवस्था में विद्यमान होती है जब व्यक्ति उस घातक कार्य को करने के दौरान उसके परिणाम को निश्चित रूप से जानता हो, यद्यपि इस निश्चितता की मात्रा कुछ कम या अधिक हो सकती है।'' यदि किसी घातक क्रिया के परिणाम के बारे में व्यक्ति निश्चित रूप से नहीं जानता तो उससे व्यक्ति की मृत्यु हो जाने पर भी इसे आत्महत्या नहीं कहा जायेगा। उदाहरण के लिए सर्कस में मौत की छलाँग लगाने वाला या विषैले साँपों के करतब दिखाने वाला व्यक्ति अपनी इन क्रियाओं का परिणाम केवल लोगों का मनोरंजन करना समझता है। इसके विपरीत, यदि मौत की छलाँग लगाने का साँप के काट लेने से व्यक्ति की मृत्यु हो जाये तो इसे आत्महत्या नहीं कहा जा सकता।

आत्महत्या की अवधारणा से इसके कुछ प्रमुख तत्व अथवा विशेषताएं स्पष्ट होती है जिन्हें सरल शब्दों में निम्नांकित रूप से समझा जा सकता है :

1- o;fDrd fØ;k dk ifj.kke % आत्महत्या का सबसे प्रमुख तत्व अथवा विशेषता यह है कि यह स्वयं आत्मघात करने वाले व्यक्ति की क्रिया का परिणाम होती है। दुर्खीम के अनुसार यह क्रिया सकारात्मक भी हो सकती है और नकारात्मक भी। उदाहरण के लिए अपने आपको गोली मारकर या किसी ऊँचे स्थान से कूदकर जान दे देना सकारात्मक क्रिया है, जबकि खाना खाने से इन्कार करके जीवन को समाप्त कर देना नकारात्मक क्रिया है।

2- ifj.kke d ifr psruk % दुर्खीम के अनुसार आत्महत्या मृतक द्वारा की जाने वाली क्रिया का प्रत्यक्ष परिणाम होती है। इस परिणाम के प्रति आत्मघात करने वाला व्यक्ति पूरी तरह चेतन होता है अर्थात् वह जानता है कि एक विशेष कार्य का परिणाम मृत्यु के रूप में होगा। यदि किसी खतरनाक कार्य के फलस्वरूप आकस्मिक रूप से व्यक्ति की मृत्यु हो जाये तो ऐसे कार्य में परिणाम के प्रति चेतना का अभाव होने के कारण उसे आत्महत्या नहीं कहा जा सकता।

3- LoPNk dk leko'k % आत्महत्या एक ऐसी क्रिया है जिसे व्यक्ति अपनी इच्छा से करता है। यदि किसी व्यक्ति को अपना जीवन स्वयं समाप्त करने के लिए कुछ लोगों के द्वारा बाध्य किया जाये तथा व्यक्ति की मृत्यु उसी बाध्यता का परिणाम हो तो ऐसी

नोट

मृत्यु को भी आत्महत्या की श्रेणी में नहीं रखा जायेगा। इसका अर्थ है कि आत्महत्या के लिए व्यक्ति में एक स्पष्ट इरादे का होना आवश्यक तत्व है। इसी के द्वारा दुर्खीम ने यह स्पष्ट किया कि आत्महत्या तथा मृत्यु में एक स्पष्ट अन्तर है क्योंकि मृत्यु एक ऐसी दशा है जिसमें स्वेच्छा का अभाव होता है।

4- mÌ'; dk lekos'k % प्रत्येक आत्महत्या के पीछे मृतक का कोई–न–कोई उद्देश्य अवश्य होता है, चाहे यह उद्देश्य प्रत्यक्ष हो अथवा अप्रत्यक्ष। दुर्खीम का यह मानना है कि आत्महत्या का उद्देश्य सदैव स्पष्ट नहीं होता लेकिन आत्महत्या का एक ऐसा सामाजिक आधार अवश्य होता है जो किसी व्यक्ति को आत्महत्या करने की प्रेरणा देता है। यह उद्देश्य व्यक्तिगत भी हो सकता है और सामूहिक भी। एक व्यक्ति यदि आत्महत्या के द्वारा परिवार को बदनामी या आर्थिक दिवालियेपन से बचाना चाहता है तो यह व्यक्तिगत उद्देश्य है, जबकि देश की रक्षा के लिए एक सैनिक द्वारा जान–बूझकर अपने प्राणों का बलिदान कर देना सामूहिक उद्देश्य का उदाहरण है। यदि कोई व्यक्ति बिना किसी उद्देश्य के एकाएक गहरी नदी में छलाँग लगाकर या रेलगाड़ी के आगे कूदकर अपनी जान दे दे तो इसे केवल एक मनोविकार ही कहा जायेगा।

5- vkRegR;k dk dkj.k 0;fDr ls ckâ % दुर्खीम ने इस बात पर विशेष बल दिया कि आत्महत्या का कारण व्यक्ति के अन्दर विद्यमान नहीं होता बल्कि कुछ बाहरी दशाएँ व्यक्ति को आत्महत्या करने की प्रेरणा देती है। आत्महत्या का कारण यदि व्यक्ति के अन्दर स्थिर होता तो विभिन्न अवधियों में आत्महत्या की दर में बहुत असमानता देखने को मिलती। इसके विपरीत, विभिन्न समाजों में थोड़े–बहुत अन्तर के साथ आत्महत्या की घटनाएँ एक निश्चित दर से घटित होती रहती है। इससे यह प्रमाणित होता है कि सामाजिक संरचना सम्बन्धी कुछ विशेषताएँ ही आत्महत्या के लिए अनुकूल दशाएँ उत्पन्न करती है। जब तक इन दशाओं में अधिक परिवर्तन नहीं हो जाता, तब तक आत्महत्या की दर में भी कोई परिवर्तन नहीं होगा।

6- ,d lkekftd rF; % दुर्खीम के अनुसार आत्महत्या की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि आत्महत्या एक वैयक्तिक घटना नहीं बल्कि एक सामाजिक तथ्य है। दूसरे शब्दों में, आत्महत्या का कारण वैयक्तिक न होकर सामाजिक होता है। किसी वैयक्तिक घटना को व्यक्ति की जीव–रचना, मानसिक दशाओं अथवा अनुकरण आदि के आधार पर समझा जा सकता है। इसके विपरीत, सामाजिक घटना का कारण समाज की संरचना तथा समाज के नैतिक संगठन में निहित होता है। दुर्खीम ने यूरोप के विभिन्न देशों से आत्महत्या सम्बन्धी आँकड़े एकत्रित करके यह स्पष्ट किया कि विभिन्न समाजों की सामाजिक, धार्मिक तथा आर्थिक संरचना के अनुसार ही वहाँ आत्महत्या की दर में भिन्नता देखने को मिलती है तथा एक विशेष समाज में प्रत्येक वर्ष आत्महत्या की दर में अधिक भिन्नता नहीं पायी जाती। इसका तात्पर्य है कि सामाजिक दशाएँ ही आत्महत्या की दर को प्रभावित करती है। आत्महत्या इसलिए भी एक सामाजिक तथ्य है कि इसमें वाह्यता तथा बाध्यता की विशेषताएँ देखने को मिलती है। आत्महत्या व्यक्ति से वाह्य है क्योंकि इसका कारण व्यक्ति के अन्दर स्थित नहीं होता। साथ ही, यह इस दृष्टिकोण से भी बाध्यताकारी है कि समाज का एक विशेष नैतिक संगठन अथवा सामाजिक मूल्य ही व्यक्ति को आत्महत्या की प्रेरणा देते हैं।

## 22-3 vkRe gR;k d dkj.k

नोट

आत्महत्या की विवेचना में दुर्खीम ने अनेक उन कारणों का उल्लेख किया जिनके आधार पर समय–समय पर आत्महत्या की विवेचना की जाती रही थी। दुर्खीम से पहले मनोवैज्ञानिकों, जीववादियों तथा भौगोलिकवादियों ने यह स्पष्ट किया था कि व्यक्ति कुछ मानसिक, जैविकीय तथा प्राकृतिक दशाओं के प्रभाव से आत्महत्या करते हैं। इसी आध ाार पर आत्महत्या के विभिन्न प्रकारों, जैसे– उन्मादपूर्ण आत्महत्या, संवेगात्मक आत्महत्या, निराशापूर्ण आत्महत्या तथा प्रेतबाधा आत्महत्या आदि का भी उल्लेख किया गया। दुर्खीम ने ऐसे सभी कारणों की निरर्थकता को स्पष्ट करते हुए आत्महत्या की सामाजिक कारण ाों के आधार पर व्याख्या की। इसलिए यह आवश्यक है कि आत्महत्या के मनोवैज्ञानिक, जैविकीय तथा भौगोलिक कारणों पर दुर्खीम के विचारों को समझने के साथ उन सामाजिक दशाओं का विस्तार से उल्लेख किया जाये तो दुर्खीम के अनुसार आत्महत्या का वास्तविक कारण है।

¼1½ euksoSKkfud n'kk,¡ % मनोवैज्ञानिक दशाओं में विभिन्न विद्वानों ने स्वभाव सम्बन्धी विशेषताओं, मानसिक बीमारियों, संवेगात्मक अस्थिरता, उन्माद तथा पातक की भावना आदि को आत्महत्या के प्रमुख कारणों के रूप में स्पष्ट किया था। दुर्खीम के अनुसार इनमें से किसी भी कारण के आधार पर आत्महत्या की विवेचना नहीं की जा सकती।

¼v½ LoHkko lEcU/kh fo'k"krk,¡ % मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि कुछ व्यक्तियों का स्वभाव आत्महत्या के लिए अधिक अनुकूल होता है। जो लोग जीवन में बहुत अधिक आराम की कामना करते हैं, अधिक भावुक होते हैं, अधिक मनोरंजन पसन्द करते हैं तथा स्वभाव से अन्तर्मुखी होते हैं, उनके शान्त जीवन में थोड़ा भी व्यवधान पैदा होने से वे विचलित हो जाते हैं। आत्महत्या इसी दशा का परिणाम है। दुर्खीम ने अपने अध्ययन में यह पाया कि व्यक्तिगत स्वभाव तथा आत्महत्या के बीच कोई सह–सम्बन्ध नहीं है। आत्महत्या करने वाले व्यक्तियों में अन्तर्मुखी और बहिर्मुखी दोनों तरह के स्वभाव वाले लोग होते हैं। दूसरी ओर, संवेग और भावना स्त्रियों के जीवन में अधिक होती है, जबकि आत्महत्या करने वाले लोगों में स्त्रियों की अपेक्षा पुरूषों का प्रतिशत अधिक है।

¼c½ eukfodkj % मनोविकार इस तरह की मानसिक बीमारी है जो विभिन्न रूपों में आत्महत्या के लिए उत्तरदायी होती है। उदाहरण के लिए, व्यर्थ की चिन्ता से घिरे रहना, प्रत्येक दशा में निराशा अनुभव करना, स्नायुदोष का होना, स्वयं कोई निर्णय न ले पाना, बहुत जल्दी दुःखी या प्रसन्न हो जाना आदि विभिन्न प्रकार के मनोविकार है। यह मनोविकार जब व्यक्ति के जीवन को बहुत असन्तुलित बना देते हैं तो वह अपने जीवन को बेकार समझकर आत्महत्या की ओर मुड़ जाता है। दुर्खीम ने यह सिद्ध किया कि मनोविज्ञान स्वयं आत्महत्या का कारण नहीं होते बल्कि स्वयं मनोविकार भी कुछ विशेष सामाजिक दशाओं का परिणाम होते हैं। इसका अर्थ है कि मनोविकार आत्महत्या के लिए प्रेरणा तो दे सकते हैं लेकिन आत्महत्या के वास्तविक कारण सामाजिक दशाओं में ही खोजे जा सकते हैं।

नोट

¼l½ loxkRed vfLFkjrk % मनोवैज्ञानिक यह मानते हैं कि आत्महत्या करने वाले लोगों में से अधिकांश लोग वे होते हैं जो स्थिर विचारों के नहीं होते, तर्क के आधार पर कोई निर्णय नहीं ले पाते तथा जिनकी सोच नकारात्मक होती है। ऐसे व्यक्ति सभी दूसरे लोगों को अपना विरोधी और आलोचक समझने लगते हैं। यही दशा उन्हें आत्महत्या करने की प्रेरणा देती है। दुखीर्म का कथन है कि मनोवैज्ञानिकों के अनुसार युवावस्था में संवेगात्मक अस्थिरता व्यक्ति में सबसे कम होती है लेकिन बच्चों और वृद्धों की तुलना में युवा वर्ग के लोग अधिक आत्महत्या करते हैं। इसका तात्पर्य है कि संवेगात्मक अस्थिरता आत्महत्या का प्रमुख कारण नहीं है।

¼n½ mUekn % उन्माद एक ऐसा मानसिक विकार है जिसमें व्यक्ति अपनी किसी भी इच्छा के तनिक भी अपूर्ण रह जाने की दशा में एकाएक असामान्य व्यवहार करने लगता है। उसकी मानसिक स्थिति इतनी बिगड़ जाती है कि व्यक्ति असामान्य क्रियाएँ करने लगता है। अक्सर उन्माद की दशा में अकेला होने पर व्यक्ति आत्महत्या का शिकार हो जाता है। दुर्खीम के अनुसार उन्माद पूरी तरह एक वैयक्तिक और काल्पनिक विशेषता है जिसके आधार पर आत्महत्या की व्याख्या नहीं की जा सकती।

¼;½ ikrd dh Hkkouk % यह एक ऐसी भावना है जो किसी कुकृत्य को करने के बाद व्यक्ति में स्वयं अपने प्रति घृणा की भावना उत्पन्न कर देती है। पातक की दशा में व्यक्ति हर समय अपने प्रति सशंकित रहने लगता है, वह अनिद्रा से घिर जाता है तथा उसमें इतनी अधिक हीनता पैदा हो जाती है कि धीरे–धीरे अकारण वह पूरे समूह को अपने विरुद्ध समझने लगता है। यही दशा उसे आत्महत्या की ओर ले जाती है। दुर्खीम पातक को एक मनोवैज्ञानिक दशा न मानकर एक सामाजिक दशा के रूप में देखते हैं क्योंकि पातक का कारण आन्तरिक नहीं बल्कि समाज की वाह्म दशाएँ होती है।

कुछ मनोवैज्ञानिक मद्यपान को भी एक मनोवैज्ञानिक कारण मानते हुए इसके आधार पर आत्महत्या की विवेचना करते हैं लेकिन दुर्खीम ने यह सिद्ध किया कि स्पेन तथा फ्रांस जैसे देशों में जहाँ शराब का सबसे अधिक सेवन किया जाता है, वहाँ यूरोप के अनेक दूसरे देशों की तुलना में आत्महत्या की दर कम है।

¼2½ tSfodh; n'kk,¡ % दुर्खीम ने अनेक ऐसी मानसिक और जैविकीय दशाओं का भी उल्लेख किया जिन्हें अक्सर आत्महत्या का कारण मान लिया जाता है। जीववादी यह मानते हैं कि एक विशेष शारीरिक रचना तथा वंशानुक्रम से प्राप्त होने वाली विशेषताएं भी आत्महत्या की प्रेरणा देती है। इस दृष्टिकोण से दोषपूर्ण आनुवंशिक विशेषताएं, असामान्य शारीरिक रचना तथा प्रजातीय लक्षण वे प्रमुख जैविकीय कारक है जिनका आत्महत्या से प्रत्यक्ष सम्बन्ध है।

¼v½ nks"kiw.kZ vkuqoaf'kd fo'ks"krk,¡ % जीववादियों का विश्वास है कि माता–. पिता के अच्छे और बुरे सभी गुणों का वाहकाणुओं के द्वारा उनकी सन्तानों में संरक्षण होने की सदैव सम्भावना रहती है। माता–पिता में यदि स्नायु दोष या

विभिन्न प्रकार के मनोविकार होते हैं तो अक्सर यह दोष उनकी सन्तानों में भी आ जाते हैं। इससे बच्चों में भी आत्महत्या की प्रवृत्ति पैदा हो जाती है। दुर्खीम ने आनुवंशिकता अथवा पैतृकता के आधार पर आत्महत्या की प्रवृत्ति का खण्डन किया। उनके अनुसार आनुवंशिकता पूरी तरह एक जन्मजात और आन्तरिक विशेषता है जिसके आधार पर आत्महत्या जैसे वाह्म व्यवहार की विवेचना नहीं की जा सकती।

¼c½ vlkekU; 'kkjhfjd jpuk % जीववादी यह भी मानते हैं कि जिन व्यक्तियों की शारीरिक रचना असामान्य होती है, उनमें आत्महत्या की प्रवृत्ति अधिक देखने को मिलती है। इसका अर्थ है कि जो व्यक्ति बहुत अधिक भद्दे, मोटे, नाटे, अपंग अथवा विकलांग होते हैं, अक्सर अपने जीवन के प्रति उनमें अधिक रूचि नहीं होती। शारीरिक विकृतियाँ उनके विचारों को भी असन्तुलित बना देती है जि. सका परिणम बहुधा आत्महत्या के रूप में देखने को मिलता है। दुर्खीम ने इस आधार को भी अस्वीकार करते हुए कहा कि असामान्य शारीरिक रचना तब तक आत्महत्या का कारण नहीं हो सकती जब तक व्यक्ति का जीवन शेष समाज से बिल्कुल अलग न हो जाये। इसका तात्पर्य है कि असामान्य शारीरिक रचना स्वयं आत्महत्या का कारण नहीं होती बल्कि सामाजिक दशाओं के सन्दर्भ में ही उनके प्रभाव को समझा जा सकता है।

¼l½ ijtkrh; y{k.k % अनेक विद्वानों ने प्रजातीय लक्षणों के आधार पर भी आत्महत्या की व्याख्या करने का प्रयत्न किया है। सामान्य निष्कर्ष यह दिया जाता है कि गोरी प्रजाति की तुलना में काली प्रजाति के लोगों में आत्महत्या की दर अधिक होती है। इससे प्रजातीय लक्षणों और आत्महत्या का सहसम्बन्ध स्पष्ट होती है। दुर्खीम ने इसकी आलोचना करते हुए कहा कि कुछ समय पहले तक जिन प्रजातीय समूहों में आत्महत्या की दर अधिक थी, उनकी सांस्कृतिक दशाओं में परिवर्तन हो जाने से अब उनमें आत्महत्या की दर कम होती जा रही है। इससे भी यह स्पष्ट होता है कि आत्महत्या का कारण जैविकीय दशाओं में नहीं बल्कि सामाजिक दशाओं में ही ढूँढ़ा जा सकता है।

¼3½ HkkSxkfyd n'kk,¡ % भौगोलिकवादी यह मानते हैं कि आत्महत्या तथा भौगोलिक दशाओं के बीच एक प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। भौगोलिक दशाओं का सम्बन्ध एक विशेष प्रकार की जलवायु, ऋतु–परिवर्तन तथा मौसमी तापमान में होने वाले उतार–चढ़ाव से है। डी0 गूरे, वैगनर, मॉण्टेस्क्यू, डेक्सटर तथा फेरी आदि वे प्रमुख भागौलिकवादी हैं जो अनेक दूसरे मानव व्यवहारों की तरह आत्महत्या को भी भौगोलिक दशाओं का परिणाम मानते हैं। दुखीर्म के विचारों के सन्दर्भ में आत्महत्या तथा भौगोलिक कारकों के सम्बन्ध को जानने से यह स्पष्ट हो जायेगा कि भौगोलिकवादियों के कथन को उपयुक्त नहीं कहा जा सकता।

¼v½ tyok;q rFkk vkRegR;k % कुछ भौगोलिकवादी यह मानते हैं कि जलवायु तथा आत्महत्या के बीच एक प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। यही कारण है कि जलवायु में परिवर्तन होने के साथ आत्महत्या की दर में भी परिवर्तन देखने को मिलता है। उनके अनुसार समशीतोष्ण जलवायु में आत्महत्याएँ अधिक होती हैं। इसके विपरीत, अधिक गर्म या अधिक ठण्डी जलवायु में आत्महत्या की घटनाएँ तुलनात्मक रूप से कम होती है। इस सम्बन्ध में दुर्खीम ने लिखा है, ''आत्महत्या की दर

**नोट**

में पायी जाने वाली भिन्नता की खोज जलवायु के रहस्यात्मक प्रभाव में नहीं बल्कि विभिन्न देशों में पायी जाने वाली सभ्यता की प्रकृति में करना आवश्यक है।'' इसका तात्पर्य है कि भौगोलिकवादियों ने जिस समशीतोष्ण जलवायु को अधिक आत्महत्याओं का कारण मान लिया है, उसका कारण वास्तव में इस जलवायु में विकसित होने वाली कुछ विशेष प्रकार की सामाजिक–सांस्कृतिक दशाएं है। इटली का उदाहरण देते हुए उन्होंने बताया कि यहाँ क विभिन्न भागों में समय–समय पर आत्महत्या की दर में काफी परिवर्तन होता रहा, जबकि वहाँ की जलवायु में किसी तरह का परिवर्तन नहीं हुआ। इससे यह प्रमाणित होता है कि आत्महत्या की घटनाओं की खोज सामाजिक और सांस्कृतिक दशाओं में ही की जा सकती है।

¼c½ _r&ifjoru % मॉण्टेस्क्यू ने ऋतु–परिवर्तन और आत्महत्या के सहसम्बन्ध को स्पष्ट करते हुए लिखा कि यूरोप में गर्मी में आत्महत्या की दर सबसे अधि ाक होती है और इसमें भी मई व जून का समय सबसे अधिक घातक होता है। बसन्तु ऋतु में आत्महत्या की दर साधारण होती है तथा सर्दियों में इसमें बहुत कमी हो जाती है। इस प्रकार आत्महत्या की दर में होने वाला परिवर्तन ऋतु–परिवर्तन के साथ बहुत कुछ नियमित रूप में देखने को मिलता है। दुर्खीम ने ऐसे निष्कर्षों को अस्वीकार करते हुए यह तर्क दिया कि आत्महत्या की दर की भिन्नता ऋतु–परिवर्तन से सम्बन्धित नहीं है बल्कि व्यक्ति उस समय अपने जीवन को त्यागना अधिक पसन्द करते हें जब मौसम उनके जीवन को सबसे कम प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर रहा होता है। यह ऋतु–परिवर्तन का सामा. जिक सन्दर्भ है तथा यही सन्दर्भ कुछ सीमा तक आत्महत्या की दर से सम्बन्धि ात है।

¼l½ rkieku % फेरी जैसे एक प्रमुख भौगोलिकवादी ने यह निष्कर्ष दिया कि तापमान तथा आत्महत्या के बीच एक प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। उन्होंने अपने अध्ययन में यह पाया कि गर्मियों में जब तापमान अधिक होता है, तब आत्महत्या की घटनाओं में भी वृद्धि हो जाती है। दुर्खीम ने ऐसे निष्कर्षों की आलोचना करते हुए लिखा कि तापमान के थर्मामीटर का आत्महत्या में कोई सम्बन्ध नहीं है। यह सच है कि जब तापमान अधिक होता है तो आत्महत्याएँ अधिक होती है लेकिन इसका कारण यह है गर्मियों के मौसम में व्यक्ति स्वयं को अधिक अकेला महसूस करता है जिसके फलस्वरूप आत्महत्या की दर में वृद्धि हो जाती है।

इस प्रकार दुर्खीम ने मनोवैज्ञानिक, जैविकीय तथा भौगोलिक दशाओं के आधार पर आत्महत्या की विवेचना को भ्रामक बताते हुए सामाजिक दशाओं को ही आत्महत्या की घटनाओं के लिए उत्तरदायी माना।

## 22-4 vkRe gR;k d idkj

दूर्खीम के अनुसार आत्म हत्या तीन प्रकार की होती है जो अग्रलिखित है :

1- ijkFkoknh vkRe gR;k % इस प्रकार की आत्म हत्या तब होती है जबकि व्यक्ति पूर्णतया समूह द्वारा नियंत्रित होता है और व्यक्ति के व्यक्तित्व का कोई स्थान

नोट

नहीं होता है। सच तो यह है कि यह उस स्थिति को व्यक्त करती है, जबकि व्यक्ति और समाज का सम्बन्ध अत्यधिक घनिष्ठ होता है और समाज या समूह व्यक्ति के व्यक्तित्व को पूर्ण रूप से निगल जाता है। ऐसी स्थिति में व्यक्ति जो कुछ भी करता है समाज या समूह की दृष्टि से करता है। इतना ही नहीं, समूह का अत्यधिक नियंत्रण व घनिष्ठ बन्धन उसे आत्म बलिदान के लिये भी बाध्य कर सकता है। परार्थवादी आत्म हत्या को स्पष्ट करते हुए 'पारसन्स' महोदय लिखते हैं ''यह उस सामूहिक चेतना की अभिव्यक्ति है जो सामूहिक दबाव के अर्थ में व्यक्तित्व के दोषों को ठुकरा देती है।'' वास्तव में परार्थवादी आत्म हत्या समूह के अत्यधिक नियंत्रण व घनिष्ठता के कारण होती है और उस स्थिति में व्यक्ति सामूहिक हित के लिये अपने जीवन को बलिदान करने के लिये भी तैयार हो जाता है। आदिम समाजों में इस प्रकार की आत्म हत्यायें देखने को मिलती है। भारत में पायी जाने वाली सती प्रथा और जापान की हारा–कीरी प्रथा इसी प्रकार के आत्म हत्या के उदाहरण कहे जा सकते हैं।

2- vge oknh vkRe gR;k % इस प्रकार की आत्म हत्या तब होती है जबकि व्यक्ति अपने आपको सामूहिक जीवन से अत्यधिक अलग अनुभव करने लगता है। यह परिस्थिति व्यक्तिगत विघटन के कारण होती है अथवा उस समय उत्पन्न होती है जबकि व्यक्ति के सम्बन्ध अपने समूह से पर्याप्त सीमा तक विघटित हो जाते हैं। इस स्थिति में व्यक्ति सामाजिक दृष्टि से गहरी निराशा का अनुभव करता है, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति में व्यक्ति अपने–अपने स्वार्थों में अत्यधिक लिप्त हो जाता है और कोई किसी की परवाह नहीं करता है। ऐसे वातावरण में कुछ व्यक्तियों को अपने को एकाकी व उपेक्षित अनुभव करना स्वभाविक हो जाता है, क्योंकि यह सब कुछ सामाजिक जीवन से उत्पन्न गहरी निराशा के कारण होता है। सम्भवतया यही कारण है कि अविवाहित व परित्यक्त व्यक्ति पारिवारिक जीवन के मधुर सम्बन्धों का आनन्द नहीं ले पाते, अकेलेपन का अनुभव करते हैं और विवाहित व्यक्तियों की तुलना में कहीं अधिक संख्या में आत्म हत्या कर बैठते हैं। आधुनिक समाज में अधिकतर आत्म हत्या समाज द्वारा उत्पन्न अति अहमवाद या अति व्यक्तित्व वाद के कारण होती है।

3- vLokHkkfod ;k vkdfrd vkRe gR;k % इस प्रकार के आत्म हत्यायें सामाजिक परिस्थितियों में एकाएक या आकस्मिक परिवर्तन होने के कारण होती है। इन आकस्मिक परिस्थितियों में कुछ व्यक्ति गहरी निराशा या अत्यधिक प्रसन्नता का अनुभव करने लगते हैं। व्यापार में एकाएक मन्दी आना, दिवालिया हो जाना, लाटरी का जीतना, भीषण आर्थिक संकट आदि इसी प्रकार की आकस्मिक परिस्थितियां है। सच तो यह है कि इन नवीन परिथतियों में अनेक व्यक्ति सामान्य जीवन की भांति अनुकूलन नहीं कर पाते हैं। इसी स्थिति को अस्वाभाविकता कहा जाता है। इसको स्पष्ट करते हुये 'कोजर' और 'रोजनवर्ग' लिखते हैं ''इसका अभिप्राय यही है कि अस्वाभाविक या अप्राकृतिक आत्म हत्यायें सामान्य सामूहिक जीवन में एकाएक परिवर्तन होने से उत्पन्न सामाजिक असन्तुलन होने के कारण होती है।'' औद्योगिक समाज व्यवस्था में इस प्रकार की आत्म हत्यायें होती रहती है।

नोट

## 22-5 lkjk'k

प्रस्तुत इकाई में आत्म हत्या की अर्थ एवं विशेषताओं का विस्तृत वर्णन किया गया है जिसमें बताया गया है कि आत्म हत्या क्या है ? तथा इनकी विशेषतायें कौन–कौन सी होती है ? दुर्खीम ने लिखा है कि आत्म हत्या शब्द का प्रयोग किसी भी ऐसी मृत्यु के लिये किया जाता है जो मृत व्यक्ति द्वारा किये जाने वाले किसी सकारात्मक या नकारात्मक कार्य का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष परिणाम होती है। प्रस्तुत इकाई में ही आत्म हत्याओं के कारणों पर वृहद प्रकाश डाला गया है एवं मनोवैज्ञानिक दशायें, जैवकीय दशायें, तथा भौगोलिक दशाओं के बारे में विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है। इकाई के अन्त में आत्म हत्या के प्रकारों का भी वर्णन किया गया है।

## 22-6 vH;kl i'u

1. आत्म हत्या की अवधारणा लिखिए।
2. आत्म हत्याओं के कारणों का वर्णन कीजिए।
3. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए।
   (क) आत्म हत्या की विशेषतायें
   (ख) आत्म हत्या की मनोवैज्ञानिक दशायें